CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मलिक मुहम्मद जायसी
कृत

कन्हावत

परमेश्वरीलाल गुप्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कन्हावत

- हिन्दी साहित्य की एक क्रान्तिकारी खोज ।
- मलिक मुहम्मद जायसी की अब तक अज्ञात रही रचना ।
- जायसी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर नया प्रकाश ।
- कृष्ण-चरित पर आधारित प्रेमाख्यान ।
- हिन्दी कृष्ण-साहित्य का आदि ग्रन्थ ।

□

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

10-3

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मलिक मुहम्मद जायसी

कृत

कन्हावत

परमेश्वरी लाल गुप्त

एम० ए०, पीएच० डी०, एफ० आर० एन० एस० (आन०)

अन्नपूर्णा प्रकाशन

वाराणसी–२२१००२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

© परमेश्वरी लाल गुप्त

प्रथम संस्करण—अप्रैल १९८१

V.V.P. PRICE 80/-

MALIK MUHAMMAD JAISI KRIT

KANHAWAT

By

PARMESHWARI LAL GUPTA

वितरक :

विश्वविद्यालय प्रकाशन,

चौक, वाराणसी

प्रकाशक :

अन्नपूर्णा प्रकाशन,

जे १२/१५ आर, बौलियाबाग, रामकटोरा,

वाराणसी २२१००२

मुद्रक :

शिवम् प्रिण्टर्स, नायकबाजार,

वाराणसी–१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मध्यकालीन भारतीय इतिहास के मर्मज्ञ,

सूफी-साहित्य के अन्वेषी,

मित्रवर

डाक्टर सैयद हसन असकरी

को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सूची

आभार

अनुशीलन १–७

कवि-परिचय ९–४८

जन्म-स्थान, परिवार और नाम ९–१०; जन्मकाल १०–१२; व्यक्तित्व १२–१३; बचपन और जवानी १३–१४; वैराग्य १४–१५; पीर और गुरु १५–२१; गुरु २१–२५; आध्यात्मिकता और चिन्तन-धारा २६–२७; मित्र २७–२८; रचनाएँ २८–४६; अन्तिम दिन और मृत्यु ४६–४८।

कृष्ण-चरित ४९–६९

दैविक कल्पना ५१–५२; बहुव्यक्तित्व का मिश्रण ५२–५३; वैदिक साहित्य में कृष्ण ५३–५५; कृष्ण और महाभारत ५५–५७; वासुदेव और कृष्ण ५७–५९; महाभारत और पुराण के कृष्ण ५९–६१; कृष्ण का देवत्व ६१–६२; इतिवृत्त ६३–६९।

काव्य-परिचय ७०–१२५

नाम ७०–७२; रचना-काल ७२–७४; भाषा ७४–८४; रचना-विधान ८४–८५; कथा-वस्तु ८५–११५; अन्तर्भूत धार्मिक तत्व ११५–१२४।

प्रति-परिचय और पाठ प्रस्तुति १२५–१३०

कन्हावत (स्प्रेंगर प्रति के आधार पर प्रस्तुत पाठ) १३३–३२४

पुनश्च ३२५–३२६

तमाकूनामा ३२७–३२८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आभार

डाक्टर डीटर ज्यार्ज, निदेशक, प्राच्य-विभाग, बिबलियोथेक स्तात, बर्लिन, पश्चिमी जर्मनी—

स्पेंगर प्रति का माइक्रोफिल्म सुलभ किया और उसके सम्पादन तथा प्रकाशन की अनुमति दी ।

ग्राहम डब्लू० शा, सीनियर रिसर्च असिस्टेंट, प्राच्य हस्तलिखित एवं मुद्रित ग्रन्थ विभाग, ब्रिटिश लाइब्रेरी, लन्दन; **जान मिलिस,** दक्षिण एशियाई भाषा एवं संस्कृति विभाग, शिकागो विश्व-विद्यालय, शिकागो (अमेरिका)—

अपने यहाँ के पुस्तकालयों से ऐसी सूचनाएँ प्रस्तुत कीं जो यहाँ सहज सुलभ न थीं ।

निकोलस लौविक तथा जो क्रिब, सहायक संरक्षक, मुद्रा-विभाग, ब्रिटिश संग्रहालय, लन्दन—

हुमायूँ और शेरशाह के मुद्राओं के छाया-चित्र प्रदान किये और संग्रहालय के न्यासियों की ओर से उनके प्रकाशन की अनुमति दी ।

आचार्य किशोरीदास बाजपेयी, कनखल (हरिद्वार); **डाक्टर बदरीनाथ कपूर,** काशी ।

भाषा सम्बन्धी अनेक गुत्थियों के सुलझाने में अपने मतों से लाभान्वित किया ।

डाक्टर प्रभुदयाल मीतल, मथुरा ; **डाक्टर सरोजिनी कुलश्रेष्ठ,** प्रिंसिपल, किशोरीरमण महिला महाविद्यालय, मथुरा —

कृष्ण, मथुरा तथा ब्रज सम्बन्धी अनेक महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की ।

श्री गोपाल नारायण बुहरा, अध्यक्ष, पोथी खाना, सिटी पैलेस संग्र-हालय, जयपुर—

कतिपय महत्त्वपूर्ण साहित्यिक जानकारो दी और मुहम्मद कृत तबाकू-नामा की प्रतिलिपि उपलब्ध करायी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डाक्टर किशोरीलाल गुप्त, सुधवै, वाराणसी; डाक्टर जमोला आली जाफरी, हिन्दी विभाग, काशी विश्वविद्यालय, वाराणसी—पाठ-सम्पादन के समय कठिन शब्दों के रूप और उनके भाव समझने में समय समय पर अपने विचारों एवं परामर्श का लाभ प्रदान किया ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुशीलन

मलिक मुहम्मद जायसी का नाम हिन्दी-विद्वानों के बीच जाना पहचाना है। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर ढेर सारे शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किये गये हैं फिर भी उनका पूर्णरूपेण अनुशीलन नहीं हो पाया है।

जायसी के सम्बन्ध में जिन लोगों ने लिखा है, उनमें से अनेक ने उनकी रचनाओं की एक सूची प्रस्तुत की है। इस प्रकार की सूचियों में एक रचना का उल्लेख **घनावत** नाम से किया जाता है और कहा जाता रहा है कि वह अनुपलब्ध है। कुछ लोग इस रचना के अस्तित्व को ही स्वीकार नहीं करते।

वस्तुतः इस रचना की जानकारी का आधार फ्रेंच विद्वान **गार्सा द तासी** का प्रख्यात इतिहास-ग्रन्थ **इस्त्वार द ला लितरेत्यूर ऐन्दुई एें एन्दोस्तानी**[1] है। **तासी** ने **जायसी** के **पदमावत** की चर्चा करते हुए कहा है कि इसी लेखक की अन्य कृतियाँ हैं—**परमार्थ जपजी** (जिसकी एक हस्तलिखित प्रति कलकत्ता के एशियाटिक सोसाइटी पुस्तकालय में है) और **घनावत** नामक काव्य (जिसकी १०६७ हिजरी-१६५६-५७ ई० में तैयार की गयी छोटे आकार की एक बहुत सुन्दर प्रति स्प्रेंगर के पास है)।[2]

तासी के इस कथन पर यदि किसी ने सजग बुद्धि से विचार किया होता तो स्प्रेंगर-संग्रह की इस प्रति की सहज खोज की जा सकती थी और **जायसी** की एक महत्वपूर्ण कृति अधिक काल तक उपेक्षित और अनजानी न रहती और तब आज तक **जायसी** पर जो कुछ शोध किया गया है, उसका रूप ही कुछ दूसरा होता।

डाक्टर ए० (एलाय) स्प्रेंगर विगत शती के एक प्रख्यात जर्मन चिकित्सक और प्राच्य-तत्ववेत्ता (ओरियण्टलिस्ट) थे। उनका जन्म टाइराल (जर्मनी) में ३ सितम्बर १८१३ ई० को हुआ था। १८४४ ई० में वे भारत आये और दिल्ली के मुहम्मदन कालेज के प्रिंस्पल हुए। १८५१ से १८५४ ई० तक वे

---

१. जिन लोगों ने इस रचना का उल्लेख किया है, उनकी जानकारी का आधार सम्भवतः मूल फ्रेंच पुस्तक न हो कर उसका लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय कृत हिन्दी अनुवाद 'हिन्दुई साहित्य का इतिहास' है।

२. खण्ड २, पृ० ६८-६९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कलकत्ता मदरसा में रहे। १८५६ ई० में वे स्वदेश लौट गये; वहाँ वे बर्त में काफी दिनों तक प्राच्य-भाषा के प्राध्यापक रहे। १९ दिसम्बर १८९३ ई० में उनकी मृत्यु हुई। उन्होंने एक अंग्रेजी-हिन्दुस्तानी व्याकरण लिखा और गुलिस्ताँ का सम्पादन किया था। इनके अतिरिक्त उनकी कृतियों में **सेलेक्शन्स फ्राम अरेबिक आथर्स, हिस्ट्री आव मुहम्मद गजनी, लाइफ आफ मुहम्मद** तथा **ओल्ड अरेबियन ज्योग्रफी** मुख्य हैं।

स्प्रेंगर जब स्वदेश (जर्मनी) लौटे तो अपने साथ १,९७२ हस्तलिखित ग्रन्थ ले गये। उनमें ९६ ग्रन्थ हिस्दुस्तानी (फारसी लिपि में लिखी हिन्दी-उर्दू) के थे। १८५७ ई० में उन्होंने अपने इस ग्रन्थ-संग्रह की एक सूची **अ कैटलाग आव द बिबलियोथेका ओरिएण्टेलिस स्प्रेंगियाना** नाम से प्रकाशित किया। इस सूची के प्रकाशन के तत्काल बाद १८५८ ई० में बर्लिन के राजकीय पुस्तकालय ने समग्र संग्रह क्रय कर लिया।

स्प्रेंगर की इस ग्रन्थ-सूची में क्रमसंख्या १७०१ के अन्तर्गत फारसी अक्षरों में एक पुस्तक का नाम **काफ, हे, नून, अलिफ,** वाव और **ते** के रूप में लिखा हुआ है। उसके आगे अंगरेजी में दो पंक्तियाँ है जिनमें इस ग्रन्थ के **जायसी** रचित काव्य होने तथा इस प्रति के छोटे आकार और उत्तम (स्प्लेंडिड) होने तथा १०६७ (हिजरी) में तैयार किये जाने की सूचना है। इसके साथ ही इसमें **स्प्रेंगर** ने स्व-प्रस्तुत लखनऊ सूची की पृष्ट संख्या ९१४ देखने की सलाह दी है।

स्प्रेंगर ने अपनी ग्रन्थ-सूची में जिस लखनऊ-सूची का उल्लेख किया है वह १८५४ ई० में कलकत्ता के बैप्टिस्ट मिशन प्रेस से छपी थी। उसे उन्होंने भारत सरकार के आदेश से तैयार किया था। उसमें अवध के नवाब के पुस्तकालयों (लाइब्रेरीज) में उपलब्ध अरबी, फारसी और हिन्दुस्तानी हस्तलिखित ग्रन्थों का विवरण है। इस सूची के उपर्युक्त उल्लिखित पृष्ठ पर **इब्रत** एवं **इशरत** कृत **पदमावत** का विवरण प्रस्तुत करते हुए उन्होंने यह बताया है कि ९४७ (हिजरी) में **मलिक मुहम्मद जायसी** ने, जो शेरशाह के समय में हुए थे, हिन्दी में इसी नाम का एक काव्य लिखा था, जिसमें लगभग ६०० छन्द हैं।[1]

---

१. पदमावत के अध्येताओं के लिए स्प्रेंगर का यह कथन दृष्टव्य है। इस कथन से स्पष्ट हैं कि उन्नीसवीं शती के मध्य तक पदमावत हिन्दी का (अवधी का नहीं) काव्य समझा जाता था। दूसरी बात यह है कि स्प्रेंगर को किसी ऐसी फारसी प्रति की जानकारी थी जिसमें लगभग ६०० ही कड़वक थे। पदमावत के आकार के प्रसंग में यह ध्यातव्य है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तासी ने अपनी पुस्तक में **घनावत** का उल्लेख **स्प्रेंगर** की सूची के ही आधार पर किया था। ध्यातव्य है कि मध्यकालीन फारसी लिपि में **काफ** और **गाफ** की अभिव्यक्ति एक ही अक्षर अर्थात **काफ** से ही की जाती थी। **काफ** के ऊपर **गाफ** की अभिव्यक्ति के लिए दूसरे मरकज का प्रयोग नहीं होता था। अतः **काफ** और **हे** को किसी भी शब्द में संयुक्त मान कर **ख** अथवा **घ** तथा अलग-अलग मान कर **कह** अथवा **गह** पढ़ा जा सकता है। इसी बात को ध्यान में रख कर **तासी** ने इस नाम के स्पष्टीकरण के लिए एक पाद-टिप्पणी दी है जिसमें इसे व्यक्तिवाचक संज्ञा मानते हुए कहा है कि उसका प्रारम्भिक अक्षर **घ** है। **तासी** की इस पाद-टिपणी ने लोगों को भ्रमित कर दिया। अन्यथा वे इसे **घनावत** न पढ़ कर **कहनावत** भी पढ़ सकते थे।

कला और पुरातत्व प्रेम तथा संग्रहालय की चाकरी के प्रसंग से ही **मौलाना दाउद** कृत **चन्दायन** की कुछ सचित्र खण्डित प्रतियाँ हाथ लगीं थीं। भारतीय चित्रकला के इतिहास की दृष्टि से ये प्रतियाँ अपना महत्त्व रखती हैं। इन चित्रों के कला-पक्ष के अध्ययन-मनन के लिए आवश्यक था कि उन चित्रों के कथा-वस्तु से परिचित हुआ जाय। ग्रन्थ ही अज्ञात था तो कथानक कहाँ से प्राप्त होता! चित्रों के पीछे फारसी लिपि में लिखी पंक्तियों की पाठ-प्रस्तुति एक अनिवार्य आवश्यकता बन कर सामने आयी। उसके लिए किये गये प्रयास और श्रम-स्वरूप अज्ञात काव्य सामने आया। उसे ढूंढ़ निकालने और सम्पादन[1] करने का श्रेय इस बहाने हाथ आया।

चन्दायन की प्रतियों के टोह में जिस समय मैनचेस्टर के रीलैण्ड्स पुस्तकालय से उसकी सबसे बड़ी और सचित्र प्रति मिली तभी मेरे ध्यान में यह बात आयी कि इस ढंग की न जाने कितनी ही अलभ्य साहित्यिक सामग्री विदेश के संग्रहालयों और पुस्तकालयों में छिपी पड़ी होंगी जिनकी जानकारी हमें नहीं है। इस बात ने मुझे शोध की एक नयी दिशा दी। फलतः जब-जब मुझे विदेश जाने का अवसर मिला, यात्रा-उद्देश्य की पूर्ति के बाद जो समय बचा उसमें मैंने पुस्तकालयों में घुस कर हिन्दी-साहित्य के हस्तलिखित ग्रन्थों और भारतीय भाषा की सचित्र प्रतियों की टोह लेने की चेष्टा की। इस प्रयास के फलस्वरूप १९६२ ई० की यात्रा में मुझे जो जानकारी प्राप्त हुई वह **यूरोप और अमेरिका में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थ** के रूप में सुलभ है।[2] इस सूची में जर्मनी के पुस्तकालयों में उपलब्ध ग्रन्थों का उल्लेख नहीं है। उस समय तक क्या उसके बहुत दिनों बाद

१—प्रकाशक—हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकार कार्यालय, गिरगाँव, बम्बई; १९६४ (अब अप्राप्य)।
२—प्रकाशक— विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी; मूल्य ४)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तक उनकी जानकारी प्राप्त करना सम्भव न था। द्वितीय महायुद्ध के समय सुरक्षा की दृष्टि से वे पुस्तकालयों से हटा कर विभिन्न स्थानों में तहखानों के भीतर ढेर कर दी गयी थीं। युद्धोपरान्त भी उनकी समुचित व्यवस्था नहीं हो पायी थी; सभी प्रकार के ग्रन्थ गड्डमगड्ड थे।

चन्दायन अभी तक अपने समग्र रूप में उपलब्ध नहीं है। उसके कुछ अंश अब भी अज्ञात हैं। किसी भी प्रति में, भले ही वह खण्डित क्यों न हो, अनुपलब्ध अंश के दो-चार कड़वक मिल जाने की सम्भावना बनी हुई है। अतः उसकी प्रतियों की खोज की ओर मेरा ध्यान विशेष है। १९७६ ई० की यूरोप-यात्रा के समय **श्याम मनोहर पाण्डेय** ने, जो उन दिनों इटली से अपने परिवार के बीच लन्दन आये थे, **चन्दायन** की एक प्रति के जर्मनी में होने की सूचना दी। उनके बताये क्षीण सूत्रों के आधार पर मैंने उसे ढूँढ़ने की चेष्टा की। बर्लिन (डलहेम) के भारतीय कला संग्रहालय के अध्यक्ष हर्बट हर्टेल के सहयोग से कुछ दिनों बाद जान पाया कि वह प्रति पश्चिमी बर्लिन स्थित स्तात बिब्लियोथेक (राजकीय पुस्तकालय) में सुरक्षित है। और तब उस पुस्तकालय के प्राच्य-विभाग के निदेशक डीटर ज्यार्ज ने कृपापूर्वक मुझे उसकी एक माइक्रोफिल्म भेंट में दी। यह प्रति भी अन्य प्रतियों की तरह ही खण्डित है और उसमें एक भी कड़वक ऐसा नहीं है जो मेरे प्रकाशित संस्करण में न हो अथवा अन्य रूप में ज्ञात न हो। **चन्दायन** के दूसरे संस्करण के प्रकाशन के समय ही पाठ-सम्पादन के निमित्त उसका उपयोग किया जा सकेगा। सम्प्रति इस प्रति का महत्व इस बात में है कि वह भी अन्य प्रतियों की भाँति ही सचित्र है और उसके चित्रों की संख्या १४० है; वे कला-इतिहास की दृष्टि से अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। इन चित्रों के सम्बन्ध में मेरा अपना लेख **जर्नल आव इण्डियन सोसाइटी आव ओरियण्टल आर्ट** में प्रकाशित हो रहा है।

१९७७ ई० में मुझे रायल न्यूमिस्मेटिक सोसाइटी का सर्वोच्च पुरस्कार प्राप्त करने लन्दन जाना और मार्ग में पश्चिमी बर्लिन स्थित फ्रिएन विश्वविद्यालय में भाषण देना था। कला की दृष्टि से **चन्दायन** की उक्त प्रति के प्रत्यक्ष अध्ययन का यह एक अच्छा अवसर था। अतः उसे देखने की व्यवस्था पुस्तकालय के साथ की और वहाँ गया। उस समय इन चित्रों के अध्ययन के बीच हिन्दी के अन्य हस्तलिखित ग्रन्थों की जानकारी प्राप्त करने की भी चेष्टा की। हिन्दी के ग्रन्थों के सम्बन्ध में उस समय विशेष जानकारी न प्राप्त हो सकी। पर उर्दू ग्रन्थों की एक सूची, जो कुछ ही समय पूर्व जर्मनी में सुरक्षित प्राच्य हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची के खण्ड २५ के रूप में प्रकाशित हुई थी, मेरे सामने रख दी गयी। इसे **सैयद मुजाहिद हुसैन जैदी** ने प्रस्तुत की है। इसमें ७० ग्रन्थों का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिचय है, जो जर्मनी के विभिन्न राजकीय संग्रहालयों में इस प्रकार उपलब्ध हैं :—बर्लिन राजकीय पुस्तकालय ५४, हाइडेलवर्ग विश्वविद्यालय पुस्तकालय ८, म्युनिख राजकीय पुस्तकालय २; कोलन विश्वविद्यालय १, स्टुटगर्ट पुस्तकालय १। इनके अतिरिक्त पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी के कुछ अन्य पुस्तकालयों में भी हिन्दी-उर्दू के ग्रन्थों के होने की सम्भावना हो सकती है, पर उनका सर्वेक्षण अभी तक नहीं हो पाया है।

बर्लिन स्थित राजकीय पुस्तकालय के जिन ५४ ग्रन्थों का विवरण इस सूची में है, उनमें ३५ स्प्रेंगर-संग्रह के हैं। समग्र सूची में कला की दृष्टि से मेरे लिए महत्व के कई ग्रन्थ दिखाई पड़े; पर फारसी लिपि में लिखे हिन्दी के दो ही ग्रन्थ थे। एक तो **चन्दायन** की वही प्रति,[1] जिसकी चर्चा ऊपर की गयी है, दूसरी स्प्रेंगर-संग्रह की वह प्रति जिसकी **तासी** ने **घनावत** नाम से उल्लेख किया है। इस सूची में उसे **कुन्हावत** (Kunhawat) कहा गया है और कोष्ठक में **घनवत** नाम भी दिया गया है।[2]

कुन्हावत और **घनावत** दोनों ही नाम मुझे अपरिचित से लगे। अतः उस समय बात इतनी ही समझ में आयी कि यह **जायसी** की कोई अज्ञात रचना है। बिना किसी ऊहापोह के तत्काल उसके माइक्रोफिल्म के लिए आर्डर दे दिया जो १९७८ के जनवरी या फरवरी महीने में मेरे पास आ गयी।

माइक्रोफिल्म के परीक्षण से ज्ञात हुआ कि उपलब्ध प्रति का आरम्भ **बिस्मिल्लाह रहमान-ए-रहीम** से हुआ है और अन्त में पुष्पिका है। इस प्रकार बाह्यरूप में यह प्रति पूर्ण ग्रन्थ का रूप प्रकट करती है। वस्तुतः इसमें आरम्भ के आठ पत्र **कहरानामा** के हैं, जिसे **माताप्रसाद गुप्त** ने **महरी बाईसी** के नाम से प्रकाशित किया है। नवें पत्र से **कन्हावत** आरम्भ होता है। इस प्रकार **कन्हावत** का प्रारम्भिक अंश अनुपलब्ध है। इस प्रति में बीच बीच में पत्रों का व्यति-क्रम भी है, अन्यथा यह रचना अपने आप में पूर्ण है। इसमें कृष्ण के चरित्र का वर्णन है। इस बात के स्पष्ट होते ही, यह बात भी स्पष्ट हो गयी कि रचना का नाम न तो **घनावत** है, जैसा **तासी** का अनुमान था और न **कुन्हावत**, जैसा कि **जैदी** ने समझा है, वरन् इसका नाम स्पष्टतः **कन्हावत** है। इसे जायसी ने **कन्ह-कथा** कहा है। कन्ह का तात्पर्य कृष्ण से है।

इस प्रकार **जायसी** की अब तक अज्ञात रही एक रचना आपके सामने है। इस ग्रन्थ की खोज का महत्व एक अज्ञात ग्रन्थ की प्रस्तुति के लिए उतना नहीं

---

१. सूची संख्या ५२ (Ms. Or. Fol. 3014)।

२. सूची संख्या २६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है, जितना इस बात के उद्‌घाटन में है कि **मलिक मुहम्मद जायसी** ने अपनी **पदमावत** वाली शैली में, और उससे पहले, **कृष्ण-चरित** प्रस्तुत किया था और वह हिन्दी का आदि **कृष्ण-काव्य** है। इससे पूर्व **विद्यापति** ने ही कदाचित् कृष्ण सम्बन्धी कुछ स्फुट पद प्रस्तुत किये थे; किन्तु वे पद भी हिन्दी की रचना नहीं कहे जा सकते; वे अवहट्ठ में हैं।

इस रचना के माध्यम से जायसी के अध्यात्म का एक सर्वथा अनजाना पक्ष सामने आता है। उन्होंने **पदमावत** के माध्यम से जो सूफी-आध्यत्मिकता और दर्शन प्रस्तुत किया है और उसमें प्रतीकात्मक रूप से जिस प्रेम के पीर की अभिव्यक्ति की है, उसका **कन्हावत** में अभाव है। इसमें ऐसा कुछ नहीं है जिससे उसे किसी सूफी-सन्त की रचना कह सकें। इसमें विशुद्ध अवतारबाद का प्रतिपादन है और अद्वैतवाद की मुक्त रूप से चर्चा की गयी है। **मलिक मुहम्मद जायसी** इस रचना के परिप्रेक्ष्य में सहज ही **जायसी दास** अनुमान किये जा सकते हैं।

फारसी लिपि की प्रकृति और लेखन-शैली कुछ इस ढंग की है कि उसमें किसी भाषा को लिख तो सकते हैं; पर उस लिपि में लिखी किसी भाषा को सहज भाव से यथावत पढ़ नहीं सकते। प्रत्येक शब्द और उसके रूप को समझने और निर्धारण करने में इतनी अधिक कठिनाई होती है कि किसी भी ग्रन्थ का पाठ कितने ही परिश्रम और सावधानी से तैयार किया जाय उसमें दोष रह ही जायेंगे। उदाहरण स्वरूप यदि **रामचन्द्र शुक्ल** सम्पादित **पदमावत** को देखें तो पायेंगे कि **माताप्रसाद गुप्त** और **वासुदेवशरण अग्रवाल** ने उसके पाठ-दोषों के बाहुल्य पर दृष्टिपात किया है और सुधारा है; फिर भी वे स्वयम् भी **पदमावत** का कोई विशुद्ध परिमार्जित पाठ प्रस्तुत नहीं कर सकें हैं। उनके संस्करणों में भी पाठ-दोषों की कमी नहीं है।

जायसी की यह रचना पाठकों के सामने एक ऐसी अकेली प्रति के आधार पर आ रही है, जिसे सावधानी से लिखी गयी प्रति नहीं कह सकते। इसमें नुक्तों का हेर-फेर तो है ही, मात्रा-सूचक जेर, जबर, पेश भी गायब हैं, अक्षरों शोशे खींचने में भी लिपिक ने लापरवाही बरती है। इन कारणों से अनेक स्थलों पर शब्दों की पहचान कर पाना सम्भव नहीं हो पाया है। यत्र-तत्र अनुमान का भी सहारा लेना पड़ा है। मेरे लिए यह सोचना-समझना और कहना आत्म-प्रवंचना ही होगी कि प्रस्तुत पाठ किसी भी रूप में दोष-मुक्त है। मैं इस बात से भली भाँति परिचित हूँ कि अनेक स्थलों पर पाठ की अस्पष्टता बनी हुई है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस पाठ के प्रस्तुत करने का मात्र औचित्य यह है कि इसके माध्यम से पाठक जायसी के अब तक अज्ञात रहे कृति से परिचित हो सकेंगे; उन्हें जायसी के देखने समझने की एक नयी दृष्टि प्राप्त होगी। सर्वोपरि यह किसी भावी पाठालोचक को इस रचना का संशुद्ध पाठ प्रस्तुत करने में नागरी-कैथी लिखी किसी हस्तलिखित प्रति के समान सहायक होगी।

माइक्रोफिल्म उपलब्ध होने के लगभग दो वर्ष पश्चात ही कन्हावत का यह पाठ प्रस्तुत करना सम्भव हो पाया, इसका मुझे हार्दिक खेद है। इसका कारण मेरी परिस्थितियों की विवशता ही है। जिन दिनों बर्लिन से माइक्रोफिल्म आयी मैं कतिपय आवश्यक एवं महत्वपूर्ण कार्यों में उलझा हुआ था। उन उलझनों को सुलझा भी न पाया था कि अप्रैल १९७८ में पत्नी अन्नपूर्णा, जिन्होंने समस्त पारिवारिक दायित्व ग्रहण कर मुझे सरस्वती-साधना के लिए मुक्त कर रखा है, अकस्मात घोर अस्वस्थ हो गयीं और एक वर्ष से अधिक काल तक रोगशय्या पर पड़ी रहीं। इस अवधि में अनेक क्षण ऐसे आये जब लगा मैं उन्हें खो रहा हूँ। इस मनःस्थिति में किसी प्रकार के लेखन-कार्य की बात सोच पाना मेरे लिए सम्भव न था। जब वे इस वर्ष कुछ स्वस्थ हुई तभी लिखने-पढ़ने की ओर मुड़ सका। इस कारण विलम्ब जो हुआ सो हुआ ही, अपने कार्य के प्रति भी आश्वस्त नहीं हो पाया। पाठकों को पढ़ते-पढ़ाते अनेक दोष दृष्टिगत होंगे, उनके लिए क्षमा चाहते हुए ज़ायसी के शब्दों में ही निवेदन है—

बोलत दोख परा जहँ होई। टूँट देखि नहिं बड़ सोई।।
सो मंत्री बड़ पंडित अपारू। जो निरगुन एक करै सँवारू।।

बौलियाबाग, रामकटोरा,
वाराणसी।
कृष्णाष्टमी, २०३७ वि०

परमेश्वरी लाल गुप्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कवि-परिचय

जिस किसी ने भी **मलिक मुहम्मद जायसी** की रचनाओं के सम्बन्ध में किसी प्रकार का भी ऊहापोह किया है, उसने उनके जीवन के सम्बन्ध में भी कुछ न कुछ चर्चा की है। इस प्रकार की चर्चा का मुख्य आधार **सैयद कल्बे मुस्तफा** द्वारा प्रस्तुत जीवन-परिचय है।[1] और **मुस्तफा** के कथन के मुख्य आधार अनुश्रुतियाँ हैं। किंवदन्तियों और अनुश्रुतियों में तथ्य के अंश तो हो सकते हैं, पर वे सर्वांश में सत्य हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता। जनप्रिय व्यक्तियों, महापुरुषों, सन्त-महात्माओं के पीछे नाना प्रकार की किंवदन्तियाँ प्रायः स्वाभाविक रूप से जुड़ जाया करती हैं। इन अनुश्रुतियों से लोक-मानस पर उनके व्यक्तित्व का प्रभाव का अनुमान तो किया जा सकता है पर बिना किसी प्रकार के विवेचन एवं अन्य आधार के उन्हें न तो प्रामाणिक रूप में स्वीकार किया जा सकता और न उनके आधार पर प्रस्तुत किसी जीवन-परिचय को प्रामाणिक कहा जा सकता।

जायसी ने अपनी रचनाओं में अपने सम्बन्ध में कहीं कुछ खुल कर नहीं कहा है। अनुसन्धित्सुओं ने ही उनकी पंक्तियों में उनके जीवन की घटनाओं के संकेतों को ढूँढ़ने की चेष्टा की है और उनकी अपने-अपने ढंग से व्याख्या प्रस्तुत की है। इस प्रकार के कथित प्रच्छन्न संकेतों और उन संकेतों की व्याख्या से किसी प्रकार का पुष्ट और प्रामाणिक तथ्य उभरता हो, ऐसा निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

प्रामाणिक सामग्री के अभाव में इन्हीं दोनों सूत्रों पर ही निर्भर रहना होगा। उनके बीच से अपने विवेक के सहारे ही कुछ कहा जा सकता है।

जन्म स्थान, परिवार और नाम

अनुश्रुतियों के अनुसार **मलिक मुहम्मद जायसी** का जन्म गाजीपुर (उत्तर प्रदेश) के एक दरिद्र मुसलमान परिवार में हुआ था।[2] उनके पिता का नाम शेख ममरेज बताया जाता है। कहा जाता है कि इनकी माँ मानिकपुर (जिला

---

१. मलिक मुहम्मद जायसी, १९४१।

२. नागरी प्रचारणी पत्रिका, १४, सं० १९९७, पृ० ३९१। रामखेलावन पाण्डेय ने एक ऐसी अनुश्रुति की चर्चा की है जिसमें कहा गया है कि जायसी का जन्म सासाराम (जिला भोजपुर, बिहार) में हुआ था। उन्हें उन्होंने शेरशाह का सहचर बताया है (हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, पृ० ३७७)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश) के अलहदाद की बेटी थीं। लोग इनके नाम **मलिक मुहम्मद** में **मलिक** शब्द को पूर्वजों से चली आती उपाधि मानते हैं और मानते हैं कि वे मलिक वंश के अरब थे। अरबी में **मलिक** शब्द का प्रयोग बादशाह अथवा सुलतान के अर्थ में होता है। मिस्र में **मलिक** सेनापति अथवा प्रधान मंत्री को कहते थे। फारसी में यह अमीर, जमींदार अथवा समृद्ध व्यापारी के अर्थ में प्रयुक्त होता रहा है। **मलिक** शब्द मात्र से **जायसी** के अरब होने अथवा मलिक वंश से सम्बन्ध रखने जैसा कोई अनुमान नहीं किया जा सकता। हमारी अपनी धारणा है कि गुलमुहम्मद, नूरमुहम्मद आदि नामों की तरह ही मलिक-मुहम्मद भी मात्र नाम है। जिस प्रकार दरिद्र हिन्दू अपने बेटे का नाम धनपत रख दिया करता है, उसी प्रकार **जायसी** के निर्धन पिता ने अपने बेटे का नाम मलिकमुहम्मद रख कर सन्तोष माना हो तो आश्चर्य क्या ? मेरी इस धारणा को **कन्हावत** की उस पंक्ति से बल मिलता है जिसमें उन्होंने अपने को कवि **मलिक मुहम्मद** कहा है।[1]

जन्मकाल

जायसी के जन्म काल के सम्बन्ध में विद्वज्जनों ने उनकी स्वरचित **आखिरी कलाम** की इस पंक्ति —

भा औतार मोर नौ सदी। तीस बरिस ऊपर कवि बदी ॥[2]

को आधार बना कर, स्वेच्छित व्याख्या के अनुसार, विभिन्न मत इस प्रकार प्रकट किये हैं—

वासुदेवशरण अग्रवाल	नवीं शती (हिजरी) में किसी समय।[3]
चन्द्रबली पाण्डे	८३० हिजरी।[4]
रामपूजन तिवारी	८७० हिजरी।[5]
शिवसहाय पाठक	८८१ हिजरी।[6]
रामचन्द्र शुक्ल	९०० हिजरी।[7]
कमल कुलश्रेष्ठ	९०६ हिजरी।[8]

१. कड़वक १३, पंक्ति ८।
२. कड़वक ४, पंक्ति १।
३. पदमावत, प्राक्कथन, पृ० ३२१।
४. नागरी प्रचारणी पत्रिका, १४, १९९०, पृष्ठ ३९७।
५. हिन्दी सूफी काव्य की भूमिका, पृष्ठ १७५; जायसी, पृष्ठ १५।
६. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृष्ठ ५७।
७. जायसी ग्रन्थावली, पृ० १८१।
८. मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० ५१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो सकता है कुछ अन्य विद्वानों ने भी अन्य तिथियाँ सुझायी हों पर वे मेरी दृष्टि में नहीं आ पायी हैं। इन सभी लोगों ने अपनी धारणा की पुष्टि में उपर्युक्त पंक्ति की जो विवेचना की है, उन सबकी समीक्षा करने की आवश्यकता नहीं। जायसी की रचनाओं की तिथियों[1] पर ध्यान देने पर इनमें से अनेक मत स्वयं असिद्ध हो जाते हैं।

वासुदेवशरण अग्रवाल का कथन कोई महत्व नहीं रखता; उनका अपना कोई सुनिश्चित मत नहीं है। **चन्द्रबली पाण्डे** कथित तिथि के अनुसार **जायसी** अपनी किसी भी रचना के समय ८० से और **पदमावत** की रचना के समय ९७ वर्ष से कम के न ठहरेंगे। यह अपने आप में अविश्वसनीय है। इसी प्रकार **रामचन्द्र शुक्ल** अथवा **कमल कुलश्रेष्ठ** कथित तिथि को महत्व देने पर उनकी रचनाएँ बाल-कालीन ठहरने लगेंगी, इस कारण वे भी कोई महत्व नहीं रखती। केवल **रामपूजन तिवारी** और **शिवसहाय पाठक** की तिथियाँ ही ऐसी हैं जो सम्भावना की परिधि में आ सकती हैं।

अपना मत व्यक्त करते हुए इन सभी विद्वानों ने

भा औतार मोर नौ सदी। तीस बरिस ऊपर कवि बदी।।

के आगे की पंक्तियों को नजरअन्दाज कर दिया है जो इस प्रकार है—

आवत उधतचार बढ़ ठाना। भा भुकम्प जगत अकुलाना।।
धरती दीन्ह चक्र बिधि भाईं। फिरैं अकाश रहट कै नाईं।।
गिरि पहार मेदिनि तस हाला। जस चाला चलनी भल चाला।।
मिरित लोक जेहि रचा हिंडोला। सरग पताल पवन घट डोला।।
गिरि पहार परबत ढहि गये। सात समुद्र कीच मिलि भये।।
धरती छाति फाटि भहरानी। पुन भइ मया जो दिस्टि दिठानी।।[2]

यद्यपि हम उपर्युक्त पाठ की शुद्धता के प्रति आश्वस्त नहीं है, तथापि इतना तो स्पष्ट है ही कि कवि ने किसी भयंकर भूकम्प की चर्चा की है, जिसे उसने अपनी आँखों देखा था। इतिहासकारों ने ९११ हिजरी में आगरा और उसके आस पास भयंकर भूकम्प होने का उल्लेख किया है। यह भूकम्प ३ सफर ९११ हिजरी (६ जुलाई १५०५ ई०) को आया था।[3] इससे पूर्व और पश्चात्

---

१. देखिये आगे।
२. आखिरी कलाम, कड़वक ४, पंक्ति २-७।
३. बाबरनामा, ईलियट, भाग ४, पृ० २१८; आइने-अकबरी, पृ० ४२१; बदायूनी, मुनतखब-उत-तवारीख, अनु० रैंकिंग, भाग १, पृ० ४२१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किसी भयंकर भूकम्प का उल्लेख भारतीय इतिहास में नहीं है। अतः यह निश्चित प्रायः है कि **जायसी** ने इसी भूकम्प का आँखों देखा वर्णन किया है।

कमल कुलश्रेष्ठ[1], **परशुराम चतुर्वेदी**[2] सदृश विद्वानों ने इस भूकम्प को जन्म के समय घटित माना है। यदि जायसी के कथनानुसार उनका जन्म नवी शती (हिजरी) में हुआ था तो भूकम्प वाली घटना उनके जन्म के समय की नहीं हो सकती। भूकम्प नवीं नहीं, दसवीं शती हिजरी के पूर्व पाद में आया था। दूसरी बात, यदि भूकम्प जन्म के समय की घटना होती तो घटना क्रम में कवि ने इसका उल्लेख **भा मोर औतार नौ सदी** के तत्काल बाद किया होता और भूकम्प वर्णन के बाद ही **तीस बरिस ऊपर कवि बदी** जैसी पंक्ति लिखा होता। घटना क्रम विपर्यय की कल्पना नहीं जा सकती। अतः कवि ने हमारी दृष्टि में, **आखिरी कलाम** की रचना-तिथि, अन्य रचनाओं की तरह अपनी सीधे-सीधे एक पंक्ति में न कह कर, पूरे कड़वक का उपयोग किया है। पूरे कड़वक का भाव यह है कि उसका जन्म नवीं शती (हिजरी) में हुआ था और तीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने लिखना आरम्भ किया; जिस वर्ष उन्होंने लिखना आरम्भ किया उस वर्ष भीषण भूकम्प आया था। दूसरे शब्दों में इसका तात्पर्य यह है कि **जायसी** ने तोस वर्ष की अवस्था में ९११ हिजरी में लिखना आरम्भ किया। इस प्रकार उसका जन्म काल निश्चित रूपेण ८८१ हिजरी माना जाना चाहिये। उपर्युक्त तथ्य को दृष्टि में रख कर ही **शिवसहाय पाठक** ने अपनी तिथि उपस्थित की है[3] पर वे उसे स्पष्ट ढंग से प्रस्तुत नहीं कर सके हैं।

व्यक्तित्व

जायसी के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में प्रवाद है कि वे कुरूप और काने थे। **सैयद कल्बे मुस्तफा** का कहना है कि वे लूले, लँगड़े और कुबड़े भी थे।[4] इसका संकेत उन्होंने **आखिरी कलाम** कि इस पंक्ति में देखने की चेष्टा की है—

नरकी औ पापी, टेढ़ि बदन, औ आँखि।[5]

किन्तु जिस कड़वक में यह कहा गया है उसका कोई वैयक्तिक सम्बन्ध **जायसी** से परिलक्षित नहीं होता। हाँ, **जायसी** ने अपने बायें आँख से काने और उसी ओर के कान से बहरे होने का संकेत अवश्य किया है—

---

१. मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० ७।
२. सूफी काव्य संग्रह, पृ० १४।
३. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ५५-५७।
४. मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० २१।
५. आखिरी कलाम, कड़वक १२, पंक्ति ८।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुहमद बाईं दिसि तजी, एक सुवन एक आँखि।[1]
एक नयन कवि मुहमद गुनी।[2]

अनुश्रुतियों के अनुसार चेचक के प्रकोप अथवा पक्षाघात से वे विकलांग हो गये थे। कहा जाता है कि जब उन्हें चेचक निकली थी तब उनकी माँ ने शाह मदार की मानता मानी थी। उनकी कृपा से जीवन तो मिला पर एक आँख जाती रही।[3]

जायसी की कुरूपता को लेकर एक प्रवाद यह भी है कि वे जब पहली बार शेरशाह के दरबार में गये तो शेरशाह उन्हें देख कर हँस पड़ा। सुलतान को हँसते देख दरबारी भी अट्टहास कर उठे। **जायसी** ने तब संयत भाव से पूछा—**मोहिका हँससि कि कोहरहिं** (मुझ पर हँस रहे हो या उस कुम्हार (ईश्वर) पर जिसने मुझे गढ़ा है)। यह सुनकर सुलतान लज्जित हुआ और क्षमा याचना की। इसी प्रवाद का उल्लेख अठारहवीं शती के कवि **मीर हसन देहलवी** ने भी अपने मसनवी **रिमूज-उल-आरिज (रिमूज-उल-आरफीन)** में किया है; अन्तर केवल इतना ही है कि उसने शेरशाह के स्थान पर अकबर का नामोल्लेख किया है। हमारी धारणा है कि उसने अकबर का नाम ठीक ही लिखा है और उसका तात्पर्य मुगल सम्राट अकबर से ही है;[4] अकबर नामक अवध के किसी छोटे मोटे जमींदार से नहीं, जैसा कि कुल लोगों की धारणा है।

बचपन और जवानी

अनुश्रुतियों के अनुसार जायसी बचपन में ही अनाथ हो गये थे और दर-दर भटकते फिरे। यह भी कहा जाता है कि उनका बचपन ननिहाल में बीता। वहीं से वे किसी समय जायस (जिला रायबरेली, उत्तर प्रदेश) आये और वहीं स्थायी रूप से रहने लगे।

इस प्रसंग में **आखिरी कलाम** की ये पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं—

जायस नगर मोर अस्थानू। नगर क नाँव आदि उदियानू॥
तहाँ देवस दस पहुँने आयउँ। भा बैराग बहुत सुख पायउँ॥[5]

---

१. पदमावत, कड़वक ३६७, पंक्ति १।
२. वहीं, कड़वक २१, पंक्ति १।
३. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ३८।
४. हमारी इस धारणा के लिए आगे देखिये पृ० ३५-३६।
५. कड़वक १०, पंक्ति १-२।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मलिक मुहम्मद पहुँना के रूप में जायस आये थे। **पहुँना** का सामान्य अर्थ **अतिथि** होता है। किन्तु भोजपुरी-अवधि क्षेत्र में इसका प्रयोग विशिष्ट अर्थ में किया जाता है। वहाँ जामाता को **पहुँना** कहते हैं। **मेहमान** (जो **अतिथि** का ही पर्याय है) शब्द का प्रयोग बिहार में मुक्त रूप से **जामाता** के लिए किया जाता है। अतः हमारी धारणा है कि उपर्युक्त पंक्तियों में **पहुँना** शब्द का प्रयोग कवि ने इसी विशिष्ट अर्थ में किया है। जायस में सम्भवतः उनकी सुसराल थी। वहाँ वे थोड़े दिनों के लिए दामाद (पाहुँन) के रूप में आये और किन्हीं परिस्थितियों में उन्हें वहाँ रह जाना पड़ा। वहीं उन्हें किसी कारण विराग हुआ।

वैराग्य

जायसी के वैराग्य के सम्बन्ध में जो अनुश्रुतियाँ हैं, उनके अनुसार वे आरम्भ से ही साधु प्रकृति के ईश्वर-भक्त थे। जब कभी वे अपने खेत में काम करते होते, खाना वहीं मँगा लेते। वहाँ वे खाना कभी अकेले नहीं खाते; जो कोई आस-पास होता उसे बुलाते और उसके साथ बैठ कर खाते। कहते हैं एक दिन खाना खाने के समय आस-पास कोई दिखाई नहीं पड़ा। वे किसी आगन्तुक के आने की प्रतीक्षा में बिना खाये बैठे रहे। थोड़ी देर बाद उन्हें एक कोढ़ी आता दिखाई पड़ा। उसे ही उन्होंने बुला लिया और दोनों साथ बैठ कर एक ही पात्र में भोजन करने लगे। कोढ़ी के शरीर से कोढ़ चू रहा था; तनिक सा मवाद भोजन में चू पड़ा। जायसी भोजन के उसी भाग को उठाने लगे; कोढ़ी ने हाथ पकड़ लिया। पर वे न माने ओर नेवाला उठाकर मुँह में डाल लिया। कहते हैं कोढ़ी तत्काल अदृश्य हो गया। इस घटना के बाद से **जायसी** ईश्वर भक्ति की ओर अधिकाधिक झुक गये।

वैराग्य के प्रसंग में एक अनुश्रुति यह भी है कि **जायसी** के सात बेटे थे और वे सातों यकायक मकान गिर जाने अथवा किसी ऐसी ही दुर्घटना में मर गये। इस घटना ने उन्हें संसार के प्रति विरक्त बना दिया और उन्होंने घर-बार छोड़ दिया।[1] किन्तु जायस छोड़ कर कहीं अन्यत्र जाने की बात किसी सूत्र से ज्ञात नहीं होती।

जिन भी कारणों से **जायसी** ने वैराग्य ग्रहण किया हो, सर्वमान्य तथ्य है कि वे सूफ़ी-दर्शन की ओर आकृष्ट थे। जिस सूफ़ी सम्प्रदाय को उन्होंने अपनाया, वह शेख निजामुद्दीन औलिया की परम्परा से सम्बद्ध चिश्तिया सम्प्र-

---

१. रामचन्द्र शुक्ल, जायसी ग्रन्थावली, भूमिका, पृ० ७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दाय था। चिश्तिया सम्प्रदाय के अन्तर्गत उन्होंने कालपी के शेख बुरहान से महदवी पन्थ की दीक्षा ली और वे महदवी कहलाये[1] और मुहक्किक-ए-हिन्द (भारतीय सत्य के अन्वेषी) के रूप में ख्याति प्राप्त की।[2]

पीर और गुरु

जायसी ने प्रायः अपनी सभी रचनाओं में अपने सम्प्रदाय-सम्बन्ध की अभिव्यक्ति के लिए दो कड़वकों का उपयोग किया है। एक में पीर का और दूसरे में गुरु का उल्लेख है। जायसी-साहित्य के अध्येताओं ने पीर और गुरु के अन्तर पर विचार न कर **जायसी** की दो गुरु-परम्पराओं की बात बार-बार कही है। आवश्यकता इस बात की बनी हुई है कि इन दोनों के बीच के अन्तर को पहले समझा जाय और तब कुछ कहा जाय।

रामपूजन तिवारी ने अपनी पुस्तक **सूफीमत, साधना और साहित्य** में इस ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि 'सूफी-साधना में परमात्मा से एकत्व प्राप्त करने

> की प्रक्रिया में बताया गया है कि साधक को मुर्शीद (गुरु) का बराबर चिन्तन करना चाहिये। गुरु अपनी आध्यात्मिक शक्ति द्वारा साधना में रत शिष्य की रक्षा करता है और साधना पथ पर अग्रसर होते रहने में उसकी सहायता करता रहता है। गुरु उसके प्रत्येक विचार और कर्म का दर्शक बना रहता है। इस प्रकार साधना करते-करते एक ऐसी स्थिति आती है कि साधक सभी मनुष्यों और सभी वस्तुओं में गुरु को ही देखता है। इसे सूफी 'गुरु में लय कर देना' कहते हैं। गुरु अपनी अलौकिक शक्ति से शिष्य की इस स्थिति को सहज ही जान जाता है। इस स्थिति के आने पर गुरु उस साधक को सम्प्रदाय के संस्थापक दिवंगत पीर की दिव्य शक्ति के अधीन कर देता है और गुरु की शक्ति के सहारे साधक पीर को प्रत्यक्ष करता है। साधक फिर पीर का अंग बन जाता है और दिव्य शक्ति का अधिकारी हो जाता है। इसे 'पीर में लय' कर देना कहते हैं।[3]

अन्यत्र उन्होंने चिश्ती सम्प्रदाय में दीक्षित होने के नियम बताते हुए कहा है कि 'प्रथम नाम मात्र को भोजन तथा फकीरी जीवन बिताने के लिए साधक

> को आदेश दिया जाता है। वह उस समय एकान्त-सेवन करता है। इसके बाद उससे कहा जाता है कि वह गुरु (मुर्शीद) का ध्यान करे। इस ध्यान की प्रक्रिया को विशेष रूप से सम्पादित करने के लिए उससे कहा जाता है।

---

१. मुस्लिम रिवाइवलिस्ट मूवमेंट इन इण्डिया, पृ० १३१-१३३, २७३।

२. हिस्ट्री आव सूफीज्म इन इण्डिया, भाग १, पृ० १७०।

३. सूफीमत, साधना और साहित्य, पृ० ३५३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसे फिर एक पवित्र नाम बताया जाता है जिसे वह किसी दरगाह में जाकर जपता रहता है। चालिस दिनों तक उपवास करते हुए उसे जप करना पड़ता है। तब उसे सम्प्रदाय की वंश परम्परा बतायी जाती है।[1]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पीर और गुरु एक दूसरे के पर्याय नहीं हैं। पीर का महत्व गुरु से अधिक है। इस परिप्रेक्ष्य में जायसी के दोनों कड़वकों को अलग-अलग समझना होगा।

जायसी ने अपने पीर की चर्चा अपने ग्रन्थों में इस प्रकार की है :—

(१) मानिक एक पायउँ उजियारा। सैयद अशरफ पीर पियारा।।
जहाँगीर चिश्ती निरमरा। कुल जगमाँ दीपक बिधि धरा।।
औ निहंग दरिया जल माहाँ। बूड़त कहँ धरि काढ़त बाहाँ।।
समुँद माँझ जो बोहित फिरई। लै वै नाँव सहूँ होत तरई।।
तिन घर हौं मुरीद सो पीरू। सँवरत बिन गुन लावै तीरू।।
कर गहि धरम पन्थ देखरायउ। गा भुलाइ तेहि मारग लायउ।।
जो अस पुरुसैं मन चित लाये। इच्छा पूजै आस तुलाये।।[2]

(२) सैयद अशरफ पीर पियारा। तिंह मोंहि पन्थ दीन्ह उजियारा।।
मारग हुत अँधियार असूझा। भा अजोर जब जाना बूझा।।
खार समुद्र पाय मोर मेला। बोहित धरम लीन्ह कइ चेला।।
उन मोर करिय पोर कर गहा। पायउँ तीर घाट जो अहा।।
जाकँह अइस होइ गुनधारा[3]। तुरत बेगि सो पावइ पारा।।
दस्तगीर गाढ़े कै साथी। जहँ अवगाह देहि तँह हाथी।।

---

१. वही, पृ० ४४७।

२. आखिरी कलाम, कड़वक ९।

३. माताप्रसाद गुप्त और वासुदेवशरण अग्रवाल दोनों ने अपने संशुद्ध संस्करणों में यहाँ 'कँडहारा' पाठ दिया है। फारसी लिपि में 'कँडहारा' और 'गुनधारा' दोनों एक ही तरह काफ (गाफ), नून, दाल, हे, अलिफ, रे और अलिफ से लिखे जायेंगे। अन्यत्र इस बात की चर्चा की जा चुकी है कि मध्यकाल में गाफ के लिए भी काफ का प्रयोग होता था। इन विद्वानों ने कँडहारा पाठ स्वीकार कर इसका अर्थ 'कर्णधार' किया है। ध्यातव्य है कि नौकानयन में नाविक तीन प्रकार के होते हैं :—(१) डाँड चलाने वाला-इसका काम डाँड के सहारे नाव को गति देना होता है। इसको 'खेवक' या 'खेवैया' कहते हैं। (२) पतवार सँभालने वाला—इसका काम पानी काट कर नाव आगे बढ़ाना तथा दिशा नियन्त्रित करने के लिए पतवार का संचालन करना होता है। इसे करिया (संस्कृत कर्णधार) कहते हैं। (३) रस्सी के सहारे नाव को किनारे खींचने वाला—छिछले पानी में जहाँ डाँड नाव को गति देने में असमर्थ होता है, नाविक रस्सी के सहारे नाव को आगे खींचता है। इस काम को करने वाले को 'गुनधार' कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जहाँगीर ओइ चिश्ती, निहकलंक जस चाँद।
ओइ मरन हम जग तरै, हौं उनके घर बाँद॥[1]

(३) सैयद अशरफ पीर पियारा। हौं मुरीद सेवों तिह बारा॥
जहाँगीर चिश्ती वै राजे। समुँद माँहि बोहित जिन साजे॥
उलँघि पार दरिया वे गये। भये सो पार करी जिन गहे॥
धरमी हुए गये संसारा। लाभ मूल सब ते भये पारा॥
जिन्ह सेये ते दुहु जग तरे। निरमल भये पाप तिन्ह हरे॥
हाजी अहमद हाजी पीरू। दीन्ह बाँह जिन समुँद गंभीरू॥
सेख कमाल जलाल दुनियारा। दुओ सो गुनन बहुत बहु बारा॥
अस मखदूम बोहित लइन, धरम करम कर चाल।
करिआ शेख मुबारक, खेवट शेख जमाल॥[2]

(४) कहौं सरीयत चिश्ती पीरू। उधरित अशरफ औ जँहगीरू॥
तेहि के नाव चढ़ा हौं धाई। देखि समुद जल जिउ न डेराई॥
जेहि कै ऐसन खेवक भला। जाइ उतरि निरभय सो चला॥
राह हकीकत परै न चूकी। पैठि मारफत मार बुड़की॥
ढूँढि उठै लइ मानिक मोती। जाइ समाइ जोति महँ जोती॥
जेहि कहँ उन्ह अस नाव चढ़ावा। कर गहि तीर खेइ लेइ आवा॥[3]

(५) कहौं शरीयत पीर पियारा। सैयद असरफ जग उजियारा॥
साजा जहाँगीर कुल माँहाँ। धूप जरत पाये जग छाहाँ॥
निरमल चिश्ती निरमल भेसू। भूले सबहि दीन्ह उपदेसू॥
समुंद माँह बोहित अस खेवहि। लागहि पार बार जो सेवहि॥
[–न] बोहित लीन्हि चढ़ाई। समुँद देखि जल जीउ न डराई॥
भा दरसन हिय निर्मल भयऊ। पायउ धरम पाप सब गयऊ॥
अस जो सेवइ मन चित लाई। ईंछा पूजै आस तुलाई॥
दास भयों हौं तिह कर, नित तिह सेवों बार।
गाढ़ परै मोहि जँहवाँ, बेगि करहिं निस्तार॥[4]

इन सभी कड़वकों में जायसी ने सैयद अशरफ जहाँगीर को अपने पीर के रूप में स्मरण किया है और उन्हें चिश्ती सम्प्रदाय से सम्बद्ध बताया है।

---

१. पदमावत, कड़वक १८।
२. चित्ररेखा, पृ० ७३; किंचित संशोधित पाठ।
३. अखरावट, कड़वक २६, पंक्ति २-७।
४. कन्हावत, कड़वक ७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ए० जी० शिरेफ के कथनानुसार सैयद अशरफ जहाँगीर निजामुद्दीन औलिया की चौथी पीढ़ी में हुए थे और शेख अलाउल हक के शिष्य थे।[1] सैयद हसन असकरी का कहना है कि वे कछौछा (जिला फैजाबाद, उत्तर प्रदेश के ख्यातमना सन्त थे।[2] अख्यार-उल-अख्यार में सैयद अशरफ नामक एक महान सन्त का उल्लेख है; उनके सम्बन्ध में कहा गया है कि उनकी मृत्यु ८४० हिजरी में हुई थी।[3] राजपूताना गजेटियर में इसी नाम के एक सन्त की मृत्यु तिथि ८०८ हिजरी कही गयी है।[4] रामपूजन तिवारी का कहना है कि सैयद अशरफ की दरगाह जायस में विद्यमान है।[5] यदि सैयद अशरफ जहाँगीर की दरगाह जायस में है, तब तो सन्देह जैसी कोई बात ही नहीं रह जाती। जायसी ने इसी दरगाह में बैठ कर सूफी-साधना पद्धति के अनुसार पीर के रूप में सैयद अशरफ जहाँगीर की साधना की होगी और उस दरगाह की देख भाल करते रहे होंगे। इस दृष्टि से उनका यह कथन सर्वथा सार्थक है—

तिन घर हौं मुरीद।[6]
हौं उनके घर बाँद।[7]
दास भयों हौं तिह कर, नित तिह सेवों बार।[8]

चित्ररेखा की पूर्व उद्धृत कड़वक की पंक्ति ६-९ में सैयद अशरफ जहाँगीर के प्रसंग में हाजी अहमद, हाजी पीर, शेख कमाल, शेख जलाल, शेख मुबारक और शेख जमाल का उल्लेख हुआ है। इनकी ओर अब तक न तो शिवसहाय पाठक ने, जिन्होंने **चित्ररेखा** का सम्पादन किया है, और न **जायसी** के किसी अन्य अध्येता ने ध्यान दिया है। **जायसी** ने इन्हें धर्म के बोहित के नाविकों के रूप में स्मरण किया है। यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि ये लोग सूफी सन्त रहे होंगे। किन्तु **सैयद अशरफ** अथवा **जायसी** से उनका क्या और किस प्रकार का सम्बन्ध था, ज्ञात नहीं होता। इस प्रसंग में **पदमावत** के निम्नलिखित कड़वक की ओर ध्यान जाता है, जो सैयद अशरफ सम्बन्धित कड़वक के ठीक नीचे है—

---

१. पदुमावति, १९४४, पृ० १७।
२. जर्नल आव बिहार रिसर्च सोसाइटी, ३९, पृ० ३०।
३. हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, पृ० ३६८।
४. शिवसहाय पाठक, मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ६१, ६३ पा० टि० ३।
५ जायसी, पृ० १८।
६. आखिरी कलाम, कड़वक ९, पंक्ति ५।
७ पदमावत, कड़वक १८, पंक्ति ९।
८. कन्हावत, कड़वक ७, पंक्ति ९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उन्ह घर रतन एक निरमरा । हाजी शेख सुभागइ भरा ।।
तिह कर दुइ दीप उजियारे । पंथ देइ कँह दई सँवारे ।।
शेख मुबारक पूनिउँ करा । शेख कमाल जगत निरमरा ।।

× × × ×

जिह दरसे औ परसे पाया । पाप हरा निरमल भै काया ।।[1]

इन पंक्तियों से ऐसा अनुमान होता है कि पीर सैयद अशरफ की दरगाह के गद्दीशीन शेख मुबारक और शेख कमाल थे । उन्हीं की छत्रछाया में **जायसी** उस दरगाह में रहते रहे होंगे ।

चित्ररेखा के पूर्वोक्त कड़वक की अन्तिम पंक्ति में शेख मुबारक और शेख जमाल का उल्लेख है, जिन्हें सरलता के साथ **पदमावत** में उल्लिखित शेख मुबारक और शेख कमाल के रूप में पहचाना जा सकता है । शेख मुबारक नाम तो दोनों में समान है ही, केवल दूसरे नाम में कमाल और जमाल का अन्तर है । यह कदाचित पाठ-दोष का परिणाम है । सही कौन है यह प्रमाण अपेक्षित है । इनके परिप्रेक्ष्य में यह सहज अनुमान किया जा सकता है कि **चित्ररेखा** चर्चित अन्य सन्त हाजी अहमद, हाजी पीर, शेख कमाल और शेख जलाल भी सैयद अशरफ के दरगाह के पूर्ववर्ती गद्दीनशीन रहे होंगे ।

सुधाकर द्विवेदी और **जार्ज ग्रियर्सन** ने सैयद अशरफ जहाँगीर की परम्परा में केवल चार नामों का उल्लेख इस प्रकार किया है[2]—

सैयद अशरफ जहाँगीर
|
शेख हाजी
|
शेख मुबारक — शेख कमाल

स्पष्टतः यह **पदमावत** की ही पंक्तियों पर आधारित है । किन्तु **पदमावत** की पंक्तियों में ऐसा कुछ नहीं है जिससे कहा जा सके कि शेख हाजी, सैयद अशरफ जहाँगीर के तत्काल बाद हुए । इसी प्रकार यह भी नहीं कहा जा सकता कि शेख हाजी के तत्काल बाद शेख मुबारक और शेख कमाल हुए थे । **जायसी** ने

१. पदमावत, कड़वक १८ ।
२. पदुमावति, भूमिका, पृ० ११ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पदमावत में परम्परा के केवल मुख्य सन्तों का नामोल्लेख किया है। उसे परम्परा-क्रम मानना भ्रमात्मक होगा। चित्ररेखा में परम्परा का विस्तृत उल्लेख है। इस परम्परा-क्रम का उस परम्परा-क्रम से बहुत कुछ साम्य है जिसे शिवसहाय पाठक ने, बिना किसी सूत्र उल्लेख के जायसवाली परम्परा के नाम से प्रस्तुत किया है।[१] दोनों सूचियाँ इस प्रकार हैं —

जायस-परम्परा	जायसी-सूची
१. सैयद अशरफ जहाँगीर	सैयद अशरफ जहाँगीर
२. शाह अब्दुर्रज्जाक	×
३. शाह सैयद अहमद	हाजी अहमद; हाजी पीर
४. शाह अब्दुर्रज्जाक	शेख कमाल
५. शाह सैयद हाजी	शेख हाजी
६. शाह जलाल	शेख जलाल
७. शाह सैयद कमाल	शेख मुबारक
८. शाह मुबारक बोदले	शेख कमाल (जलाल)

इन दोनों सूचियों में अन्तिम चार नाम (५–८) समान हैं; अन्तिम दो नामों में केवल क्रम का अन्तर हैं। हो सकता है ये दोनों सन्त जायसी के ज्येष्ठ समकालिक रहे हों, इस कारण ही यह व्यत्तिक्रम हो। प्रथम चार नामों में भी दो (१ और ३) एक से ही हैं। अन्तर केवल दो नामों (२ और ४) में है। जायस-परम्परा में दोनों स्थलों पर शाह अब्दुर्रज्जाक का नाम हैं। प्रामाणिक सूत्रों के अनुसार हाजी अब्दुर्रज्जाक सैयद अशरफ जहाँगीर के दत्तक पुत्र एवं शिष्य थे। अतः जायस-परम्परा में सैयद अशरफ के बाद उनका नामोल्लेख अपनी उचित जगह पर है। दूसरे अब्दुर्रज्जाक (क्रम-संख्या ४) के सम्बन्ध में किसी सूत्र से कोई सूचना उपलब्ध नहीं है। जायसी की सूची में शाह अब्दुर्रज्जाक (क्रम-संख्या २) समानान्तर कोई नाम नहीं है।

अगले नाम हाजी अहमद के साथ हाजी पीर का उल्लेख हुआ है। यदि हम इसे स्थान विपर्यय मानें तो इस स्थान पर हाजी पीर का नाम रखा जा सकता है। उस अवस्था में यह कल्पना हो सकती है कि हाजी पीर से शाह अब्दुर्रज्जाक का ही तात्पर्य है। दूसरी सम्भावना यह भी है कि शाह अब्दुर्रज्जाक के पाँच बेटे थे। उनमें से किसी का नाम हाजी पीर रहा हो। दूसरे अब्दुर्रज्जाक (क्रम संख्या ४) के समानान्तर जायसी-सूची में शेख कमाल का नाम है। जायस की

१. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ६० ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मौखिक परम्परा से अधिक प्रामाणिक **जायसी** की सूची को स्वीकार करना होगा। जायस-परम्परा में अब्दुर्रज्जाक का दुबारा उल्लेख अग्राह्य है, इस नाम के कोई सन्त नहीं हुए।

इन सूचियों के परिप्रेक्ष्य में, जायसनिवासियों का यह विश्वास की **जायसी** मुबारक शाह के शिष्य थे, हमें बहुत कुछ सत्य के निकट प्रतीत होता हैं। मुबारक शाह सैयद अशरफ के पौत्र थे, इस भ्रम का उपर्युक्त विवेचन से निराकरण होने पश्चात, वास्तविक तथ्य यह उभरता हैं कि शेख मुबारक और शेख कमाल जायसी के सम-सामायिक थे और उनके संसर्ग और सेवा में रह कर उन्होंने ज्ञानार्जन किया था। यह पंक्ति—

जिन्ह दरसे औ परसे पाया। पाप हरा निरमल भौ काया॥[1]

इसी बात की ओर संकेत करती है। **जायसी** ने इनमें से किसी को अपना गुरु नहीं कहा है; जायस के लोगों ने ही इनके सानिध्य और सेवा-भाव को देख कर गुरु-शिष्य की कल्पना कर ली होगी।

गुरु

जायसी ने **आखरी कलाम** में पीर की तो चर्चा की है पर गुरु और गुरु-परम्परा का उसमें कोई उल्लेख नहीं है। देखने में यह बात कुछ विचित्र सी लगती है पर है तथ्यपरक। हम आगे चल कर देखेंगे कि **आखिरी कलाम** उनकी आरम्भकालिक रचना है। हमारी दृष्टि में उसमें गुरु-परम्परा के अभाव का अर्थ यह है कि उस समय तक **जायसी** सैयद अशरफ जहाँगीर के दरगाह के मुरीद तो हो चुके थे और वहाँ के गद्दीनशीनों के सम्पर्क में रह कर ज्ञानार्जन भी कर रहे थे, पर उन्होंने उनमें से किसी से शिष्य के रूप में दीक्षा ग्रहण नहीं की थी। जब उन्होंने गुरु-दीक्षा ले ली, तब वे गुरु और गुरु-परम्परा का उल्लेख अपनी रचनाओं में करने लगे।

उनकी रचनाओं में हमें गुरु-परम्परा का उल्लेख इस प्रकार उपलब्ध होता है —

(१) महदीं गुरू शेख बुरहानू। कालपि नगर तेहिं क अस्थानू॥
मक्कइ चौथ कहहि जस लागा। जिन्ह वै छुए पाप तिन्ह भागा॥[2]

(२) गुरु महदीं खेवक मैं सेवा। चलै उताइल जिन्ह कर खेवा॥
अगुवा भयउ शेख बुरहानू। पंथ लाई जेंहि दीन्ह गियानू॥

---

१. पदमावत, कड़वक १९, पंक्ति ७।

२. चित्ररेखा, पृष्ठ ७४।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अलहदाद भल तिह कर गुरू। दीन दुनिय रोशन सुरखुरू ।।
सैयद महमद कै ओइ चेला। सिद्ध पुरुख संगम जेहि खेला ।।
दानियाल गुरु पन्थ लखाये। हजरत ख्वाज खिजिर तिन्ह पाये ।।
भये प्रसन्न ओइ हजरत ख्वाजे। लाइ मिरये जिन्ह सैयद राजे ।।
उन्ह सों मैं पाई सब करनी। उधरी जीभ प्रेम कवि बरनी ।।

ओइ सो गुरू हौं चेला, निति बिनओं भा चेर।
उन हुत देखइ पायों, दरस गोसाई केर ।।[1]

(३) पायउँ गुरु मोहदीं मीठा। मिला पन्थ सो दरसन दीठा ।।
नाँव पियार सेख बुरहानूं। नगर कालपी हुत थानूं ।।
औ तिंह दरस गोसाईं क पावा। अलहदाद गुरु पन्थ देखावा ।।
अलहदाद गुरु सिद्ध नवेला। सैयद मुहम्मद कै वै चेला ।।
सैयद मुहमद दीनहि साँचा। दानियाल सिख दीनस वाचा ।।
दानियाल तँह परगट कीन्हा। हजरत ख्वाज खिजिर पथ दीन्हा ।।
जुग जुग अमर सो हजरत ख्वाजे। हजरत नबी रसूल नेवाजे ।।

खरग दीन्ह उन्ह जाहि कँह, देखि डरै इबलीस।
जपा जपत सो भागे, धुनै ओट होइ सीस ।।[2]

(४) कहौं तरीकत अगुवा गुरू। रोशन दीन दुनीं सुरखुरू ।।
नाँव पियार शेख बुरहानू। नगर कालपी हुत थानूँ ।।
औ तिंह दरस गुसाँई क पावा। अलहदाद गुरु पन्थ लखावा ।।
अलहदाद कुल सिद्ध नवेला। सैयद मुहमद कै सिख चेला ।।
सैयद मुहमद महदीं साँचाँ। दानियाल दुनीं सिध बाचा ।।
दानियाल लौ परगट कीन्हा। हजरत ख्वाजा खिज्रहि दीन्हा ।।
जुग जुग अम्मर ख्वाजे। हजरत नवी रसूल नेवाजे ।।

खरग दीन्ह वै जाको, देखा वह इबलीस।
जपा जपत सों भागै, धुनै औहट भा सीस ।।[3]

जायसी-साहित्य के अध्येताओं ने **पदमावत** के कड़वक के आधार पर जायसी की गुरु-परम्परा निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है —

---

१. पदमावत, कड़वक २०।
२. अखरावट, कड़वक २७।
३. कन्हावत, कड़वक ८।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सैयद राजे
|
हजरत ख्वाजा खिज्र
|
दानियाल
|
सैयद मुहम्मद
|
अलहदाद
|
शेख बुरहान
|
मेहदी (मुहीउद्दीन मेहदी)

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने **चित्ररेखा** के आधार पर बड़े ही आश्वस्त भाव से कहा है—**जायसी** के वास्तविक गुरु निःसन्दिग्ध रूप से कालपी वाले मुहीउद्दीन थे यह सिद्ध हो जाता है।[1] उनके इस कथन में **चित्ररेखा** के सम्पादक **शिवसहाय पाठक** को जायसी के गुरु के सम्बन्ध में प्रचलित विवाद का पूर्ण समाधान[2] मिला है। किन्तु तथ्य ठीक इसके विपरीत है। **चित्ररेखा** में महदी शब्द शेख बुरहान के लिए विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है—**महदीं गुरु शेख बुरहान्**। इन विद्वानों को इतनी दृढ़ता के साथ अपना मत प्रकट करने से पूर्व यह तो देखना ही चाहिये था कि कालपी के सन्त शेख बुरहान के मुहीउद्दीन नाम के कोई शिष्य हुए भी थे या नहीं। साहित्यिक सन्दर्भ में किसी ऐतिहासिक बात को कहते हुए इतिहास को नजर-अन्दाज करना साहित्यिक ईमानदारी नहीं है। सूफी चिश्ती परम्परा में मुहीउद्दीन नामक एक ही सन्त ज्ञात हैं और वे सैयद अशरफ की परम्परा में हुए थे। यदि **जायसी** का अभिप्राय उनसे होता तो जहाँ उन्होंने पीर से सम्बन्धित परम्परा में गद्दीनशीनों की नामावली दी है, वहीं वे उनका भी उल्लेख करते।

महदी, जिसका पाठ **माताप्रसाद गुप्त** ने **पदमावत** और **अखरावट** में **मोहदी** स्वीकार किया है, वस्तुतः फारसी **महदवी** है, जो चिश्ती सम्प्रदाय के एक पन्थ का नाम है। शेख बुरहान के सम्बन्ध में **आइन-ए-अकबरी** में स्पष्ट कहा गया है कि वे महदवी थे। **अखबार-उल-अखयार**, **अखबार-उल-असफिया** और **गुलजारे-अबरार** में भी उनके महदवी होने का उल्लेख है[3]। वस्तुतः शेख बुरहान महदवी

---

१. चित्ररेखा, भूमिका, पृ० १०।

२. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, ५०, ७५।

३. सैयद हसन असकरी, जर्नल आव बिहार रिसर्च सोसाइटी, ३९, पृ० ३५।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही जायसी के गुरु थे, कल्पना-प्रसूत मुहीउद्दीन नहीं। इसी से जायसी भी 'महदवी' कहे जाते थे।[1]

इसी प्रकार की एक और भूल गुरु-परम्परा समझने में जायसी-साहित्य के अनुसन्धित्सुओं ने की है। उन्होंने हजरत ख्वाजा खिज्र को दानियाल का गुरु और सैयद राजे का शिष्य मान लिया है। इन लोगों ने पदमावत की पंक्ति—

भये प्रसन्न ओइ हजरत ख्वाजे। लाइ मेरये जिन्ह सैयद राजे।।

पर समुचित रूप से ध्यान नहीं दिया है। इसका सीधा सादा भाव है—'उन (दानियाल) पर वे (हजरत ख्वाजा खिज्र) प्रसन्न हुए, जिनसे सैयद राजे ने उनकी भेंट करायी थी।' इन लोगों ने यदि सूफी साहित्य और उनके परंपरागत विश्वासों पर तनिक भी ध्यान दिया होता तो सहज ही जान पाते कि ख्वाजा खिज्र किसी लौकिक सन्त का नाम नहीं है वरन् वे एक आनुश्रुतिक काल्पनिक सन्त हैं जो अमर हैं और उनका अस्तित्व सृष्टि के अन्त तक बना रहेगा। उनका सम्बन्ध जल से माना जाता है और मत्स्य उनका वाहन कहा गया है। लोक-प्रवाद है कि उनके प्रसन्न होने से मंगल होता है और उनके स्मरण से जल के कारण अनिष्ट नहीं होता। जिन पर खिज्र की कृपा होती है, उसे सभी विद्याएँ सुलभ हो जाती हैं। सूफी लोगों का अटूट विश्वास है कि वे ईश्वर का अनुग्रह प्राप्त सन्तों को परमात्मा के गुप्त नाम से परिचित कराते हैं।[2] सैयद राजे की कृपा से दानियाल को ख्वाजा खिज्र का सानिध्य प्राप्त हुआ था। इस प्रकार दानियाल के गुरु सैयद राजे हैं, ख्वाजा खिज्र नहीं।

वस्तुतः जायसी की गुरु-परम्परा स्पष्ट रूप से इस प्रकार है :—

सैयद राजे
|
दानियाल
|
सैयद मुहम्मद
|
अलहदाद
|
शेख बुरहान

---

१. मुस्लिम रिवाइवलिस्ट मूवमेंट इन नर्दर्न इण्डिया, पृ० १३३, २७३।

२. विशेष जानकारी के लिए देखिये—रामपूजन तिवारी, सूफीमत, साधना और साहित्य, पृ० ३३८-४१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सैयद राजे—सैयद राजे से तात्पर्य सैयद राजे हामिद शाह से समझा जाता है। वे मनिकपुर में चिश्तिया सम्प्रदाय की गद्दी स्थापित करने वाले शेख हिशामुद्दीन (मृत्यु ८५३ हिजरी) के शिष्य थे। वे अपने पीर की आज्ञा से जौनपुर चले आये थे पर वहाँ वे टिके नहीं, शीघ्र ही अपने पूर्व स्थान मानिकपुर लौट गये थे। वहीं ९०१ हिजरी में उनकी मृत्यु हुई।[1] शेख हिशामुद्दीन शेख निजामुद्दीन औलिया की पाँचवीं पीढ़ी में बताये जाते हैं।

दानियाल—शेख दानियाल के सम्बन्ध में **मारिज-उल-विलायत** के आधार पर **खजीनत-उल-असफिया** में कहा गया है कि वे सैयद राजे हामिद शाह के शिष्य थे। किन्तु वे चिश्ती सम्प्रदाय का भारत में प्रसार करने वाले अजमेर के ख्वाजा मुइनुद्दीन हसन संजरी के इतने मुरीद थे कि उनकी कृपा से ख्वाजा खिज्र ने प्रकट होकर उनका पथ-प्रदर्शन किया था।[2] इसी से वे शेख दानियाल खिज्री कहलाते थे। **तारीख-ए-मुहम्मदी** नामक ग्रन्थ के आधार पर अमेठी के शेख अब्दुर्रहमान चिश्ती ने **मीरात-उल-असरार** में लिखा है कि दानियाल शर्की सुलतान हुसेन शाह के समय जौनपुर आये और वहाँ उनके अनेक शिष्य हुए।[3]

सैयद मुहम्मद—सैयद मुहम्मद, शेख दानियाल खिज्री के उन दो शिष्यों में से एक हैं जो हजरत मुहम्मद के वंशज थे। वे ऊँच के सैयद बड़ के बेटे थे और जौनपुर में शिष्य बने थे। सैयद मुहम्मद अपनी साधना समाप्त कर सुलतान महमूद के शासनकाल में गुजरात चले गये। वहाँ उन्होंने अपने को महदी (महदवी) घोषित किया और **महदवी** नाम से अपना पन्थ चलाया। उनके शिष्य उन्हें **महदी अखीर-उज्जमाँ** और **इमाम-ए-महदियान** कहा करते थे। ९१० हिजरी में फरह (बलूचिस्तान) में किसी ने उनकी हत्या कर दी।[4]

अलहदाद—**अखबार-उल-असफिया** में **अलहदाद** नामक दो सन्तों का उल्लेख मिलता है। वे दोनों ही जौनपुर के थे। एक तो राजे हामिद शाह के शिष्य कहे जाते हैं और वे अलहदिया नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्होंने तर्क और न्याय के अनेक ग्रन्थों की रचना की थी। **गुलजारे-अबरार** के अनुसार वे ९४० हिजरी में जीवित थे।[5] दूसरे अलहदाद राजे हामिद शाह के पुत्र और उत्तराधिकारी सैयद नूरुद्दीन

---

१. वासुदेवशरण अग्रवाल, पदमावत, प्राक्कथन, पृ० ५२।
२. सैयद हसन असकरी, जर्नल आव बिहार रिसर्च सोसाइटी, ३९, पृ० ३३।
३. वही, पृ० ३३।
४. वही, पृ० ३०-३१।
५. वही, पृ० ३४।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राजे के शिष्य थे। उनकी मृत्यु ९२० हिजरी में हुई।[1] सैयद मुहम्मद के शिष्य अलहदाद इन दोनों से ही भिन्न कोई अन्य सन्त रहे होंगे जिनके सम्बन्ध में सम्प्रति कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है।

शेख बुरहान—अखबार-उल-असफिया के अनुसार शेख बुरहान का नाम शेख बुरहानुद्दीन अनसारी था और वे ताजुद्दीन अनसारी के बेटे थे। वे नित्य शेख अबुल मलिक के मदरसे जाया करते और उनके चरणों में बैठे रहते। इसके लिए जब किसी बुजुर्गवार ने तीन बार टोका और ईश्वर में लौ लगाने की बात कही तो उनका काया पलट हुआ और वे संसार से विरक्त हो गये। उन्होंने एक ऐसी तंग कोठरी में बैठ कर साधना आरम्भ की जिसमें वे पूरी तरह टाँग फैला कर सो नहीं सकते थे। साधना में वे अपने को भूल से गये और पक्के खाने का त्याग कर दिया। केवल दूध और थोड़ी सी दही लिया करते थे। जो लोग उनके पास जाते थे उनका कहना था कि वे पेट के बल पड़े रहते थे। शरीर से वे इतने दुर्बल हो गये थे कि उनका कंकाल मात्र दिखाई पड़ता था। उन्होंने हिन्दी में अनेक रचनाएँ की थीं। उनके दोहे बहुत प्रसिद्ध रहे हैं। **आइने-अकबरी** के अनुसार उनकी मृत्यु सौ वर्ष की आयु में ९७० हिजरी में हुई। एक अन्य सूत्र के अनुसार उनकी मृत्यु १८ जमाद-उस्सानी ९७५ हिजरी मानी जाती है।[2]

उपर्युक्त विवंचन के अनुसार जायसी के पीर और गुरु दोनों ही शेख निजामुद्दीन औलिया की ही परम्परा में थे किन्तु उनका सम्बन्ध एक दूसरे से सर्वथा भिन्न शाखाओं से था।

आध्यात्मिकता और चिन्तन-धारा

जायसी-साहित्य के अध्येताओं ने **जायसी** के पीर और गुरु के सम्बन्ध में ऊहापोह करने के प्रयास तो किये पर उनमें से किसी ने भी उनके चिन्तन-धारा के विकास-क्रम की कहीं कोई चर्चा नहीं की है। इस सम्बन्ध में हम अपनी दृष्टि से कुछ कहना प्रासंगिक समझते हैं।

जायसी की अब तक जो भी रचनाएँ प्रकाश में आयी हैं उन पर ध्यान पूर्वक विचार करने पर यह तथ्य सामने आता है कि ९३६ हिजरी से पूर्व वे किसी समय जायस आ चुके थे और शेख अशरफ जहाँगीर की दरगाह के मुरीद बन गये थे। इस समय तक इस्लाम धर्म की परम्परागत रूढ़ियों और विश्वासों

---

१. वही, पृ० ३४।
२. वही, पृ० ३३-३४।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तक ही उनकी धार्मिक आस्था सीमित थी और उन पर उनका अटूट विश्वास था। इसके बाद वे शीघ्र ही भारतीय परम्परा के सन्तों के सम्पर्क में आये और इन्हें ईश्वर-चिन्तन का भारतीय दृष्टिकोण प्राप्त हुआ। सन्त-संसर्ग के परिणाम-स्वरूप सन्तों की ही चिन्तन-धारा के अनुरूप उन्हीं के रूपक-विधानों में उन्होंने **कहरानामा** में ईश्वर का गुणगान किया। इस समय तक उन्होंने किसी को भी अपना गुरु स्वीकार नहीं किया था अर्थात किसी से उन्होंने किसी प्रकार की साम्प्रदायिक दीक्षा नहीं ली थी। इसके बाद ही किसी समय उन्होंने शेख बुरहान से सूफी चिश्ती सम्प्रदाय के 'महदवी' पंथ की दीक्षा ली होगी।

सूफी सम्प्रदाय में दीक्षित होने के बावजूद कुछ दिनों तक वे भारतीय भक्ति-भावना से ओत-प्रोत रहे; फलस्वरूप उन्होंने वृन्दावन की यात्रा की। कदाचित वहाँ कुछ दिन रहे भी। वहाँ वे भारतीय अवतारवाद अद्वैतवाद, भक्ति और कृष्ण-गोपी की प्रेम-भावना से परिचित हुए और उन्होंने ९४७ हिजरी में **कन्हावत** (कृष्ण-कथा) की रचना की। इसमें कहीं भी वह सूफी आध्यात्मिक भावना दृष्टिगत नहीं होती जिसके लिए **जायसी** की ख्याति है।

इसके पश्चात् ही किसी समय सूफी प्रेम-भावना का उन्होंने भारतीय भक्ति-भावना के परिप्रेक्ष्य में मनन-चिन्तन किया होगा। उनके इस चिन्तन का परिणाम **अखरावट** में परिलक्षित होता है। **पदमावत** को सम्भवतः उन्होंने जीवन के अन्तिम दिनों में उस समय प्रस्तुत किया जब उन्होंने सूफी प्रेम की पीर की गहरी अनुभूति प्राप्त कर ली।

मित्र

जिस प्रकार **जायसी** ने अपने पीर और गुरु की चर्चा की है, उसी प्रकार उन्होंने **पदमावत** में अपने चार मित्रों का भी उल्लेख किया है :—

चार मीत कवि मुहम्मद पाये। जोरि मिताई सरि पहुंचाये॥
युसुफ मलिक पंडित औ ग्यानी। पहिले भेद बात उन्ह जानी॥
पुनि सलार खादिम मति माहाँ। खाँड़ दान उभै निति बाहाँ॥
मियाँ सलोने सिंह अपारू। वीर खेत रन खरग जुझारू॥
सेख बड़े बड़ सिद्ध बखाने। कई अदेस सिद्धन्ह बड़ माने॥
चारो चतुरदस गुन पढ़े। औ संग जोग गुसाई गढ़े॥
बिरिख जो होइ चन्दन पासा। चन्दन होइ बेधि तिह बासा॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुहमद चारेउ मीत मिलि, भये जो एकइ चित्त ।।
एहि जग साथ जो निबहा, ओहि जग बिछुरन कित्त[1] ।।

ये पंक्तियाँ वहुत कुछ उन पंक्तियों के सदृश हो हैं जिनमें **जायसी** ने पैगम्बर मुहम्मद के चार मित्रों का वर्णन किया है।[2]

पैगम्बर के मित्रों और **जायसी** के मित्रों के गुणों में भी प्रायः एक सी सामानता दिखाई पड़ती है। जिस प्रकार हजरत मुहम्मद के चार मित्र थे उसी प्रकार उन्होंने भी अपने चार मित्रों का उल्लेख किया है। जाना पड़ता है पैगम्बर और अपने नाम की एकता ने ही उनकी चार मित्रों की कल्पना को जन्म दिया है।

वस्तुस्थिति जो भी हो, जायसी के चार मित्र होने की बात अनुश्रुतियों में भी उपलब्ध है। लोगों ने उनका अस्तित्व जायस में ही ढूँढ़ निकाला है। इन लोगों के कथनानुसार युसुफ मलिक कंचाना मुहल्ले के निवासी थे; उनके वंश का अब कोई नहीं है। सालार खादिम को सालार-पट्टी का निवासी बताया जाता है। वे अत्यन्त बुद्धिमान, तलवार के धनी और दानी जमींदार थे। वे पुत्र-हीन थे, उनकी बेटी के वंशज आज भी कंचाना मुहल्ले में रहते हैं। कहा जाता है कि वे शाहजहाँ के समय तक जीवित थे। पर यह बात विश्वसनीय नहीं जान पड़ती। मियाँ सलोने नाम के तीन व्यक्तियों का पता जायस में मिलता है। कौन से मियाँ सलोने जायसी के मित्र थे कहा नहीं जा सकता। वैसे जनश्रुति के अनुसार वे तीनों ही वीर और धन-सम्पन्न थे, उन तीनों से ही जायसी का स्नेह-सम्बन्ध था। शेख बड़े नाम के पाँच व्यक्ति जायस निवासी बताये जाते हैं।[3] जायसी के स्व-कथनानुसार जिन शेख बड़े से उनकी मित्रता थी, वे सिद्ध पुरुष थे। अपने चारों मित्रों के सम्बन्ध में जायसी का कहना है कि वे विद्वान् (चौदह विद्याओं के ज्ञाता) थे। उनके सम्पर्क में आकर ही उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ, ऐसा उनके कथन से ध्वनित होता है।

रचनाएँ

(१) पदमावत—यह **जायसी** की सर्वाधिक चर्चित, सर्वश्रेष्ठ और प्रौढ़ रचना है। इसमें रतनसेन और पद्मावती के प्रेमाख्यान के रूप में सूफी चिन्तन-धारा के अनुरूप ईश्वरोन्मुख प्रेम का चित्रण हुआ है। **शिवसहाय पाठक** ने अपने

---

१ कड़वक, ८२।

२. पदमावत, कड़वक ११; चित्ररेखा, पृ० ७२; कन्हावत, कड़वक ४।

३. नागरी प्रचारणी पत्रिका, भाग २१, पृ० ५३-५६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शोध-प्रबन्ध में इसकी लगभग चालीस हस्तलिखित प्रतियों की सूचना प्रस्तुत की है।[1] इनके अतिरिक्त हमें भी अन्य अनेक प्रतियों का पता है। लखनऊ संग्रहालय तथा दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में इसकी कई प्रतियाँ हैं। काशी के भारत कला भवन में भी इसकी एक से अधिक प्रतियाँ हैं। इनके अतिरिक्त जब तब इस रचना की हस्तलिखित प्रतियाँ प्रकाश में आती रहती हैं। इसी वर्ष फरवरी में राष्ट्रीय कला-क्रय समिति की काशी वाली बैठक में एक फारसी प्रति लेकर कोई मुसलमान सज्जन आये थे; किन्तु वह क्रय न की जा सकी। ये सभी प्रतियाँ मुख्यतः शाहजहाँ काल से लेकर मुहम्मदशाह के काल तक (सतरहवीं-अठारहवीं शती ई०) की हैं। उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध में, लीथो प्रिंटिंग का प्रचार हो जाने से, इसकी छपी प्रतियाँ उपलब्ध होने लगीं। इस दिशा में पहल लखनऊ और कानपुर के प्रेसों ने की थी। इस काल में प्रकाशित अधिकांश संस्करण फारसी लिपि के हैं। एक आध ही संस्करण नागरी लिपि में निकले।

पदमावत की ओर ध्यान आकृष्ट करने का श्रेय **गार्साँ द तासी** नामक फ्रेंच विद्वान को है। उन्होंने अपने हिन्दी और हिन्दुस्तानी साहित्य के इतिहास[2] के दूसरे संस्करण में, जो मूलतः फ्रेंच में है, **जायसी** का संक्षिप्त परिचय देते हुए इसका उल्लेख किया। उनके इस उल्लेख का आधार सम्भवतः **स्प्रेंगर** की सूची है जो १८५७ ई० में प्रकाशित हुई थी और उसमें प्रसंगवशात् ही **जायसी** के **पदमावत** की चर्चा है।[3] तदनन्तर हिन्दी साहित्य के प्रसंग में **जायसी** की चर्चा की जाने लगी। व्यवस्थित रूप से **पदमावत** के सम्पादन का कार्य १९११-१२ ई० में सर्व प्रथम **सुधाकर द्विवेदी** और **जी० ए० ग्रियर्सन** ने किया था।[4] तदनन्तर

---

१. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० १२७-१३१। इस सूची में लीथो में छपी कतिपय प्रतियों का भी समावेश है (संख्या ६-७)। इसके अतिरिक्त उदयपुर पुस्तकालय की प्रति का दो बार (संख्या २३, २७) उल्लेख है। ईस्ट इण्डिया हाउस पुस्तकालय की प्रति (संख्या १२) के रूप में कामनवेल्थ रिलेशन्स आफिस वाली प्रति (संख्या १२) का उल्लेख है। यह भूल इस तथ्य पर ध्यान न देने के कारण हुई है कि ईस्ट इण्डिया हाउस पुस्तकालय, ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समाप्त हो जाने जाने पर इण्डिया हाउस पुस्तकालय कहा जाने लगा था और अब वही ब्रिटिश उपनिवेशों के अन्त के पश्चात कामनवेल्थ रिलेशन्स आफिस पुस्तकालय कहलाता है।

२. इस्त्वार द ला लितरेत्यूर ऐंदुई एँ ऐंदुस्तानी। इस ग्रन्थ के दो संस्करण प्रकाशित हुए थे। पहला १८३७ और १८४७ ई० के बीच दो खण्डों में और दूसरा १८७०-७१ ई० में तीन खण्डों में। पहले संस्करण में सम्भवतः जायसी का कोई उल्लेख नहीं है। जायसी की चर्चा दूसरे संस्करण में ही की गयी है।

३. कैटलाग आव द बिब्लियोथेका ओरिएण्टलिस स्प्रेंगियाना, पृ० ६४१, संख्या ६३५।

४. रायल एशियाटिक सोसाइटी आव बंगाल, कलकत्ता से प्रकाशित।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१९२४ ई० में इसे विस्तृत भूमिका के साथ **रामचन्द्र शुक्ल** ने **जायसी ग्रन्थावली** के रूप में प्रकाशित किया।[1] १९५१ ई० में **माताप्रसाद गुप्त** ने[2] और १९५५ ई० में **वासुदेवशरण अग्रवाल**[3] ने अपने संशुद्ध पाठालोचित (क्रिटिकल) संस्करण प्रस्तुत किये। इनके बाद **पदमावत** के संस्करण अनेक लोगों ने प्रकाशित किये किन्तु वे सभी प्रायः उपर्युक्त तीनों संस्करणों की अनुकृति मात्र हैं। उन्हीं के आधार पर जायसी-साहित्य का आलोड़न, चिन्तक-मनन हो रहा है और शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

जायसी ने **पदमावत** की रचना कब की, इस बात को लेकर विद्वानों के बीच मतभेद रहा है और आज भी वह मतभेद यथावत् बना हुआ है। **जायसी** ने अपनी इस रचना के २४वें कड़वक की पहली पंक्ति में इस कथा के आरम्भ करने की तिथि दी है, जो उसकी उपलब्ध प्रतियों में एक सी नहीं है। उनमें यह तिथि ९२७,[4] ९३६,[5] २४५,[6] ९४७[7] और ९४८[8] के रूप में पायी जाती है। अधिकांश प्रतियों का पाठ ९२७ या ९४७ है; अन्य तिथियाँ अब तक किसी एक प्रति में ही मिली हैं।

रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी **जायसी ग्रन्थावली** के प्रथम संस्करण में ९४७ पाठ दिया था, दूसरे संस्करण में उन्होंने बदल कर ९२७ कर दिया। इस प्रकार इस विवाद का जन्म हुआ। शाहे-वक्त के रूप में **पदमावत** में शेरशाह का उल्लेख है और ९२७ हिजरी में शेरशाह दिल्ली का सुलतान न था, इस आधार पर **ए० जी० शिरेफ** ने **रामचन्द्र शुक्ल** द्वारा स्वीकृत पहली तिथि ९४७ को ही मान्यता दी।[9] इसी बात को पकड़ कर **माताप्रसाद गुप्त** ने अपने संस्करण में

---

१. नागरी प्रचारणी सभा, काशी से प्रकाशित।
२. हिन्दुस्तानी एकाडेमी, इलाहाबाद से प्रकाशित।
३. साहित्य सदन, चिरगाँव (झाँसी) से प्रकाशित।
४. अनेक प्रतियाँ, जिनका विवरण हमने अपने लेख 'पदमावत की तिथि' (परिषद् पत्रिका, पटना, वर्ष ३ अंक १, पृष्ठ ७२-७५) में दिया है। अराकन के कवि अल.ओल ने भी अपने अनुवाद में यह तिथि दी है।
५. भारत कला भवन (काशी) की कैथी प्रति।
६ रायल एशियाटिक सोसाइटी (लन्दन) की कैथी प्रति। माताप्रसाद गुप्त ने इस तिथि को कामनवेल्थ रिलेशन्स पुस्तकालय की प्रति बी० ६ में देखा था। इस प्रति को हमने भी देखा है, उसमें यह तिथि नहीं है।
७. रजा पुस्तकालय, रामपुर की प्रति।
८. बिहार शरीफ की प्रति।
९. पदुमावति, भूमिका।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

९४७ पाठ स्वीकार किया है। वासुदेवशरण अग्रवाल ने इसे अमान्य ठहराते हुए अपने संस्करण में ९२७ पाठ दिया है। अपनी इस तिथि के समर्थन में उन्होंने एक स्वतन्त्र लेख भी लिखा है।[1] इस लेख के प्रत्युत्तर स्वरूप माताप्रसाद गुप्त ने भी एक लेख लिखा जिसमें उन्होंने अनुमान और तर्क के सहारे स्व-स्वीकृत तिथि ९४७ को सिद्ध करने का प्रयत्न किया है।[2] इनसे बहुत पूर्व चन्द्रबली पाण्डे ने इस प्रसंग में इस ऐतिहासिक तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया था कि शेरशाह का राज्याभिषेक ७ शव्वाल ९४८ हिजरी को हुआ था, इससे पूर्व वह दिल्ली का सुलतान न था।[3] इस तथ्य के विरुद्ध शिवसहाय पाठक ने इस बात का उल्लेख किया है कि शेरशाह ने हुमायूँ को कन्नौज के युद्ध में ९४७ हिजरी आरम्भ होने के ९ दिन बाद परास्त किया था, अतः ९४७ हिजरी में शेरशाह का दिल्ली सुल्तान के रूप में वैभववन्त उल्लेख असंगत नहीं है।[4]

इतिहास की दृष्टि से ९ मुहर्रम ९४७ हिजरी को हमायूँ का शेरशाह के हाथों कन्नौज के मैदान में परास्त होना और शेरशाह का दिल्ली के तख्त पर ७ शव्वाल ९४८ हिजरी को राज्याभिषेक होना दोनों ही अपने स्थान पर निर्विवाद हैं। किन्तु इस प्रसंग में ध्यातव्य बात तो यह है कि इस्लामी परम्परा के अनुसार राज्य के प्रत्येक उत्तराधिकारी, विजेता, अथवा राज्याधिकार का दावा करने वाले के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक था कि वह सबसे पहले मसजिद में अपने नाम का खुतबा पढ़वाये और टकसाल से अपने नाम का सिक्का प्रचलित करे। राज्याभिषेक तो मात्र औपचारिकता थी। ९४७ हिजरी में शेरशाह ने दिल्ली के किसी मसजिद में अपने नाम का खुतबा पढ़वाया या दिल्ली या आगरा की टकसाल से अपने नाम का सिक्का प्रचलित किया था, ऐसा किसी भी ऐतिहासिक सूत्र से ज्ञात नहीं होता। अतः ९४७ हिजरी में शेरशाह दिल्ली का मान्य सुलतान था ऐसा नहीं कहा जा सकता।

शेरशाह के नाम से ९४८ हिजरी से पूर्व का बिहार से पश्चिम के किसी भी टकसाल से ढला कोई सिक्का अब तक अनजाना है। ९४६ और ९४८ हिजरी के बीच ढले उसके सभी सिक्कों पर टकसाल के नाम के स्थान पर जहाँपनाह शब्द मिलता है। तत्कालीन शासन-व्यवस्था में, शासक की सवारी के साथ, जहाँ अन्य साधन-सामग्री जाया करती थी, वहीं टकसाल का एक पूरा

१. परिषद पत्रिका (पटना), वर्ष २, अंक ३।
२. वही, वर्ष २, अंक ४।
३. नागरी प्रचारणी पत्रिका, १२, पृ॰ १४२।
४. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य पृ॰ १३६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कारखाना भी चला करता था और आवश्यकतानुसार उस टकसाल से यात्रा अथवा सैनिक व्यय के लिए सिक्के ढाले जाते थे। ऐसे सिक्कों पर किसी स्थान विशेष का नाम दिया जाना आवश्यक न था। **पड़ाव** का संकेत प्रस्तुत करने वाले किसी भी शब्द से उसकी अभिव्यक्ति पर्याप्त थी। शेरशाह के सिक्कों पर **जहाँपनाह** शब्द इसी का सूचक था। इसका भाव था कि सिक्के उस स्थान से प्रचलित किये गये हैं जहाँ जहाँपनाह (संसार के रक्षक अर्थात् सुलतान) उस समय थे। यदि ९४८ हिजरी से पहले शेरशाह आगरा (अथवा दिल्ली) में सत्तारूढ़ होता तो उसे **जहाँपनाह** नाम से सिक्के निकालने की आवश्यकता न होती; वह सीधे-सीधे अपने सिक्कों पर आगरा अथवा दिल्ली का नाम देता। दूसरी ओर यह भी दृष्टव्य है कि यदि हुमायूँ कन्नौज के युद्ध के पश्चात् अपने सिंहासन से वस्तुतः अपदस्थ हो गया होता तो ९४७ हिजरी के उसके नाम के सिक्के कभी प्रचलित न किये जाते। लन्दन के ब्रिटिश संग्रहालय में हमने हुमायूँ के नाम के आगरा की टकसाल के चाँदी के दो ऐसे सिक्के देखे हैं जिन पर ९४७ हिजरी की स्पष्ट तिथि है।[1] यह कल्पना करना कि वे ९४७ हिजरी के प्रथम ९ दिनों में ही ढाले गये थे दूर की कौड़ी लाना होगा। ये सिक्के इस बात के प्रबल प्रमाण हैं कि हुमायूँ अभी भी सत्तावान था। इस प्रकार ९४७ हिजरी में शेरशाह को दिल्ली का सुलतान कहना ऐतिहासिक असत्य है।

मुद्राओं के इन साक्ष्यों के रहते हुए यह कल्पना नहीं की जा सकती कि जायसी जैसे ज्ञानी सन्त सामाजिक और राजनीतिक परम्पराओं से अनभिज्ञ थे और उन्होंने मात्र कन्नौज-विजय के आधार पर बिना किसी खुतबे और सिक्के के शेरशाह को दिल्ली का सुलतान मान लिया था। वस्तुतः उन्हें ९४७ में हुमायूँ के शासक बने रहने की जानकारी थी और **कन्हावत** में, जो इसी वर्ष की रचना है, उन्होंने उसे शाहे-वक्त के रूप में स्मरण भी किया है। यदि **जायसी** ने वस्तुतः **पदमावत** में शाहे-वक्त के रूप में शेरशाह की प्रशंसा की है तो वह ९४८ हिजरी से पूर्व की रचना कदापि नहीं हो सकती।

प्रामाणिक ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर ९४७ हिजरी के रूप में **पदमावत** के रचनाकाल के निरस्त हो जाने पर भी इस बात की आवश्यकता तो बनी ही रहती है कि इस बात की टोह ली जाय कि उसकी रचना की वास्त-

---

१. लेखक द्वारा प्रस्तुत ब्रिटिश संग्रहालय की मुगल-सम्राटों के मुद्राओं की सूची, सिक्का संख्या ६२-६३। यह सूची प्रकाशनार्थ यन्त्रस्थ है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विक तिथि क्या है ? इस दृष्टि से हमने एक लेख में[१] जिसमें हमने उक्त ऐतिहासिक तथ्यों की चर्चा की है, **पदमावत** की उन चौदह प्रतियों का विवेचन किया है, जिनका उपयोग **माताप्रसाद गुप्त** ने अपने संस्करण के संशुद्ध पाठ उपस्थित करने के लिए किया था। इन १४ प्रतियों में से दो को उन्होंने स्वयं महत्व नहीं दिया है। शेष १२ प्रतियों में से ७ में निसंदिग्ध रूप से ९२७ पाठ है। शेष पाँच प्रतियों में तिथि पढ़ने में कदाचित **माताप्रसाद गुप्त** ने भूल की है। यदि किसी प्रति में ९४७ पाठ है भी तो वह ९२७ की ही विकृति है। इस परिप्रेक्ष्य में हमने उस पंक्ति पर भी विचार किया है जिसमें तिथि का उल्लेख है। इस पंक्ति को **माताप्रसाद गुप्त**[२] और **वासुदेवशरण अग्रवाल**[३] ने इस रूप में स्वीकार किया है—

सन नौ सै सैतालिस (सताइस) अहै।
कथा अरम्भ बैन कवि कहै॥

ध्यान देने की बात यह है कि इस पाठ में **'अहै'** और **'कहै'** वर्तमान-कालिक क्रियाएँ हैं। इस प्रकार इसका भाव होगा कि 'इस समय सन् ९४७ (९२७) हिजरी है और कवि कथा आरम्भ कर रहा है।' जिस कड़वक में शेरशाह का उल्लेख है, उसके परिप्रेक्ष्य में देखने पर ऐसा प्रतिध्वनित होता है कि यह बात शेरशाह के दिल्ली सुलतान होने के काल की वर्तमान-कालिक है। इसके विपरीत ऐतिहासिक तथ्य यह है कि ९२७ और ९४७ हिजरी, दोनों ही शेरशाह के शासन काल के अन्तर्गत नहीं आते। यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो इस पंक्ति में 'अहै' और 'कहै' का प्रयोग **जायसी** की प्रकृति के प्रतिकूल पड़ता है और उसमें अपने आप एक खटक उभरती है। हमारी दृष्टि में यहाँ ये दोनों क्रियाएँ वर्तमान-कालिक न होकर भूत-कालिक हैं और उनका वास्तविक पाठ **'अही'** और **'कही'** है। **'अहै-कहै'** और **'अही-कही'** दोनों ही फारसी लिपि में एक ही तरह लिखे जाते हैं। इन क्रियाओं के भूत-कालिक होने का अनुमान **रामचन्द्र शुक्ल** के पाठ **'अहा'** और **'कहा'** से भी होता है। भूत-कालिक रूप में इस पंक्ति का भाव होगा—जिस समय ९२७ (९४७) हिजरी था, उस समय कवि ने इस ग्रन्थ की रचना आरम्भ की। इस प्रकार हमने उस समय यह बात कही थी यह पंक्ति कड़वक १३ की मुखापेक्षी न होकर स्वतन्त्र है।

हमारे इस कथन का प्रच्छन्न रूप से अर्थ यह होता है कि **जायसी** ने **पदमावत** की रचना तो ९२७ हिजरी में आरम्भ की, पर उसे उन्होंने शेरशाह के

---

१. परिषद पत्रिका (पटना), वर्ष ३, अंक १, पृष्ठ ७२-७६।
२. जायसी ग्रन्थावली, पृ० १३५।
३. पदमावत, पृ० २७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शासन-काल में, ९४८ और ९५२ हिजरी के बीच किसी समय पूरा किया। किन्तु **पदमावत** की रचना में बीस बरस से भी अधिक समय लगा होगा, यह कल्पना अपने आप में अविश्वसनीय सी है। **कुतबन** ने अपनी **मिरगावती** की, जिसमें ४३२ कड़वक हैं केवल दो मास दस दिन में पूरा किया था।[1] **पदमावत** आकार में उससे ड्योढ़ा है, इसमें ६५३ कड़वक हैं। जिस गति से **कुतुबन** ने अपनी **मिरगावती** लिखी थी यदि वही लेखन गति **जायसी** की भी रही हो तो उन्होंने उसे ३॥-४ मास में ही पूरा कर लिया होगा। यदि इसे स्वीकार न कर यह कल्पना करें कि वार्धक्य के कारण **जायसी** प्रति दिन एक कड़वक से अधिक न लिख पाते रहे होंगे तब भी उन्हें **पदमावत** के पूरा करने में दो वर्ष से अधिक न लगे होंगे। यद्यपि लेखन-काल और शाहे-वक्त के रूप में शेरशाह के उल्लेख का एक दूसरे से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, फिर भी दोनों का समन्वय अथवा समाधान आवश्यक है।

रामपूजन तिवारी ने इसका समाधान यह कह कर करना चाहा है कि **पदमावत** की रचना का आरम्भ तो ९२७ हिजरी में हुआ और समाप्ति बाद में कभी हुई। शेरशाह वाला अंश निश्चित रूप से उस समय जोड़ा गया जब शेरशाह दिल्ली के सिंहासन पर बैठा और उसकी कीर्ति चारो ओर फैल गयी।[2] किन्तु इस मत से सहमत हो पाना सम्भव नहीं है कि १३वाँ कड़वक, जिसमें शेरशाह का उल्लेख है, बीस बरस बाद जोड़ा गया होगा। कड़वक अपने रूप में काव्य के समुचित क्रम में है। पीछे से जोड़े जाने का उसमें कोई आभास नहीं है। हाँ, यह सम्भावना अवश्य हो सकती है कि जिस समय ९२७ हिजरी में उन्होंने रचना आरम्भ की उस समय के शाहे-वक्त का नाम उन्होंने इस कड़वक में दिया होगा, बाद में उस नाम के स्थान पर शेरशाह का नाम रख दिया गया। किन्तु तब प्रश्न यह उपस्थित होगा कि **जायसी** जैसे महान सन्त को अपनी वृद्धावस्था में, जब वे आसन्न-मृत्यु रहे होंगे, इस प्रकार की चाटुकारिता पूर्ण परिर्वतन की आवश्यकता क्यों हुई ? इस प्रकार की कोई बात सोचना, उस दिवंगत महान आत्मा का अपमान करना ही नहीं उनके प्रति अन्याय करना भी होगा।

सैयद अतहर अब्बास रिजवी ने इसका समाधान दूसरे ढंग से करने का प्रयास किया है। उनका कहना है कि **जायसी** ने **पदमावत** का आरम्भ साहित्यिक रचना के प्रारम्भिक अभ्यास (प्लीमिनरी लिटरेरी एक्सरसाइज)

---

१. परमेश्वरीलाल गुप्त, मिरगावती. पृ० १५-१८।

२. जायसी; पृ० ३३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के रूप में ९२७ हिजरी (१५२०-२१ ई०) में किया होगा और शेरशाह के शासन काल में उसे गम्भीरता से ग्रहण कर १५४० ई० में पूरा किया।[1] इतिहासकार होते हुए भी **रिजवी** ने अपनी इस कल्पना में ९४७ हिजरी में शेरशाह की दिल्ली-सुलतान मान लेने की भूल की अथवा असावधानी बरती है। इस बात को तनिक देर के लिए नजरअन्दाज भी कर दिया जाय और मान भी लिया जाय कि शेरशाह के दिल्ली पर अधिकार करते ही **जायसी** ने **पदमावत** का परिष्कृत संस्करण तैयार कर दिया था, तब भी प्रश्न यह उभरता है कि **जायसी** ने इस बात का स्पष्ट उल्लेख क्यों नहीं किया? **कुतुबन** ने अपनी **मिरगावती** में ग्रन्थ के आरम्भ और समाप्त करने दोनों की तिथियाँ देकर एक उदाहरण प्रस्तुत कर दिया था।[2] उसे अपनाने में **जायसी** को क्या कठिनाई थी? वे सहज ही इस आशय की एक पंक्ति उपसंहार के कड़वक ६५२-५३ में जोड़ सकते थे अथवा एक स्वतंत्र कड़वक में उसका उल्लेख कर सकते थे। निष्कर्ष यह कि ९४७ की तिथि तो अमान्य है ही, ९२७ तिथि की भी शेरशाह के साथ कोई संगति नहीं है।

हमारी अपनी कुछ ऐसी धारणा है कि **पदमावत** की रचना तिथि के रूप में उपलब्ध सभी तिथियाँ और शाहे-वक्त के रूप में शेरशाह का नाम दोनों ही प्रक्षिप्त हैं और वे शाहजहाँ-काल से पूर्व के किसी ऐसी प्रति के प्रतिलिपिक के प्रमाद के परिणाम हैं, जिनसे परवर्ती सभी प्रतियाँ अनुकृत हुई हैं। हमारी अपनी उद्‌भावना तो यह है कि **जायसी** ने शाहे-वक्त के रूप में अकबर का और रचना-काल के रूप में ९५७ का उल्लेख किया रहा होगा। फारसी लिपि में **अकबरशाह** का **शेरशाह** और **सतावन** का **सताइस** अथवा **सैतालिस** लिखा और पढ़ा जाना सहज सम्भावना की परिधि में है।

शाहे-वक्त के रूप में शेरशाह के अतिरिक्त किसी दूसरे शासक की कल्पना पूर्ववर्ती विचारकों के लिए इस कारण सम्भव न थी कि वे इस बात से अपरिचित रहे कि **जायसी** अकबर के समय तक जीवित रहे। उनके अकबर के समय तक जीवित रहने का उल्लेख **कुसूरी** ने **मारिज-उल-विलायत** में किया है।[3] **जायसी** के अकबर के समय तक जीवित रहने का समर्थन **मीर हसन देहलवी** के मसनवी **रमूज-उल-आरफीन** से भी होता है।[4] **जायसी** ने जिस विस्तार के साथ और

---

१. रिजवी, अ अर्ली हिस्ट्री आफ सूफिज्म इन इण्डिया, भाग १, पृ० ३७०।
२. परमेश्वरीलाल गुप्त, मिरगावती, पृ० १५-१८।
३. रिजवी, अर्ली हिस्ट्री आव सूफीज्म इन इण्डिया, १, पृ० ३७१।
४. देखिए पीछे पृ० १३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिन शब्दों में शाहे-वक्त की प्रशंसा की है, वह शेरशाह की अपेक्षा अकबर पर ही अधिक चरितार्थ होता है।

इन तथ्यों के बावजूद हम स्वयं अनुभाव करते हैं कि हमारी यह उद्भावना क्लिष्ट-कल्पना ही कही जायेगी। **जायसी** ने शाहे-वक्त को दिल्ली-सुलतान कहा है।[1] अकबर के समय मुगल-साम्राज्य का केन्द्र दिल्ली नहीं आगरा था। **जायसी** ने आगरा को दिल्ली समझने की भूल कदापि न की होगी। इस आधार पर हमारी इस धारणा की सहज ही उपेक्षा की जा सकती है। वैसी अवस्था में शेरशाह को शाहे-वक्त मानते हुए बिहारशरीफ वाली प्रति में दी गयी तिथि ९४८ हिजरी प्रामाणिक स्वीकार करना होगा। किन्तु इस तिथि को स्वीकार कर लेने पर **पदमावत** और **कन्हावत**[2] दोनों एक ही काल की, एक वर्ष के अन्तर से ही लिखी रचनाएँ ठहरेंगी। इन दोनों रचनाओं की चिन्तन-धारा में इतना अधिक वैषम्य है कि हमारे लिए दोनों को किसी भी अवस्था में एक कालिक रचना मानना सम्भव नहीं है। **कन्हावत** कृष्ण-भक्ति की विशुद्ध भारतीय परम्परा की रचना है और **पदमावत** में सूफी प्रेम-पीर का रंग चढ़ा हुआ है। ऐसी अवस्था में **कन्हावत** को, जो हुमायूँ के काल की रचना है, अपने स्थान से हटा नहीं सकते **पदमावत** के समय को ही पीछे लाना होगा और तब दिल्ली-सुलतान वाली बात को विशेष महत्व न देकर अकबर वाली हमारी क्लिष्ट कल्पना पर ही गम्भीरता से विचार करना होगा। **कन्हावत** में **जायसी** ने हुमायूँ को दिल्ली का ही बादशाह कहा है। इसको दृष्टि रखकर यदि गम्भीरता से विचार किया जा सके तो **पदमावत** की तिथि सम्बन्धी सारे विवाद समाप्त हो जाते हैं।

(२) **अखरावट**—इस रचना की किसी हस्तलिखित प्रति के यूरोप के किसी पुस्तकालय में होने की बात हिन्दी साहित्य के इतिहास के आदि लेखक **गार्सा द तासी** को मालूम न थी, इस कारण उन्होंने इस रचना का कोई उल्लेख नहीं किया है। वस्तुतः यूरोपीय पुस्तकालयों में केवल मैनचेस्टर (इङ्गलैण्ड) के रीलैण्ड्स पुस्तकालय में ही इसकी फारसी लिपि में लिखी एक प्रति है। लोगों की दृष्टि में वह अब तक इस कारण न आ पायी कि वहाँ की सूची में उसका नाम **अखरावट** की जगह **अखरोट** और कोष्टक में उसका अंगरेजी अनुवाद **द वालनट ट्री** दिया हुआ है और लेखक के रूप में **नूरमुहम्मद** का

१. कड़वक १३, यमक १ की पहली अर्धाली।
२. आगे देखिये, काव्य परिचय।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उल्लेख है।[१] इसे हिन्दी साहित्य के बीच प्रस्तुत करने का श्रेय **रामचन्द्र शुक्ल** को है। उन्होंने १९२४ ई० में पहली बार इसे अपने **जायसी ग्रन्थावली** में संकलित किया। उनकी प्रस्तुति का आधार इस रचना की फारसी लिपि में मुद्रित कोई प्रति थी। किन्तु इस मुद्रित प्रति का उन्होंने कोई परिचय नहीं दिया है। तीस वर्ष बाद भी, १९५१ ई० में जब **माताप्रसाद गुप्त** ने अपनी **जायसी ग्रन्थावली** प्रकाशित किया तब तक उन्हें न तो उक्त फारसी मुद्रित प्रति की और न किसी अन्य लिखित अथवा मुद्रित प्रति की जानकारी हो पायी थी। उन्होंने **रामचन्द्र शुक्ल** के पाठ को ही अविकल रूप में उठा कर रख दिया। उनका यह संस्करण जब मुद्रणावस्था में था; तब उन्हें एक हस्तलिखित प्रति का ज्ञान हुआ जो लखनऊ के गोपालचन्द सिंह के पास थी। पाठान्तर के रूप में उन्होंने इस प्रति का प्रयोग किया है। इस प्रकार इसका अब तक कोई संशुद्ध पाठ (क्रिटिकल टेक्स्ट) उपलब्ध नहीं है।

इन दोनों ही सम्पादकों ने नागरी प्रचारणी सभा (काशी) की खोज रिपोर्टों की ओर ध्यान नहीं दिया। यदि उस ओर ध्यान दिया होता तो उन्हें १९०२ ई० के खोज विवरण में एक[२] और १९०४ ई० के विवरण में दो प्रतियों[3] का परिचय मिल जाता। उनमें से एक प्रति तो वहीं नागरी प्रचारणी सभा में ही थी, जहाँ **रामचन्द्र शुक्ल** काम करते थे। उसका उपयोग वे सहज ही कर सकते थे। इनके अतिरिक्त **अमरबहादुर सिंह 'अमरेश'** ने दो नागरी प्रतियों की चर्चा की है।[४] **सैयद हसन असकरी** ने एक फारसी प्रति के मनेर शरीफ में होने की बात कही है।[५] इन प्रतियों के अतिरिक्त भी कुछ अन्य प्रतियों की चर्चा इधर-उधर हुई है।

जायसी ने अपनी इस रचना में उसके रचना-काल का कहीं कोई उल्लेख नहीं किया है। इस कारण उसके सम्बन्ध में हाल के लेखकों ने मनेरशरीफ वाली प्रति की पुष्पिका की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। पुष्पिका इस प्रकार है—
तमाम शुद पोथी अखरावती बजबान-ए-मलिक मुहम्मद जायसी। किताब हिन्दवी किताब-उल-मलिक व कातिब-हुरूफ मुहम्मद मुकीम साकिन परगना नन्दांव उर्फ

---

१. परमेश्वरीलाल गुप्त, यूरोप और अमेरिका में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थ. अपनी बात, पृ० ६, पृष्ठ १ टिप्पणी १।
२. विवरण संख्या ०२-१०८।
३. विवरण संख्या ०४-२८७ क-ख।
४. हिन्दुस्तानी (इलाहाबाद), भाग २१, अंक २, १९६०, पृष्ठ ५७।
५. जर्नल आव द बिहार रिसर्च सोसाइटी, ३९, पृष्ठ ११।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बकानू खास अमला परगना निजामाबाद बसरकार जौनपुर सूबा इलाहाबाद बवक्त जुह्र योम जुमा जको शुहर जुलकद सन नौ सै इग्यारह दर मौजा खासदीय मुकाम कनौरा परगना नेगुन बसरकार मस्तूरात। तहरीर याफ्ता जियादा गुफ्तार नविश्ता इजहार नीस्त। सामान्य रूप से इस पुष्पिका में उल्लिखित तिथि ८ जुलकद ९११ हिजरी प्रतिलिपि की तिथि समझी जानी चाहिये। किन्तु **सैयद हसन असकरी** ने इस ऐतिहासिक तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया हैं कि अकबर के समय से पूर्व इलाहाबाद का नाम प्रयाग था। उसके समय में इसका नाम इलाहाबास पड़ा। **हकीकत-उल-इकलीम** के लेखक के अनुसार शाहजहाँ के समय इलाहाबास इलाहाबाद कहलाया। अकबर के समय में इलाहाबाद का सूबा पहली बार बना जिसके अन्तर्गत जौनपुर की सरकार थी और उस सरकार के अन्तर्गत निजामाबाद और नेगुन के परगने थे।[1] इस तथ्य के आधार पर यह सहज कहा जा सकता है कि यह प्रति शाहजहाँ काल से पूर्व की नहीं हो सकती। पुष्पिका की तिथि में कहीं कोई भूल है। अतः **सैयद हसन असकरी** की धारणा है कि यह तिथि इस प्रति की तिथि नहीं है, वरन् उस प्रति की तिथि है, जिससे यह प्रति तैयार की गयी थी। प्रतिलिपिकार ने मूल लिपिकार के स्थान पर अपना नाम और अपनी प्रतिलिपि काल के स्थान पर मूल प्रति की तिथि दे दी है।[2] इसका अर्थ यह है कि प्रतिलिपिकार के सम्मुख ९११ हिजरी की लिखी कोई प्रति थी। अन्यत्र[3] हमने ९११ हिजरी में जायसी के लेखन आरम्भ करने की बात कही है। उसे दृष्टि में रख कर यह बात कही जा सकती है कि **अखरावट** की ९११ हिजरी वाली प्रति जायसी की स्वहस्तलिखित प्रति रही होगी और इसमें जो ८ जुलकद ९११ हिजरी की तिथि है, वह रचना पूरी करने की तिथि होगी। इस प्रकार **अखरावट** उनकी आदिम रचना कही जा सकती हैं।

इस सम्भावना को अस्वीकार न करते हुए भी हमें इसे मानने में कठिनाई जान पड़ती है। वर्ण्य-विषय पर ध्यान देने पर यह **आखिरी कलाम** के बाद की की ही रचना जान पड़ती है और **आखिरी कलाम** में उसकी रचना तिथि ९३६ हिजरी का स्पष्ट उल्लेख है। अतः दोनों रचनाओं के विषय के तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् ही **अखरावट** के रचना-काल के सम्बन्ध में कुछ निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है। इस सन्दर्भ में इस पुष्पिका को विशेष महत्व देना उचित नहीं है।

---

१. वही, पृष्ठ २१-२२।
२. वही।
३. देखिये पीछे, पृ० १३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुछ विद्वान् **अखरावट** को **पदमावत** के बाद की रचना मानते हैं।[1] किन्तु हम उनके मत से भी सहमत नहीं हैं। उनके तर्क और विवेचन के ऊहापोह में न जाकर हम इस तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहेंगे कि **अखरावट** के कड़वक २७ का बहुत कुछ रूप वही है जो **कन्हावत** के कड़वक ८ में उपलब्ध है।[2] इस प्रकार का साम्य दो रचनाओं में तभी सम्भव है जब वे पंक्तियाँ सद्यः-प्रसूत हों और कवि के मस्तिष्क में गूंज रही हों। जाने-अनजाने एक में प्रयुक्त कड़वक का दूसरे में समाविष्ट हो जाना स्वभाविक है। अतः **अखरावट कन्हावत** के कुछ पहले या कुछ बाद की ही रचना हो सकती है। **कन्हावत** निश्चित रूपेण हुमायूँ के शासनकाल की रचना है। आश्चर्य नहीं **अखरावट** भी उसी के शासन-काल में किसी समय रची गयी हो।

अखरावट में **जायसी** ने आत्मा, परमात्मा और सृष्टि-तत्व की चर्चा सूफी-दर्शन के परिप्रेक्ष्य में उपस्थित की है। इसकी रचना तत्कालीन प्रवृत्तियों के अनुसार नागरी वर्णमाला के अक्षर-क्रम के कड़वकों को पिरो कर की गयी है। इसके सम्बन्ध की एक उल्लेखनीय बात यह भी है कि उसके अनेक सोरठों को **कुसूरी** ने अपने **मारिज-उल-विलायत** में संकलित किया है और **वदहत-उल-वजूद** के आधार पर उनकी व्याख्या प्रस्तुत की है।[3]

(३) **आखिरी कलाम**—इस रचना की कोई भी हस्तलिखित प्रति अब तक उपलब्ध नहीं है। इसको भी हिन्दी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने का श्रेय **रामचन्द्र शुक्ल** को ही है। उन्होंने इसे अपने **जायसी-ग्रन्थावली** के दूसरे संस्करण में, जो १९३४ ई० में प्रकाशित हुई थी, सम्मिलित किया है। उन्होंने इसे किसी फारसी लिपि में छपी पोथी से प्राप्त किया था, जिसका उन्होंने कोई विवरण नहीं दिया है। **माताप्रसाद गुप्त** ने इस रचना का जो पाठ प्रस्तुत किया है, उसके सम्बन्ध में उनका कहना है कि उन्हें **सैयद कल्बे मुस्तफा** से लीथो में छपी वही प्रति प्राप्त हुई थी, जिसका उपयोग **रामचन्द्र शुक्ल** ने अपने संस्करण में किया था।[4] फिर भी **रामचन्द्र शुक्ल** और **माताप्रसाद गुप्त** के पाठों में अन्तर है; इस अन्तर का स्पष्टीकरण करते हुए **माताप्रसाद गुप्त** ने बताया है कि उक्त लीथो प्रति की प्रत्येक पंक्ति में एकाधिक व्यक्तियों द्वारा किये गये संशोधन थे। **रामचन्द्र**

---

१. सैयद कल्बे मुस्तफा, मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० १६०; जयदेव, सूफी महाकवि जायसी, पृ० १३५-३६।

२. देखिए पीछे, पृ० १७-१८।

३. रिजवी, अर्ली हिस्ट्री आव सूफीज्म इन इण्डिया, भाग १, पृ० ३७०।

४. जायसी ग्रन्थावली, वक्तव्य, पृ० ३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शुक्ल ने अपने पाठ में इन संशोधनों में से अधिकांश को ग्रहण किया है और स्वयं भी कुछ संशोधन किये हैं। उनकी धारणा है कि इन संशोधनों का कोई आधार नहीं है; अतः उन्होंने इन संशोधनों की उपेक्षा की है और लीथो प्रति के मूल पाठ को ही ग्रहण किया है।[1]

इस रचना में जायसी ने बाबर की प्रशंसा[2] और उसके ९३६ हिजरी में रचे जाने[3] का उल्लेख किया है। ९३६ हिजरी बाबर के शासन काल में ही पड़ता है; अतः यह निर्विवाद है कि इसकी रचना बाबर के जीवन-काल में हुई थी।

इस्लामी विश्वास के अनुसार प्रलय, सृष्टि और आखिरी दिन का वर्णन इस रचना का विषय है। इसमें सूफी-दर्शन और अध्यात्मवाद जैसी कोई बात कहीं परिलक्षित नहीं होती। यह स्पष्टतः इस बात का द्योतक है कि इसकी रचना के समय तक जायसी इस्लाम धर्म के रूढ़िग्रस्त विश्वासों के प्रति आस्थावान थे और सूफी-विचारधारा से उनका नैकट्य नहीं हो पाया था। साहित्य की दृष्टि से इस रचना का महत्व केवल इतना ही है कि इसके एक कड़वक में जायसी के जन्म-काल का संकेत और उनके जीवन की एक-आध बातों का परिचय मिलता है।

(४) **कहरानामा**[४]—सन्त कवियों की तरह ही उन्हीं द्वारा प्रयुक्त छन्दों के अनुकरण पर जायसी ने इस रचना में महरा (परमात्मा) की महराई (महत्ता) का वर्णन किया है। यह सन्त कवियों की चिन्तन-धारा और उनके द्वारा गृहीत रूपकों से परिपूर्ण है और यह इस बात का प्रमाण है कि **जायसी** भारतीय सन्त-परम्परा की विचारधारा से काफ़ी प्रभावित थे।

इस रचना को प्रकाश में लाने का श्रेय **माताप्रसाद गुप्त** को है। उन्होंने अपनी **जायसी ग्रन्थावली** में इसे **महरी बाइसी** नाम से १९५१ ई० में प्रकाशित किया। इसकी फारसी हस्तलिखित प्रति उन्हें कामनवेल्थ रिलेशन्स आफिस पुस्तकालय की **पदमावत** की एक प्रति (बी० १०) के अन्त में लिखी प्राप्त हुई थी। उसमें रचना का नाम न होने से २२ गीतों तथा **महरी** शब्द के यत्र-तत्र प्रयोग होने के कारण उन्होंने यह नाम दिया था। किन्तु पीछे कतिपय हस्त-लिखित प्रतियों के ज्ञात होने पर इसका वास्तविक नाम **कहरानामा** ज्ञात हुआ है। अब तक इसका कोई संशुद्ध पाठ प्रकाशित नहीं है।

---

१. वहीं।

२. कड़वक ४।

३. कड़वक ८।

४. कदाचित इसी रचना का उल्लेख सैयद आले मुहम्मद ने मुखरानामा और मुकहरानामा नाम से किया है (नागरी प्रचारणी पत्रिका, वर्ष १९६७, पृ० ९५७)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस रचना की फारसी लिपि में लिखी एक प्रति रजा पुस्तकालय, रामपुर में[1] और दूसरी अधूरी प्रति मनेरशरीफ के खानकाह में है।[2] एक तीसरी खण्डित फारसी प्रति **कन्हावत** के साथ बर्लिन के राजकीय पुस्तकालय में हैं।[3] दो नागरी प्रतियों का उल्लेख नागरी प्रचारणी सभा (काशी) की खोज रिपोर्ट में है। एक तो बछरावाँ (सीतापुर) के महन्त गुरुप्रसाद दास के पास थी;[4] दूसरी बिसवाँ (सीतापुर) के आनन्द भवन पुस्तकालय में बतायी जाती है।[5] दो अन्य नागरी प्रतियों का उल्लेख **अमरबहादुर सिंह 'अमरेश'** ने किया है।[6] नागरी लिपि में लिखी एक हस्तलिखित प्रति अभी हाल में हमें जयपुर के पोथीखाना में, जो अब सिटी पैलेस संग्रहालय के अन्तर्गत हैं, देखने को मिली।

(५) **चित्ररेखा**[7]—इस रचना को प्रकाश में लाने का श्रेय **शिवसहाय पाठक** को है। उन्होंने इसे एक फारसी और एक नागरी प्रति के आधार पर प्रकाशित किया है।[8] फारसी प्रति तो सालारजंग पुस्तकालय, हैदराबाद में थी;[9] नागरी प्रति उन्हें अहमदाबाद में कहीं से प्राप्त हुई थी। उसका उन्होंने कोई अता-पता नहीं दिया है। इस रचना की एक अन्य प्रति उस्मानिया विश्व-विद्यालय (हैदराबाद) में बतायी जाती है।[10] इस रचना में रचना-काल का कोई उल्लेख नहीं है और न उसमें ऐसा कोई अन्य सूत्र उपलब्ध हैं जिससे इस सम्बन्ध में कुछ अनुमान किया जा सके। **रामपूजन तिवारी** का अनुमान है कि यह **पदमावत** के तत्काल बाद की रचना है[11]; किन्तु हमारी धारणा है कि इसे **जायसी**

---

१. इसकी एक माइक्रोफिल्म मेरे संग्रह में है।
२. जर्नल आव विहार रिसर्च सोसाइटी, ३९, पृ० १०।
३. इसकी जानकारी पुस्तकालय को नहीं हैं। माइक्रोफिल्म के परीक्षण से इसकी जानकारी हमें हो पायी है।
४. खोज रिपोर्ट, ०४-२८७ ख।
५ वही, २६-२८९९।
६. हिन्दुस्तानी, भाग २, अंक २, पृ० ५७।
७. कदाचित इसी का उल्लेख सैयद आले मुहम्मद ने अपनी सूची में चितरावत नाम से किया है।
८. प्रकाशक, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, १९५९।
९. इसकी एक फोटोस्टेट कापी मेरे संग्रह में है। मूल प्रति के सम्बन्ध में सुना जाता है कि वह अब पुस्तकालय में उपलब्ध नहीं है।
१०. बहुत चेष्टा करने पर भी इस प्रति के सम्बन्ध की समुचित जानकारी हमें प्राप्त न हो सकी है।
११. जायसी, पृ० १०१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की आरम्भकालिक रचनाओं में से ही होना चाहिये। यह सामान्य कोटि का छोटा सा प्रेमाख्यान है। इसमें चन्द्रपुर की राजकुमारी चित्ररेखा और प्रीतम-कुँवर की कुछ वैसी ही कहानी है जैसी प्रायः गाँवों में सुनी जाती है। इस रचना में आध्यात्मिकता तो है ही नहीं, भले ही समासोक्तियों में कहीं-कहीं उसकी झलक देख ली जाय।

(६) **मसलानामा**—नागरी प्रचारणी सभा में किन्हीं **सीतलदास** की लिखी **अखरावट** की एक प्रति है, उसके अन्त में तीन पृष्ठ **'मसला'** नामक रचना के हैं। इसका विवरण सभा की १९०४ के खोज-रिपोर्ट में दिया गया है।[1] खोज रिपोर्ट के इस उल्लेख की चर्चा **शिवसहाय पाठक** ने अपनी **चित्ररेखा** में की है;[2] उन्होंने इसे प्राप्त करने की बात भी अपने शोध-प्रबन्ध में कही है।[3] उनके कथनानुसार यह खण्डित है और इसमें केवल तीन पृष्ठ हैं और लिखाई स्पष्ट न होने से इसकी पूर्ण रूपरेखा स्पष्ट नहीं हो पाती।[4] फिर भी उन्होंने अपने शोध-प्रबन्ध में इसे पूर्ण रूप में उद्धृत कर, इसके प्रकाश में लाने का श्रेय लेने की चेष्टा की है। वस्तुतः इस शोध-प्रबन्ध के प्रकाशन से कई वर्ष पूर्व, १९६० ई० में **अमरबहादुर सिंह 'अमरेश'** ने दो प्रतियों के आधार पर इसे **मसलानामा** नाम से प्रकाशित कर दिया था।[5] उसे ही बिना किसी आभार प्रदर्शन के **शिवसहाय पाठक** ने अपने शोध-प्रबन्ध के परिशिष्ट में आत्मसात् कर लिया है। इस रचना की इन तीन प्रतियों के अतिरिक्त एक चौथी प्रति भी है जो बछरावाँ (रायबरेली) के महन्त गुरुप्रसाद दास के पास थी। इसका विवरण नागरी प्रचारणी सभा ने १९०४ ई० में प्राप्त किया था।[6] इसमें रचना-तिथि का कोई संकेत नहीं है। इसकी रचना कड़वक पद्धति पर हुई है; और ५ यमकों के बाद एक घत्ता है। इस प्रकार इसमें कुल १२ कड़वक हैं जिसमें ६० यमक और १२ घत्ता होना चाहिये; पर ७वें कड़वक में प्रतिलिपिक के प्रमाद से एक यमक छूट गया है। प्रत्येक यमक एवं घत्ते में मसला (लोकोक्ति) और उसका प्रयोग है। इसमें लोकोक्तियों के माध्यम से ईश्वर के प्रति प्रेम, मायामोह का परित्याग, परमात्मा के प्रति जिज्ञासा एवं नीतिपरक बातें कही गयी हैं। लोकोक्तियों और कहावतों के प्रयोग अत्यन्त सुन्दर और सटीक हैं।

---

१ खोज रिपोर्ट, ०४–२८७ ग।

२. चित्ररेखा, भूमिका पृ० ५६।

३. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ७।

४. वही, पृ० १६३।

५. हिन्दुस्तानी (इलाहाबाद), भाग २१ अंक २ अप्रैल-जून १९६०, पृ० ५७-७१।

६. खोज रिपोर्ट, ०४–२८७ ख।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(७) **कन्हावत**—प्रस्तुत प्रकाशन के माध्यम से यह रचना पहली बार प्रकाशन में आ रही है। इसकी अब तक केवल एक ही प्रति ज्ञात हुई है जो र्बालन के राजकीय पुस्तकालय में है। इस रचना का विस्तृत विवेचना आगे विस्तार के साथ स्वतंत्र रूप से किया गया है।[1]

जिस क्रम से ये रचनाएँ प्रकाश में आयीं, उसी क्रम से उनका यहाँ परिचयात्मक विवेचन है; उसका रचना-क्रम से कोई सम्बन्ध नहीं है। रचनाक्रम के सम्वन्ध में किसी प्रकार की कोई कल्पना समग्र रूप से विषय-वस्तु पर विचार करने पर ही की जा सकती है। इस दृष्टि से देखने पर प्रतीत होता है कि **मसलानामा** और **चित्ररेखा** उनकी आरम्भकालिक रचनाएँ होंगी और उनकी रचना ९११ और ९२६ हिजरी के बीच किसी समय की गयी होगी। वे धार्मिक चिन्तन और आध्यात्मिकता से मुक्त सामान्य ढंग की रचनाएँ हैं। यदि कहीं उसमें कुछ धार्मिकता है भी तो वह सतही है। ९३६ हिजरी, बाबर के शासनकाल में **जायसी** पहली बार **अखिरी कलाम** लेकर धार्मिक परिवेश में उपस्थित होते हैं। पर इस समय तक आध्यात्मिकता में उनका प्रवेश दिखाई नहीं पड़ता। वे विशुद्ध रूप से इस्लाम की रूढ़िगत और परम्परागत विश्वासों से घिरे हुए हैं। **कहरानामा** का रचना-काल अज्ञात है पर निश्चय ही वह **आखिरी कलाम** के बाद की रचना है। इस्लाम की मान्यताओं से सर्वथा मुक्त होकर **जायसी** इस रचना में भारतीय सन्तों की विचार-धारा की ओर झुके दिखाई पड़ते हैं। उन्हीं के स्वर में उन्होंने ईश्वर महिमा का गुणगान किया है। हुमायूँ के शासन-काल में ९४७ हिजरी में, जिस समय उन्होंने **कन्हावत** की रचना की, उस समय तक उन पर सूफियाना रंग नहीं चढ़ा था, पर कृष्ण-गोपी प्रेम-भावना में निहित भारतीय अद्वैतवाद और भक्ति से वे भली-भाँति परिचित हो चुके थे। **अखरावट** और **पदमावत** उनके अन्तिम काल की रचनाएँ हैं। **अखरावट पदमावत** से पहले लिखी गयी या बाद में निश्चित रूप से कहना कठिन है पर वह हमें **पदमावत** से पहले और **कन्हावत** के तत्काल बाद की रचना प्रतीत होती है। इनमें ही उनकी सूफी आध्यात्मिकता और प्रेम-पीर मुखरित हुई है।

इन ज्ञात रचनाओं के अतिरिक्त **जायसी** की कुछ अन्य रचनाएँ भी होने की बात लोगों ने कही है। **तासी** ने अपने इतिहास में **सोरठ** और **परमार्थ जपजी** नामक दो रचनाओं का उल्लेख किया है।[2] उनका कहना था कि ये

---

१. देखिए आगे काव्य-परिचय।

२. इस्त्वार द ला लितरेत्यूर ऐंदुई ऐं ऐंदुस्तानी, खंड २, पृ० ६८-६९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोनों कलकत्ता के एशियाटिक सोसाइटी में, जो उन दिनों रायल एशियाटिक सोसाइटी आव बंगाल कहा जाता था, हैं। यह सूचना उन्होंने निस्सन्देह किसी प्रकाशित सूची अथवा लेख के आधार पर दी होगी और वे निसन्देह वहाँ होनी चाहिये। किन्तु उक्त सोसाइटी का हस्तलिखित ग्रन्थ का विभाग इतना अस्त-व्यस्त है कि किसी भी ग्रन्थ को ढूंढ़ पाना अथवा उसके सम्बन्ध की किसी जानकारी को प्राप्त कर लेना सहज नहीं है। अभी तक इनकी खोज में हमें सफलता नहीं मिली है। **सोरठ** के सम्बन्ध में हमारी धारणा है कि यह सोरठों का कोई स्फुट संग्रह होगा। आश्चर्य नहीं यह **अखरावट** के सोरठों का ही कोई संग्रह हो। इस अनुमान को इस बात से बल मिलता है कि **कुसूरी** ने **अखरावट** के सोरठों को **मारिज-उल-विलायत** में उद्धृत कर व्याख्या प्रस्तुत की है।[१]

सैयद हसन असकरी ने तजकिरों के हवाले से, जिनमें **खजीनत-उल-असफिया** का नाम मुख्य रूप से लिया है, **जायसी** की रचनाओं के रूप में **लहतावत, सखतावत, कहरानामा, महरीनामा** और **पोस्तीनामा** के नाम गिनाये है।[२] इनमें **कहरानामा** का उल्लेख ऊपर हो चुका है। **महरीनामा** भी शायद इसी का नाम होगा, ऐसी कल्पना **माताप्रसाद गुप्त** के **महरी बाइसी** नाम से उभरती है। **पोस्तीनामा** की कुछ पंक्तियाँ **सैयद कल्बे मुस्ताफा** ने अपनी पुस्तक में उधृत की है।[3] किन्तु समग्र रचना के रूप में अभी यह उपलब्ध नहीं है। इस रचना के सम्बन्ध में **कल्बे मुस्तफा** ने एक किवदन्ती दी है जिसमें कहा गया है कि **जायसी** के गुरु को अफीम का अमल था, उन्हीं को दृष्टिगत कर **जायसी** ने इसे लिखा था। इसमें अफीमचियों पर व्यंग है। जब **जायसी** ने इसे अपने गुरु को सुनाया तो वे क्षुब्ध हुए और शाप दिया कि तुम्हारे सातो बच्चे छत के गिरने से मर जायेंगे। पीछे उन्होंने कहा कि शाप के प्रभाव से बच्चे तो नहीं बच सकते, पर तुम्हारा नाम तुम्हारी १४ रचनाओं से जीवित रहेगा।[४] **जायसी** के गुरु शेख बुरहान उच्चकोटि के साधक थे। उनके अफीमची होने तथा क्रुद्ध होकर शाप देने की दोनों बातें अविश्वसनीय हैं। हो सकता है सैयद अशरफ की दरगाह में रहने वाले कोई फकीर अफीमची रहे हों और उन्हीं को लक्ष कर **जायसी** ने **पोस्तीनामा** लिखा हो और वे क्षुब्ध हुए हो। दुर्योग उसी समय **जायसी** के बच्चे दुर्घटना ग्रस्त हुए हों। किवदन्ती ने दोनों को एकाकार कर

---

१. रिजवी, हिस्ट्री आव सूफीज्म इन इण्डिया, भाग १, पृ० १७० ।
२. जर्नल आव बिहार रिसर्च सोसाइटी, भाग ३९, पृ० २० ।
३. मलिक मुहम्मद जायसी. पृ० १६४ ।
४. नागरी प्रचारणी पत्रिका, ४५, पृ० ४७ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिया हो । **जायसी** ने १४ ग्रन्थ लिखें हों तो आश्चर्य नहीं, सात ग्रन्थ तो प्रकाश में आ ही चुके हैं । दो के अस्तित्व की सम्भावना है, शेष अन्धकार में हैं ।

सैयद आले मुहम्मद ने उपर्युक्त किवदन्ती के परिप्रेक्ष्य में १४ रचनावों के नाम इस प्रकार दिये हैं :—(१) **पदमावत** (२) **अखरावट,** (३) **सखरावत** (४) **चम्पावत** (५) **इतरावत** (६) **मटकावत** (७) **चित्रावत** (८) **खुर्वानामा** (९) **मोराईनामा** (१०) **मुकहरानामा** (११) **मुखरानामा** (१२) **पोस्तीनामा** (१३) **होलीनामा** और (१४) **आखिरी कलाम।** इनमें ग्रन्थ १, २ और १४ तो प्रकाश में आ ही चुके हैं। ग्रन्थ ५ और ७ कदाचित एक ही ग्रंथ के नाम हैं । **इतरावत** कदाचित **चितरावत** का ही अपपाठ है । सम्भवतः उनका तात्पर्य **चित्ररेखा** से है । इसी प्रकार १० और ११ **कहरानामा** के ही अपपाठ जान पड़ते हैं । **सैयद हसन असकरी** ने तजकिरातों के हवाले से ३ और १२ का उल्लेख किया है । इस सूची का **सखरावत** कदाचित उनका **सखतावत** है । शेष चार रचनाओं — ६, ८, ९ और १३ का अन्यत्र कोई उल्लेख नहीं है । **चन्द्रबली पांडे** ने **सेखरावटनामा** का उल्लेख किया है ।[1] हमें यह **अखरावट** का ही अपपाठ जान पड़ता है । **रामचन्द्र शुक्ल** ने जायस से प्राप्त अनुश्रुति के आधार पर एक अन्य रचना **नैनावत** का उल्लेख किया है ।[2] अभी हाल में हमें जयपुर के सिटी पैलेस संग्रहालय के हस्तलिखित-ग्रंथ विभाग में (यह पहले पोथीखाना कहलाता था) एक पोथी देखने को मिली, इसमें छोटे-छोटे कई रचनाओं का संग्रह है । इस संग्रह की एक रचना **तम्बाकूनामा** है और उसमें अनेक स्थलों पर **मुहम्मद** नाम की छाप है । यद्यपि निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता तथापि ग्रंथ नाम और कवि की छाप, दोनों ही से उसके **मलिक मुहम्मद जायसी** की रचना होने की सम्भावना जान पड़ती है । यदि यह उनकी ही रचना है तो यह उनकी ऐसी कृति है जिसका उल्लेख कहीं नहीं है ।

विभिन्न सूत्रों से जायसी की जिन रचनाओं के नाम अभी सामने आये हैं उनमें जिन कृतियों के आस्तित्व की जानकारी किसी भी सूत्र से प्राप्त नहीं होती, वे हैं —(१) **सोरठ** (२) **परमार्थ जपजी** (३) **लहतावत** (४) **सखतावत** (**सखरावत**) (५) **पोस्तीनामा** (६) **मटकावत** (७) **खुर्वानामा** (८) **मोराईनामा** (९) **होलीनामा** (१०) **नैनावत** । यदि ये रचनाएँ सचमुच **जायसी** की हों तो उनकी ज्ञात और अज्ञात रचनाओं की संख्या सब मिलाकर कम से कम १७

---

१. नागरी प्रचारणी पत्रिका, १४, पृ० ४१८ ।

२. जायसी ग्रंथावली, भूमिका, पृ० १६ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ठहरती हैं, जो आनुश्रुतिक संख्या से कहीं अधिक है। इन अज्ञात रचनाओं के काल और उनके रचना-क्रम के सम्बन्ध में तब तक कुछ नहीं कहा जा सकता जब तक वे प्रकाश में न आयें।

अन्तिम दिन और मृत्यु

सैयद कल्बे मुस्तफा का कहना है कि जब मुरीदी करते-करते बहुत दिन बीत गये तब **जायसी** और उनके साथी निजामुद्दीन बन्दगी की उत्कठ इच्छा हुई कि वे अपनी स्वतन्त्र गद्दी स्थापित करें। यह बात उन्होंने अपने गुरु के सामने रखी। गुरु ने कहा अमेठी चले जाओ। अब दोनों शिष्यों के सामने यह समस्या आयी कि एक जगह दो गुरु कैसे रहेंगे? **जायसी** ने बुद्धि-चातुरी से काम लिया। गुरु के निवास में दो द्वार थे—एक पूर्व की ओर दूसरा पश्चिम की ओर। उन्होंने पश्चिमी द्वार से बन्दगी को भेजा और वे लखनऊ वाली अमेठी की ओर गये और स्वयं पूर्वी द्वार से अमेठी (जिला रायबरेली) आये और उसके निकट जंगल में रहने लगे।[1] अमेठी जाने के सम्बन्ध में एक दूसरी अनुश्रुति भी है।[2] इसके अनुसार **जायसी** के शिष्य **पदमावत** को गाकर भिक्षाटन किया करते थे। उसके किसी शिष्य ने अमेठी-नरेश राजाराम सिंह को नागमती के वियोग खण्ड से बारहमासा (कड़वक ३४१-३५८) सुनाया। उसे सुनकर अमेठी-नरेश को उसके रचयिता के सम्बन्ध में जानने की उत्सुकता हुई और जब उन्हें **जायसी** के सम्बन्ध में मालूम हुआ तो वे स्वयं जाकर **जायसी** को अमेठी ले आये। वहाँ **जायसी** जीवन के अन्तिम समय तक रहे।

जायसी की मृत्यु के सम्बन्ध में अनुश्रुति है कि जब कभी राजाराम सिंह **जायसी** की सेवा में उपस्थित होते, उनके साथ उनका एक तुफंगची (शिकारी) जाया करता था। **जायसी** उस शिकारी का विशेष ध्यान रखते। लोगों ने जब **जायसी** से उसके प्रति इस कृपा का कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि वह उनकी मृत्यु है। जब उस शिकारी ने यह बात सुनी तो वह बहुत दुखी हुआ और इस पाप-कर्म से बचने के लिए उसने राजा से अनुरोध किया कि इसे मरवा दिया जाय जिससे वह इस पाप कर्म से बच सके। **जायसी** ने उसके उस अनुरोध को स्वीकार करने से राजा को रोक दिया। निदान वह मारा तो नहीं गया पर उसे निरस्त्र कर दिया गया। उसके हथियार लेकर चलने पर रोक लगा दी गयी।

---

१. मलिक महम्मद जायसी, पृ० ३८।

२. रामचन्द्र शुक्ल, जायसी ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ८।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक दिन अँधेरी रात में जब वह शिकारी अपने घर जाने लगा तब उसने शस्त्रागार के दारोगा से यह कह कर कि उसके घर का मार्ग जंगल से होकर जाता है, अपनी रक्षा के लिए सुबह लौटा देने के वादे पर एक बन्दूक ले ली। जब वह जंगल से होकर जाने लगा तो उसे पास में ही शेर के गुर्राने की आवाज सुनाई पड़ी। विपत्ति आसन्न जान कर उसने गुर्राने की आवाज को लक्ष्य कर गोली चलाई। गोली छूटने के बाद शेर के गरजने की आवाज बन्द हो गयी। उसने समझा शेर मारा गया और वह निःशंक भाव से घर चला गया। उसी समय अमेठी-नरेश को स्वप्न हुआ। कोई उनसे कह रहा था कि आप सो रहे हैं, शिकारी ने **जायसी** की हत्या कर दी। राजा घबड़ा कर उठे और भागे-भागे **जायसी** के आश्रम पर गये। देखा सचमुच **जायसी** को गोली लगी थी और वे निर्जीव थे।[1] **जायसी** अमेठी गढ़ के निकट ही दफनाये गये। उनकी समाधि आज भी मँगरा के वन में है।[2]

जायसी के जन्म-काल की तरह ही उनकी मृत्यु-तिथि भी विवादास्पद है। **काजी नसरुद्दीन जायसी** ने, जिन्हें अवध के नवाब शुजाउद्दौला से सनद प्राप्त था, अपनी स्मरण-शक्ति के आधार पर **जायसी** की मृत्यु-तिथि ५ रजब ९४९ हिजरी बतायी है।[3] **सैयद कल्बे मुस्तफा**[4] ने **गुलाम सरवर लाहोरी**[5] के साक्ष्य से **जायसी** की मृत्यु १०४९ हिजरी मानी है। एक अन्य विद्वान् ने उनकी मृत्यु १६५९ ई० (१०६९ हिजरी) में होने का अनुमान किया है।[6]

हमने अन्यत्र[7] **जायसी** की जन्म-तिथि ८८१ हिजरी ठहरायी है; तदनुसार अन्तिम दो उल्लेखों के अनुसार मृत्यु के समय जायसी की आयु १६८ अथवा १८८ वर्ष ठहती है। भारतीय प्राचीन परम्परा में मनुष्य की अधिकतम आयु-सीमा १०० वर्ष मानी गयी है। आज भी जब तब लोगों के सौ वर्ष के अधिक काल तक जीवित रहने की बात सुनने में आती है, पर किसी के भी सौ वर्ष के पश्चात् एक-दो दशक से अधिक जीते नहीं सुना जाता। इसलिए **जायसी** के लिए इतनी लम्बी आयु की कल्पना असाधारण ही नहीं असम्भव भी है।

---

१. वहीं, पृ० ८-११।
२. नागरी प्रचारणी पत्रिका, ४५, पृ० ५६।
३. रामचन्द्र शुक्ल, जायसी ग्रन्थावली, भूमिका, पृ० ८।
४. मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० ७५।
५. खजीनत-उल-असफिया, पृ० ४७०।
६. नागरी प्रचारणी पत्रिका, २१, पृ० ५८।
७. देखिये पीछे पृ० ११।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्त होने के कारण **जायसी** के उपर्युक्त कथित आयु को सम्भावना की परिधि के भीतर मानना भी चाहें तो **शिवसहाय पाठक** द्वारा उठाया गया तर्क[1] उसे अस्वीकार करने को बाध्य करता है। **पदमावत** की रचना के पश्चात् (उसकी रचना काल ९२७, ९४७ अथवा ९५७ हिजरी, जो भी मानें) **जायसी** सौ वर्ष से अधिक काल तक जीवित रहे और उन्होंने कुछ भी चिन्तन-मनन नहीं किया, निष्क्रिय बने रहे, यह गले उतरने वाली बात नहीं है।

जायसी ने **पदमावत** में अपने वार्धक्य की बात जिस ढंग से कही है, उससे तो यही लगता है कि उस समय तक वे अत्यन्त वृद्ध हो चुके थे। उसके साक्ष्य से यह कल्पना नहीं की जा सकती कि वे **पदमावत** की रचना के पश्चात् दस-बीस बरस से अधिक जीवित रहे होंगे। अतः हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उपर्युक्त तिथियों में एक शती का आधिक्य है जो किसी प्रमाद का परिणाम है। वास्तविक तिथि ९४९ या ९६९ हिजरी ही होनी चाहिये। ये दोनों ही तिथियाँ सम्भावना की परिधि के भीतर हैं। विचारणीय है कि वास्तविक तिथि कौन-सी हो सकती है।

हमें ऐसा जान पड़ता है कि लोगों ने **जायसी** की मृत्यु ९४९ हिजरी में होने की कल्पना शेरशाह के शाहे-वक्त होने और **पदमावत** के ९४८ हिजरी में रचे जाने की बात को ध्यान में रख ही कर की है। किन्तु हमने अन्यत्र इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि **कुसूरी** ने **मारिज-उल-विलायत** में और **मीर हसन देहलवी** ने **रमूज-उल-आरफीन** में **जायसी** के अकबर के समय में जीवित रहने का उल्लेख किया है।[2] हमने अपनी यह उद्‌भावना भी सामने रखी है कि **पदमावत** की रचना ९५७ हिजरी में हुई होगी।[3] इन्हें दृष्टिगत करने पर **जायसी** की मृत्यु ९४९ हिजरी में मानना सम्भव नहीं है। उनकी मृत्यु ९६९ हिजरी में ही हुई होगी। जिस विद्वान ने इस तिथि का उल्लेख किया है वे निश्चय ही इस प्रकार के किसी विश्वास से परिचित रहें होंगे; यह मात्र उनकी कल्पना नहीं है।

---

१. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ५४।

२. देखिये पीछे पृ० ३५-३६।

३. देखिये पीछे पृ० ३५।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

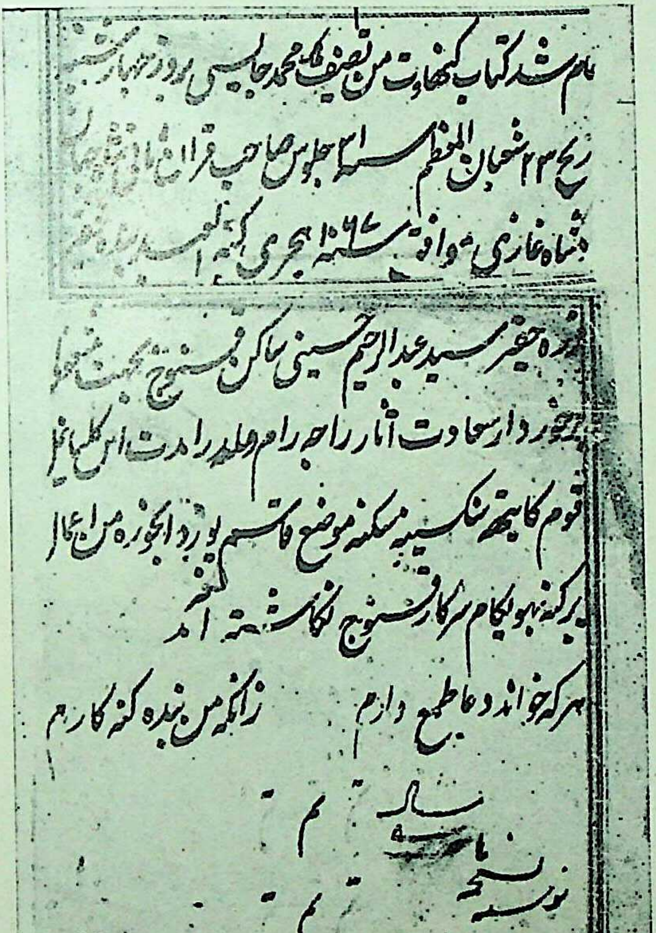

تمام شد کتاب کنهاوت من تصنیف ملک محمد جایسی بروز چهارشنبه
بیست و سوم شعبان المعظم سنه ۱۱ جلوس صاحب قران ثانی شاهجهان
بادشاه غازی موافق سنه ۱۰۶۷ هجری بخط العبد
ذره حقیر سید عبدالرحیم حسینی ساکن قنوج بجهت شغل
برخوردار سعادت آثار راجه رام ولد راد ت ای
قوم کایته تنکسیه مسکنه موضع قاسم پور رد الجوزه من اعمال
پرگنه بهولیکام سرکار قنوج نگاشته آمد
هرکه خواند دعا طمع دارم زانکه من بنده گنه کارم
تمام تمام نسخه تمام تمام

कन्हावत के स्पेंगर प्रति की पृ० १३१ख और १३२क
पर दी गयी पुष्पिका
(नागरी रूपान्तर के लिए देखिये पृ० १२४)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

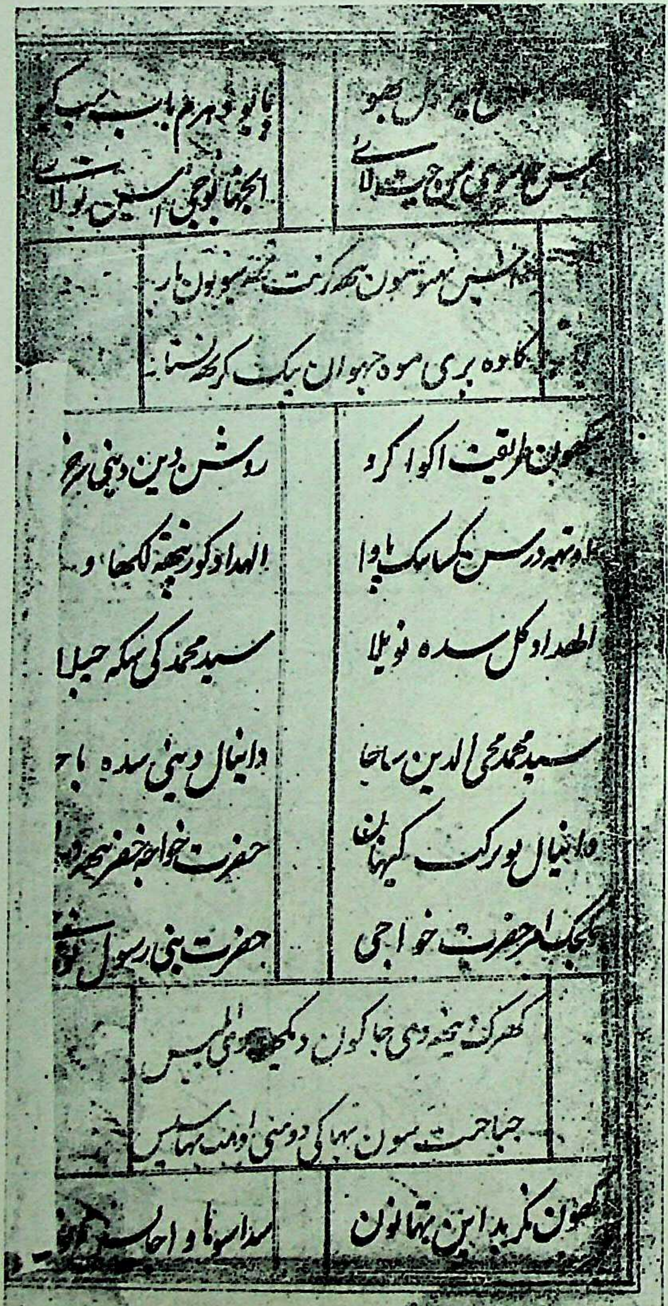

[illegible] دل بهو — جانو دهرم باپ سب کو
[illegible] سوچ جیت لائے — الجهانا نوجی اسین بولا

جهان جس بهو بهون بهه رکت تحته بهوبون بار
کا وه بری موه جهوان بیکت کرهسنتا

کهون تار قیت اکوا کرو — روشن دین دینی برج
او تهیه درسن کسا هک پاوا — الهداد کو نیچه لکهاو
الهداد او کل سده تو پلا — سید محمد کی سکه جیبا
سید محمد محی الدین ساجا — دانیال دینی سده باج
دانیال نور کت کهیان — حضرت خواجه خضر تهرو
کجب حضرت خواجی — حضرت نبی رسول [illegible]

کهتر کت نیچه دینی جاکون دیکهی [illegible]
جیا جهت سون بهاکی دوسنی اومت [illegible]

کهون نگر بد این بتهانون — سدا سونا و اجاس [illegible]

स्पेंगर प्रति का पृ० १०ख।
अन्तिम पंक्ति में कड़वक ९ की प्रथम पंक्ति
(देखिये पृ० १३६)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

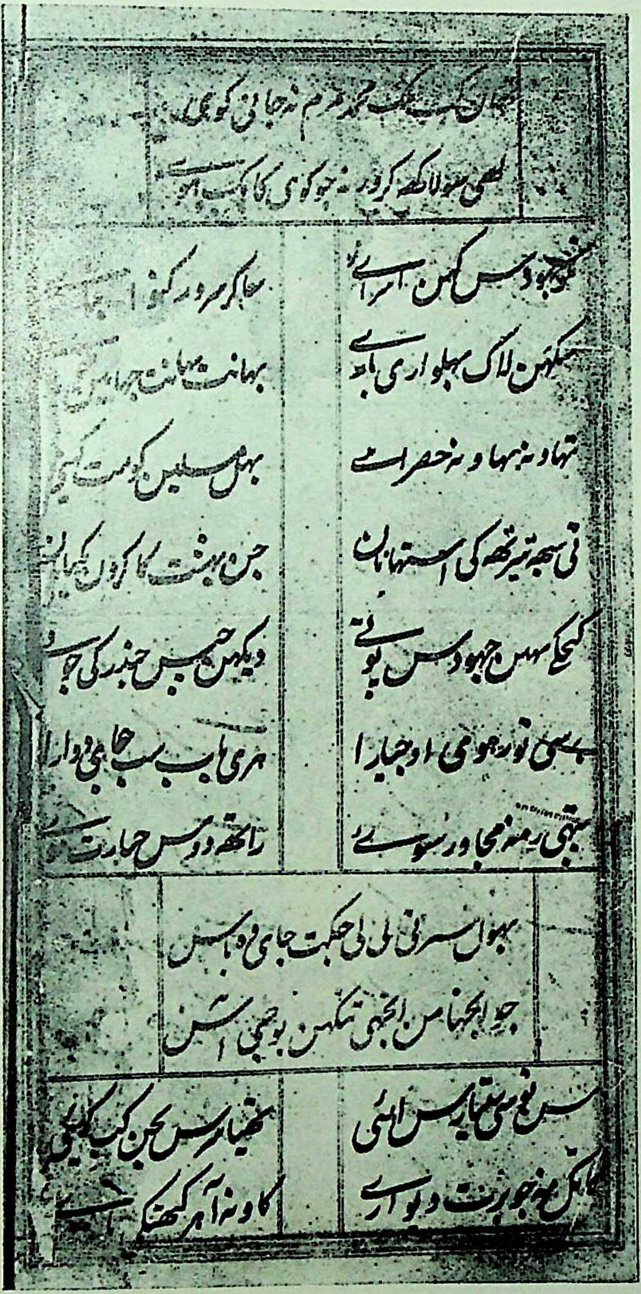

स्पेंगर प्रति का पृ० १३ख।
अन्तिम दो पंक्तियाँ कड़वक १४ की है जिसमें रचना तिथि का उल्लेख है।
(देखिये पृ० १४०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शेरशाह के ९४६, ९४७ और ९४८ हिजरी के सिक्के जो
जहाँपनाह नाम से शाही चल-टकसाल में बने थे

हुमायूँ के आगरा टकसाल से बने ९४७ हिजरी के सिक्के

(देखिये पृ० ३१ तथा ७४)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्ण-चरित

मलिक मुहम्मद जायसी ने प्रस्तुत रचना **कन्हावत** में कृष्ण की गाथा (जन्म से मृत्यु तक की कथा) प्रस्तुत की है। कृष्ण की चर्चा से भारतीय साहित्य भरा हुआ है। उसमें उनके स्वरूप का विस्तृत चित्रण हुआ है किन्तु वह इतना जटिल और दुरूह है कि यह कह सकना कि वे मानव थे, उनका अस्तित्व ऐतिहासिक है अथवा वे देवता थे और वे मात्र काल्पनिक (मिथ) हैं, सहज नहीं है। इस पर विगत सौ बरसों में विद्वानों ने विभिन्न दृष्टियों से विचार किया है। इस प्रकार का कृष्ण-चरित सम्बन्धी जो साहित्य प्रस्तुत हुआ है, वह अधिकांशतः अंग्रेजी में है। भारतीय भाषाओं में कृष्ण-चरित का ऊहापोह कम ही लोगों ने किया है। हिन्दी में इस प्रकार की कोई विशद चर्चा हुई हो, ऐसा हमारे देखने में नहीं आया। हिन्दी साहित्य के अनुसन्धित्सुओं ने कृष्ण के व्यक्तित्व की चर्चा प्रासंगिक रूप से ही यत्र-तत्र की है; उन्होंने जो कुछ भी कहा है वह मात्र सतही है और वे प्रायः दूसरों से उधार ली गयी बातें हैं। अतः उचित जान पड़ता है कि इस साहित्य की एक सूची प्रस्तुत कर दी जाय जिससे पाठक विषय-चिन्तन की सामग्री का कुछ अनुमान कर सकें। यह सूची इस प्रकार है[1]—

अय्यर, ए० एस० पी०—श्री कृष्ण द डार्लिंग आफ ह्यूमैनिटी।

आयंगर, एस० कृष्णस्वामी—अर्ली हिस्ट्री आव वैष्णविज्म इन साउथ इण्डिया।

कालिस—कृष्ण एण्ड सोलर मिथ।

कार्पेण्टियर, जे० ई०—थीज्म इन मिडिवल इण्डिया।

कीथ, ए० बी०—चाइल्ड कृष्ण (जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८)।

कत्रे, एस० एल०—कृष्ण, गोप, गोपीज एण्ड राधा (पी० के० गोड़े कमोमोरेशन वाल्यूम)

केनेडी, जे०—द चाइल्ड कृष्ण—क्रिश्चिएनिटी एण्ड द गूजर्स (जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९०७ तथा १९०८)।

कोसाम्बी डी० डी०—द हिस्टारिकल कृष्ण (टाइम्स आव इण्डिया एन्युएल, १९६५)

---

१. यह सूची किसी रूप में भी पूर्ण नहीं समझी जानी चाहिये।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खोंडा, जे०—आस्पेक्ट्स आव अर्ली वैष्णविज्म ।

गुप्त, शशिभूषण दास—श्री राधार क्रमविकास (बंगला)। हिन्दी में श्री राधा का क्रमविकास—दर्शन और साहित्य के रूप में अनूदित ।

गोस्वामी भागवतकुमार—द भक्ति-कल्ट इन एन्शिएण्ट इण्डिया ।

चन्दा आर०—आर्क्यालाजी एण्ड वैष्णव ट्रेडीशन ।

चटर्जी, बंकिमचन्द्र—कृष्ण चरित (बंगला) ।

चट्टोपाध्याय, सुधाकर—द इवोल्यूशन आव थौस्टिक सेक्ट्स इन इण्डिया ।

चौधरी, एन० एम०—द इण्डियन काउहर्ड गाड (जर्नल आव बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, खण्ड २८) ।

डाउसन, जान—डिक्शनरी आफ हिन्दू माइथालोजी एण्ड रेलिजन्स ।

ताड़पत्रीकर, एस० एन०—कृष्ण प्राबलम (अनाल्स आव भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, खण्ड ६०) ।

तिलक, बाल गंगाधर—गीता रहस्य (मराठी) ।

तत्वभूषण, एस०—कृष्ण एण्ड द गीता ।

—कृष्ण एण्ड द पुराणाज ।

दत्त, एस०—कृष्ण एण्ड पुराणाज ।

दीक्षितार, वी० वी०—पुराण इण्डेक्स (३ खण्ड)

दे, एस० के०—अर्ली हिस्ट्री आव वैष्णव फेथ एण्ड मूवमेंट इन बंगाल ।

—द वेदिक एण्ड एपिक कृष्ण ।

धर, एम० एम०—कृष्ण द काउहर्ड ।

ध्रुव, ए० वी०—अपनो धर्म (गुजराती) ।

पाल, डी० एन०—श्री कृष्ण, हिज लाइफ एण्ड टीचिंग्स ।

पुसालकर, ए० डी०—हिस्टारिसिटी आव कृष्ण (स्टडीज इन एपिक्स एण्ड पुराणाज, अध्याय ५) ।

पाल, वी० सी०—श्री कृष्ण ।

फर्क्युहर, जे० एन०—आउटलाइन आफ द रेलिजस लिटरेचर आव इण्डिया ।

बनर्जी, पी०—अर्ली इण्डियन रेलिजन्स ।

—द लाइफ आफ कृष्ण इन इण्डियन आर्ट ।

बसु, गौरीशंकर—पुराण-प्रवेश (बंगला) ।

बार्थ—रेलिजन आव इण्डिया ।

भगवानदास—कृष्ण ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भण्डारकर, आर० जी०—वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम्स ।

मलिक, बी० आर—कृष्ण एण्ड कृष्णिज्म ।

मोहन सिंह—न्यू लाइट आन श्री कृष्ण एण्ड गीता ।

रमय्या, ए० एस०—श्री कृष्ण ।

राय, एम०—श्री कृष्ण ।

रायचौधरी, एच० सी०—मैटीरियल्स फार द स्टडी आव द अर्ली हिस्ट्री आव द वैष्णव सेक्ट ।

रूबाँ, डब्लू०—कृष्ण ।

वैद्य, सी० वी०—श्री कृष्ण चरित्र (मराठी) ।

वास्वानी, टी० एल०—श्री कृष्ण—द सेवियर आव ह्यूमैनिटी ।

सम्पतकुमार—श्री कृष्ण ।

सिंगर, मिल्टन—कृष्ण, मिथ्स, राइट्स एण्ड एस्टीच्यूड्स ।

सील, बी० सी०—कम्पेरेटिव स्टडी आन वैष्णविज्म एण्ड क्रिश्चिएनिटी ।

हाप्किंस, ई० डब्लू०—रेलिजन्स आव इण्डिया ।

—एपिक माइथालोजी ।

हिल, डी०—भगवद्गीता ।

हेस्टिंग्ज (सम्पादक)—इनसाइक्लोपीडिया आफ रेलिजन एण्ड एथिक्स (आर० गार्बे, जी० ग्रियर्सन, एच० जेकोबी के लेख, खण्ड २ तथा ७) ।

दैविक कल्पना

बार्थ की धारणा है कि कृष्ण सौर (सूर्य) से सम्बद्ध लोक-प्रिय देवता हैं । उन्होंने यह बात बड़े विश्वास के साथ कही है ।[1] **ग्रियर्सन** को भी सौर उपासना और कृष्ण द्वारा प्रतिपादित धर्म के बीच नैकट्य दिखाई पड़ा है ।[2] **बार्थ** के मत का खण्डन करते हुए **कीथ** का कहना है कि कृष्ण में सूर्य की कोई भी विशेषता परिलक्षित नहीं होती । कृष्ण नाम स्वतः इस बात का प्रमाण हैं कि उनका सूर्य के साथ कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता ।[3] वस्तुतः भागवत धर्म में, जिसके साथ कृष्ण सम्बद्ध हैं, ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे उसका विकास सूर्योपासना से कहा जा सके ।[4]

---

१. रेलिजन्स आव इण्डिया, पृ० १६६ ।

२. इण्डियन एण्टीक्वेरी, १९०८, पृ० २५३ ।

३. जर्नल आव रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८, पृ० १७१ ।

४. बुलेटिन आव ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, खण्ड ६, पृ० ६६९-६७२ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हापकिंस की धारणा है कि कृष्ण गंगा घाटी की बहु-पत्नीत्व वाली पाण्डव नाम्नी वनवासी समूह के लोक-देवता थे।[1] किन्तु पाण्डवों को वनवासी समूह कहने का कोई आधार नहीं है। भारतीय अनुश्रुति एक स्वर से उन्हें कुरु-वंशी कहती है।[2] बहु-पत्नीत्व की बात से ही उन्हें अनार्य नहीं कहा जा सकता। आर्यों के बीच ऐसे विवाह अनजाने नहीं है, किन्तु इस प्रकार के विवाह अपवाद मात्र थे। साथ ही यह भी दृष्टव्य है कि कृष्ण के कौरवों के किसी समूह के देवता होने का कोई उल्लेख उपलब्ध नहीं है।

कीथ का मत है कि कृष्ण वनस्पति से सम्बन्धित देवता (Vegetation deity) है। उनके बाल और वीर स्वरूप दोनों में ही वे पुनर्स्फुटित वानस्पतिक शक्ति को देखते हैं।[3] उन्होंने कंस की कथा को बाल-देवता एवं प्रतिद्वन्दी के हनन के कर्मकाण्ड से उद्भूत होने की कल्पना की है। किन्तु गौ-सम्बन्ध मात्र से कृष्ण को वानस्पतिक देवता कहना संगत नहीं है। आदि-वैदिक काल में भी यमुना-काँठा अपने पशु-धन के लिए विख्यात था। कंस-वध के प्रसंग में पतंजलि ने महाभाष्य में जो कुछ कहा है,[4] उसके आधार पर कुछ लोगों ने कल्पना की है कि उसमें कृष्ण-वर्ण के व्यक्ति का रक्त-वर्ण के व्यक्ति द्वारा संहार करने जैसी बात है; कुछ लोग उसमें शिशिर ऋतु के बाद बसन्त और ग्रीष्म के आगमन जैसी बात भी देखते हैं। वस्तुतः इसमें इस प्रकार की कोई बात नहीं है। पतंजलि ने सामान्य भाव से कंस और वासुदेव के समर्थकों द्वारा अपने चहेते वीर के जय-पराजय स्वरूप रक्त अथवा कृष्ण रंग धारण करने की ही बात कही है।

बहु-व्यक्तित्व का मिश्रण

इन विद्वानों के अतिरिक्त प्रायः सभी विद्वान कृष्ण का ऐतिहासिक व्यक्तित्व स्वीकार करते हैं। उन सबका कहना है कि राम और बुद्ध की भाँति ही कृष्ण भी मनुष्य थे; किन्हीं कारणों से लोग उन्हें, उनके जीवन-काल में ही, देवता मानने लगे थे। देवत्व प्रदान करके लोक-जीवन और साहित्य में उनके स्वरूप का जो ताना-बाना बुना गया, उसमें उनका मानवीय रूप और देवत्व की विशिष्टता, दोनों ही उलझ कर मिथक बन गये हैं।

---

१. रेलिजन्स आव इण्डिया, पृ० ३८८. ४६६-६७।

२. रायचौधुरी, मैटीरियल्स फार द स्टडी आव द अर्ली हिस्ट्री आव द वैष्णव सेक्ट, पृ० ४३।

३. जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९०८, पृ० १७१।

४. केचित्कंसभक्ता भवन्ति केचिद्वासुदेवभक्तः। वर्णान्यत्वं खल्वपि पश्यन्ति। केचित्काल-मुखा भवन्ति केचिद्रक्तमुखाः।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फलस्वरूप अनेक विद्वानों ने कृष्ण-चरित में दो[१], तीन[२], अथवा चार व्यक्तियों[3] का व्यक्तित्व समाहित होने का अनुमान किया है। **सेजविग** कृष्ण को ऐतिहासिक और दैविक वीर मानने के साथ कहते हैं कि उनमें दो ऐतिहासिक व्यक्ति का एकाकार है।[४] इस प्रकार कृष्ण का ऐतिहासिक व्यक्तित्व भी अपने आप में कम विवादास्पद नहीं है।

वैदिक साहित्य में कृष्ण

कृष्ण की ऐतिहासिकता के टोह में विद्वानों ने वैदिक साहित्य में कृष्ण नाम के कई ऋषियों को ढूंढ़ निकाला है।[५] **बंकिमचन्द्र चटर्जी** ने अपने **कृष्ण-चरित** में वैदिक साहित्य में निहित कृष्ण सम्बन्धी सारी सामग्री एकत्र की है।[६] ऋग्वेद के आठवें मण्डल में एक कृष्ण का उल्लेख है[७] जिन्हें अनुक्रमणिका में कृष्ण अंगिरस कहा गया है। कृष्ण अंगिरस का उल्लेख कौषीतकी ब्राह्मण में भी है।[८] ऐतरेय आरण्यक में कृष्ण हारीत का उल्लेख है।[९] **वैदिक इण्डेक्स** में इन दो कृष्ण के अतिरिक्त किसी अन्य कृष्ण का उल्लेख नहीं है। किन्तु **सीतानाथ तत्त्वभूषण**[१०] और **डी० आर० भण्डारकर** ने[११] सायण कृत ऋग्वेद की एक ऋचा[१२] की व्याख्या के आधार पर एक तीसरे कृष्ण—अनार्थ वीर कृष्ण को ढूँढ़ निकाला है। उनके मतानुसार इस ऋचा में कृष्ण के इन्द्र से युद्ध करने के लिए दस हजार सैनिकों के साथ तत्पर होने की चर्चा है। इन्द्र मरुद्गणों को इन शब्दों में आदेश देते हैं—'जल को छूते हुए बादलों की तरह कृष्ण को मैंने अंशुमती नदी के उजड़-खाबड़ तट की ओर जाते देखा है। वहाँ जाओ और उनसे युद्ध करो।' सायण की इस व्याख्या को अनेक आधुनिक विद्वान स्वीकार नहीं करते।

---

१. इनसाइक्लोपीडिया आव रेलिजन एण्ड एथिक्स, खण्ड १, पृष्ठ ५३५; खण्ड ७, पृष्ठ १९३; हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर, खंड १, पृष्ठ ४५६।
२. हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर, पृष्ठ, ४५६।
३. जर्नल आव रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९०७, पृष्ठ ९६१।
४. जर्नल आव बाम्बे ब्रांच आव रायल एशियाटिक सोसाइटी, खण्ड २३, पृष्ठ ११५।
५. वैदिक इण्डेक्स, खण्ड १, पृष्ठ १८४ और आगे।
६. बंकिम रचनावली, खण्ड २, साहित्य संसद, कलकत्ता, पृ० ४२२ और आगे।
७. ८।८५।३-४।
८. ३९।९।
९. ३।२।६।
१०. कृष्ण एण्ड द गीता, पृ० ३७।
११. सम आस्पेक्ट्स आफ एन्शिएण्ट इण्डियन कल्चर; पृ० ८२-८३।
१२. ८।९६।१३-१५।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वयं सायण ने स्वीकार किया है कि वृहद्देवता की व्याख्या, उनकी व्याख्या से सर्वथा भिन्न है। इन्द्र और कृष्ण के वैमनस्य की चर्चा पुराणों में गिरि-गोवर्धन-धारण और परिजात-हरण की कथा के रूप में हुई है। किन्तु इन कथाओं के आधार पर यह कहना कठिन है कि वेदोक्त अनार्य कृष्ण की ही चर्चा इस रूप में पुराणों में हुई है।

कृष्ण नामक ऋषि ऋग्वेद की कतिपय ऋचाओं के द्रष्टा कहे गये हैं।[1] पुरुषसूक्त[2] के द्रष्टा नारायण कहे जाते हैं और कृष्ण को भी नारायण कहते हैं। इस आधार पर कुछ विद्वानों की धारणा है कि पुरुषसूक्त की रचना स्वयं कृष्ण ने की थी। उनका कहना है कि गीता का दसवाँ और ग्यारहवाँ अध्याय पुरुषसूक्त की ही विस्तृत व्याख्या है। इस आधार पर उनकी धारणा है कि कृष्ण न केवल वेद के ज्ञाता थे वरन् वे मन्त्रद्रष्टा भी थे। किन्तु न तो पुराणों में और न महाभारत में कहीं भी कृष्ण का उल्लेख मन्त्रद्रष्टा के रूप में हुआ है।

छान्दोग्य उपनिषद में[3] एक देवकीपुत्र कृष्ण का उल्लेख है, वे घोर अंगिरस के (जो कौषीतकी ब्राह्मण के अनुसार[4] सूर्य के पुरोहित थे) शिष्य कहे गये हैं। पुराणों में वर्णित कृष्ण की माता का नाम भी देवकी था। मातृ-नाम के इस सादृश्य के आधार पर, कुछ विद्वानों का मत है कि वे दोनों एक ही थे। किन्तु घोर अंगिरस के कृष्ण के गुरु होने का संकेत महाभारत अथवा पुराणों में नहीं है। कृष्ण के गुरु सान्दीपन और गर्ग कहे गये हैं। इससे दोनों की एकता सिद्ध नहीं होती। फिर भी कुछ विद्वान भगवद्गीता के उपदेशों और घोर अंगिरस द्वारा अपने शिष्य कृष्ण को दी गयी शिक्षा में साम्य देख कर अंगिरस शिष्य कृष्ण और भगवद्गीता के कृष्ण को एक समझते हैं। वस्तुतः इनके जिन विचारों के साम्य की बात कही जाती है, वे भगवद्गीता के मूल तत्व नहीं हैं। तथ्य यह है कि भगवद्गीता में जो कुछ कहा गया है, वह उपनिषदों की प्रतिच्छाया है और उसमें उपनिषदों की अनेक पंक्तियाँ अविकल देखी जा सकती हैं। भगवद्गीता में द्रव्य-यज्ञ से ज्ञान-यज्ञ को श्रेष्ठ ठहराया गया है और अंगिरस की वहाँ कोई चर्चा नहीं है। इन कारणों से भी दोनों कृष्णों की एकता प्रमाणित नहीं होती।

---

१. ८।८५-८७; १०।४०-४३।
२. ऋग्वेद १०।९०।
३. ३।१७। ६।
४. ३०।९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथर्ववेद में कृष्ण का उल्लेख केशी के हन्ता के रूप में हुआ है, ऐसा **बंकिमचन्द्र चटर्जी** का कहना है।[1] पुराणों में भी कृष्ण द्वारा केशी दैत्य के मारने का उल्लेख है। इससे लोग पौराणिक कृष्ण को वैदिक कृष्ण से जोड़ते हैं।

एस० के० दे ने वैदिक कृष्ण और महाभारत के कृष्ण की एकता के प्रश्न पर विशद रूप से विचार किया है और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि वे दोनों एक नहीं हो सकते।[2] उनकी एकता का समर्थन पौराणिक सूत्रों से नहीं होता। सर्वोपरि यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि वैदिक साहित्य की रचना महाभारत काल से पूर्व हो चुकी थी और कृष्ण महाभारत काल के एक प्रमुख व्यक्ति थे। महाभारत काल के कृष्ण का उल्लेख उस काल से पूर्व रचित किसी साहित्य में होना स्वतः सम्भव की परिधि से बाहर है।

कृष्ण और महाभारत

महाभारत में वर्णित **महाभारत** (कुरुक्षेत्र) के युद्ध से सम्बद्ध व्यक्तियों में कृष्ण एक थे और वहाँ उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। अतः महाभारत के काल निर्धारण से सहज ही कृष्ण के काल का निर्णय हो सकता है; किन्तु भारत युद्ध के काल के सम्बन्ध में अनुश्रुतियों में काफी मतभेद है। पुलकेशिन द्वितीय (६१०-६४१ ई०) के आयहोले अभिलेख में दी गयी गणना के अनुसार महाभारत युद्ध का काल ईसा पूर्व ३१०२ ठहरता है।[3] ज्योतिष सम्बन्धी आर्यभट्टीय अनुश्रुतियों के अनुसार इसी समय कलियुग का आरम्भ हुआ था।[4] **सी० वी० वैद्य**[5] और **त्रिवेद**[6] प्रभृत विद्वान इसे प्रमाणित मानते हैं। किन्तु **फ्लीट** ने इस तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि वैदिक काल में कलियुग-कालीन कालगणना अज्ञात थी। कलियुग की काल गणना उसके आरम्भ होने के कथित काल के ३५०० वर्ष बाद आरम्भ हुई; आर्यभट्ट से पूर्व के ज्योतिषियों को इसका कोई ज्ञान न था :[7]

वृहद्गर्ग, वराहमिहिर,[8] कल्हण[9] आदि महाभारत-युद्ध का होना कलयुग

---

१. बंकिम रचनावली, खण्ड २, पृ० ४२३।
२. इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टरली, खण्ड १८, पृ० २६७-३०१।
३. एपीग्रेफिया इण्डिका, खण्ड २, पृ० १२।
४. कालक्रिया पाद, श्लो० १०।
५. महाभारत, ए क्रिटिसिज्म, पृ० ६५-६२।
६. क्रेश्रिफ्त काणे, पृ० ५१२-२५।
७. जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९११, पृ० ४७६ और आगे।
८. वृहत्संहिता, १४।२।
९. राजतरंगिणी, १, पृ० ४८-५६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संवत आरम्भ होने के ६५३ वर्ष पश्चात् ई० पू० २४४९ में मानते हैं। ये दोनों ही मत परवर्ती कालीन काल्पनिक गणना पर आधारित हैं; अतः आधुनिक विद्वान इन्हें विशेष महत्व नहीं देते।

आधुनिक विद्वानों ने महाभारत में उल्लिखित नक्षत्रों और ग्रहों की अवस्थिति के आधार पर भारत-युद्ध के काल-निर्णय का प्रयास किया है। किन्तु उपलब्ध उल्लेखों के आधार पर इन लोगों के निष्कर्षों में एकता नहीं है। उनकी तिथियाँ इस प्रकार हैं—ई० पू० ३१४० (**एच० सी० रायचौधुरी**),[1] ३१३७ (**त्रिवेद**),[2] ३१०२ (**सी० वी० वैद्य**),[3] २४४९ (**सेनगुप्त**),[4] १९३१ (**करन्दिकर**),[5] १४०० (**देव**),[6] ११९८ (**शंकर**),[7] ११९७ (**दफ्तरी**),[8] ११९४ (**वी० जी० एय्यर**),[9] ११५१ (**प्रधान**)[10] आदि। वस्तुतः **काणे** के शब्दों में महाभारत के कथन में इतने पारस्परिक विरोध और असंगतियाँ हैं कि उनसे किसी प्रकार का काल-निर्णय सम्भव नहीं।[11] अतः **रायचौधुरी** ने वैदिक साहित्य में दी गयी गुरु-परम्परा के आधार पर गणना करके महाभारत का काल ई० पू० नवीं शती के मध्य में ठहराया है।[12] **पार्जिटर** ने जनमेजय के प्रपौत्र अधिसीम कृष्ण और महापद्म नन्द के राज्यारोहण के बीच विभिन्न वंशों के राजाओं से सम्बन्धित पौराणिक अनुश्रुतियों के आधार पर महाभारत-युद्ध का समय ई० पू० ९५० के लगभग निर्धारित किया है। उनके मतानुसार इन दोनों शासकों के बीच २६ राजा हुए। प्रत्येक का शासन-काल उन्होंने १८ वर्ष अनुमान किया है और महापद्म का राज्यारोहण ई० पू० ३८२ में मान कर अधिसीम कृष्ण का समय ई० पू० ८५० (२६ × १८ + ३८२) निर्धारित किया है और फिर युधिष्ठिर और अधिसीम कृष्ण के बीच

---

१. प्रोसीडिंग्स, इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, ४, पृ० ११५।
२. जर्नल आव इण्डियन हिस्ट्री, खण्ड १६, पृ० ३।
३. महाभारत ए क्रिटिसिज्म, पृ० ६५-६२।
४. जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी आव बंगाल, ३, पृ० ११०-११६।
५. प्रोसीडिंग्स आव ओरियण्टल कान्फ्रेंस, १२, खण्ड २, पृ० ४७४-८०।
६. जर्नल, एशियाटिक सोसाइटी बंगाल, २१, पृ० २११-२२।
७. अनाल्स आफ भण्डारकर ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट, १२, पृ० ३००-३६१।
८. प्रोसीडिंग्स आव ओरिएण्टल कान्फ्रेंस, १२, खण्ड २, पृ० ४८१-८६।
९. क्रानालाजी आव एन्शिएण्ट इण्डिया, पृ० ५८-७७।
१०. क्रानालाजी आव एन्शिएण्ट इण्डिया, पृ० २६२-२६९।
११. हिस्ट्री आव धर्मशास्त्राज, पृ० ९२३।
१२. पोलिटिकल हिस्ट्री आव एन्शिएण्ट इण्डिया, पंचम संस्करण, पृ० ३३-३६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के शासकों के लिए सौ वर्ष रख कर भारत-युद्ध को ९५० ई० पू० में होना ठहराया है ।[1]

पार्जिटर के इन अनुमान का खण्डन पुराणों और महाभारत के इस कथन से होता है कि परीक्षित के जन्म और महापद्म नन्द के राज्यारोहण के बीच १०५० या १०१५ वर्ष बीते थे।[2] महाभारत-युद्ध के काल के सम्बन्ध में यही अनुश्रुति ठीक जान पड़ती है। पुराणों में दी गयी वंश-सूची एवं राजाओं की संख्या में अनेक स्थलों पर दायादों अथवा सम-सामयिक वंश के राजाओं की संख्या जुड़ी हुई पायी जाती हैं, इस कारण वे उतने विश्वसनीय नहीं है जितना दो ऐतिहासिक घटनाओं के बीच का निर्धारित समय। किन्तु वर्षों की इस संख्या से सम्बंधित पौराणिक पाठों में एकरूपता नहीं है; कहीं वह १०१५ है, कहीं १०५० और कहीं १५००। प्राचीनतम पुराण—मत्स्य और वायु में यह संख्या १०५० हैं; अन्य पुराणों में १०१५ अथवा १५००। मगध के शासकों की सूची में अवन्ति के प्रद्योतों के सम्मिलित कर लेने तथा बार्हद्रथों का काल ७२३ के स्थान पर १००० मान लेने के कारण ही १५०० वर्ष का उल्लेख हुआ जान पड़ता है। वास्तविक काल १०१५ ही है। इस प्रकार भारत युद्ध का काल १३९७ (१०१५+३८२) अथवा १४३२ (१०५०+३८२) ई० पू० ठहरता है। **अल्तेकर** के मतानुसार १४३२ ई० पू० वाली अनुश्रुति ही विश्वसनीय है।[3] उन्होंने शतपथ ब्राह्मण; वंश ब्राह्मण एवं वृहदारण्यक उपनिषद में गुरु-शिष्य की परम्परा सूची पर विचार किया है; उनके अनुसार भारत-युद्ध का समय १४०० ई० ठहरता है।[4] **एस० बी० राय** ने भी भारत-युद्ध काल पर विशद रूप से विचार किया है। उनकी धारणा है कि वह ई० पू० १४२४ में हुआ था।[5]

वासुदेव और कृष्ण

इस प्रकार ई० पू० १४०० के बाद की ही अनुश्रुतियों को ही कृष्ण की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए महत्व दिया जा सकता है। इस दृष्टि से **पाणिनि** कृत **अष्टाध्यायी** सबसे महत्व का है। इसमें कृष्ण का कोई उल्लेख

---

१. एन्शिएण्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन्स, पृ० १७९-८३।
२. महापद्मभिषेकात्तु यावज्जन्मपरीक्षितः।
तावद्वर्षशतं ज्ञेयं दशपंचाशदुत्तरम्॥
३. प्रोसीडिंग्स, इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, ३, पृ० ६८।
४. वहां, पृ० ६९-७१।
५. डेट आव महाभारत बैटल, पृ० १४८ तथा आगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं है, उनके स्थान पर वासुदेव की चर्चा है। कृष्ण के पिता का नाम वसुदेव था, इस कारण यह समझा जाता है कि **अष्टाध्यायी** में उल्लिखित वासुदेव से तात्पर्य कृष्ण से ही है। यह मत **हार्पकिस**,[१] **रायचौधरी**,[२] **चौधरी**[३] और **कीथ**[४] का है। किन्तु **भण्डारकर**,[५] **गार्बे**,[६] **ग्रियसैन**,[७] **जेकोबी**[८] और **विन्तरनित्स**[९] उनकी एकता में विश्वास नहीं करते। उनका कहना है कि कृष्ण और वासुदेव मूलतः दो भिन्न व्यक्ति थे। उनके मतानुसार पुराण-चर्चित गोपाल-कृष्ण महाभारत के वृष्णि-कुलज वासुदेव से भिन्न थे। वासुदेव नाम पितृज नहीं था; वह सात्वत अथवा वृष्णि वंश के एक सदस्य का नाम था, जिसे देवत्व प्राप्त था। कृष्ण को वे ऋग्वेद और छान्दोग्य उपनिषद उल्लिखित ऋषि ही मानते हैं। पितृ-रूप में वसुदेव की कल्पना बाद में की गयी और वासुदेव को वैदिक ऋषि के रूप में पहचान कर उन्हें वृष्णि-कुल में शूर और वसुदेव के माध्यम से समाहित कर लिया गया। किन्तु वैदिक साहित्य में विष्णु के नाम के रूप में वासुदेव का उल्लेख केवल एक बार हुआ है।[१०] भगवद्गीता, जातक, महाभारत और जैन उत्तराव्यायन सूत्र में स्पष्ट कहा गया है कि वासुदेव वृष्णि-वंशज थे। महाभारत में यह भी कहा गया है कि वास्तविक कृष्ण यादव, वृष्णि और सात्वत कुल के थे।[११] पतंजलि के महाभाष्य के इन वाक्यों—**असाधुर्मातुले कृष्णः**, **जघान कंसं किल वासुदेवः** और **प्रहारा दृष्यन्ते कंसस्य च कृष्णस्य च**—से स्पष्ट है कि कृष्ण और वासुदेव एक ही व्यक्ति के दो नाम थे। इसकी पुष्टि बौद्ध और जैन सूत्रों से भी होती है। **घट जातक** में वासुदेव को अपर मथुरा के राजपरिवार का बताया गया है और कहा गया है कि उन्हें कन्ह (कृष्ण) भी कहा जाता था।[१२] जैन

---

१. जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९०५, पृ० ३८४।
२. मैटीरियल्स फार द स्टडी आव द अर्ली हिस्ट्री आव द वैष्णव सेक्ट, पृ० ३५।
३. जर्नल बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी, १९४२, पृ० २८४-३०५।
४. जर्नल, रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९१५, पृ० ५४८।
५. वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम्स, पृ० १३, ४९।
६. इन्साइक्लोपीडिया आफ रेलिजन एण्ड एथिक्स, खण्ड १, पृ० ५३५।
७ वही, पृ० ५३८।
८. वही, खण्ड ७, पृ० १९३।
९. हिस्ट्री आव इण्डियन लिटरेचर, खण्ड १, पृ० ४५६।
१०. नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।—तैत्तरीय आरण्यक, १०।१६।
११. पार्जिटर, एन्शिएण्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन, पृ० १०३–११७; वैदिक एज, वंशावली।
१२. जातक, सम्पा० कावेल, खण्ड ४, पृ० ५०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तराध्ययन सूत्र के अनुसार वासुदेव क्षत्रिय राजकुमार थे और बारहवें उपाँग में वृष्णि-वंश के कन्ह (कृष्ण) वासुदेव और बलदेव का उल्लेख है ।

महाभारत और पुराण के कृष्ण

यह भी कहा जाता है कि महाभारत-वर्णित कृष्ण और पुराण-वर्णित कृष्ण एक नहीं थे । इस प्रसंग में तर्क किया जाता है कि महाभारत में कृष्ण के बचपन की कोई चर्चा नहीं है और प्राचीन पुराणों में कृष्ण-पाण्डव सम्बन्ध का कोई उल्लेख नहीं है । महाभारत में पहली बार कृष्ण का उल्लेख द्रौपदी के स्वयंवर के प्रसंग में ही हुआ है; वहाँ वे द्वारिका से आये थे । उनके आरम्भकालिक जीवन के सम्बन्ध में महाभारत मौन है । यह भी कहा जाता है कि कृष्ण का गोकुल-वाला जीवन और भारत-युद्ध के समय का उनका आचरण भगवद्गीता के उप-देशों के प्रतिकूल है । वे सब परस्पर इतने प्रतिकूल हैं कि वे अनुश्रुतियों के किसी एक चक्र के अंग नहीं कहे जा सकते ।

वस्तुतः महाभारत का सम्बन्ध भारतों के इतिहास से है अतः यह स्वभाविक है कि उसमें कृष्ण के पाण्डवों के सम्पर्क में आने के बाद के ही जीवन और कार्य-कलापों की चर्चा हो । हरिवंश में, जिसे महाभारत का खिल कहते हैं, कृष्ण के जीवन और इतिहास के उस अंग की चर्चा है, जिनके सम्बन्ध में महाभारत मौन है । इसी कारण महाभारत के परवर्ती संस्कारों में भी कृष्ण के बाल-जीवन की कोई बात जोड़ी नहीं गयी । इस प्रकार महाभारत और हरिवंश दोनों संयुक्त रूप से कृष्ण का जीवन-वृत्त प्रस्तुत करते हैं । साथ ही यह भी नहीं कहा जा सकता कि महाभारत में कृष्ण के प्रारम्भिक जीवन के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं है । कंस की मृत्यु को कृष्ण-जरासन्ध वैर का कारण बताया गया है ।[१] युधिष्ठिर द्वारा आयोजित राजसूय के समय चेदि-नरेश शिशुपाल ने कृष्ण के सम्बन्ध में जो खरी-खोटी बातें कही हैं, उसमें वह कृष्ण को न केवल गोप और वर्गपाल ही कहता है वरन् स्पष्ट रूप से उनके बाल-कालीन कार्यों, यथा—पूतना, शकुनि, वृषभ आदि के वध और गोवर्धन वाली घटना का भी उल्लेख करता है ।[२] दुःशासन द्वारा द्रौपदी के चीर-हरण के प्रसंग में द्रौपदी ने कृष्ण से जो गुहार की है, उसमें उसने उन्हें गोपीजनवल्लभ कह कर सम्बोधित किया है ।[३] विदुर द्वारा

---

१. २।१९ ।

२. ३।३८ एवं ४१ ।

३ २।६८।४१-४६ । एफ० एजर्टन इस अंश को प्रक्षिप्त मानते हैं किन्तु गार्वे इसे महा-भारत के प्राचीन स्वरूप का ही अंग समझते हैं । यदि यह अंश प्रक्षिप्त भी हो तब भी महाभारत में गोपी-कृष्ण सम्बन्ध के प्रचुर प्रमाण उपलब्ध हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कंस की मृत्यु की सूचना,[१] कृष्ण का शाल्व के साथ संघर्ष,[२] रुक्मिणी-हरण, दन्तवक्र-वध, केशी-वध, कंस-वध,[३] परिजात-हरण,[४] आदि घटनाओं का उल्लेख महाभारत में हुआ है। स्वयं धृतराष्ट्र ने कृष्ण के बालचरित का वर्णन किया है।[५] दुर्योधन ने कृष्ण को **कंसदासस्य दायाद** कहा है।[६] इस प्रकार कृष्ण के आरम्भिक जीवन की घटनाओं की चर्चा यत्र-तत्र महाभारत में भी उपलब्ध होती हैं। उन सबको **एस० एन० ताड़पत्रीकर** ने संकलित किया है।[७] महाभारत के कृष्ण और गोकुल के कृष्ण एक थे, इसका स्पष्ट उल्लेख महाभारत में ही हुआ है। कहा गया है कि गोकुल के कृष्ण ही, जिन्होंने कंस का वध किया था, पाण्डवों के मित्र और मंत्री थे और उन्होंने ही जरासन्ध के वध में पाण्डवों की सहायता की थी।[८]

भारत-युद्ध में कृष्ण की भूमिका के सम्बन्ध में पुराणों के मौन का कारण भागवत पुराण में स्पष्ट बताया गया है। कहा गया है कि महाभारत में कृष्ण-चरित के जिस अंश का अभाव है, उसी की पूर्ति के लिए हरिवंश की रचना हुई है। पुराणों ने कृष्ण-चरित के उन्हीं अंशों को छुआ है जिनकी चर्चा महाभारत में यथेष्ट नहीं है। इस प्रकार कहा नहीं जा सकता कि पुराण और महाभारत के कृष्ण दो भिन्न व्यक्ति थे।

इस बात के साथ यह भी उल्लेख कर देना आवश्यक है कि पुराणों में हरि-वंश, ब्रह्म, विष्णु, भागवत और ब्रह्मवैवर्त ही कृष्ण-चरित का विस्तृत वर्णन करते हैं। और इन पुराणों की चरित-चर्चा असंगत तो हैं ही, साथ ही परस्पर विरोधी भी हैं। **रूबां** ने विभिन्न पुराणों से कृष्ण-चरित की कतिपय घटनाओं को लेकर उनकी विवेचना की हैं और इस निष्कर्ष पर आये हैं कि महाभारत का मूल खिल (परिशिष्ट) आज के प्रचलित हरिवंश से बहुत छोटा था; मूल हरिवंश सबसे प्राचीन पुराण है और वह ब्रह्म-पुराण में अधिक सुरक्षित है।[९]

---

१. २।८३।८७।
२. ३।१५।२२।
३. ५।३८।४७ और आगे।
४. ५।१३०।५५-६७।
५. ७।२।१-२६।
६. ६।६२।२६।
७. द कृष्ण प्राब्लम, अनाल्स आव भण्डारकर ओरियण्टल इन्स्टट्यूट, खण्ड १०, पृ० २३६-३४४।
८. १२।३२६,८२-६२।
९. जर्नल अमेरिकन ओरियण्टल सोसाइटी, ६१, पृ० ११५-१२८; जर्नल रायल एशियाटिक सोसाइटी, १९४३, पृ० २४७-२५७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्वानों ने पुराणों का विविध क्रम अनुमान किया है। **तत्वभूषण** के अनुसार उनका क्रम है—विष्णु, हरिवंश, भागवत, ब्रह्मवैवर्त।[1] **दुर्गाशंकर शास्त्री** के अनुसार उनका क्रम है—हरिवंश, ब्रह्म, विष्णु, भागवत, ब्रह्मवैवर्त;[2] **रूबाँ** उन्हें ब्रह्म, विष्णु, भागवत, ब्रह्मवैवर्त के रूप में रखते हैं।[3] पुराणों में उपलब्ध कृष्ण-चरित के विभिन्न विवरणों के परीक्षण से ऐसा प्रतीत होता है कि केवल ब्रह्म और विष्णु पुराण में एक रूपता है और ब्रह्म पुराण का वृत्त विष्णु से प्राचीन है।[4] इनके अतिरिक्त पद्म, अग्नि, भागवत और ब्रह्मवैवर्त में बहुत कुछ कृष्ण-चरित है और महाभारत के वास्तविक खिल के रूप में हरिवंश में सम्पूर्ण पौराणिक कथा है और उसमें महाभारत की कथा सतर्कता पूर्वक छोड़ दी गयी है। केवल भागवत पुराण में महाभारत और पुराण के वर्णन को उपयुक्त ढंग से प्रस्तुत किया गया है। ब्रह्मवैवर्त बहुत पीछे की रचना है और उसका एक मात्र उद्देश्य राधा के स्वरूप को उभार कर प्रस्तुत करना है।

कृष्ण का देवत्व

उपलब्ध साहित्य के परीक्षण से ऐसा प्रतीत होता है कि कृष्ण के देवत्व की कल्पना उनके जीवन काल में ही उभर चुकी थी। अपने जीवन काल में ही वे महामानव माने जाने लगे थे। पणिनि-काल के आते आते कृष्ण मात्र क्षत्रिय वीर नहीं रह गये थे; उस समय तक उन्हें देवत्व प्राप्त हो गया था। **गोल्डस्टकर** ने पाणिनि का काल ई० पू० आठवीं शती माना है पर अधिकांश विद्वान उन्हें ई० पू० छठी शती में रखते हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य के काल (ई० पू० चौथी शती) में उनकी निश्चित रूप से उपासना होती थी यह यवन राजदूत मेगस्थने के विवरण से ज्ञात होता है। उसमें इनके मथुरा (Methora) और कृष्णपुर (Cleisobora) अर्थात् वृन्दावन में पूजित होने का उल्लेख है। ई० पू० दूसरी शती में वासुदेव और संकर्षण की उपासना का प्रामाणिक रूप भारत-बाख्त्री के शासक अगाथ-क्लेय के चाँदी के सिक्कों से प्राप्त होता है। उन पर एक ओर चक्रधारी वासुदेव और दूसरी ओर हलधर संकर्षण का चित्रमय अंकन है।[5] उसी काल

---

१. कृष्ण एन्ड द गीता, पृष्ठ ५६।
२. पुराण विवेचन. पृ० १३३-१३५।
३. फेश्रिपट थामस, पृ० १८८-२०३।
४. ताड़पत्रीकर, कृष्ण प्राबलम, पृ० २७६-७७।
५ जर्नल न्यू मिस्मेटिक सोसाइटी आव इंडिया, ३५, पृ० ७३-७७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथवा उससे कुछ पीछे के घोसुण्डी[1] और नाणेघाट[2] से मिले अभिलेखों में भी वासुदेव-संकर्षण की उपासना के उल्लेख हैं।

वासुदेव-कृष्ण के देवत्व के प्रश्न के साथ यह भी प्रश्न जुड़ा हुआ है कि नारायण के रूप में वे कब स्वीकृत हुए। तैतरीय आरण्यक[3] में वासुदेव की पहचान नारायण-विष्णु के रूप में हुई है किन्तु इस आरण्यक का रचना-काल अनिश्चित है। मूलतः नारायण और विष्णु दो स्वतन्त्र देवता थे। विष्णु का उल्लेख ऋग्वेद में हुआ है पर नारायण का उल्लेख पहली बार शतपथ ब्राह्मण में ही प्राप्त है।[4] ऋग्वेद में विष्णु अपेक्षाकृत एक साधारण से देवता हैं। धीरे-धीरे महाभारत काल में उन्होंने प्रमुखता प्राप्त की और वे परमात्मा कहलाये। देवत्व प्राप्त करने के पश्चात् कृष्ण क्यों विष्णु ही कहे गये, अन्य कोई दूसरे देवता नहीं, यह बता पाना कठिन है। एक कारण तो यह हो सकता है कि ऋग्वेद में विष्णु गोपा कहे गये हैं[5] और यह विरुद कृष्ण के उपयुक्त थी। यह भी हो सकता है कि विष्णु आदि-वैदिक काल से ही सर्वथा मानवता के पोषक और धर्म के रक्षक माने जाते रहे हैं, कृष्ण के अनुयायियों ने संहारक शिव की अपेक्षा उन्हें ही अपने देवता के उपयुक्त माना हो।

जो भी हो, कृष्ण को देवत्व प्राप्त होने के पश्चात् यह स्वाभाविक था कि वे विष्णु के अवतार कहे जाँय। द्वारिका के वृष्णि-कुमार और अर्जुन के सारथी कहने के साथ-साथ उन्हें परमात्मा कहने जैसी परस्पर विरोधी तत्त्वों का समन्वय सामान्य भाव से नहीं किया जा सकता था। विष्णु के अवतार के रूप में कृष्ण की स्वीकृति भगवद्गीता में स्पष्ट परिलक्षित है। कदाचित वे ५-६ठीं शती ई० पू० में ही विष्णु के अवतार स्वीकार कर लिये गये थे किन्तु उनका विष्णु में समाहित अवतारवादी स्वरूप कुषाण काल (पहली-दूसरी शती ई०) में ही मुखरित हुआ। विष्णु की इस काल की जो चतुर्भुजी मूर्तियाँ उपलब्ध होती हैं, उनमें वे केवल तीन ही आयुध—शंख, चक्र और गदा धारण किये पाये जाते हैं और महाभारत में वासुदेव इन्हीं तीन आयुधों से युक्त बताये गये हैं।

---

१. एपीग्रेफिया इंडिका, १६, पृ० २७।
२. आर्क्यालाजिकल सर्वे रिपोर्ट, वेस्टर्न सर्किल, ५, पृ० ६०।
३. १०।१।६।
४. १२।३।४।१।
५. १।२२।१८।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इति-वृत्त

सामान्य रूप से कृष्ण चन्द्रवंशी माने जाते हैं।[1] किन्तु कुछ पुराणों में उन्हें सूर्यवंशी भी कहा गया हैं।[2] वे यादवों के सात्वत कुल के थे, उनके पिता का नाम वसुदेव था। उनकी माता देवकी, मथुरानरेश उग्रसेन के भाई देवक की पुत्री थीं। उग्रसेन के पुत्र कंस ने अपने पिता उग्रसेन एवं उनके मन्त्री वसुदेव को पदच्युत कर बन्दी कर लिया था और वह स्वयं शासक बन बैठा था। वह अत्यन्त शक्तिशाली और क्रूर शासक था। देश के अन्य भागों में भी कुछ और भी दुष्ट शासक थे। उन सब के अत्याचारों से प्रजा त्रस्त थी। सभी पुराणों का कहना है कि इन दुष्टों के अत्याचारों से मुक्त करने के लिए विष्णु ने देवकी के गर्भ से वसुदेव के पुत्र के रूप में जन्म लिया।

इस सम्बन्ध की कथा है कि वसुदेव से जब देवकी का विवाह हुआ तब स्वयं कंस रथ लेकर पहुँचाने चला। मार्ग में उसे अदृश्य वाणी सुनायी पड़ी कि देवकी का आठवाँ पुत्र उसकी हत्या करेगा। यह सुन कर कंस भयभीत हुआ और देवकी को मार डालना चाहा। वसुदेव ने यह वचन देकर कि देवकी के जो भी पुत्र होगा उसे वह कंस को दे देंगे, उनके प्राण की रक्षा की। तदनुसार कंस ने देवकी-वसुदेव के छः पुत्रों को मार डाला। जब देवकी ने सातवीं बार गर्भ धारण किया तब गर्भस्थ शिशु को योगमाया ने वसुदेव की दूसरी पत्नी रोहिणी के गर्भ में प्रविष्ट करा दिया। उसी भ्रूण ने बलराम के रूप में जन्म लिया। वे भी विष्णु के ही अवतार थे। कंस को इस बात का पता न चला। मथुरा निवासियों ने यही जाना कि देवकी के गर्भपात हुआ।

कंस ने देवकी और वसुदेव को बन्दीगृह में डाल दिया। वहाँ आठवीं सन्तान के रूप में विष्णु देवकी के गर्भ में आये और कृष्ण का जन्म हुआ। जिस दिन कृष्ण का जन्म हुआ उस दिन भादों की अँधेरी रात थी, बादल गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी। इस बार वसुदेव ने कंस के कोप से अपनी सन्तति को बचाने के लिए शिशु को गोकुल पहुँचाने का निश्चय किया। ठीक उसी समय विष्णु की शक्ति—योगमाया ने गोकुल में नन्द की पत्नी यशोदा के गर्भ से जन्म लिया। विष्णु की माया की शक्ति से बन्दीगृह के पहरेदार निद्रामग्न हो गये और बन्दीगृह का द्वार अपने आप खुल गया। वसुदेव उस घनघोर वर्षा में नवजात शिशु को लेकर निकले। वर्षा के कारण यमुना जोरों से बाढ़ पर थीं; वसुदेव के

---

१. पार्जिटर, एन्शियण्ट इंडियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन्स, पृ० १०२-११७।

२. एवमीक्ष्वाकुवंशास्तु यदुवंशो विनिःसृतः।—हरिवंश, २।३८।३५।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पहुँचते ही यमुना की बाढ़ रुक गयी और वसुदेव सकुशल गोकुल पहुँच गये। गोकुल पहुँच कर वसुदेव ने सब लोगों को निद्रामग्न पाया। अवसर का लाभ उठा कर वे नन्द के घर में घुसे और यशोदा के खाट पर अपने बच्चे को सुला, उनकी लड़की को उठा दबे पाँव लौट आये। यशोदा को कुछ पता न चला। मथुरा लौट कर वसुदेव ने उस लड़की को देवकी के खाट पर सुला दिया।

शिशु-क्रन्दन सुन कर बन्दीगृह के पहरेदार सजग हुए और दौड़ कर कंस को सूचना दी। सूचना पाते ही कंस बन्दीगृह पहुँचा और झपट कर बच्ची को उठा लिया और पत्थर पर पटक दिया। बच्ची कंस के हाथ से छूटते ही आकाश में उड़ गयी और कहती गयी कि लड़की की हत्या कर तेरे हाथ कुछ नहीं लगा। तेरा विनाशक अन्यत्र जन्म ले चुका है। बन्दीगृह से लौट कर कंस ने योगमाया (देवकी की पुत्री)[1] की कही बात मंत्रियों को कह सुनाया। कंस की तरह ही उसके मन्त्री भी क्रूर और अत्याचारी थे। उन्होंने सभी नवजात शिशुओं को मरवा डालने की सलाह दी।

नन्द पुत्र के जन्म का उत्सव मनाने के बाद जब वार्षिक राज-कर देने मथुरा आये तब वसुदेव उनसे मिलने गये। उन्होंने उन्हें तत्काल गोकुल लौट जाने की सलाह और आनेवाली विपत्तियों के प्रति चेतावनी दी। नन्द गोकुल लौट आये।

कंस ने अपने मंत्रियों की सलाह के अनुसार पूतना नाम्नी राक्षसी को नव-जात शिशुओं की हत्या के लिए गोकुल भेजा।[2] वैसे तो पूतना अत्यन्त कुरूपा थी पर व्रज-वासियों को धोखा देने के लिए उसने एक सुन्दरी का रूप धारण किया। जहाँ कृष्ण सोये हुए थे, वहाँ जाकर उन्हें गोद में उठा लिया और लाड़-प्यार कर अपना विषाक्त स्तन उनके मुँह में लगा दिया। कृष्ण ने उसे इतने जोर से चूसा कि उसके प्राण निकल गये।

एक दिन यशोदा कृष्ण को एक शकट के नीचे सुला कर काम करने चली गयीं। शकट में दूध दही के मटके रखे थे। कृष्ण को भूख लगी तो वे रोने

---

१. पौराणिक अनुश्रुतियों में इनका उल्लेख बलराम और कृष्ण के बहन के रूप में एकानंशा नाम से हुआ है। वह इन दोनों के साथ पूजित हुई। इनके सम्बन्ध की विस्तृत जानकारी के लिए देखिए लेखक द्वारा प्रस्तुत लेख—एकानंशा एण्ड हर इमेजेज (जर्नल, बिहार रिसर्च सोसाइटी, ५४, पृ० २२६–२४४)।

२. सुश्रुत (उत्तरतन्त्र, अध्याय २७।३७) में एक घातक बाल-रोग का नाम पूतना बताया है। कुछ विद्वान अलंकारिक रूप से इस रोग को राक्षसी के रूप में देखते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लगे। यशोदा ने कृष्ण के रुदन पर ध्यान नहीं दिया तो वे हाथ पैर फेंकने लगे। उनके पैर के धक्के से शकट दूर जा गिरा; दूध-दही के मटके फूट गये।

एक दिन यशोदा कृष्ण को भूमि पर लिटा कर कहीं चली गयीं। उसी समय कंस का भेजा दैत्य त्रिणावर्त आँधी के रूप में आया और कृष्ण को आकाश में उड़ा ले चला। कृष्ण उसके लिए इतने भारी सिद्ध हुए कि वह उन्हें दूर न ले जा सका। तब उसने कृष्ण को नीचे गिराने की चेष्टा की पर वे उससे चिपटे रहे। अन्ततोगत्वा वह उनका भार सहन न कर सका और स्वयं नीचे गिर कर चकना चूर हो गया।

कृष्ण के बाल-जीवन की इसी प्रकार की कितनी ही घटनाओं का वर्णन पुराणों में मिलता है जिनमें कंस द्वारा उनके मारने के अनेक प्रयास हैं और कुछ स्वयं उनकी अपनी बाल-लीला के। उनमें उनका ऊखल-बन्धन और यमलार्जुन का उखड़ कर गिरना मुख्य हैं।

उन्हीं दिनों गोकुल में अनेक अपशकुन और भेड़ियों का उपद्रव होने लगा। तब वहाँ के ग्वाले उसे छोड़ कर वृन्दावन आ गये। इस समय कृष्ण की अवस्था ६ वर्ष की थी। वृन्दावन रहते हुए कृष्ण ने वत्सासुर, बकासुर, अघासुर, धेनुकासुर, प्रलम्बासुर नामक अनेक दैत्यों को, जो कंस द्वारा कृष्ण को मारने के लिए भेजे जाते रहे, मारा। इन्हीं दिनों यमुना में रहने वाले कालिय नामक नाग का दमन और बन में लगे आग का भी शमन किया। चीरहरण की घटना भी इसी काल की है।

ग्वाले इन्द्र की पूजा किया करते थे। कृष्ण ने उन्हें इन्द्र के स्थान पर प्रकृति की—गोवर्धन पर्वत की पूजा करने के लिए उसकाया। इस पर इन्द्र बहुत क्रुद्ध हुए और घनघोर वर्षा की। कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को ऊपर उठा लिया और उसके नीचे सभी ग्वाले और गायें आ गयीं और इन्द्र उनका कुछ न बिगाड़ सका। इसी काल में कृष्ण के गोप-गोपियों के साथ रास करने की बात भी कही जाती है। इस रास की साहित्य में विशद चर्चा हुई है।

यादवों में युवा-युवतियों के मिल कर नाचने-गाने का प्रचलन था। उसे ही रास कहा जाता था। हरिवंश में इस रास-लीला को नवयुवतियों के युवा कृष्ण के प्रति असीम प्रेम के रूप में प्रस्तुत किया गया है। भागवत पुराण में इसका वर्णन कुछ अधिक उद्दाम रूप में हुआ है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में तो उसका वर्णन खुले रति-केलि के रूप में किया गया है। इस प्रसंग में ज्ञातव्य कि उस समय कृष्ण की आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी। उनमें स्वाभाविक रूप से गोप-गोपियों के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साथ सामूहिक रूप में नाचने गाने की प्रवृत्ति रही होगी, जिसे पुराणों ने उत्तान-श्रृंगार के परिवेश में प्रस्तुत किया है।

कृष्ण-सम्बन्धी ये सारी बातें नारद ने आकर कंस से कहीं। तब कंस ने कृष्ण-बलराम को मल्ल-युद्ध के माध्यम से मार डालने का षड्यन्त्र रचा और उन्हें बुला लाने के लिए अक्रूर को वृन्दावन भेजा। कृष्ण-बलराम मथुरा आये। मार्ग में राजघराने का धोबी मिल गया; उससे उन्होंने कपड़े माँगे। कपड़े देने से इनकार करने पर उसे उन्होंने मारा-पीटा और कपड़े छीन लिए और राजसी कपड़े पहन कर चल पड़े। मार्ग में सुदामा नामक माली ने उन्हें माला भेंट की। उसके बाद त्रिवक्र कुब्जा मिली। उसने कृष्ण के शरीर में चन्दन मला। प्रसन्न होकर कृष्ण ने उसे रूपवती बना दिया।

षडयन्त्र स्वरूप जिस धनुर्मह का आयोजन किया गया था, वहाँ पहुँच कर कृष्ण ने धनुष तोड़ डाला; कुबलापीड़ नामक हाथी को मार डाला और उसका दाँत उखाड़ कर अखाड़े में घुस पड़े। वहाँ चाणूर, मुष्टिक आदि अनेक बलशाली मल्लों को परास्त किया और अन्त में अत्याचारी कंस की हत्या कर उग्रसेन को पुनः मथुरा के सिंहासन पर बैठाया। कंस को मार कर कृष्ण कुब्जा और अक्रूर के घर गये।

तदनन्तर कृष्ण काशी के निकट अवन्तिपुर में सान्दीपनि ऋषि के आश्रम में शिक्षा ग्रहण करने गये। पर वहाँ वे अधिक दिन न रह सके। कंस के वध से उसका ससुर मगध-नरेश जरासन्ध बहुत क्रुद्ध हुआ और भारी सेना लेकर मथुरा पर आक्रमण किया; इसके कारण कृष्ण को मथुरा वापस आना पड़ा; वापस आकर कृष्ण ने उसे मार-भगाया। जरासन्ध ने मथुरा पर एक के बाद एक सत्रह बार आक्रमण किया और हर बार उसे कृष्ण के हाथों परास्त होकर लौटना पड़ा। जब अठारहवीं बार उसके मित्र कालयवन ने मथुरा पर आक्रमण किया, तब कृष्ण ने मथुरा छोड़ देना ही श्रेयस्कर समझा और वे पश्चिमी तट स्थित द्वारिका चले गये।

मथुरा रहते कृष्ण ने उद्धव को गोप-गोपियों को आश्वस्त करने के लिए ब्रज भेजा था। जिसकी विषद चर्चा पुराणों में तो है ही, मध्यकालीन कवियों ने भी उसे गोपियों के विरह-वर्णन का आधार बनाया है।

द्वारिका रहते उन्होंने विदर्भ-नरेश भीष्मक की पुत्री रुक्मिणी के स्वयंवर की बात सुनी। रुक्मिणी का भाई रुक्म उसका विवाह चेदि-नरेश शिशुपाल से करना चाहता था। रुक्मिणी ने कृष्ण के पास सन्देश भेजा। कृष्ण ने आकर रुक्मिणी का हरण कर उससे विवाह किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आगे के वृत्त महाभारत की घटनाओं से सम्बन्ध रखते हैं। द्रौपदी के स्वयंवर में पहली बार कृष्ण की पाण्डवों से भेंट हुई। पाण्डवों के साथ द्रौपदी के विवाह के वाद कृष्ण ने उपहार भेजे। तदनन्तर पाण्डवों ने खाण्डव में अपना राज्य स्थापित किया और कृष्ण द्वारिका लौटे।

तीर्थयात्रा करते हुए जब अर्जुन प्रभास गये तब कृष्ण उनसे मिलने आये और उन्हें द्वारिका ले गये। अर्जुन ने वहाँ कृष्ण की सहमति से सुभद्रा का हरण कर उससे विवाह किया। मय नामक दानव ने, जिसकी प्राण-रक्षा खाण्डव-वन दहन के समय कृष्ण और अर्जुन ने की थी, पाण्डवों के लिए एक सुन्दर राजभवन की रचना की और कृष्ण की सलाह से युधिष्ठिर ने राजसूय का आयोजन किया। इस क्रम में कृष्ण, भीम और अर्जुन के साथ मगध की राजधानी गिरिव्रज गये और भीम ने जरासन्ध का वध कर बन्दी राजाओं को मुक्त किया।

राजसूय के समय कृष्ण ने ब्राह्मणों के पाँव पखारे। भीष्म ने कृष्ण को परमात्मा घोषित किया और उन्हें ही अग्र-पूजा के उपयुक्त बताया (इससे प्रकट होता है कि कृष्ण को जीवन-काल में ही देवत्व प्राप्त हो गया था)। जरासन्ध के मित्र शिशुपाल ने कृष्ण की अग्र-पूजा करने की बात का विरोध किया। वह कृष्ण, भीष्म और पाण्डवों की भर्त्सना करने लगा। तब कृष्ण ने क्षुब्ध होकर उसे मार डाला। राजसूय की समाप्ति पर कृष्ण द्वारिका लौट गये।

कृष्ण के द्वारिका लौटते ही दुर्योधन ने शकुनि की सलाह से द्यूत-क्रीड़ा का आयोजन किया। शकुनि के छल से द्यूत में पाण्डव पराजित हुए और उन्हें वन-वास स्वीकार करना पड़ा। वनवास-काल में कृष्ण पाण्डवों से मिलते रहे और विराट की राजकुमारी उत्तरा के साथ अर्जुन-सुभद्रा के पुत्र अभिमन्यु के विवाह में भाग लिया। वनवास के बाद हस्तिनापुर लौट कर पाण्डवों ने अपने राज्य की माँग की; दुर्योधन ने देने से इनकार किया। सन्धि-प्रयास के असफल होने पर जब युद्ध अनिवार्य हो गया तब सैन्य-संग्रह के प्रयास में अर्जुन और दुर्योधन दोनों ही कृष्ण के पास द्वारिका गये। दुर्योधन ने कृष्ण की सेना और अर्जुन ने अकेले कृष्ण को अपने पक्ष में लिया।

युद्ध के समय कृष्ण ने पाण्डवों की अनेक प्रकार से सहायता की। युद्ध के पहले दिन जब अर्जुन अपने निकट जनों को प्रतिपक्ष में देख कर कुछ विचलित हुए और इस दुविधा में पड़े कि क्या करें, क्या न करें तब कृष्ण में उन्हें भगवद्-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीता का उपदेश देकर कर्तव्य-पथ का निर्देशन किया। सारथी के रूप में कृष्ण ने अर्जुन की सहायता की; उन्होंने स्वयं भीष्म पर दो बार आक्रमण किया और भगदत्त के अस्त्र को बेकार बनाया; कई बार स्वयं युद्ध में उतरने को तैयार हुए; युद्ध में वे घायल भी हुए। भूरिश्रवा, द्रोण, कर्ण, दुर्योधन आदि को छल से मारने के लिए कृष्ण ने पाण्डवों को प्रेरित किया। युद्धकाल में कृष्ण ने पाण्डवों का न केवल मार्गदर्शन किया वरन् आध्यात्मिक शिक्षा और सान्त्वना भी प्रदान की। युद्ध में पाण्डवों की विजय कृष्ण के कारण ही हो सकी, ऐसा सहज भाव से कहा जा सकता है।

युद्धोपरान्त युधिष्ठिर को हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठा कर कृष्ण द्वारिका लौटे। अश्वमेध यज्ञ के समय वे पुनः हस्तिनापुर आये। उसी समय उन्होंने उत्तरा के मृत-जात पुत्र को जीवित किया जो परीक्षित नाम से प्रख्यात हुआ।

द्वारिका में कृष्ण अनेक वर्ष तक सुख-शान्ति से रहे। अचानक एक दिन विश्वामित्र, कण्व और नारद द्वारिका आये। यादव-वृष्णियों को मजाक सूझा। उन्होंने इन ऋषियों के सम्मुख साम्ब को नारी रूप में प्रस्तुत किया। इस मजाक से वे चिढ़ गये और शाप दिया कि उस छद्मवेशी नारी से लौहवज्र उत्पन्न होगा जो सारे यादवों का विनाश करेगा। साम्ब को जब लौह-वज्र उत्पन्न हुआ तब उग्रसेन ने उस वज्र को चूर्ण करा कर समुद्र में फिकवा दिया।

शान्ति और वैभव का जीवन व्यतीत करते करते द्वारिका-निवासी यादव विलासी और मदिरासक्त हो गये। एक दिन स्त्रियों, बच्चों और वृद्धों को छोड़ कर शेष सभी यादव लोग किसी धार्मिक कृत्य के लिए प्रभास गये। वहाँ उन्होंने नाना प्रकार के आमोद-प्रमोद किये और खूब मदिरा पी। मदिरा पी कर जब वे उन्मत्त हो गये तब परस्पर गाली-गलौज करने लगे; फिर मार-पीट पर उतर आये। निदान भाई-भाई से, बन्धु-बन्धु से लड़ने लगा और परस्पर घनघोर युद्ध हुआ। इस प्रकार कृष्ण, बलराम, दासक (कृष्ण के सारथी) और बभ्रु को छोड़ कर शेष सारे यादव कट मरे। बलराम दुखी होकर समुद्र तट पर चले गये और वहाँ उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये।

कृष्ण ने अपने सारथी बभ्रु को हस्तिनापुर भेज कर अर्जुन से द्वारिका आकर स्त्री बच्चों की देख-भाल करने के लिए कहलाया। अर्जुन के आने तक स्त्रियों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

को प्रतीक्षा करने तथा उनके आने पर उनके साथ हस्तिनापुर चले जाने की सलाह दी। तदनन्तर द्वारिका समुद्र में समा गया।

जब द्वारिका से स्त्रियों-बच्चों को लेकर अर्जुन लौट रहे थे तो मार्ग में पंचनद में लुटेरों ने उन्हें लूटा और स्त्रियों का अपहरण किया। बेचारे अर्जुन असहाय देखते रह गये। जो स्त्रियाँ बच रहीं, उन्हें लाकर अर्जुन ने विविध स्थानों पर वसा दिया।

एक दिन जब कृष्ण वन में ध्यानमग्न वैठे थे, जरा नामक एक व्याध आया। उसने उन्हें मृग समझ कर वाण चलाया, जिसके लगने से उनकी मृत्यु हो गयी।[1]

---

१. व्याध के जरा नाम से कुछ विद्वानों की धारणा है कि कृष्ण वृद्ध होकर स्वाभाविक रूप से मरे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काव्य-परिचय

नाम

फ्रेंच विद्वान **गार्सां द तासी**[1] के माध्यम से **मलिक मुहम्मद जायसी** की रचना के रूप में **घनावत** नाम लोगों के लिए बहुत दिनों से जाना पहचाना रहा है। किन्तु उसकी ओर समुचित रूप से कभी किसी ने ध्यान नहीं दिया। १९७३ ई० में जब **सैयद मुजाहिद हुसेन जैदी** ने पश्चिमी जर्मनी के राजकीय पुस्तकालयों में सुरक्षित उर्दू के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची प्रस्तुत की[2] तब उनके सामने वह प्रति आयी जिसके आधार पर **तासी** ने **घनावत** का उल्लेख किया था। उन्होंने अपनी सूची में इसका परिचय **कुन्हावत** (Kunhawat) नाम से दिया और कोष्ठक में **घनावत** नाम भी रख दिया। वे निश्चय नहीं कर पाये कि रचना का नाम **कुन्हावत** है या **घनावत** फिर भी उन्होंने यह अवश्य कहा कि इसमें कुन्हा की प्रेम कहानी है। उनके इस परिचय से सामान्य धारणा यह उभरती है कि **पदमावत** की नायिका की तरह ही इस आख्यान की नायिका कुन्हावती अथवा घनावती नाम की कोई राजकुमारी होगी; **जायसी** ने उसी की प्रेम-कहानी लिखी होगी। वस्तुतः यह प्रेमाख्यान नायिका-परक न होकर नायक-परक हैं, इसमें कृष्ण की कथा है। यह बात रचना के आलोड़न करने पर ही प्रकट हो सकी और तब स्पष्ट हुआ कि रचना का नाम न तो **घनावत** है और न **कुन्हावत** वरन् वह **कन्हावत** है और कन्ह का तात्पर्य कृष्ण से है। हमारी इस खोज से पूर्व ही **सैयद अतहर अब्बास रिजवी** को **जायसी** रचित **कन्हावत** का पता था। उन्होंने इसका उल्लेख अपनी एक पुस्तक[3] में किया है; किन्तु उन्होंने अपनी जानकारी का सूत्र नहीं बताया है।

कन्हावत नाम की जानकारी से पूर्व हम सब की धारणा रही है कि भारतीय प्रबन्ध-काव्यों के रचयिताओं ने अपनी रचानाओं का नामकरण नायि-काओं के नाम पर किया है। संस्कृत साहित्य में **सुबन्धु** की **वासवदत्ता**, **श्रीहर्ष**

---

१. इस्त्वार द ला लितरेत्यूर एँ दुई एँ ऐन्दोस्तानी, खण्ड २, पृ० ६८-९।
२ उर्दू हैंडश्रफ्टेन, वर्जिशनिश दर ओरिएण्टलिश्चेन हैण्डश्रिफ्टेन इन लैंण्ड ड्यूश, खण्ड २५, १९७३, वीसवेडन, पृ० ३६-३७।
३. हिस्ट्री आव सूफ़ीइज्म इन इण्डिया, भाग १, पृ० ३७०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की **रत्नावली**, **बाण** की **कादम्बरी** इसी ढंग के कुछ उदाहरण हैं। इसी प्रकार प्राकृत-काव्यों में **लीलावती कथा**, **मलयसुन्दरी कथा**, **सुरसुन्दरी चरित्रम्** आदि का नाम लिया जा सकता है। हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्यों के सूफी-रचयिताओं ने भी इसी परम्परा का अनुसरण किया है। **मौलाना दाउद** की रचना का नाम नायिका (चाँदा) के नाम पर **चन्दायन** है। **कुतुबन** के काव्य का नाम **मिरगावती** और **मँझन** की रचना का नाम **मधुमालती** है। स्वयं **जायसी** की दो रचनाओं—**पदमावत** और **चित्ररेखा** के नाम नारी-परक हैं। हमारे सामने **कन्हावत** के रूप में प्रेमाख्यानक काव्य का नायक-परक नाम पहली बार आ रहा है। यह एक अनजानी विशिष्टता है।

जब तक **कन्हावत** सामने नहीं आया था तब तक काव्यों के **आवत** या **वत** नामान्त पर दृष्टि डालने की कोई आवश्यकता न थी। सामान्य रूप से यही समझा जाता रहा है कि वह नायिका के नाम का अंग है। पद्मावती, चित्रावती, चन्द्रावती, लीलावती आदि **वती** नामान्त नारी नाम भारतीय जीवन में जाने पहचाने हैं। ये सभी ईकारान्त नाम इकारान्त होते हुए अकारान्त रूप में प्रायः देखने-सुनने में आते हैं। इसी प्रकार **जायसी** की रचना का नाम पद्मावती से **पदमावत** हुआ होगा। किन्तु **कन्हावत** की नायिका कन्हावती या कृष्णावती नहीं है इसलिए इनमें **वत** नामान्त का समाधान इस रूप में नहीं किया जा सकता। **कन्हावत** नाम ने **आवत** अथवा **वत** के व्याख्या की आवश्यकता उपस्थित कर दी है।

एक मित्र ने हमारा ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है कि पुरानी हिन्दी में क्रिया के रूप में **आवना** का उल्लेख मिलता है, उससे **आवत** शब्द बनता है। यथा—

रसरी आवत-जात ते सिल पर परत निसान।

भोजपुरी में भी **आवत** शब्द का प्रयोग होता है; वहाँ भी उसका अर्थ है आते हुए। इस रूप में **कन्हावत** का अर्थ होगा आते हुए कृष्ण। किन्तु इससे कोई स्पष्ट भाव प्रकट नहीं होता। इसी क्रम में एक सुझाव यह भी है कि **आवत** के मूल में **अवतरण** का भाव है; तात्पर्य है **कृष्णावतरण** अथवा **कृष्णावतार**। पर **अवतरण** अथवा **अवतार** का **आवत** रूप किस प्रक्रिया से बनेगा, हमारी समझ में नहीं आ पाया है।

किशोरीदास वाजपेयी की धारणा है कि **वत** हिन्दी का सम्बन्ध-प्रत्यय हो सकता है, सम्बन्धी का अर्थ देने के लिए। राजस्थान में प्रचलित **शेखावत**,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चूड़ावत जैसे शब्दों में **वत** वंश-सम्बन्ध-बोधक प्रत्यय है। इस प्रकार **कन्हावत** का तात्पर्य कृष्ण-सम्बन्धी काव्य या कथा के रूप में लिया जा सकता है।[1]

इस पर विचार करते समय हमारे ध्यान में यह बात भी आयी कि **कन्हावत** में प्रयुक्त **वत** प्रत्यय के मूल में **वृत्त** शब्द होगा जिसका प्रयोग इतिहास अथवा बीती बात के लिए होता है। यह **वृत** ही घिस कर **वत** हो गया है। यदि बात कुछ ऐसी ही हो तो **कन्हावत** का तात्पर्य **कृष्ण-कथा** के रूप में लिया जा सकता है। वैसी अवस्था में रचना का नाम **कन्हवत** (कृष्ण-वृत) होना चाहिए **कन्हावत** नहीं। भाषा-विज्ञान के यदि किसी प्रक्रिया से **वत** का रूप **आवत** हो सकता हो तो इस कल्पना को स्वीकार किया जा सकता है; किन्तु इस सम्बन्ध में हमारी अपनी कोई जानकारी नहीं है। इस अवस्था में यह भी कहा जा सकता है कि नायक का नाम **कन्हा** है, **कन्ह** नहीं; और उसमें **वत** जुड़ा है। पर इसे स्वीकार करने में कठिनाई यह है कि कृष्ण के लिए कन्ह, कान्ह, कान्हा तो सुना जाता है पर कन्हा नहीं। प्रस्तुत काव्य में कान्ह का प्रयोग अनेक बार हुआ है पर कन्हा कहीं देखने में नहीं आया। अतः **कन्हावत** में प्रत्यय **वत** नहीं **आवत** ही होगा। **आवत** की कल्पना **आवृत्ति** के रूप में की जा सकती है। पर **आवृत्ति** का ऐसा कोई प्रयोग हमारे देखने में नहीं आया जिनसे प्रस्तुत प्रसंग में उसकी संगति बैठायी जा सके।

ऐसी स्थिति में एक मित्र की सलाह है कि शब्द-शोध के पचड़े में पड़ने की आवश्यकता नहीं। अनेक शब्द अनुकरण पर गढ़ लिए जाते हैं। **कन्हावत** नाम भी **पदमावत** के अनुकरण पर गढ़ लिया गया होगा। उन्होंने इस सन्दर्भ में **जायसी** की कुछ अन्य रचनाओं के नाम **इतरावत, सखरावत** आदि की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। पर ये रचनाएँ सम्प्रति उपलब्ध नहीं हैं और कदाचित **पदमावत** के बाद की हैं। उनके आधार पर **कन्हावत** के सम्बन्ध में कुछ कहना युक्तिसंगत न होगा। **कन्हावत पदमावत** से पहले की रचना है; अतः अनुकरण की बात अपने आप कट जाती है।

सम्प्रति **कन्हावत** नाम ने शब्द-शास्त्रियों के सम्मुख एक विचारणीय प्रश्न ला खड़ा किया है। उनका काम है कि उस पर विचार करें।

रचना-काल

पदमावत में रचना-काल का उल्लेख इन शब्दों में मिलता है—

---

१. निजी पत्र।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन नौ सै सताइस (सैतालिस) अही।
कथा अरम्भ बैन कवि कही ॥[1]

लगभग इसी शब्दावली में **जायसी** ने **कन्हावत** की भी रचना-तिथि का उल्लेख किया है—

सन नौ सै सत्यारस (सैतारिस) अही।
तहिया सरस बचन कवि कही ॥[2]

इन दोनों ही ग्रन्थों की रचना-तिथि में नौ सै के बाद जो अंक सूचक शब्द हैं उसके आदि और अन्त दोनों में **स** है। **आखिरी कलाम** में दी गयी तिथि के इस अंक के अन्त में भी **स** है। उसकी पंक्ति इस प्रकार है—

नौ सै बरिस छतीस जो भये। तब एहि कविता आखर कहे।[3]

इनमें **स** का इस प्रकार का प्रयोग आकस्मिक है या साभिप्राय, कहना कठिन है; पर वह इन तिथियों पर एक प्रश्न-चिन्ह अवश्य उपस्थित करता है। दूसरी बात यह कि **पदमावत** में प्रयुक्त यह शब्द अनेक प्रतियों के आधार पर विवाद का विषय बना हुआ है; इसी तरह का विवाद **कन्हावत** के इस शब्द के सम्बन्ध में भी अकेली एक प्रति के आधार पर उपस्थित है। इस प्रति में इस शब्द की वर्तनी इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है—**सीन, ते, ये, अलिफ, रे** और **सीन** और उसे स्पष्ट रूप से **सत्यारस** पढ़ा जा सकता है। हिन्दी अंक-गणना में किसी अंक का नाम **सत्यारस** नहीं है। ग्यारह को कुछ लोग **ग्यारस** कहते सुने जाते हैं। उसी के अनुकरण पर यह अनुमान किया जा सकता है कि **सत्यारस** का अभिप्राय सतरह से होगा अर्थात् **कन्हावत** की रचना तिथि ९१७ हिजरी है। किन्तु इसे स्वीकार करने में सबसे बड़ी बाधा शाहेवक्त के रूप में हुमायूँ का उल्लेख—

देहली कहौं छत्रपति नाऊँ। बादशाह बड़ शाह हमायूँ।[4]

है। इससे यह ध्वनित होता है कि जिस समय **कन्हावत** की रचना प्रारम्भ की गयी, उस समय दिल्ली के सिंहासन पर हुमायूँ विराजमान था। जब हम इतिहास पर दृष्टि डालते हैं तो ज्ञात होता है कि **तबक्काते अकबरी** और **हुमायूँ-नामा** के अनुसार हुमायूँ के पिता बाबर की मृत्यु ६ जुम्माद-उल-अव्वल ९३७

१. कड़वक २४ पंक्ति १।
२. कड़वक १४ पंक्ति १।
३ कड़वक १३, पंक्ति १।
४. कड़वक ५ पंक्ति १।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हिजरी को हुई और हुमायूँ के नाम का खुतबा ९ जुम्माद-उल-अव्वल ९३७ हिजरी को पढ़ा गया। १० मुहर्रम ९४७ हिजरी को हुमायूँ कन्नौज के युद्ध-क्षेत्र में शेरशाह के हाथों परास्त हुआ, ऐसा समसामयिक इतिहासकारों का कथन है। इस युद्ध के पश्चात् हुमायूँ लगभग १६ बरसों तक पदच्युत रहा। वह ४ रमजान ९६२ हिजरी के आस-पास दिल्ली का सिंहासन पुनः प्राप्त करने में समर्थ हुआ; किन्तु इस बार वह कुछ ही दिन राज-भोग कर सका। १३ रबी-उल-अव्वल ९६३ हिजरी को उसकी मृत्यु हो गयी।

इन ऐतिहासिक सूचनाओं के प्रकाश में **कन्हावत** के ९३७ हिजरी से पूर्व रचे जाने की कल्पना नहीं की जा सकती। इस प्रकार **सत्तरह** के अर्थ में **सत्यारस** को ग्रहण करने की बात स्वतः निरर्थक सिद्ध है। पाठ में निसन्देह कहीं कोई त्रुटि है। यदि **ते** और **ये** को नुक्तों के हेर-फेर का परिणाम मान कर उन्हें **ये** और **ते** के रूप में लें तो हम इस शब्द को **सैतारस** या **सैतारिस** पढ़ सकते हैं। **ल** के स्थान पर **र** का प्रयोग हम सबका जाना पहचाना है; अतः **सैतारिस** को **सैतालिस** के रूप में ग्रहण करने में कोई कठिनाई नहीं है।

कन्नौज के मैदान में शेरशाह के हाथों पराजित होकर भी हुमायूँ ९४७ हिजरी में सत्तारूढ़ था यह उसके उस वर्ष के आगरा टकसाल से निकले चाँदी के सिक्कों से, जिनकी चर्चा अत्यत्र कर चुके हैं,[1] प्रमाणित है। अतः **कन्हावत** के हुमायूँ के समय ९४७ हिजरी में रचे जाने की सूचना के प्रति सन्देह नहीं किया जा सकता। यदि यह **कन्हावत** की रचना की तिथि है तो यह अपने आप में इस बात का भी प्रमाण है कि **पदमावत** की रचना तिथि ९४७ हिजरी नहीं हो सकती। दोनों रचनाओं को आमने सामने रख कर तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट परिलक्षित होता है कि दोनों एक ही वर्ष की क्या एक काल की भी रचना नहीं है। **कन्हावत** में सूफी-आध्यात्मिकता लेश-मात्र भी नहीं है[2] जब कि पदमावत में सूफी-आध्यात्मिकता अपने प्रौढ़ रूप में उपलब्ध है। इस प्रकार की प्रौढ़ आध्यात्मिक-स्वरूप बरसों की साधना का ही परिणाम हो सकता है।

भाषा

रामचन्द्र शुक्ल की धारणा रही है कि **मलिक मुहम्मद जायसी** का **पदमावत** तथा अन्य मुसलमान कवियों द्वारा रचित प्रेमाख्यान पूर्वी हिन्दी अर्थात् अवधी

---

१. देखिए पीछे पृ० ३२।

२. आगे इस पर विस्तृत विचार किया गया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भाषा में लिखे गये थे ।[१] उसी बात को गाँठ बाँध कर और बिना दायें-बायें देखे हमारे प्रेमाख्यानक काव्यों के अनुसन्धित्सु और विवेचक अवधी का राग अलापते चले आ रहे हैं। **चन्दायन** और **मिरगावती** के प्रसंग में भाषा का विवेचन करते हुए हमने मत व्यक्त किया है कि इन रचनाओं की भाषा को अवधी कहना भ्रमात्मक है।[२] हमारी इस बात पर किसी ने अब तक गम्भीरता से सोचने विचारने की आवश्यकता नहीं समझी है; हमारे कथन की सार्थक आलोचना करने की अपेक्षा भर्त्सनात्मक बातें ही कही जा रही हैं। लगता है मेरी इस बात ने लोगों को क्षुब्ध कर दिया है।

वस्तुतः साहित्यिक विवेचन में किसी के क्षुब्ध होने या आक्रोश प्रकट करने जैसी बात के लिए कोई स्थान नहीं है। **रामचन्द्र शुक्ल** ने जो कहा है, उसका ढोल पीटने अथवा हमने जो कुछ कहा है, वैज्ञानिक है या अवैज्ञानिक, कहने मात्र से ही कोई लाभ नहीं। आवश्यकता इस बात की है तटस्थ भाव से देखा और समझा जाय कि इन काव्यों के रचयिताओं ने अपनी रचना की भाषा को किस रूप में जाना और पहचाना था। इसके साथ ही यह भी जानने की आवश्यकता है कि स्वयं **अवधी** शब्द कितना पुराना है। इसके समझने के बाद ही उनकी रचनाओं के भाषा-स्वरूप के सम्बन्ध में कुछ कहना उचित होगा।

जहाँ तक हमारी अपनी जानकारी है, साहित्य की भाषा के रूप में **अवधी** नाम का उल्लेख मध्य-कालीन साहित्य में कहीं भी नहीं है। यदि हम यह कहें कि भाषा के रूप में **अवधी** शब्द अनजाना था तो यह किसी भी प्रकार गलत-बयानी न होगी। इस प्रसंग में यह याद दिलाना उचित होगा कि भारत के जिस भू-भाग को आज हम उत्तर-प्रदेश कहते हैं वह अंग्रेजी शासन काल में **यूनाइटेड प्राविंसेज** कहा जाता था। उसका पूरा नाम था **यूनाइटेड प्राविंसेज आव आगरा एण्ड अवध** अर्थात् इस प्रान्त में आगरा और अवध नाम के दो भाग सम्मिलित थे। उस समय **आगरा** का तात्पर्य उस भू-भाग से समझा जाता था जिसे हम सहज भाव से ब्रजभूमि कह सकते हैं। उसके अन्तर्गत आगरा और अलीगढ़ की कमिश्नरियाँ निहित थीं। प्रदेश के शेष भू-भाग की अभिव्यक्ति **अवध** नाम में समाहित थी।

कहना न होगा अंग्रेज आई० सी० एस० अफसरों के मस्तिष्क में निरन्तर डिवाइड एण्ड रूल (विभेद उत्पन्न कर शासन करो) की भावना काम करती

---

१. जायसी ग्रन्थावली, चतुर्थ संस्करण, पृ० ४।

२. चन्दायन, पृ० ३१-३२; मिरगावती, पृ० ३७-४१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहती थी और प्रत्येक दिशा में वे जो कुछ भी कहते करते थे, उसके मूल में यही प्रेरणा रहती थी। अतः उन्होंने साहित्य के क्षेत्र को भी इसी दृष्टि से देखा; मुँह से कहा भले ही न हो। उन्होंने दो प्रदेशों के साहित्य को दो भिन्न बोलियों के साहित्य के रूप में देखने का प्रयास किया और दो बोलियों की बात की। आगरा (ब्रजप्रदेश) के साहित्य के लिए ब्रज-भाषा नाम पहले से ही उपलब्ध था; अतः उसके लिए उन्हें किसी प्रकार के आयास करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। **अवध** के नाम से अभिहित किये जाने वाले प्रदेश के साहित्य की भाषा का भी नाम ढूँढ़ने में उन्हें विशेष आयास न करना पड़ा। संयोग की बात थी, उन दिनों इस क्षेत्र के प्रमुख साहित्य के रूप में **तुलसी और जायसी** की रचनाएँ ही उनके सामने समूचे प्रदेश का प्रतिनिधित्व कर रही थीं। ये दोनों ही कवि उस प्रदेश के थे, जिसकी बोली के लिए **ग्रियर्सन** ने **अवधी** नाम दिया था; अतः उन्होंने सहज भाव से समूचे प्रदेश के (मात्र लखनऊ-फैजाबाद कमिश्नरी में सीमित क्षेत्र की नहीं) साहित्य को अवध का साहित्य मान लिया। उस समय तक **अवधी** नाम की सार्थकता सीमित क्षेत्र की बोली तथा विस्तृत क्षेत्र की साहित्यिक भाषा, दोनों रूपों में थी; तथापि उसका यह अर्थ कदापि न था कि वे दोनों एक हैं। साहित्यिक भाषा के नाम के रूप में **अवधी** शब्द तब इतना संकीर्ण न था, जितना कि आज के विवेचकों ने समझ रखा है।

ध्यातव्य है कि **रामचन्द्र शुक्ल** ने **अवधी** के पर्याय के रूप में **पूर्वी हिन्दी** शब्द का जो प्रयोग किया है वह उन्होंने **पश्चिमी हिन्दी** अर्थात् **ब्रज-भाषा** को दृष्टिगत करके ही किया था। इसी बात को **मिरगावती** की भूमिका में **शिव-गोपाल मिश्र** ने अधिक स्पष्ट रूप में कहा है—**अवधी के विकास काल में जौनपुर से दिल्ली तक की भाषा में एकरूपता थी। यदि इन सब (कुतबन, जायसी, ईश्वरदास आदि) की भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो पता चलेगा कि सबों ने समान रूप से एक भाषा का प्रयोग किया है जो अत्यन्त ठेठ शब्दों को प्रश्रय देती है। इस प्रकार पूर्व में गाजीपुर तथा जौनपुर से पश्चिम में दिल्ली, उत्तर में पूरा अवध प्रान्त तथा दक्षिण में मध्य प्रदेश तक में अवधी का यही रूप बोला और समझा जाता था। यही अवधी उस काल की जनता की भाषा थी।**[1] इसी बात को **विश्वनाथ प्रसाद** ने स्व-सम्पादित **चन्दायन** की प्रस्तावना में तनिक दूसरे ढंग से कहा है। उनका कहना है—**चन्दायन की भाषा हिन्दी के विकास का वह प्रारम्भिक रूप है, जिसमें उसके किसी एक स्थानीय स्वरूप को लेकर और उसमें अन्यान्य कई बोलियों के प्रचलित प्रयोगों का मिश्रण**

१. कुतुबन कृत मृगावती, भूमिका, पृ० ३५।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करके उसे अधिक व्यापक बनाने की प्रवृत्ति पायी जाती है। भाषा का एक सर्व जन-सुलभ और सुबोध रूप खड़ा करने के लिए इसमें विभिन्न भाषा क्षेत्रों में प्रचलित रूपों का मिश्रण का कुछ ऐसा ही आदर्श अपनाया गया है, जैसा कि कबीर आदि सन्त कवियों की परम्परा में हमें मिलता है।[1]

अवधी का आग्रह रखते हुए भी प्रभाकर शुक्ल ने इसी बात को स्वीकार किया है। उनके कथनानुसार इन कृतियों में एक ओर हिन्दी की उदय-कालीन तथा अपभ्रंशोत्तर भाषा के प्रचुर लक्षण प्राप्त होते हैं और दूसरी ओर अवधी युक्त भाषा का वह रूप लक्षित किया जा सकता है जो देश की विस्तृत भू-भाग की प्रचलित भाषा से यथेष्ट प्रभावित था।[2]

स्पष्ट है कि ये विद्वान स्वीकार करते हैं कि इन मुसलमान कवियों की रचनाओं की भाषा किसी एक प्रदेश की बोली में सीमित नहीं थी। वस्तुतः मिरगावती के रचयिता कुतबन ने अपनी रचना की भाषा के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से कहा है—

शास्त्री आखर बहु आये। औ देसी चुनि चुनि सब लाये।[3]
खट भाका जो ईहहिं बाँचा। पण्डित बिन बूझत हो साँचा।।[4]

अर्थात् तत्सम शब्दों (शास्त्री आखर—संस्कृत) के साथ उन्होंने अपनी रचना में देशी शब्दों का प्रयोग किया है। इस प्रकार उनकी भाषा बहु-भाषा मिश्रित है जिसे सामान्य जन सरलता से समझ सकते हैं।

यदि मिरगावती की भाषा के साथ चन्दायन, कन्हावत, पदमावत, मधुमालती आदि काव्यों की भाषा की तुलना की जाय तो लगेगा कि उन सबकी भाषा एक सी है; अर्थात् उनकी रचना मिरगावती वाली भाषा (कुतुबन के शब्दों में मिश्रित भाषा) में हुई है। विभिन्न भाषाओं अथवा बोलियों के मिश्रण से बनी भाषा किसी प्रदेश विशेष की भाषा न हो सकती और न कही जा सकती। ऐसी भाषा का प्रयोग सदैव विस्तृत क्षेत्र में बोलने और समझने के लिए ही किया जायेगा। इस प्रकार इन रचनाओं की भाषा के लिए अवधी शब्द का प्रयोग अवध की सीमा में आबद्ध बोली के भाव के रूप में कदापि नहीं किया जा सकता।

इन रचनाओं की भाषा को आज अवधी कहने का किसी रूप में कोई औचित्य

---

१. चन्दायन, प्रस्तावना, पृ० १४।
२. जायसी की भाषा, पृ० १०।
३. लेखक द्वारा सम्पादित मिरगावती, कड़वक १४, पंक्ति ४।
४ वही, कड़वक ४०१, पंक्ति ४।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं है; ऐसा कहना भ्रम फैलाना है। हमारे सामने आज न केवल जायसी और तुलसी का साहित्य है, वरन् उत्तर भारत के विभिन्न कोनों में निवास करने वाले अनेक मध्यकालीन साहित्यकारों की रचनाएँ भी हैं जो हिन्दी साहित्य के इतिहास को कम से कम बारहवीं शती ई० तक पीछे ले जाने वाली हैं।[1] आज हमारे

---

१. साहित्य के इतिहासकारों ने हिन्दी साहित्य के आदि काल को अपभ्रंश और उसके ह्रासोन्मुख भाट और चारणों की भाषा पिंगल और डिंगल में देखने की जो चेष्टा की है वह हमें किसी भी रूप में मान्य नहीं है। हमारे सामने आज इस बात के स्पष्ट ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध हैं जिनके आधार पर सहज भाव से कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास अपभ्रंश से स्वतन्त्र अपने निजी रूप में हुआ है। जिन दिनों गोपाचल (ग्वालियर) में रइधू कवि अपभ्रंश में रचनाएँ प्रस्तुत कर रहे थे, उन्हीं दिनों उसी क्षेत्र में हमारे विष्णुदास भी रामायण और महाभारत प्रौढ़ हिन्दी भाषा में लिख रहे थे। अपभ्रंश और हिन्दी भाषा के समानान्तर रचना का यह उदाहरण इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि हिन्दी साहित्य का अपभ्रंश साहित्य से कोई सीधा लगाव नहीं है।

प्रश्न हो सकता है कि यदि अपभ्रंश और हिन्दी में समानान्तर साहित्य-सर्जन हो रहा था और हिन्दी साहित्य का इतिहास इतने पीछे जाता है तो हमें उस काल का हिन्दी साहित्य उपलब्ध क्यों नहीं है जब कि उसी काल का रचित अपभ्रंश साहित्य प्रचुर मात्रा में मिलता है। इस प्रश्न का उत्तर उन लोगों के लिए कठिन नहीं हैं, जो तत्कालीन राजनीतिक इतिहास से परिचित हैं। आदि-कालीन हिन्दी साहित्य के अभाव के मूल में है— उत्तर भारत पर मुसलमानों का आक्रमण और भारतीयों के प्रति उनकी असहिष्णु नीति, जिस असहिष्णु नीति के कारण उत्तर भारत के प्राचीन मन्दिरों और कला कृतियों का सफाया हुआ, उसी असहिष्णुता के परिणाम स्वरूप उत्तर भारत के पुस्तकालय और साहित्य-संग्रह भी जल कर राख हुए। जिस प्रकार प्राचीन कालीन मन्दिरों के अवशेष दक्षिण भारत में ही सुरक्षित प्राप्त होते हैं, उसी प्रकार जो प्राचीन कालीन साहित्य सामग्री बच सकी है, वह राजस्थान के मरुप्रदेश में स्थित जैन भंडारों में ही रही है। इन जैन भंडारों में उसी साहित्य का विशेष चयन हुआ था जो जैन-धर्म से प्रभावित था। यह प्रभावपूर्ण संरक्षण अपभ्रंश को ही प्राप्त था, हिन्दी को नहीं। हिन्दी को यह संरक्षण प्राप्त भी नहीं हो सकता था क्योंकि वह राजस्थान प्रदेश की भाषा न थी। उत्तरप्रदेश के पुस्तकालय, जहाँ हिन्दी के ग्रन्थ रहे होंगे, जल कर खाक हो गये। फलतः आज हिन्दी का वही साहित्य उपलब्ध है, जो इन आक्रामकों के उन्माद की समाप्ति के बाद का है और जो सद्गृहस्थों के घरों में संग्रहीत हो सका था। इस कारण हिन्दी साहित्य के आदि-कालीन इतिहास से अपभ्रंश और भाट-चारण साहित्य को हटा कर वास्तविक हिन्दी साहित्य का इतिहास प्रस्तुत कर सकना सहज नहीं है। फिर भी आज इतनी सामग्री तो उपलब्ध हो ही गयी है जिससे आदि-कालीन हिन्दी साहित्य के स्वतन्त्र अस्तित्व को पहचाना जा सके।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सामने जहाँ एक छोर पर रची गयी **मौलाना दाउद, कुतवन, जायसी** और **तुलसी** की रचनाएँ हैं, वहीं दूसरी छोर पर रची गयीं **विष्णुदास** और **चतुर्भुजदास** आदि की भी रचनाएँ हैं। इन सबकी रचनाओं को एक साथ सामने रख कर तटस्थ भाव से देखें तो स्पष्ट रूप से यह तथ्य सामने आता है कि ये सभी कवि लगभग एक ही तरह की भाषा में रचना कर रहे थे। इस भौगोलिक विस्तार को नजरअन्दाज कर उनकी भाषा को वैज्ञानिकता के नाम पर किसी प्रादेशिक बोली के चौकठे में फिट करना हठवादिता ही कही जायेगी। इनकी भाषा पर अपनी ओर से किसी नाम को थोपने की अपेक्षा वैज्ञानिकता इस बात में है कि हम जानें और समझें कि ये साहित्यकार स्वयं अपनी रचनाओं की भाषा को किस नाम से पुकारते रहे हैं।

जायसी ने अपने भाषा को स्पष्ट रूप में **भाषा** नाम दिया है—

लिखि भाषा चौपाई कहे।[1]

मुहम्मद कवि कन्हावत गाये। रस भाखा कै सभौं सुनाये।[2]

पदमावत के जो संस्करण फारसी लिपि में नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से छपे हैं, उनमें भी उसे **पदमावत भाखा** कहा गया है। मध्यकालीन अधिकांश हिन्दू कवियों ने भी अपनी रचनाओं की भाषा के लिए **भाषा** शब्द का ही प्रयोग किया है। **कबीर** और **केशवदास** उसे **भाषा** ही कहते हैं—

भाषा बहता नीर।[3]

भाषा बोलि न जानहीं, जिनके कुल के दास।
भाषा कवि भौ मंदमति, तेहि कवि केशव दास।[4]

तुलसीदास ने भी **रामचरित मानस** की भाषा को **भाषाबद्ध** या **भाषा भणिति** कहा है।

कुछ लोगों ने उसे **मध्यदेशीय भाषा** कह कर उसके भौगोलिक विस्तार का भी संकेत प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ **बनारसीदास** (१६४३ ई०) ने अपने **अर्धकथानक** में कहा है—

मध्यदेश की बोली बोलि, गर्भित बात कहौं जी खोलि।

बीकानेर के भावभट्ट ने अपने संगीत ग्रन्थ '**अनूप संगीत रत्नाकर** (१७०० ई०) में ध्रुपद पदों का उल्लेख करते हुए उनकी भाषा के सम्बन्ध

---

१. पदमावत, २४।५।
२. कड़वक ३६४, पंक्ति १।
३. सद्गुरु कबीर साहब का साखी ग्रन्थ, भाषा और अंग, साखी १, पृ० ३७९।
४. कविप्रिया, दूसरा प्रभाव, दोहा १७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में कहा है—**गीर्वाण मध्यदेशीया भाषा साहित्य राजितम्**। प्राचीन काल में मध्यदेश से तात्पर्य उस भू-भाग से माना जाता था जो विन्ध्य, हिमालय, बंग और पंचनद से आवृत था।

जहाँ तक इस भाषा की व्यापकता का सम्बन्ध है, तत्कालीन मुसलमान लेखकों को किसी प्रकार का कोई सन्देह न था। उन्होंने उसे एक अत्यन्त व्यापक नाम **हिन्दवी** (हिन्द—उत्तर भारत की भाषा) नाम दिया था। **मौलाना दाउद** के **चन्दायन** के सम्बन्ध में **अब्दुर्कादिर बदायूनी** ने तो कहा ही है कि वह **हिन्दवी** भाषा का मसनवी है।[1] स्वयं **मौलाना दाउद** ने भी कहा है—**तुरकी लिखि लिखि हिन्दुगी गाई**।[2] **पदमावत** की जो हस्तलिखित प्रति रजा पुस्तकालय, रामपुर में है, उसकी पुष्पिका में उसे **नुस्खः पदमावत बजबान हिन्दवी**[3] और मनेरशरीफ वाले **अखरावट** की प्रति में उसे **किताब-हिन्दवी** कहा गया है।[4] इस प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि जहाँगीरकालीन इतिहासकार **मुहम्मद कबीर** ने अपने **अफसाना-ए-बादशाहान** में इस्लाम शाह की चर्चा करते हुए उसके साथ रहने वाले विद्वानों और कवियों का उल्लेख किया है। उसने वहाँ **मधुमालती** के रचयिता **मीर सैयद मंझन**, **शाह मुहम्मद फरमूली**, उनके छोटे भाई **मूसन** और **सूरदास** का उल्लेख किया है और कहा है कि वहाँ अरबी, फारसी और **हिन्दवी** की कविताएँ पढ़ी जाती थीं।[5]

इसी **हिन्दवी** नाम को आज हमने जाने-अनजाने, चाहे-अनचाहे **हिन्दी** के रूप में समस्त उत्तर भारत की भाषा के लिए, जो विन्ध्य से लेकर हिमालय तक, बंग की सीमा से लेकर पंचनद की सीमा तक दीर्घकाल से बोली और समझी जाती थी, स्वीकार किया है और राष्ट्रभाषा का सम्मान दिया है। हमारी यह **हिन्दी** उस **हिन्दवी** से किसी प्रकार भी भिन्न नहीं है जिसका प्रयोग चिश्ती सन्त शेख फरीदुद्दीन गंजशकर और ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया अपने मुरीदों से बात-चीत करते समय किया करते थे; जो दिल्ली के सूफी-सम्प्रदाय के सन्तों द्वारा व्यवहृत होती थी और जो राजसभा से लेकर जनसाधारण में समझी जाती अथवा जा सकती थी। **हिन्दवी** कही जानेवाली वही भाषा आज तक अविच्छिन्न रूप से

---

१. मुन्तखब-उत्-तवारीख, बिबलिओथिक इंडिका सीरीज, भाग १, पृ० १५०; अनु० भाग १, पृ० ३३३।
२. कड़वक ९ पंक्ति ४।
३. देखिए पीछे पृ० ३७।
४. पृष्ठ का चित्र मेरे सम्पादित चन्दायन में उधृत है।
५. ब्रिटिश संग्रहालय की हस्तलिखित प्रति से मेरे सम्पादित मिरगावती में उधृत अवतरण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साहित्यिक भाषा के रूप में चलती चली आ रही है; समय के साथ उसके रूपका परिमार्जन और निखार होता रहा है।

वैज्ञानिकता की दुहाई देने वाले भाषाविद् और इतिहासकार मुसलमान कवियों के प्रेमाख्यानों की भाषा की आधार-भूत बोली (बेसिक डाइलेक्ट) की बात कह कर अवधी की गुहार केवल इसी लिए लगा सकते हैं, कि उनके अधिकांश रचयिता अवध प्रदेश के निवासी थे। किन्तु इस प्रकार की गुहार लगाने से पूर्व उनके लिए यह जान और समझ लेना उचित होगा कि मध्यकालीन साहित्य की जो प्रतियाँ आज हमें सम्पादन के लिए उपलब्ध होती हैं वे न तो लेखक की स्वलिखित प्रतियाँ हैं और न समसामयिक प्रतिलिपियाँ ही। इन प्रतियों के सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि वे उसी प्रदेश में तैयार की गयी थीं, जिस भाषा या बोली का प्रयोग लेखक ने अपनी रचना में किया था। लेखक के भाषा-क्षेत्र से बाहर के प्रदेश में और उसकी भाषा से अपरिचित लिपिकों द्वारा तैयार की गयी प्रतियाँ निश्चित रूप से अपनी मूल भाषा से कुछ दूर होंगी; उन पर प्रतिलिपिक की अपनी भाषा की कुछ न कुछ छाप अवश्य होगी। सामान्यतः ऐसा लिपिक जो लेखक की भाषा के क्षेत्र के बाहर का हो और उसकी भाषा की प्रकृति से परिचित न हो, वह उसकी भाषा की प्रकृति पर ध्यान न देकर रचना को अनजाने-अनचाहे अपनी भाषा की प्रकृति में ढाल देता है। क्रियापदों को तो नया रूप दे देना उसके लिए सामान्य सी बात होती है। संज्ञा-परक शब्दों को भी बदल देना उसके लिए अधिक कठिन नहीं होता। भाषा परिर्वतन के उदाहरण स्वरूप **कबीर** और **मीराबाई** की रचनाओं का उल्लेख सरलता से किया जा सकता है। अपनी लोकप्रियता के कारण उनकी रचनाओं का इतना अधिक विस्तार हुआ है कि हिन्दी साहित्य का सामान्य जानकार भी जानता और मानता है कि वे विभिन्न प्रदेशों में पहुँच कर अपनी मूल भाषा से हट कर उन प्रदेशों की भाषा में ढल गये हैं। यही बात कम अथवा अधिक रूप में प्रायः प्रत्येक ग्रन्थ के साथ घटी है और वह स्वाभाविक भी है। इस तथ्य पर ध्यान न दे कर उपलब्ध प्रतियों की भाषा को लेखक की मूल भाषा मान लेना और उस रूप में विवेचन करना अपने आप में अवैज्ञानिक है। उनके आधार पर लेखक की भाषा का किसी प्रकार का वैज्ञानिक अध्ययन नहीं किया जा सकता।

मुसलमान कवियों की रचनाओं के सम्बन्ध में तो एक और भी कठिनाई

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। उन्होंने अपनी रचनाएँ मूल रूप में फारसी लिपि में लिखी थीं।[1] इस लिपि में लिखी गयी रचनाओं के प्रतिलिपिकारों ने उनकी भाषा में नमक-मिर्च न भी लगाया हो तब भी हम उनकी कैथी-नागरी प्रतियों के प्रति आश्वस्त नहीं हो सकते कि उन्होंने उनकी भाषा उसी रूप में प्रस्तुत किया है जिस रूप में प्रस्तुत करना रचयिताओं का अभिप्राय था। अरबी-फारसी प्रतियों से इन ग्रन्थों का पाठ प्रस्तुत करते समय आज हम लोग भी यह दावा नहीं कर सकते कि हम अपने पाठों में भाषा का वही रूप प्रस्तुत कर रहे हैं जो कवि की अपनी भाषा थी, जिसमें कवि ने अपनी रचना की थी। वस्तुतः फारसी लिपि से नागरी लिपि में जब हम किसी काव्य का लिप्यन्तरण कर पाठ प्रस्तुत करते हैं तो हम ऐसे शब्द-रूपों को ग्रहण करते हैं जिनके सम्बन्ध में हम अपनी धारणाओं के आधार पर अनुमान करते हैं कि कवि ने उनका प्रयोग किया होगा। इस प्रकार की काल्पनिक भाषा प्रस्तुत करने की गुंजाइश फारसी लिपि की अपनी प्रकृति के कारण अधिक है; उसकी प्रकृति ही ऐसी है जिसमें पाठ अनुमान के सहारे, महारत (अभ्यास) के आधार पर किया जाता है। इस लिपि में व्यंजन (कुछ सीमा तक स्वर भी) मुख्यतः नुक्तों (विन्दुओं) पर आधारित हैं। शीघ्रता में, जाने अनजाने, लेखक इन विन्दुओं का या तो प्रयोग नहीं करते या करते भी हैं तो उसे यथा स्थान नहीं रखते। वे प्रायः मात्राओं (जेर, जबर, पेश आदि) का भी व्यवहार नहीं करते। फलतः उसके पढ़ने में सर्वदा गलती की सम्भावना बनी रहती है। इस सम्बन्ध में **नुक्ते के हेर फेर से खुदा जुदा हुआ** वाली उक्ति जितनी प्रसिद्ध है, उतनी ही प्रसिद्ध **दादाजी अजमेर गये** को **दादाजी आज मर गये** पढ़े जाने की कथा भी है। फारसी लिपि में लिखे गये शब्द सहज भाव से एक से अधिक रूप में पढ़े जा सकते हैं; इसी प्रकार एकाधिक शब्द एक ही तरह से लिखे भी जाते हैं। उदाहरणार्थ **फूल, भूल, बहुल** (बहूल) तीनों ही एक ही तरह से लिखे जायेंगे। प्रसंग के अनुसार हम उसे **फूल** पढ़े या **भूल** या **बहुल**। ऐसे स्थलों पर जहाँ प्रसंग के सहारे शब्दों का अनुमान सम्भव

---

१. इस विषय पर विद्वानों में मतभेद रहा है। अनेक विद्वानों की धारणा रही है कि इन लेखकों के रचनाओं की मूल प्रतियाँ नागरी लिपि में रही होंगी। इस मत का विस्तृत विवेचन हमने स्वसम्पादित चन्दायन और मिरगावती में किया है। किन्तु अब किसी विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं रही। अभी हमारा ध्यान इस ओर गया कि मौलाना दाउद ने स्वयं कहा है कि उन्होंने तुरकी लिपि में हिन्दुगी (हिन्दवी) लिखा है। (तुरकी लिखि हिन्दुगी गायी—चन्दायन, बीकानेर की हस्तलिखित प्रति, कित २६)। उन्हीं का अनुसरण सभी मुसलमान कवियों ने किया होगा। कन्हावत भी निःसन्देह मूलरूप में फारसी लिपि में लिखी गयी होगी। उपलब्ध प्रति भी फारसी लिपि में ही है। वह शाहजहाँ के काल की है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो सकता है, वहाँ तो पाठ के मूल के निकट होने की सम्भावना है; किन्तु ऐसे स्थलों पर जहाँ एक ही अर्थ या भाव के एकाधिक शब्द एक ही तरह लिखे जाते हों, अपने पाठ को मूल पाठ कहना सहज नहीं है। **कुछ, कछु** और **किछु** तीनों ही एक ही तरह से लिखे जाते हैं; तीनों का भाव एक है पर वे अपने रूप में तीन भिन्न बोलियों के प्रतिनिधि हैं। लेखक ने क्या रूप ग्रहण किया था यह हमारी कल्पना की बात है, अपनी धारणा के आधार पर जिस रूप को चाहें ग्रहण करें, पाठ के मूल भाव और तात्पर्य में अन्तर नहीं आयेगा। इसी प्रकार हम नहीं कह सकते कि मूल पाठ **जनि** है **जिन; गोंपिह** या **गोंपन्ह; करेउ** है या **कर्‌यो**। ये सभी अपनी अपनी बोलियों में समान भाव की अभिव्यक्ति करते हैं। कवि किस बोली में अपनी अभिव्यक्ति कर रहा है, यह निश्चय करना हमारे लिए तभी सम्भव है जब हम आश्वस्थ हों कि कवि की भाषा निश्चय रूपेण यही थी। मुसलमान कवियों की रचनाओं को फारसी प्रतियों के आधार पर नागरी लिपि में प्रस्तुत करते हुए हम अवधी रूप में मात्र इस कारण प्रस्तुत करते हैं कि हमारी धारणा बन गयी है कि उनकी भाषा अवधी ही थी। वस्तुतः उनकी रचना की भाषा अवधी ही थी, यह कहने-मानने का कोई आधार नहीं है।

यदि इन रचनाओं को ध्यानपूर्वक देखा जाय और अवधी का आग्रह छोड़ कर उन्हें स्वेच्छया फारसी से नागरी में लिप्यन्तरित किया जाय तो काव्य को स्वतः किसी प्रकार का आघात पहुँचाये बिना उसकी भाषा को कई रूपों में प्रस्तुत किया जा सकता है। इन कवियों ने जिस भाषा का प्रयोग किया है उसकी प्रकृति सर्वत्र एक सी नहीं है। उसमें संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि पूर्ववर्ती एवं समसामयिक भाषाओं के साथ साथ अरबी फारसी तथा विविध प्रादेशिक बोलियों के शब्द और प्रयोग निर्बाध रूप में देखने में आते हैं। उसमें अनेक शब्द और शब्द-रूप ऐसे प्रयुक्त हैं, जो अकेले किसी एक भाषा के नहीं हैं; उसमें यत्र यत्र खड़ी बोली भी उभरती हुई दिखाई पड़ती है। यथा—

उठ नारद राजा सो बोला।[१]
चढ़ी सुखासन चन्द्रावली।[२]
धाइ अगस्त नीर लें आयो।[3]

---

१. कड़वक २६६, पंक्ति १।
२. कड़वक २६०। पंक्ति १।
३. कड़वक २६१, पंक्ति १।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसी प्रकार **ओबरी** को हम अकेले अवध का शब्द नहीं कह सकते। सुदूर महाराष्ट्र में भी इस शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में होता है जिस अर्थ में भोजपुरी में। किसी बोली विशेष का आग्रह त्याग कर उत्तरापथ के विस्तृत भू भाग में प्रस्तुत समसामयिक सभी रचनाओं को सामने रख कर सम्यक रूप से तत्कालीन भाषा का निरूपण किया जाना चाहिए। यदि ऐसा किया जाय तो बात स्पष्ट रूप से सामने आयेगी कि उन सबकी भाषा एक है, उनमें यत्र यत्र उसी प्रकार की प्रादेशिक झलक है जिस प्रकार हम किसी पंजाबी या बंगाली हिन्दी लेखक की रचना में पंजाबी या बंगाली की झलक पाते हैं।

निष्कर्ष यह कि इन सभी कवियों की रचनाएँ एक ऐसी भाषा में हैं जो यदि बोली नहीं तो समझी अवश्य जाती थी। उसे हिन्दी का पूर्व या आरम्भिक रूप कहना ही समीचीन होगा।

रचना-विधान

मौलाना दाउद के **चन्दायन** और **कुतुबन** की **मिरगावती** की परम्परा में और उसी ढंग से **जायसी** ने **कन्हावत** की रचना की है। उसका अनुसरण उन्होंने पीछे **पदमावत** में भी किया।

सूफी कहे जाने वाले कवियों द्वारा प्रस्तुत प्रेमाख्यानों के रचना विधान के सम्बन्ध में हम अपने विचार स्वसम्पादित **चन्दायन**[1] और **मिरगावती**[2] में प्रगट कर चुके हैं। वही बातें **कन्हावत** के सम्बन्ध में भी कही जा सकती हैं। अतः उन्हें न दुहरा कर इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इन सभी कवियों ने अपने प्रेमाख्यानक काव्यों की रचना में भारतीय परम्परा—अपभ्रंश काव्यों की परम्परा का अनुकरण किया था। उन्होंने कड़वकों वाली शैली अपनाया है। उनके वर्णन शैली में भी भारतीय काव्यों का अनुसरण है।[3]

कन्हावत के प्रत्येक कड़वक में सात यमक और उसके बाद एक घत्ता है। कड़वकों का यही रूप **जायसी** के **पदमावत** का भी है। यमकों और घत्तों की मात्राओं के सम्बन्ध में भी वही अव्यवस्था देखने में आती है जिनकी ओर हमने **मौलाना दाउद** के **चन्दायन** और **कुतुबन** के **मिरगावती** का

---

१. पृ० २७।

२. पृ० ४९–५२।

३. अनेक विद्वानों की धारणा है कि इन काव्यों की रचना फारसी के मसनवी शैली पर हुई है; किन्तु हमारी दृष्टि में यह उनकी भ्रान्तिपूर्ण धारणा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्पादन करते हुए ध्यान आकृष्ट किया है। जिस प्रकार उन रचनाओं में अनिवार्य रूप से १६ मात्राओं वाली चौपाई और २३ मात्राओं वाले दोहे के आदर्श का अभाव है, उसी प्रकार **कन्हावत** में भी मात्राएँ न्यूनाधिक प्राप्त होती हैं।

सामान्य रूप से सूफी कहे जाने वाले कवियों द्वारा प्रस्तुत आख्यान-काव्यों का आरम्भ ईश्वर-स्तुति से होता है; उसके बाद मुहम्मद साहब और उनके चार मित्रों की प्रशंसा रहती है। तदनन्तर कवि अपने पीर, गुरु तथा अपना परिचय देता हुआ विषय पर उतरता है। उसी ढंग से **कन्हावत** की भी रचना हुई है।

मौलाना दाउद और **कुतुबन** ने अपने काव्यों में ईश्वर की स्तुति पाँच कड़वकों में की है। **पदमावत** में ईश्वर-स्तुति दस कड़वकों में है। **कन्हावत** की एकमात्र उपलब्ध प्रति में आरम्भ का अंश अनुपलब्ध है; इसलिए निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि उसमें ईश्वर-स्तुति के लिए कितने कड़वकों का प्रयोग हुआ था। सम्प्रति ईश्वर-स्तुति सम्बन्धी एक घत्ता और उसके बाद का एक पूरा कड़वक उपलब्ध है। अनुमान है कि इस विषय के अनुपलब्ध कड़वकों की संख्या ३-४ से अधिक न होगी।

ईश्वर-स्तुति के पश्चात **कन्हावत** में एक-एक कड़वकों में क्रमशः मुहम्मद साहब (कड़वक ३), उनके चार मित्रों (कड़वक ४), शाहे-वक्त (कड़वक ५), पीर (कड़वक ६) और गुरु (कड़वक ७) का उल्लेख है। तदनन्तर ६ कड़वकों (कड़वक ८-१३) में वृन्दावन नगर का वर्णन है।[1] इसके बाद रचना के उद्देश्य की चर्चा है (कड़वक १४-१५)। पश्चात कृष्ण-कथा आरम्भ होती है जो ३४७ कड़वकों (कड़वक १६-३६२) में समाप्त हुई है।

कथा-वस्तु

सामान्यतः समझा जाता है कि प्रेमाख्यानक-काव्य के रचयिताओं, मुख्यतः मुसलमान कवियों (सूफी सन्तों) ने अपनी कथा-वस्तु के लिए ऐसी कथाओं को अपनाया है जो लोक-मानस में गीतों अथवा कहानियों के रूप में प्राप्त थे। **हजारी प्रसाद द्विवेदी** के शब्दों में **सूफी प्रेम काव्य गुणाढ्य की वृहत्कथा से चली आती हुई प्रेमकथाओं की परम्परा में आते हैं। उनका स्रोत लौकिक है। उनकी सभी कथाएँ लोक-जीवन से ग्रहीत हैं।**[2] **सूफी साधकों ने पौराणिक आख्यानों**

---

१. यह वर्णन जायस नगर का भी हो सकता है। पर हमारी दृष्टि में वह वृन्दावन का ही वर्णन है। इस सम्बन्ध में कड़वक ८ के अन्तर्गत टिप्पणी देखिये।

२. हिन्दी साहित्य का आदि काल, पृ० ७१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के बदले लोक-प्रचलित कथानकों का आश्रय लेकर अपनी बात जनता तक पहुँचायी है।[1] यह धारणा **चन्दायन, मिरगावती, मधुमालती, चितरावली,** आदि की कथाओं की पृष्ठभूमि में सही मानी जा सकती है; किन्तु जहाँ तक **मलिक मुहम्मद जायसी** के काव्यों की बात है, सर्वांश में सत्य नहीं है। उनकी **चित्ररेखा** को तो लोककथा पर आधारित कह सकते हैं; पर यही बात उनके **पदमावत** और **कन्हावत** के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकती।

पदमावत के अधिकांश पात्र मध्यकालीन इतिहास के जाने माने हैं। उनकी ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में सन्देह नहीं किया जा सकता। उनका यह कथन भी—

सिंहल दीप पदमिनी रानी। रतनसेन चितउर गढ़ आनी।।
अलाउद्दीन देहली सूलतानू। राघव-चेतन कीन्ह बखानू।।
सुना साहि गढ़ छेकन आई। हिन्दू तुरकन्ह भई लड़ाई।।

इतिहास समर्थित है। **अमीर खुसरो** ने अपने **तारीख-ए-अलाई** में अलाउद्दीन के चित्तौड़ पर आक्रमण और विजय की बात कही है।[2] **जियाउद्दीन बारनी** ने ने भी अपने **तारीख-ए-फिरोजशाही** में यही बात दुहरायी है।[3]

इससे स्पष्ट है कि **पदमावत** का मूलाधार लौकिक कहानियों से हट कर है; भले ही उसके समूचे कथा-स्वरूप में ऐतिहासिकता न हो। आज भी हम जिन उपन्यासों और नाटकों को ऐतिहासिक की संज्ञा देते हैं, उनका वाह्य रूप भर ही तो इतिहास को छूता है; शेष सब तो लेखक की अपनी कल्पना ही होती है। यही बात अक्षरशः पदमावत पर भी लागू होती है।

कन्हावत की कथा-वस्तु को तो किसी भी रूप में हम लोक-कथा मात्र नहीं कह सकते। उसकी मूल कथा पुराणों में आबद्ध है। कृष्ण की पौराणिक कथा को ही **जायसी** ने अपने काव्य का विषय बनाया है; भले ही उन्होंने उसे सीधे पुराणों से ग्रहण न कर लोक-मानस से प्राप्त किया हो, जैसा कि उनका स्वयं का कहना है—

कातिक मँह जो परत देवारी। गावहि अहिर कथिकै मारी।।
तो मैं कहा ई खंड गाऊँ। कन्ह कथा कर सबहि सुनाऊँ।।[4]

---

१. हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० ६४-६५।

२. इलियट-डाउसन, हिस्ट्री आव इंडिया, खंड ३, पृ० ७६-७७।

३. वही, पृ० १८९।

४. कन्हावत, कड़वक १४, पंक्ति २-३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कन्हावत के रहते हम यह नहीं कह सकते कि सूफी साधकों ने पौराणिक आख्यानों की उपेक्षा की है अथवा उन्हें नहीं अपनाया है। अस्तु,

पौराणिक आख्यान पर आधारित इस काव्य के प्रमुख पात्र, काव्य के नाम-रूप कन्ह हैं। लोक-जीवन में कन्ह, कृष्ण का नाम है, जो विष्णु के अवतार माने जाते हैं। उन्हें लोक-साहित्य में कन्ह, कान्हा, कन्हाई आदि नामों से पुकारा जाता रहा है और मध्य-कालीन साहित्य में वे प्रायः इसी नाम से पुकारे जाते हैं। पुराणों में जो वृत्त उपलब्ध हैं, उसका परिचय हम पहले दे चुके हैं। उसकी पृष्ठभूमि में इस काव्य की कथा-वस्तु को सहज देखा जा सकता है जो इस प्रकार है—

मथुरा नगर का राजा कंस था, उसका एक छत्र राज्य वैसा ही था जैसा कि लंका में रावण का था। सभी राक्षस और देवता उसकी सेवा करते थे। सूक (शुक्र) और नारद उसके मन्त्री थे। (कड़वक १६-१७)

[कंस के मथुरा का राजा होने की बात पुराणों में कही गयी है; पर वहाँ शुक्र और नारद के मंत्री होने की कोई चर्चा नहीं है। पौराणिक आख्यानों के अनुसार शुक्र दैत्यों के गुरु थे और दैत्य उनकी सलाह से काम किया करते थे। नारद का उल्लेख पुराणों में एक ऋषि के रूप में हुआ है। उनके सम्बन्ध में अनेक आख्यायिकाएँ प्राप्त होती हैं; उनके अनुसार वे भ्रमणशील व्यक्ति थे और एक जगह की बात दूसरी जगह फैलाते रहते थे। उनकी ख्याति एक दूसरे के बीच झगड़ा लगाने के लिए भी है। **जायसी** ने अपने काव्य में कंस को एक दैत्य शासक के रूप में प्रस्तुत किया है; कदाचित इसी कारण शुक्र और नारद को उन्होंने उसका मंत्री बताया है।]

आगे मथुरा नगर का विशद वर्णन है। (कड़वक १८-२७)

[यह वर्णन बहुत कुछ उसी ढंग का है, जैसा कि **मौलाना दाउद** ने **चन्दायन** में गोवर नगर का किया है। दोनों के वर्णन में काफी साम्य है।]

यमुना नदी के उस पार गोकुल में अहीरों की बस्ती थी। वहाँ से मधुपुरी (मथुरा) दिखायी पड़ती थी। गोकुल की ग्वालिनें दूध बेचने मथुरा जाया करती थीं। (कड़वक २८-२९)

कंस सेना लेकर अपनी मृत्यु को ढूँढ़ने निकला। सारा संसार घूम आने पर भी जब उसे अपनी मृत्यु कहीं दिखायी नहीं पड़ी तो उसने अपने मन्त्री सूक (शुक्र) को बुला कर उसका पता लगाने को कहा। शुक्र ने उसे बताया कि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिस राम ने रावण का वध किया था, वही तुम्हारा भी वध करने आयेगा। यदि मेरी बात का विश्वास न हो तो नारद से पूछ लें। कंस ने नारद से भी यही बात पूछी। नारद ने कहा कि तुम्हारा शत्रु तुम्हारी बहन देवकी की कोख से जन्म लेगा और तुम्हें मार कर राज्य करेगा। (कड़वक ३०-३६)

[पुराणों के अनुसार देवकी, जिसका उल्लेख इस काव्य में अनेक स्थलों पर देवइ के रूप में हुआ है, कंस की चचेरी बहन थीं। जब उनका विवाह वसुदेव के साथ हुआ तब कंस उन्हें पहुँचाने चला। मार्ग में उसने अपनी मृत्यु देवकी के पुत्र के हाथों से होने की बात अदृश्य-वाणी के रूप में सुनी। इस प्रकार उपर्युक्त वर्णन पुराणों से सर्वथा भिन्न है। यह एक दूसरी अनुश्रुति पर आधारित जान पड़ता है। इस अनुश्रुति के अनुसार एक बार नारद हिमालय गये थे। वहाँ उन्होंने ऋषियों के मुख से देवकी के पुत्र द्वारा कंस के मारे जाने की बात सुनी थी और वह बात उन्होंने आकर कंस से कही थी।]

नारद ने यह बात बताते हुए कंस से विष्णु के दस अवतारों का उल्लेख किया और बताया कि उसे मारने के लिए विष्णु अवतार लेंगे। कंस को यह सुन कर आश्चर्य हुआ और उसने शंका की—

एक बार जो अवतरि मरे, सो दुसरैं कैसे अवतारै।

नारद ने उसके इस शंका का समाधान किया। (कड़वक ३७-४०)

अपनी मृत्यु की बात सुन कर कंस क्रुद्ध हुआ और देवकी को मार डालने का विचार किया; फिर यह सोच कर कि नारी-हत्या महापाप है वह रुक गया और देवकी के गर्भ से जन्म लेने वाले बालक को ही मारने का निश्चय किया और देवकी और वसुदेव के पैरों में बेड़ियाँ डाल कर उनके निवास पर पहरा बैठा दिया। (कड़वक ४१)

[पुराणों के अनुसार आकाशवाणी से भयभीत होकर जब कंस ने देवकी को मारना चाहा तब वसुदेव ने देवकी-पुत्रों को उसे देने का वचन देकर उसके प्राण की रक्षा की।]

कंस के गर्व को सुन कर ब्रह्मा क्रुद्ध हुए और विष्णु को बुला कर उनसे मथुरा में जन्म लेने को कहा। विष्णु ने कहा कि रामावतार में मैंने बहुत दुःख भोगा। अब फिर संसार में नहीं जाऊँगा। तब ब्रह्मा ने उन्हें आश्वासन दिया कि इस बार तुम्हारे लिए सोलह सहस्र गोपियों की व्यवस्था करूँगा और जो तुम चाहोगे, वही होगा। (कड़वक ४२-४३)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[यह जायसी की अपनी उद्भावना जान पड़ती है। पुराणों के अनुसार जब पृथिवी आततायियों से त्रस्त हो गयी तब भू-देवी ब्रह्मा के पास गयीं। ब्रह्मा शिव को लेकर विष्णु के पास क्षीरसागर पहुँचे और उन्हें विपद-कहानी सुनायी। विष्णु ने तब कंस-वध के निमित्त अवतरित होना स्वीकार किया।]

कंस ने देवकी के सात पुत्र मार डाले और आठवें गर्भ का जब नवाँ महीना लगा तब एक दिन देवकी यमुना के किनारे जाकर रुदन करने लगीं। उसी समय यमुना के दूसरे तट पर यशोदा आयी थीं। उन्हें देवकी का रुदन सुनायी पड़ा और द्रवित होकर वे देवकी के पास इस पार आयीं और उनसे रोने का कारण पूछा। देवकी ने अपनी विपद-कथा—कंस द्वारा पुत्रों के मारे जाने की कथा कह सुनायी और कहा कि पुत्र-शोक से बचने के लिए मैं डूब मरने आयी हूँ। यशोदा ने देवकी को सान्त्वना दी और मैत्री-भाव जताते हुए कहा कि तुम अपने बच्चे को मेरे पास भेज देना, बदले में मैं अपनी सन्तान तुम्हें भेज दूँगी। (कड़वक ४४-४८)

[पौराणिक अनुश्रुतियों में देवकी-यशोदा के बीच इस प्रकार के मिलन और शिशुओं के आदान-प्रदान करने के आश्वासन जैसी कोई बात नहीं है। पौराणिक वर्णन के अनुसार वसुदेव ने चुपके से बच्चे बदल दिये थे; यशोदा को पता भी नहीं लगा था। इस प्रकार यह **जायसी** की अपनी मौलिक कल्पना है, जो अधिक स्वभाविक है। सम्भव है लोक-मानस में कथा का यही रूप प्रचलित रहा हो।]

भादों की अँधियारी रात में कृष्ण ने जन्म लिया। ब्रह्मा को जब यह बात मालूम हुई तो उन्होंने निद्रा-योग का संचार किया और बंदीगृह के सब पहरेदार निद्रा-मग्न हो गये। देवकी ने वसुदेव से कहा कि कि कंस इस बच्चे को मार डालेगा और तब वंश में कोई भी नहीं बचेगा। जिस प्रकार भी हो इस बच्चे को बचा लो। नन्द महर की पत्नी (यशोदा) से मेरी मैत्री है; उन्होंने मेरा बालक लेकर अपना देने का वचन दिया है। इसे वहाँ पहुँचा दो; अन्यथा प्रातः होते ही कंस आकर इसे मार डालेगा। वसुदेव बालक को लेकर यमुना किनारे गये। वह इतनी बढ़ी हुई थीं कि आर-पार कुछ भी दिखायो नहीं पड़ता था। यह देखकर वसुदेव पहले तो असमंजस में पड़े फिर सोच कर कि या तो पार हूँगा या डूब मरूँगा, यमुना में घुस पड़े। यमुना में पानी जाँघ भर भी न था। वे पार हो गये। बच्चे को लेकर नन्द महर के घर पहुँचे। (कड़वक ४९-५२)

[देवकी-वसुदेव संवाद को छोड़ कर शेष वर्णन पुराणों में भी लगभग इसी प्रकार है।]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसी समय यशोदा को भी पुत्री हुई थी; सब लोग जग रहे थे। वसुदेव ने नन्द के घर पहुँच कर आवाज लगायी। वे अन्दर बुलाये गये; अपना बच्चा देकर उन्होंने यशोदा की बच्ची ले लिया। नन्द उसे यमुना तट तक पहुँचाने आये। वसुदेव को नाव पर बैठा कर वे लौटे। वसुदेव कुशलपूर्वक घर आ गये। उसके बाद पहरेदारों की नींद टूटी और बलिका भी रोने लगी। बालिका के रोने की आवाज सुनते ही कंस ने उसे लाने को कहा। बालिका के आते ही कंस ने उसे छीन कर पटक दिया। बालिका वज्र बन कर आकाश में उड़ गयी। आकाश में पहुँच कर उसने कंस से कहा—तुम्हारा बैरी अन्यत्र जन्म ले चुका है। यह सुन कर कंस चिन्तित हुआ और सूक (शुक्र) से बचने का उपाय पूछा। (कड़वक ५३-५५)

[पुराणों में योगमाया के प्रभाव से गोकुल के नागरिकों के निद्रामग्न होने, वसुदेव के चुपके से नन्द के घर में घुस कर अदला-बदली करने की बात कही गयी है। शेष भाग पुराणों के अनुरूप ही है।]

प्रातःकाल होने पर सारे गोकुल में यशोदा के पुत्र होने का समाचार फैल गया; सर्वत्र आनन्द मनाया जाने लगा। ब्राह्मण आये; उन्होंने आशीर्वाद दिया। तीसरे दिन लोगों की दावत हुई; पाँचवें दिन रत-जगा हुआ; फिर घर-घर पकवान बाँटे गये। छठे दिन पण्डित बुलाये गये; उन्होंने पत्रा देख कर बालक के विष्णु के अवतार होने की बात कही और उसके अजेय होने, राज्य करने तथा सोलह सहस्र गोपियों के साथ भोग-विलास करने की बात बतायी। साथ ही यह भी कहा कि गोकुल में घर-घर पद्मिनी-रूपी गोपियाँ जन्म लेंगी और उनमें एक राही (राधिका) होगी जो उन सब में विशिष्ट होगी। जिस प्रकार राम के लिए सीता थीं, उसी प्रकार कृष्ण के लिए राही (राधिका) होगी। (कड़वक ५६-५९)

[पुराणों में इस तरह की कोई न तो चर्चा है और न राधा का उल्लेख।[1] किन्तु राधा-कृष्ण की चर्चा अपौराणिक होते हुए भी प्राचीन काल से ही कवियों

१. ब्रह्मवैवर्त पुराण में कृष्ण-लीला का अत्यन्त भड़कीला वर्णन है और उसमें राधा का उल्लेख है; किन्तु इस पुराण की प्रामाणिकता सन्दिग्ध है। मत्स्य-पुराण में दो श्लोकों में ब्रह्मवैवर्त पुराण का जो परिचय है उसका प्रचलित ब्रह्मवैवर्त पुराण से किसी प्रकार का कोई मेल नहीं है। दूसरी बात, वैष्णव गोस्वामी राधा-कृष्ण की प्रेम-लीला की चर्चा करते अघाते नहीं; फिर भी उन्होंने इस पुराण में वर्णित राधा-कृष्ण की प्रेम-लीला का कोई उल्लेख नहीं किया है। स्पष्ट है कि इस पुराण की राधा-कृष्ण की उद्भावना बाद की है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के लिए प्रेम-वर्णन का एक माध्यम रहा है। राधा का प्राचीनतम उल्लेख सातवाहन नरेश हाल द्वारा संकलित **गाहा-सतसइ** (गाथा-सप्तशती) में मिलता है। यह रचना सातवाहन-नरेशों के काल (ई० पू० पहली शती—तीसरी शती ई०) में हुई थी ऐसा कहा जाता है। इसमें संकलित गाथाओं को अनेक विद्वान २०० और ४५० ई० के बीच की रचना मानते हैं। **बाणभट्ट** ने अपने **हर्ष-चरित** में सातवाहन-नरेश द्वारा सुभाषित संग्रह करने की बात कही है। उनका यह कथन इस बात का निसन्दिग्ध प्रमाण है कि **गाथा-सतसई** सातवीं शती ई० से पूर्व किसी समय का संग्रह है। इस प्रकार राधा का आविर्भाव पौराणिक न होकर साहित्य के आलम्बन द्वारा हुआ है। अनुमान होता है कि कृष्ण और गोपियों की प्रेम-लीला आभीर जातीय चरवाहों के बीच प्रचलित गीतों में बिखरी रही हैं। चपल आभीर बालाओं और तरुण गोप कृष्ण की प्रेम-कहानी के ये गीत कालक्रम में साहित्य में पल्लवित हुए। इन प्रेम-गीतों में राधा के विशेष उल्लेख ने प्राचीन प्रेम-साहित्य को अनुगूँजित किया और वही धीरे-धीरे मध्य-काल में ब्रज के साहित्य का प्रमुख आलम्बन बन गया। **जायसी** द्वारा राधा का उल्लेख इन्हीं काव्यों अथवा ब्रज के लोक-गीतों के माध्यम से आया जान पड़ता है। उसे कवि ने अपनी कल्पना से यहाँ रूपायित किया है। इस प्रकार **कन्हावत** राधा के विकास को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

एक रात जब कंस सोया हुआ था, उसने स्वप्न देखा—एक व्यक्ति वंशी बजाता हुआ आया और उसने उसके ऊपर चढ़ कर हुँकार किया। कंस भयभीत हो उठा; उसके मुंह से आवाज न निकल सकी। काल-रूप होकर वह व्यक्ति कुपित हुआ फिर अदृश्य हो गया। तब कंस के जी में जी आया; किन्तु वह फिर रात भर सो न सका। प्रातःकाल होते ही उसने सूक (शुक्र) को बुलवाया और रात में देखे स्वप्न को कह सुनाया। उसे सुन कर शुक्र ने कृष्ण के अवतरित होने की बात कही और सलाह दी कि यदि उगते हुए पौधे को तत्काल उखाड़ा न गया तो फिर वह वृक्ष बनने पर उखाड़ा नहीं जा सकेगा। तब नारद ने कृष्ण के गोकुल पहुँच जाने और उनके नन्द के घर होने की बात बतायी और सुझाव दिया कि वहाँ कोई ऐंसी धाय (धात्री) भेजी जाय जो अपने विष लगे स्तन को बालक के मुख में दे सके। इस प्रकार बालक मारा जा सकेगा। कंस ने तत्काल राक्षसियों को बुलवाया और घोषणा की कि जो कोई कन्ह (कृष्ण) के मुख में विष देगा, उसे मैं अपना चौथाई राज्य दूंगा। (कड़वक ६०-६३)

[स्वप्न वाली सारी उद्‌भावना कवि की अपनी जान पड़ती है। नारद और शुक्र वाली बात भी पुराणों में नहीं है।]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सब राक्षसियों में एक राक्षसी पूतना थी। उसने बीड़ा लिया और गोकुल पहुँच कर नन्द के घर में प्रवेश किया। वहाँ उसने अपनी मीठी बातों से यशोदा को मोह लिया। फिर हिंडोले पर झूलते हुए कृष्ण के मुख में अपना विषाक्त स्तन दे दिया। विष कृष्ण के मुख में अमृत बन गया और सारा विष पूतना के रक्त में समा गया जिसके कारण वह मर गयी। (कड़वक ६४)

[स्तन-पान के माध्यम से पूतना द्वारा कृष्ण के मारने के प्रयास तथा स्वयं उसके मारे जाने की कथा पुराणों में भी हैं; पर वहाँ उसका रूप तनिक भिन्न है। उनमें कहा गया है कि कृष्ण ने दुग्ध-पान के समय स्तन को इतने जोरों से से चूसा कि उसके प्राण पखेरू हो गये।]

पूतना के इस प्रकार मरने से नन्द तथा गोकुल के अन्य लोग भयभीत हो उठे और कंस के भय भी गाँव छोड़कर भाग जाने को सोचने लगे। उन्होंने जल्दी-जल्दी यमुना के किनारे पूतना का दाह संस्कार कर दिया। (कड़वक ६५)

[यह कवि की अपनी उद्भावना है।]

कंस ने जब पूतना की मृत्यु की बात सुनी तब उसने दो बेगियों (?) को बुलाया और उन्हें बीड़ा देकर कृष्ण को अन्धा करने के लिए भेजा। वे दोनों काक-वेश में गोकुल आये। कृष्ण ने उनके आने की बात जान ली और अपने दोनों हाथ फैला कर दोनों के सिर दबोच लिए और गर्दन मरोड़ दिये और फिर क्रुद्ध होकर उन्हें इतने जोरों से फेंका कि वे कंस के आगे जा गिरे। (कड़वक ६६–६७)

[पुराणों में कंस द्वारा कृष्ण के मारने के अनेक प्रयासों और कृष्ण द्वारा उसके भेजे नाना वेशधारी अनेक राक्षसों के मार डालने की कथाएँ विस्तृत प्राप्त होती हैं। **जायसी** ने अकेले काक-वध की ही चर्चा की है।]

इन दूतों के मारे जाने पर कंस ने शुक्र से फिर मंत्रणा की। शुक्र ने सलाह दी कि महेश (शिव) के उद्यान में जो सरोवर है, उस में सहस्रदल कमल खिलते हैं। शेषनाग उस उद्यान की रखवाली करते हैं। जो कोई वहाँ जाता है वह जल कर भस्म हो जाता है। नन्द को वहाँ जाने को कहा जाय। स्वयं नन्द नहीं जायेंगे; वह बालक (कृष्ण) ही जायेगा। वहाँ जाकर वह बालक फिर लौट न सकेगा। इस प्रकार उस बालक का अन्त किया जा सकता है। तदनुसार कंस ने नन्द को बुलवाया और कहा—मैंने एक अनुष्ठान ठाना है, उसके लिए एक लाख सहस्रदल कमल चाहिये। उसे तुम्हीं ला सकते हो। राजाज्ञा सुन कर नन्द सोच में पड़ गये—राजा ने ऐसे कमल की मांग की है जो इस संसार में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहीं नहीं है। राजा से अब किसी प्रकार छुटकारा पाना सम्भव नहीं है। इस समय तक कृष्ण पाँच वर्ष के हो गये थे। एक दिन वे अपने सभी संगी-साथी बाल-गोपालों को लेकर यमुना-किनारे गये और शर्त बद कर गेंद खेलने लगे। कृष्ण ने इसे कमल लाकर नन्द को चिन्तामुक्त करने का अच्छा अवसर जान कर गेंद को इतनी जोर से उछाला कि वह यमुना के बीच जा गिरा। गेंद निकालने के लिए वे नदी में कूद पड़े। ऐसी डुबकी लगायी कि वे फिर ऊपर उठ कर नहीं आये। गोकुल में हाहाकार मच गया कि कृष्ण डूब गये। केवटों ने सारी यमुना छान डाली पर कृष्ण का कुछ पता न चला। गोकुल शोकाकुल हो उठा और राजा (कंस) के यहाँ आनन्द की सीमा न रही।

उधर कृष्ण अनेक नदियों और समुद्र से मिलते हुए पाताल लोक जा पहुँचे और महादेव के उद्यान में घुस गये। वहाँ नाग चारों ओर पहरा दे रहे थे। जहाँ वासुकिनाग सो रहा था वहाँ कृष्ण पहुँचे। शेषनाग की पत्नी कृष्ण को देख कर बोली—तुम यहाँ कैसे आ गये। जो यहाँ आ जाता है वह फिर लौट कर नहीं जाता। जब तक मेरे पति नहीं जागते तुम भाग जाओ। उठते ही जब वे फुंकार भरेंगे तो तत्काल तुम जल कर छार हो जाओगे।

कृष्ण ने उत्तर दिया—इसका मुझे डर नहीं है। चाहो तो अपने पति को जगा दो। मुझे एक लाख कमल चाहिये। उसे दे कर ही तुम्हारे पति छुटकारा पा सकते हैं। यह सुन कर नागिन क्षुब्ध हुई; कृष्ण भी क्रुद्ध हुए। शोर सुन कर नाग जागा। कृष्ण खड़े रहे। नाग ने फुंकार मारी; कृष्ण बेहोश होकर काले हो गये। देवताओं ने आकर उन्हें जीवित किया।

कृष्ण ने जीवित होकर नाग को पकड़ लिया और कमल-नाल से उसे नथ दिया। एक लाख कमल तोड़ कर उसके ऊपर लाद दिया और स्वयं उस पर सवार हो गये। नाग उन्हें लेकर चला। तब नागिन कृष्ण से विनती करने लगी और पूछा—आप कौन हैं? तब कृष्ण ने उसे अपना परिचय विष्णु के अवतार के रूप में दिया। कृष्ण गोकुल लौटे; गोकुल हर्षित हो उठा। नन्द ने कमल ले जाकर कंस को दे दिये। (कड़वक ६८-८७)

[पुराणों में कृष्ण द्वारा यमुना में वास करनेवाले कालिय नाग के दमन करने और उसकी पत्नियों के विनती करने पर उसे मुक्त करने की जो कथा है, उसी कथा को **जायसी** ने एक सर्वथा नया रूप दिया है; यह लोक-कथाओं है वर्णित नायक के खलनायक द्वारा कठिन काम सौंपने और नायक के उसे पूरा करके लौटने जैसी घटनाओं का प्रतिरूप है।]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस प्रकार शत्रु के मारने का प्रयत्न जब विफल हो गया तब कंस ने शुक्र और नारद को पुनः बुलाया और नन्द-पुत्र के मारने के सम्बन्ध में मंत्रणा की। नारद और शुक्र ने तब कंस को राय दी कि जहाँ कृष्ण (कन्ह) गाय चरा रहे हों वहाँ अपने दैत्यों से जाने को कहो। वे वहाँ जाकर मेघ के समान ओलों (हुंग-शिला) की वर्षा करें। तदनुसार कंस ने दैत्यों को बुला कर वहाँ भेजा। कृष्ण वृन्दावन में गाय चराते हुए बंशी बजा रहे थे। उन्होंने बाँसुरी पर मेघ-मलार की धुन अलापी और दैत्य मेघ होकर सर्वत्र छा गये। तब कृष्ण ने बारह योजन ऊँचे और सात योजन विस्तृत पहाड़ को बायें हाथ पर टेक लिया और सभी गायों को हाँक कर वहाँ ले आये। दैत्यों ने ओलों की वर्षा की पर कृष्ण के सामने उनकी एक न चली और वे सब परास्त हो गये। (कड़वक ८८–९०)।

[पुराणों में इस घटना का एक सर्वथा भिन्न रूप है। वहाँ कहा गया है कि कृष्ण ने प्रचलित प्रथा के अनुसार इन्द्र की पूजा करने से अपने समाज के लोगों को मना किया और गोवर्धन की पूजा करने की सलाह दी। इस प्रकार जब गोपों ने इन्द्र की पूजा बन्द कर दी तो इन्द्र क्षुब्ध हुए और उन्होंने अति वृष्टि की। तब कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को ऊपर उठा लिया और उसके नीचे गायों सहित गोपों ने शरण ली। इन्द्र गोपों का कुछ न बिगाड़ सके।]

आगे कृष्ण द्वारा गोकुल के गोपियों के साथ छेड़खानी करने, उनके दूध-दही के मटके फोड़ने का वर्णन है। गोपियों ने नन्द-महरि से जाकर कृष्ण के उत्पात की शिकायत की। कृष्ण बुलाये गये तो वे रोते हुए आये और उल्टे गोपियों द्वारा तंग किये जाने की शिकायत की और बोले इन्होंने मुझे परेशान किया और उल्टे झूठी शिकायत करने आयीं हैं। कृष्ण को रोते देखा तो वे गोपियों पर क्रुद्ध हुईं और उन्हें बुरा-भला कहा। वे सब लौट आयीं। कन्ह पुनः वन में आकर बंसी बनाने और गोपियों के साथ केलि करने लगे। (कड़वक ९१–९५)

[बहुत कुछ इसी ढंग की कृष्ण-गोपियों की छेड़खानी, यशोदा से गोपियों की शिकायत और यशोदा द्वारा गोपियों को बरजने की बात मध्यकालीन कृष्ण-साहित्य में भी पायी जाती है। सूरदास ने इसका विशद वर्णन किया है। किन्तु इन वर्णनों में कृष्ण के बाल-सुलभ चापल्य और दुष्टता की ही झलक मिलती है। **जायसी** ने कृष्ण को यहाँ यौवन-मत्त युवक के रूप में प्रस्तुत किया है जो गोपियों के साथ धृष्ट व्यवहार करता है। यशोदा द्वारा गोपियों की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फटकार में कृष्ण की धृष्ट व्यवहार की उपेक्षा एवं गोपियों को कामोन्मत्तता के प्रति प्रतारणा है।]

राही (राधा) देवचन्द महर की बेटी हैं। उसके रूप के वर्णन साथ कथा आगे बढ़ती है। राधा सहस्र सखियों को लेकर चलीं और वृन्दावन पहुँचीं। कृष्ण भी वेश बदल कर वहाँ आये और राधा और उनकी सहेलियों का रास्ता रोक लिया। बोले—"मैं यहाँ राजा की ओर से नियुक्त दानी (कर उगाहने-वाला) हूँ। तुम लोग नित्य कर बचा कर भाग जाती हो। बहुत खोज करने पर अब तुम मिली हो। अब मैं जैसा उचित मानूँगा, करूँगा। चलो मेरे साथ; मैं तुम लोगों को बैठा रक्खूँगा।"

राधा ने उत्तर दिया—"हमने कौन सा टाँड (बनिज-सामग्री) लाद रखी है जो तुम कर माँगते हो। दही और पानी पर कोई कर नहीं है। तुम अकेले हो। अगर हम तुम्हें मार कर चली जाँय तो तुम क्या कर लोगे। हाँ, गोरस चाहते हो तो माँग कर ले लो। रास्ते चलते मत लगो, हमें जाने दो।"

कृष्ण—राधे, टाँड देख कर ही तो दान (कर) माँग रहा हूँ। गर्व में मत भूलो। पुरुष के सामने नारी कर ही क्या सकतीं हैं। गोरस लेकर क्या करूँगा; वह तो घर में ही बहुत है। तुम सलोनी नारी दीख रही हो। मुझसे जान पहचान करो और निःशंक होकर इस बनखंड में आओ जाओ। मैं रति माँगता हूँ, वह मुझे दो।

यह सुन कर सभी गोपियाँ भयभीत हुईं और राधा को अकेली छोड़ कर भाग चलीं। राधा क्रुद्ध होकर कृष्ण से बोलीं—मेरे ऐसी तपस्विनी सती भी नहीं थीं। मैं उसके निमित्त बनी हूँ जिसने समुद्र-मंथन किया था। उस जगह जाने की कल्पना भी नहीं कर सकती जहाँ एक क्षण के लिए भी पाप हो।

तब कृष्ण ने प्रसन्न होकर अपना परिचय दिया और कहा—"मैं ही तो वह विष्णु हूँ।" किन्तु राधा को कृष्ण की बात पर विश्वास न हुआ। तब उन्होंने उन्हें अपना विश्व-रूप दिखाया। राधा को विश्वास हो गया कि इन्हें ही ईश्वर ने मेरे लिए रचा है और उन्होंने सलज्ज होकर घूंघट काढ़ लिया। कृष्ण उन्हें वन के भीतर उस जगह ले गये जहाँ शय्या बिछी हुई थी। राधा सोचने लगीं कि कौन सी चतुराई करूँ जिससे अछूती घर जा सकूँ। कृष्ण से बोलीं—घर जाती हूँ, शृंगार कर अपनी सखी सहेलियों को लेकर आती हूँ। तब आप उन्हें आरती उतारन दें और मेरे साथ भाँवरें फिरें। इस प्रकार मेरा-आपका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विवाह हो।" इस प्रकार वचन-बद्ध होकर राधा घर लौटीं। (कड़वक ९३-१०८)

[इस प्रकार के किसी प्रसंग का पुराणों में कहीं कोई उल्लेख नहीं है। किन्तु यह कृष्ण-साहित्य का जाना पहचाना विषय है। दान-लीला के नाम से व्रज-भाषा के कवियों के बीच यह अत्यन्त लोक-प्रिय रहा है। सूरदास ने इस प्रसंग के अनेक मुक्तक पद रचे हैं। कुछ बड़े पद खण्ड-काव्य के रूप में भी मिलते हैं। कुम्भनदास और गोस्वामी हरिरायजी कृत 'दानलीला' खण्ड-काव्य रूपक रचनाएँ हैं। लोक-गोतों में भो दान-लीला का प्रचुर उल्लेख हुआ है। **जायसो** ने इस प्रसंग की प्रेरणा लोक-मानस से ही प्राप्त की होगी।]

घर लौटने पर सखियों ने राधा से पूछा कि उन पर क्या बीती। राधा दानी-वेश धारण करनेवाले कृष्ण का परिचय दिया और बताया कि तुम्हारी अनुपस्थिति में मैंने उनके साथ विलास नहीं किया। वचनवद्ध होकर आयी हूँ। तुम सब फूल बीनने के बहाने कन्त को देखने चलो। कृष्ण राधा के विरह में रात भर जागते रहे और बंशी बजाते रहे और राधा भी उसी प्रकार व्याकुल रहीं। सुबह होने पर राधा ने सहेलियों को बुलाया और अपने अकेलेपन की बात कही और उनसे फूल बटोरने और गौरी पूजन करने चलने को कहा। सभी सखियों ने राधा का शृंगार किया और स्वयं भी शृंगार करके चलीं। (कड़वक १०९–१२९)

[**जायसी** ने इस प्रसंग में राधा का नख-शिख वर्णन किया हैं; यह वर्णन बहुत कुछ उसी ढंग का है, जिस ढंग का वर्णन अन्य प्रेमाख्यानक काव्यों में मिलता है।]

राधा के आने में देर होते देख कृष्ण व्याकुल हो उठे और चन्दन के वृक्ष पर चढ़ कर चारों ओर देखने लगे। इतने में वह साखियों सहित आ गयीं। तब कृष्ण वृक्ष से उतर कर घन-घोर जंगल में घुस गये। गोपियाँ भी बन में सर्वत्र बिखर गयीं और फूल बटोरने लगीं और परस्पर एक दूसरे को फूलों से मार-मार कर क्रीड़ा करने लगीं। जब कृष्ण को लगा कि अब गोपियाँ लौटने वाली हैं तब उन्होंने सोचा कि अब प्रकट होना चाहिये। जहाँ गोपियाँ खेल रही थीं वहाँ वे आधमके और आते ही डाँट लगा कर पूछने लगे—चोरी चोरी बन में घुसनेवाली तुम लोग कौन हो ? तुम लोगों ने वृक्षों को अधमरा कर डाला; डालियों से फूलों को नोच लिया। तुम लोग नित चोरी करती रहती हो। अब मेरे बस में हो, भाग कर कहाँ जाओगी ! अब तो तुम लोगों के साथ रस-भोग करूँगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जब गोपियों ने अपने को हिरणियों की तरह चारो ओर से घिरा पाया तो वे राधा के पास आयीं। राधा के पास आते ही, एक आश्चर्य हुआ, चारो ओर कनक-कोट खड़ी हो गयी, सारे मार्ग बन्द हो गये। गोपियाँ पशोपेश में पड़ीं कि हम सब अब कैसे निकल कर जायेंगी।

राधा समझ गयीं कि यह सब कृष्ण की करतूत है। वे गोपियों को दुःखी देख कर आगे आगे और गोपियाँ उनके पीछे चलीं। जब कृष्ण को देखा तो बोलीं—तुम सब डरो मत। यह तो मेरे बावुल (प्रेमी) कृष्ण हैं। और कृष्ण से पूछा—तुमने हमारी कौन सी चोरी देखी। कहो तो सारे फूल बिखेर दें। यह बात मालूम होती तो हम कभी न आतीं।

तब कृष्ण राधा को उनकी चोरी बताने लगे। राधा के शरीर के विविध अंगों को किसी-न-किसी से चुराया हुआ बताया। राधा ने उल्टे उन पर चोरी का आरोप लगाया। तब कृष्ण ने अपना रहस्य प्रकट किया और उनसे साथ चलने, पास बैठने और मिल कर खेल करने को कहा। राधा-कृष्ण में परस्पर कुछ वाद-विवाद हुआ (यह विवाद अद्वैतवादी भावना की व्याख्या सरीखा है)। राधा जब निरुत्तर हो गयीं तब उन्होंने सखियों की ओर देखा। सखियों ने उन्हें कृष्ण के साथ जाने की सलाह दी। और तब राधा और कृष्ण का विवाह हुआ। महादेव ने मण्डप छाया, पार्वती ने मंगल गाया; अप्सराओं ने गठ-बन्धन किया; फिर राधा-कृष्ण ने मिल कर भाँवरें दीं। (कड़वक १३०-१४५)

[दान-लीला के समान ही यह प्रसंग भी अपौराणिक है; किन्तु ब्रज-भाषा के कवियों ने इसका वर्णन अपने ढंग से फुलवारी-लीला के रूप में किया है। ब्रज-भाषा साहित्य में राधा का जो रूप देखने में आता है, उसमें वे मात्र कृष्ण से प्रेम करने वाली गोपी हैं और वह आयु में कृष्ण से बड़ी भी हैं। कृष्ण का चित्रण भी प्रायः बाल-स्वरूप ही हुआ है। कृष्ण के साथ राधा के विवाह का प्रत्यक्ष अथवा प्रच्छन्न उल्लेख कहीं भी नहीं मिलता। अकेले ब्रह्म-वैवर्त पुराण में राधा-कृष्ण के विवाह का उल्लेख रास से पूर्व हुआ है।[1] यह उल्लेख **जायसी** से पूर्व का है या बाद का इसका निर्णय अपने आप में शोध का विषय है। यों हमें **जायसी** वर्णित यह प्रसंग ब्रह्मवैवर्त पुराण से गृहीत नहीं लगता। उन्होंने राधा-कृष्ण के प्रेयसी-सम्बन्ध को सामाजिक मर्यादा के भीतर समेटने के लिए ही विवाह की कल्पना की है; फिर भी

१. कृष्ण-जन्म खण्ड, अध्याय २८, श्लोक ६०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसमें परिवार के लोगों के सम्मिलित होने का कोई उल्लेख नहीं है। विवाह का रूप गन्धर्व-विवाह सरीखा ही है। जान पड़ता है कि प्रेयसी का लुका-छिपा प्रेम जायसी की मानसिक भावना के अनुरूप न होने के कारण, उन्होंने इस रूप में उसके साथ समझौता किया है।]

विवाह के पश्चात् राधा-कृष्ण ने शय्यासीन होकर रात भर रति-केलि किया। प्रातःकाल होने पर राधा भयभीत हुईं कि घर के लोग पूछेंगे तो क्या कहूँगी। साथ आनेवाली गोपियाँ सब मेरी अस्त-व्यस्त अवस्था देख कर बोली बोलेंगी। तब कृष्ण ने उनसे चल कर साथ आयी गोपियों का चरित देखने को कहा। राधा ने जाकर देखा—आस पास जितनी भी फुलवारी थी, सभी चित्रसारी (रति-केलि गृह) बनी हुई है; वहाँ सब गोपियाँ का आवास है। कृष्ण ने उन सबके साथ रमण किया है; अर्थात् जैसा खेल राधा के साथ हुआ था, वैसा ही खेल सब गोपियों के साथ भी हुआ। राधा ने जिस किसी गोपी को बुला कर पूछा, उसी ने कहा कि कृष्ण ने उसके साथ रमण किया है। सभी को अपनी सी दशा में देख कर राधा हँसती हुई लौटीं और कृष्ण से बोलीं—मैंने तो समझा था कि तुम मेरे ही साथ रहे पर तुम तो सबके साथ रहे। जितनी भी गोपियाँ आयी थीं, तुमने उन सबके साथ रमण किया। अब पूछने जैसी कोई बात नहीं रही।

जब राधा ने कृष्ण से घर जाने की आज्ञा माँगी तो उन्होंने सब गोपियों को बुला लाने को कहा और कहा कि आज बसन्त-धमारी खेला जायेगा। तदनुसार सब गोपियों ने श्रृंगार किया और कृष्ण के पास आयीं। सोलह सहस्र-गोपियों के बीच कृष्ण ने बंशी बजाया और गोपियाँ सब मिल कर नाचने लगीं। इस प्रकार सारा दिन बसन्त-धमारी खेलने में बीत गया। रात में भी सब गोपियाँ वहीं रहीं। जब सुबह हुई तब कृष्ण ने उन्हें जाने की आज्ञा दी।

ईश्वर का स्मरण करती हुई गोपियाँ घर लौटीं। मन में सोचती रहीं कि तीन दिन तक जो कुछ हुआ, उसे जान कर लोग क्या कहेंगे। घर आने पर लोगों ने उनके अस्त-व्यस्त वेश का कारण पूछा और कहा कि लगता है कि कोई रमण करने वाला मिल गया था। यह सुन कर सब गोपियाँ बिगड़ उठीं। कहने लगीं—हम सब सोलह सहस्र एक साथ थीं। कौन ऐसा है जो अकेले हम सबके साथ रमण कर सके। हम सब तो बन में भटक गयी थीं; जल्दी निकल न पायीं। डर के मारे मरती रहीं। (कड़वक १४६–१६०)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[कतिपय पुराणों में गोपियों के साथ कृष्ण के रास करने का उल्लेख मिलता है। हरिवंश पुराण के दूसरे पर्व के बीसवें अध्याय में रास का वर्णन हुआ है। कहा गया है कि शरद ऋतु में रात्रि में जब चाँदनी छिटकी हुई थी, कृष्ण के हृदय में रास की इच्छा उत्पन्न हुई—

कृष्णस्तु यौवनं दृष्ट्वा निशिचन्द्रमसो वनम्।
शारदीं च निशां रम्यां मनश्चक्रे रतिं प्रति॥

× × ×

तास्तु पंक्ती कृतास्सर्वा रमयंति मनोरमम्।
गायन्त्यः कृष्ण चरितं द्वन्द्वशो गोप कन्यकाः॥
कृष्णलीलानुकारिण्यः कृष्णप्रणिहृता क्षणा।
कृष्णस्य गतियामिन्यस्तरुण्स्ता वरांगनाः॥
वनेषु ताल हस्ताग्रैः कूजयन्त्यास्त थापराः।
चेरुवै चरितं तस्य कृष्णस्य व्रजयोषितः॥
तास्तस्य नृत्यं गीतं च विलासस्मितवीक्षितम्।
मुदिताश्चानुकुर्वन्त्यः क्रीड़न्ति ब्रजयोषितः॥
भाव निस्पन्दमधुरं गायन्त्यंस्ता वरांगनाः।
ब्रजं गताः सुखं चेरुर्दामोदरपरायणाः॥

इन पंक्तियों से आभास मिलता है कि दो-दो गोपियों के बीच एक-एक गोप, और दो-दो गोपों के बीच एक-एक गोपी, इस प्रकार गोप-गोपियों से बने मण्डल के बीच वंशी बजाते हुए कृष्ण ने नृत्य किया। जिस प्रकार के भाव एवं अंग प्रदर्शन कृष्ण करते गोपियाँ उसी का अनुकरण करती थीं। नृत्य और संगीत साथ-साथ चलता था।

हरिवंश पुराण की तरह ही ब्रह्म पुराण और विष्णु पुराण में भी रास का उल्लेख है। इन पुराणों से रास का अधिक विस्तृत वर्णन भागवत पुराण में हुआ है। इस पुराण के दशम स्कन्ध के पाँच अध्याय (२९-३३) रास-पंचाध्यायी के नाम से प्रसिद्ध हैं। अनेक परवर्ती कवियों ने इस रास पंचाध्यायी को अपना वर्ण्यविषय बनाया है। अष्टछाप के कवियों ने इन्हीं के आधार पर अपना रास-वर्णन किया है। इसमें गोपियों के साथ कृष्ण का मण्डल बना कर नृत्य करने, दो-दो गोपियों के बीच एक-एक कृष्ण की उपस्थिति, किंकणि-नूपुरों की ध्वनि, नृत्य-गीत, रास, गोष्ठी आदि का सजीव एवं आकर्षण चित्रण हुआ है। पर इन सभी पुराणों में रास के प्रसंग में राधा का कोई उल्लेख नहीं है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राधा के उल्लेख के साथ रास का वर्णन पहली बार ब्रह्मवैवर्त पुराण में ही मिलता है। इसमें रास के नृत्य-संगीत पक्ष की चर्चा की अपेक्षा कामुक-भाव और संयोग श्रृंगार और रति-रमण की ही विस्तृत चर्चा है। वस्तुतः इस पुराण का रास-वर्णन श्रीमद्भागवत के टीकाकार विश्वनाथ मुखर्जी की रास की व्याख्या—नृत्य-गीत चुम्बनालिङ्गनादीनां रासानां समूहो रास्तन्मयी या क्रीड़ा सा रास क्रीड़ा—के अत्यन्त निकट है। वही रूप **जायसी** ने यहाँ प्रस्तुत किया है। अन्तर इतना ही है कि **जायसी** ने इसे बसन्त-धमार नाम दिया है। जान पड़ता है कि आरम्भ में शिष्ट सामूहिक नृत्य-संगीत रास कहा जाता था और उत्तान-श्रृंगार मिश्रित नृत्य-संगीत **जायसी** के समय तक बसन्त-धमार के रूप में जाना-पहचाना जाने लगा था। पश्चात् ब्रह्मवैवर्त पुराण के काल के आते-आते बसन्त-धमार वाला रूप ही रास मान लिया गया जिसमें अन्य पुराणों के रास के समान गोपों का कोई स्थान नहीं है। अकेले कृष्ण गोपियों के साथ रास में भाग लेते कहे गये हैं। रास के इस उत्तान श्रृंगार की लोगों ने जो आध्यात्मिक व्याख्या प्रस्तुत की है, उस व्याख्या की आरम्भिक कड़ी **जायसी** जान पड़ते हैं।

हमें तो ऐसा प्रतीत होता है कि बसन्त-धमार का तत्कालीन रूप बहुत कुछ होली के हुड़दंग से मिलता जुलता रहा होगा, जिसमें अभी कुछ काल पूर्व तक सेक्स सम्बन्धी उन्मुक्तता बनी हुई थी और स्त्री-पुरुष मुक्त रूप से परस्पर हास-परिहास करते थे।]

इस प्रकार गोकुल में कृष्ण दिन रात भोग विलास करते रहे। उधर कंस का कष्ट बढ़ता गया। उसने नारद और शुक्र से कृष्ण के गोवर्धन-धारण आदि की बात कही और शत्रु के अन्त करने का उपाय ढूँढ़ने को कहा। दोनों ने सोच विचार कर कहा कि अगली दीपावली पर जब नन्द आयें और सभी अहीरों की कुश्ती दिखायें उस समय कृष्ण को बुलाया जाय और बड़े-बड़े मल्लों के साथ उनकी कुश्ती करायी जाय। सब मल्लों में चाँवरों (चाणूर) अपूर्व बली है। वह कृष्ण का संहार कर देगा। इस कार्य के लिए उन्होंने रंग-भूमि तैयार कराने तथा अच्छे-अच्छे मल्लों को दूध-शक्कर खिला कर तैयार करने की राय दी। मंत्रियों की राय के अनुसार रंगभूमि तैयार की गयी और चारो खण्डों में जितने बलवान दैत्य थे सब खोज कर बुलाये गये। उनमें एक चाँवरों (चाणूर) भी था, उसे जूझने का दायित्व सौंपा गया। (कड़वक १६१—१६३)

कार्तिक के महीने में दीवाली आयी। नन्द महर ने सब ग्वालों को एकत्र किया और वे सब हँसते खेलते राज-द्वार पहुँचे; कंस से जुहार करके बोले कि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुछ देर हम नाचेंगे-गायेंगे । हम लोग वहुत आशा करके आये हैं कि आप प्रसन्न होकर हमें उपहार देंगे । कंस ने हँस कर नन्द को पास बुलाया, पान देकर बैठाया और कहा—तुम्हारा जो बच्चा कन्हैया (कृष्ण) है उसके सम्बन्ध में सुना है कि देखने में तो वह छोटा है पर वह अच्छा व्यायाम-कुशल है । कल तुम उसे साथ ले आओ और अहीरों के साथ उसका भी कौशल दिखाओ । मैं भी देखूँ वह कितना कुशल है । सब लोगों को मैं अच्छी तरह पुरस्कृत करूँगा । राजाज्ञा सुन कर नन्द परेशान हो उठे । (कड़वक १ ;४-१६५)

दूसरे दिन प्रातःकाल, सूर्य निकलने भी न पाया था तभी राजा के यहाँ से बुलाहट आ पहुँची । कृष्ण ने मन में निश्चय किया कि आज मल्लों से अवश्य युद्ध करूँगा । बलभद्र (बलराम) को छोड़ कर और किसी साथी को यह बात मालूम न हो पायी । दोनों भाई हाथ में हाथ मिला कर चले और साथ में बीस सहस्र ग्वाल भी चले जो मल्ल युद्ध में निष्णात थे । (कड़वक १६६-१६८)

कंस कृष्ण को आया देख प्रसन्न हुआ और नन्द को बुलाया और अपने मल्लों के साथ कृष्ण से अकेले युद्ध कराने को कहा । नन्द का मुख सूख गया और कहने लगे कि वालक अभी युद्ध करने के योग्य नहीं हैं । अहीरों से कहिये तो वे अवश्य परस्पर युद्ध करेंगे । यदि आपका स्नेह बालक के ऊपर ही है तो कहें वह धमार (नृत्य) दिखा सकता है । तब लोग नन्द को समझाने लगे कि राजाज्ञा की अवज्ञा नहीं की जाती । निदान नन्द पान लेकर बाहर आये । उन्हें दुखी देख कर कृष्ण बोले आप निराश न हों मैं आज मल्लों से उसी तरह युद्ध करूँगा जैसे महाभारत में भीम ने किया था । साथ ही उन्हें अपने विष्णु के अवतार होने की बात भी बतायी । (कड़वक १६९-१७१)

कृष्ण के कहने से लोगों के मन में आशा बँधी और जितने ग्वाल थे सब मैदान में आ डटे । ग्वालों को आते ही दैत्य भी सामने आये और ग्वालों और दैत्यों में जम कर युद्ध हुआ । दैत्य सब भाग खड़े हुए । तब कंस ने चाँवरों (चाणूर) को बुलाया । उसके साथ कृष्ण का भीषण युद्ध हुआ और वह मारा गया । यह देख कंस भयभीत हो उठा और नन्द को बुला कर अहीरों से युद्ध बन्द करने को कहने के लिए कहा । और तत्काल रथ मँगा कर कृष्ण को भेंट किया और उनसे जाने के कहा । कंस अपने किले में जा छिपा (कड़वक १७२-१८५)

[पुराणों में भी कहा गया है कि कृष्ण के अद्‌भुत पराक्रम की कथाएँ जब कंस के कान तक पहुँचीं तो उसने मल्लों के माध्यम से उन्हें मार डालने की योजना बनायी और मल्ल-युद्ध (धनुर्मह) का विस्तृत आयोजन किया । कृष्ण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बलराम युद्ध में भाग लेने के लिए निमंत्रित किये गये। उन्हें बुलाने के लिए अक्रूर भेजे गये। कृष्ण-बलराम अक्रूर के संग आये। मार्ग में ही वे कंस के आदमियों से भिड़े और उन्हें मार भगाया। बाद में रंगशाला में मल्लों को मार गिराया और इसी क्रम में उन्होंने कंस को भी मार डाला।

जायसी ने इस पौराणिक वृत्त को दो खण्डों में बाँट कर दो भिन्न काल की घटनाओं के रूप में प्रस्तुत किया है। यहाँ **जायसी** ने मल्ल-युद्ध के माध्यम से कृष्ण को मार डालने के षडयन्त्र को दीवाली के अवसर पर सामान्य रूप से होने वाले मल्ल-क्रीड़ा के रूप में उपस्थित किया है और कृष्ण के विजयी होने की बात कही है। अक्रूर को भेज कर कृष्ण को बुलाने और उनके मारने के प्रयास और स्वयं कंस के मारे जाने की घटना को उन्होंने स्वतन्त्र प्रसंग के रूप में बहुत बाद में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार **कन्हावत** का यह अंश पुराणों से सर्वथा भिन्न है।]

विजयी कृष्ण के साथ सारे ग्वाल बजाते-गाते गोकुल लौटे। कृष्ण के विजयी होकर लौटने की बात जब चन्द्रावली ने, जो राधा की ही जोड़ी थी किन्तु उससे दो वर्ष छोटी थी, सुनी तो उसने अपनी दासी अगस्त से रण जीत कर आने और चाँवरों (चाणूर) को मारने वाले वीर को देखने की जिज्ञासा प्रकट की। जब अगस्त ने चन्द्रावली को रथ पर आते हुए कृष्ण को दिखाया तो वह रूपासक्त होकर मूर्छित हो गयी। अगस्त मुँह पर पानी छिड़क कर उसे होश में ले लायी। चन्द्रावली ने वह रात बेकली के साथ बितायी। सुबह को चन्द्रावली ने अगस्त से पुनः कृष्ण को दिखाने का अनुनय किया। अगस्त ने उस समय बताया कि सायंकाल नन्द के घर उत्सव होगा। सब लोग उसमें भाग लेंगे। सायंकाल होने पर चन्द्रावली पूजा की थाल सजा कर सखियों के साथ नन्द के घर गयी ; चन्द्रावली को कृष्ण ने देखा और उस पर मोहित हो गये। जब चन्द्रावली लौट गयी तो वे विरह-व्याकुल होकर पड़ गये। (कड़वक १८६-१९५)

कृष्ण को इस प्रकार अस्वस्थ देख कर यशोदा रोने लगीं और नन्द को बुलाया। सारे गोकुल में यह बात फैल गयी कि कृष्ण को दीठ (नजर) लग गयी है। किसी काम से अगस्त बाहर निकली और यह खबर सुन कर वह नन्द के धर के भीतर गयी और बालक के रोग की बात पूछी और उसे देखने की इच्छा प्रकट की। यशोदा ने कृष्ण को दिखाया। अगस्त ने हँस कर कृष्ण से उनका हाल-चाल पूछा। जब यशोदा वहाँ से हट गयीं तब कृष्ण ने उसके साथ पिछली रात आयी नारी के देखने और उसके दर्शन के प्रति अपनी आकुलता प्रकट की। अगस्त ने उन्हें चन्द्रावली का परिचय दिया और उन्हें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उसकी बाटिका में जाने की सलाह दी; और कहा कि वहाँ वह कभी कभी आती है। अगस्त की बात सुन कर कृष्ण के मन में आशा बँधी और वे प्रसन्न हो उठे। यशोदा से पूजा करने और बच्चे के खिलाने-पिलाने की बात कह कर अगस्त चन्द्रावली के पास लौटी। (कड़वक १९७-२०५)

प्रातः काल होते ही कृष्ण विरह-उदासी बन कर चन्द्रावली की बाटिका में जा पहुँचे। कातिक की सुहानी शरद की रात्रि को चन्द्रावली ने अपनी सखियों को बुलाया और बाटिका में चलने को कहा। वे सब बगीचे में पहुँची और परस्पर धमा-चौकड़ी करने लगीं। (कड़वक २०६-२१०)

चन्दन के वृक्ष के निकट ही एक चबूतरा था, जो चित्रसारी के समान था। उसी वृक्ष पर चढ़ कर कृष्ण वंशी बजाने लगे। वंशी-धुन सुन कर सभी ग्वाल-बालिकाएँ विमुग्ध हो गयीं। चन्द्रावली सुनते ही परेशान हो उठी और पूछने लगी कि इतनी रात को कौन वंशी बजा रहा है। तब अगस्त ने बताया कि वंशी बजाने वाला व्यक्ति देखने में तो छोटा बालक सा लगता है, किन्तु उसके गुण अवर्णनीय हैं। वह चन्दन के वृक्ष के नीचे बैरागी बना भक्ति करता रहता है। यह सुन कर चन्द्रावली उसे देखने चली और जहाँ बैरागी था वहाँ आ खड़ी हुई। कृष्ण चन्द्रावली को और चन्द्रावली कृष्ण को देख कर विमोहित हो उठी। फिर दोनों में परस्पर वार्तालाप हुआ। बातों के बीच कृष्ण ने बताया हम तुम एक ही हैं। जितनी भी सोलह सहस्र गोपियाँ हैं, वे सब मेरे लिए ही अवतरित हुई हैं। सो तुम मुझसे अलग क्यों हो! (कड़वक २०६-२१८)

यह सुन कर चन्द्रावली हँसी और अगस्त की ओर देखा। सखियाँ परस्पर सोचने लगीं कि यह कौन ढीठ है जो इस प्रकार की बात कह रहा है। अगस्त ने बताया कि यह वही व्यक्ति है जिसने चाँवरों (चाणूर) को मारा था; इसके लिए ही तुम व्याकुल थीं। वह तुम्हारे लिए ही बैरागी बन कर बंशी बजाता है। यह सुन कर चन्द्रावली बिगड़ उठी। अगस्त ने विश्वास दिलाया कि यह विष्णु का अवतार है और तुम्हारे योग्य है। यह सुन कर चन्द्रावली हुलस उठी और सब सखियों को बुला कर अपने प्रेमी के रूप में कृष्ण का परिचय दिया। (कड़वक २१९-२२३)

चन्द्रावली कृष्ण के पास आयी। कृष्ण ने हँस कर उसकी बाँह पकड़ी। और तब चन्द्रावली और कृष्ण में कुछ कहा-सुनी हुई जिसमें कृष्ण ने अपने विष्णु के अवतार होने का उल्लेख किया और अपने दस अवतारों का वर्णन किया। चन्द्रावली ने पूछा कि यदि तुम विष्णु हो तो भिखारी बन कर गुप्त क्यों हो। कृष्ण ने इसका समाधान किया। तदनन्तर कृष्ण और चन्द्रावली एक हो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गये। और जिस प्रकार चन्द्रावली के साथ कृष्ण ने भोग किया वैसा ही भोग अन्य सखियों को भी मिला। उन्होंने गाँठ जोड़ कर भाँवर दिया। प्रातः होने से पूर्व ही चन्द्रावली अपने धौराहर को लौट आयी। (कड़वक २१४-२३४)

[चन्द्रावली और कृष्ण की यह प्रणय-कहानी पौराणिक नहीं है। राधा की तरह ही चन्द्रावली का भी उल्लेख भागवत पुराण में नहीं है। सूरदास आदि परवर्ती कवियों ने ही उनका उल्लेख किया है। उन्होंने उनकी चर्चा कृष्ण के प्रेम में राधा की प्रतियोगिनी के रूप में की है। वल्लभ सम्प्रदाय में, जहाँ राधा को 'स्वामिनी' कहा गया है वहीं चन्द्रावली को भी मान्यता प्रदान की गयी है। चन्द्रावली और कृष्ण के प्रेम से सम्बन्धित अनेक पद सूरसागर में देखने को मिलते हैं।[1] ये पद प्रायः खण्डिता और मान के प्रसंग के हैं। इससे अनुमान होता है कि कृष्ण की प्रेयसी के रूप में चन्द्रावली का अस्तित्व लोक-मानस में बना हुआ था, जिसे **जायसी** ने इस काव्य में अपने ढंग से सँजोया है। चन्द्रावली को जैसा महत्व **जायसी** ने दिया है, कुछ वैसा ही महत्व **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** ने भी उन्हें **चन्द्रावली** नाटिका लिख कर प्रदान किया है।]

प्रातःकाल होने पर चन्द्रावली की माँ ने उन्हें दही मथने के लिए पुकारा। चन्द्रावली को मथने का काम पूरा करने में देर लगाते देखा तो वे स्वयं उनके पास आयीं और उन्हें अनमने ढंग से मथानी चलाते देखा। जब उन्होंने चन्द्रावली से उनके अनमन होने का कारण पूछा तो उन्होंने बहाना किया कि रात्रि में जब सोयी थी तब स्वप्न में उन्हें बन के बीच से जाते हुए एक सिंह दिखायी पड़ा उसे देख कर सब सहेलियाँ भाग खड़ी हुयीं और सिंह ने मुझे अकेली को दौड़ कर पकड़ लिया। दासियों को बुलाने की चेष्टा की, वे जागी नहीं। फलतः सारी रात डर से काँपते हुए जागती रही। (कड़वक २३५-२३७)

जिस वन में कृष्ण रहते थे, वहाँ पकवान लेकर राधा गयीं तो देखा वह सूना हैं, कृष्ण हैं ही नहीं। वे दुखी हुई और चारो ओर ढूँढ़ती फिरीं। वह रात भर अकेली झूरती रहीं। प्रातःकाल कृष्ण राधा के पास आये। राधा का मलिन मुख देख कर कृष्ण ने कारण पूछा; वह मौन रहीं। कृष्ण ने कहा तुमने कोई उल्टी-सीधी बात सुनी है जिससे तुम रुष्ट हो। मैं तो कहीं गया भी नहीं; गौरा के बाजार में वंशी वजा रहा था। वहाँ दस-पाँच ग्वालिनीं थीं, उन्होंने पकड़-

---

१. सूरसागर (ना० प्र० सभा संस्करण), पद ३१००, ३११६, ३११९, ३१४६, ३१४७, ३१४८ आदि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिया; वे नाचती-गाती रहीं, इसी में सारी रात बीत गयी। राधा ने कहा—मुझे भुलावा देते हो। तुम्हारे लक्षणों से ही प्रकट है कि तुम चन्द्रावली के पास रहे। कृष्ण ने राधा को मनाया। दिन राधा के साथ बीता। रात में फिर चन्द्रावली के पास गये। वहाँ चन्द्रावली ने पूछा—दिन किसके साथ बिताया ? और राधा के साथ रहने की बात जान कर उन्होंने भी मान किया। इस प्रकार कृष्ण दोनों में अनुरक्त बने रहे और उनके साथ सोलह सहस्र गोपियाँ भी। (कड़वक २३८–२४३)

एक दिन कोई पर्व था। उस दिन सब स्त्रियाँ मन्दिर में पूजन करने गयीं। चन्द्रावली और राधा भी अपने सखियों के साथ आयीं। दोनों ने कन्ह (कृष्ण) के अपने में अनुरक्त रहने की मानता मानी। राधा और चन्द्रावली जब मन्दिर से निकलीं तो उन दोनों का आमना सामना हुआ। चन्द्रावली ने राधा से दुःखी दिखायी देने का कारण पूछा। इस पूछने पर राधा चिढ़ गयीं और फिर दोनों में खूब कहा-सुनी हुई; दोनों ने एक-दूसरे को बुरा भला कहा। अन्ततोगत्वा दोनों हाथा-पायी पर उतर आयीं। कृष्ण को जब इसका पता चला तो वे भागे भागे आये और दोनों को अलग किया और दोनों को डाँटा-समझाया। चन्द्रावली बड़बड़ाती हुई घर लौटी। (कड़वक २४४-२६०)

[जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राधा और चन्द्रावली दोनों ही पौराणिक पात्र नहीं हैं। परवर्ती कृष्ण-भक्ति साहित्य में ही, जहाँ इन दोनों की चर्चा हुई है, राधा का स्वरूप स्वकीया-नायिका का और चन्द्रावली का परकीया-नायिका का रूप देखने में आता है। किन्तु कृष्ण को लेकर उन दोनों के बीच किसी प्रकार के ईर्षा या द्वेष की झलक नहीं है। इस प्रकार यह प्रसंग पूर्णतः काल्पनिक है; किन्तु उसमें नारी मनोभावना की स्वाभाविक प्रस्तुति है।]

कंस ने गोपियों की इस कहा सुनी की बात-सुनी और कृष्ण का रूप उजागर हुआ। तब नारद और शुक्र ने विचार किया कि यह जो कुछ हुआ है वह पहले कभी नहीं हुआ था। और इस निश्चय पर पहुँचे कि कंस का अन्त आ पहुँचा है। जितना भी अनाचार सम्भव हो सके कंस को अब करना चाहिये। फलतः उन्होंने कंस से कहा कि यज्ञ का आयोजन कर सब गोपियों को बुलवाइये और उनके साथ विवाह रचाइये। तदनुसार कंस ने दूत भेज कर नन्द-यशोदा को बुलवाया और उन्हें जहाँ देवकी और वसुदेव बन्दी थे, वहाँ ले जाकर बन्द कर दिया। फिर गोकुल में सूचना भेजी कि जितनी भी ग्वालिनें हैं, वे सब

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आयोजित यज्ञ में आयें। वहाँ सब गोपियों के साथ राजा का विवाह होगा। (कड़वक २६१-२६२)

कृष्ण बन में गायें चरा रहे थे; वहाँ उन्हें इस बात की अन्तर्सूचना हुई। वे आये; ग्वालों में परामर्श हुआ। लोग इस अत्याचार से क्षुब्ध होकर गोकुल छोड़ कर अन्यत्र जाने की बात कहने लगे। कृष्ण ने उन्हें समझाया। कहा—भाग कर कहीं भी जाने से राजा से छुटकारा नहीं मिलेगा। ईश्वर का स्मरण करो; वही जो चाहेगा होगा। (कड़वक २६३-२६४)

प्रातःकाल, कृष्ण ने ईश्वर का स्मरण किया। मेघ घिर आये, वे गरजने लगे, बिजली चमकने लगी। इस प्रकार प्रकृति का रौद्र रूप लेकर कृष्ण चले। उधर कंस की सभा बैठी हुई थी। सबकी दृष्टि गोकुल की ओर थी। सबने देखा कि उस ओर से आँधी-पानी चली आ रही है। यह देख कर शुक्र ने कहा कि मेघ के रूप में यह चतुर्भुज (विष्णु) का कोप उपस्थित हुआ है। यह सुन कर कंस घबड़ा उठा और अपने सब दैत्यों से उसका सामना करने की तैयारी करने को कहने लगा; स्वयं धौराहर पर जा बैठा। नारद ने कंस से कहा कि तुम्हारे ये योद्धा कृष्ण के सामने किसी काम न आयेंगे। किसी बहाने कृष्ण को बुलाओ और हस्ति से कुचलवा दो। (कड़वक २६५-२६९)।

तत्काल अंकूर (अक्रूर) बुलाये गये और उन्हें किसी बहाने कृष्ण को मथुरा बुला लाने का आदेश हुआ। अक्रूर गोकुल आये और कृष्ण को मथुरा चल कर कंस से मेल करने को समझाया। कृष्ण-बलराम उनकी बात मान कर मथुरा आये। गोपियाँ रोती रहीं। (कड़वक २७०-२७५)

जब कृष्ण मथुरा के निकट पहुँचे तो बोले कि यहाँ मेरा मित्र सुदामा रहता है, उसके पास थोड़ी देर विश्राम करूँगा। उसके बाद, यहाँ राजा के यहाँ चन्दन घिसने वाली कुब्जा है; उसने बहुत तप किया है, उसे आज रूप प्रदान करूँगा। अक्रूर राजा के यहाँ गये और कृष्ण-बलराम सुदामा के घर आये। उनके आने की सूचना पा कर सुदामा भागता हुआ आया। उससे मिल कर दोनों भाई कुब्जा के घर की ओर चले। वह चन्दन लेकर राजद्वार जाने के लिए निकली ही थी। मार्ग में ही उसकी कृष्ण से भेंट हो गयी। देखते ही उसने कृष्ण के शरीर पर चन्दन लगाया। कृष्ण ने उसके सिर पर अपना बायाँ हाथ रखा; बायें पैर से दोनों पैर दबाये और दाहिने हाथ से उसका शीश ऊपर उठाया। धीरे धीरे उसके सारे टेढ़े अंग सीधे हो गये। (कड़वक २७०-२७८)

कृष्ण कुब्जा से बोले कि तुम कंस के यहाँ जा रही हो; उससे मेरा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्देश कहना कि जिसके भय से तुम भयभीत हो, वही मथुरा आया हुआ है। यदि अपनी भलाई चाहते हो तो बन्दियों को छोड़ दो अन्यथा आज मैं तुम्हारी वही दशा करूँगा जो मैंने रावण का किया था। (कड़वक २७९)

रूपवती होकर जब कुब्जा राजद्वार की ओर चली तो मार्ग में सभी उसके रूप पर विमोहित हो उठे। राजद्वार पहुँचने पर सभी रानियाँ उसे देखने दौड़ीं। लोगों ने जाकर कंस से कहा कि कोई पद्मिनी आयी हुई है। कंस भी उसे देख कर सुधि-बुधि खो बैठा। फिर सँभल कर उससे उसका परिचय पूछा। कुब्जा ने अपना परिचय देते हुए अपने सौन्दर्य का रहस्य बताया और कृष्ण का सन्देश कह सुनाया। उसे सुन कर कंस जल-भुन उठा। तत्काल अक्रूर को बुला कर कृष्ण को ले आने को कहा। अक्रूर कुब्जा के घर गये और कृष्ण को साथ लेकर लौटे और उन्हें सचेत कर दिया कि उनके साथ कपट व्यवहार होगा।

कृष्ण ने वीर रूप धारण कर लिया। मार्ग में लोग देखने आये। रानियों ने कुब्जा से कृष्ण को दिखाने को कहा। कृष्ण गढ़ के निकट पहुँचे और प्रत्येक पौर पर सैन्य-व्यवस्था देख कर क्षुब्ध हुए और सब को मारते पीटते सातवें पौर पर पहुँचे। वहाँ कुबलया हस्ति खड़ा था। कृष्ण ने उसे भी मार डाला। तब कंस ने अपने मल्लों को ललकारा। उन सबको पछाड़ कर कृष्ण कंस पर चढ़ बैठे और उसे मार डाला। पश्चात् उन्होंने नन्द-यशोदा, देवकी-वसुदेव को बन्दीगृह से मुक्त किया; फिर कंस के पिता को छुड़ाया। अन्त में कंस के पुत्र को बुला कर राज-तिलक किया। स्वयं मथुरा में रहने लगे। (कड़वक २७१-२९९)

[कंस के गोपियों के साथ विवाह करने का प्रयास और कृष्ण के मेघ स्वरूप मथुरा में उपस्थित होना पूर्वक्रम में ही काल्पनिक है। इस प्रकार की कोई चर्चा पुराणों में नहीं है; शायद लोक-मानस में भी नहीं है। उसके आगे अक्रूर के गोकुल जाने और कृष्ण-बलराम के आने तथा कंस वध तक की घटनाएँ लगभग पौराणिक वर्णनों के समानान्तर ही हैं।]

कंस-वध के पश्चात मथुरा में रह कर कृष्ण कुब्जा के संग भोग-विलास करने लगे। उधर कृष्ण के गोकुल न लौटने से गोपियाँ विरहाकुल हो उठीं। कृष्ण की वे एक वर्ष तक प्रतीक्षा करती रहीं। जब कृष्ण नहीं लौटे तब उन्होंने पवन को अपना दूत बना कर भेजा। पवन बनों को दग्ध करता हुआ, जहाँ कृष्ण बैठे थे, पहुँचा और उन्हें गोपियों का विरह सन्देश दिया। (कड़वक ३००-३२४)

[कंस-वध के पश्चात् कृष्ण के मथुरा रह जाने और कृष्ण के विरह में गोपियों के व्याकुल होने की बात पुराणों में भी कही गयी है। यहाँ **जायसी** ने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

षट्ऋतु वर्णन के माध्यम से कुब्जा-कृष्ण के सुख-भोग और बारहमासा के माध्यम से गोपियों का विरण-वर्णन प्रस्तुत किया है। गोपियों का पवन-दूत भेजना कवि की अपनी उद्भावना है।]

गोपियों का सन्देश सुन कर कृष्ण के मन में ममता जगी; गोपियों को लिवा लाने के लिए दूत भेजे और नौकाओं को एकत्र कर यमुना में धमार खेलने की योजना बनायी। कृष्ण का बुलावा पाकर गोपियाँ खिल उठीं और साज श्रृंगार कर यमुना तट पर आयीं। गोपियों को आया देख कृष्ण नावों को तट के निकट ले आये। सब गोपियाँ चढ़ने की चेष्टा करने लगीं; किसी को कृष्ण ने बाँह पकड़ कर चढ़ाया; कोई चढ़ने के प्रयास में जल में जा गिरीं। इस प्रकार जो समर्थ थीं वे तो नावों में चढ़ गयीं और जो चढ़ने में असमर्थ थीं, वे बिछुड़ गयीं। नौका-विहार करते रात समाप्त हुई। कृष्ण ने अपने निवास के आस पास गोपियों के लिए निवास तैयार कराया। वे सब कृष्ण के संग रह कर भोग विलास करने लगीं। सोलह सहस्र स्त्रियों के बीच अकेला एक पुरुष रमण करता रहा। (कड़वक ३२५-३२८)

[पुराणों में गोपियों के विरह से कृष्ण के द्रवित होने की बात तो है पर उन्हें बुला भेजने, उनके साथ नौका-विहार करने और फिर उन्हें मथुरा में बसा लेने जैसी कोई बात नहीं है। कृष्ण-भक्ति साहित्य के अनुसार कृष्ण ने उद्धव को गोपियों को समझाने को भेजा था और उद्धव ने गोकुल जाकर उन्हें योग का उपदेश देने की चेष्टा की थी। गोपियों ने उनका और उनके योग के उपदेश का मखौल उड़ा कर उन्हें लौटा दिया था। गोपियों के साथ नौका-विहार जैसी कोई बात कृष्ण-भक्ति साहित्य में भी नहीं है। भागवत पुराण में महारास के पश्चात गोपियों की थकान मिटाने के लिए यमुना-स्नान की बात मात्र है। सूरदास ने भी इसी अवसर पर मात्र जलक्रीड़ा की बात की है। हरिवंश में भी कुछ ऐसा ही उल्लेख है। हाँ, परमानन्द दास के एक पद में नौका-विहार का संकेत मिलता है।[1] पर वह एक स्वतन्त्र प्रसंग सरीखा और प्रतीकात्मक मात्र है।]

कृष्ण ने मथुरा में एक धर्मशाला बनवायी। जो भी वहाँ आता, ठहरता; उसे सभी प्रकार की सुख-सुविधा प्राप्त होती थी। जितने भी ऋषि, यति, संन्यासी थे, सभी वहाँ आये, ठहरे और भोजन किया। कृष्ण ने सुना कि यमुना-पार दुर्वासा नामक कोई तपस्वी रहते हैं। वे मात्र दूब (घास) खाकर तप-

---

१. परमानन्द सागर, पद ७८७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साधना करते रहते हैं । वे ही एक ऐसे थे जो कृष्ण के पास नहीं आये । कृष्ण ने सोचा कि यदि उन्होंने अन्न नहीं खाया तो मेरी दान और सेवा सभी व्यर्थ हैं । उन्होंने सभी सोलह सहस्र गोपियों को बुलाया और प्रत्येक से एक-एक प्रकार का पकवान बनाने और यमुना पार उस तपस्वी के पास ले जाने और उन्हें भोजन कराने को कहा । इसी के साथ यह भी कहा कि पैदल जाना; नाव पर मत चढ़ना । यमुना किनारे जाकर उनसे कहना कि यदि हमने कृष्ण के साथ रमण न किया हो तो तुम स्थिर हो जाओ । तुम लोग डरना नहीं; इतना कहते ही तुम्हें यमुना का थाह मिल जायेगा । (कड़वक ३२९-३३१)

यह सुन कर गोपियाँ सोच में पड़ गयीं—सारा संसार जानता है कि कृष्ण गोपियों के साथ रमण करते हैं । फिर भी वे हमसे झूठ बोल कर यमुना पार करने को कहते हैं । इस झूठ से तो यमुना का जो थाह मिल सकता था वह भी नहीं मिलेगा । फिर राधा और चन्द्रावली ने विचार किया कि इसमें कुछ न कुछ रहस्य होगा । न भी हो तो भी, यदि प्रियतम की इच्छा हम सब को मारने की ही है तो इसमें हमारी क्या हानि ! यह सोच कर सबने पकवान तैयार किया और यमुना के किनारे पहुँची । वहाँ पहुँच कर बोलीं—यदि कृष्ण ने हम गोपियों का बाँह पकड़ा हो तो हम सब डूब जाँय । यदि वे कभी हमारे निकट न आये हों तो तुम सूख जाओ और हम पार हो जाँय । यह सुनते ही यमुना घट गयीं, और सभी गोपियाँ पार हो गयीं । (कड़वक ३३२-३३३)

पार होकर वे सभी दुर्वासा के पास पहुँची और पैर छूकर उनके सामने पकवान रखे । ऋषि ने भर पेट पकवान खाकर उन्हें आशीर्वाद दिया । बोले—लौटते समय यमुना पार करने में डरना नहीं । पानी में पैर रखते हुए कहना कि यदि ऋषि ने खाना न खाया हो तो तुम स्थिर हो जाओ । और जब वे लौटीं तो वही कह कर वे सब पार हो गयीं । (कड़वक ३३४-३३५)

घर लौट कर वे सब सोच में पड़ गयीं कि ये दोनों ही बातें—कृष्ण के साथ रमण और ऋषि का अन्न-पान—क्योंकर झूठी हैं; और उन्होंने निश्चय किया कि जब तक कृष्ण इसका रहस्य न बतायेंगे वे सब रूठी रहेंगी । तदनुसार उन सबने अपने अपने घरों में न तो दीप जलाये और न रसोई पकायी । सबकी सब खँट-वास लेकर पड़ रहीं । जब सभी घर अन्धकार दिखायी पड़े तो कृष्ण सोच में पड़ गये—बात क्या है ? गोपियों ने दीपक क्यों नहीं जलाया ? गोपियों को बुलाया और उनसे रूठने का कारण पूछा । तब सबने अपने आश्चर्य की बात कही और उसका रहस्य बताने को कहा । कृष्ण ने उन्हें अपना मुँह खोल कर दिखाया । गोपियों को उसके भीतर सारा ब्रह्माण्ड दिखाई पड़ा । फिर कृष्ण ने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उन्हें अपना अन्तर्पट खोल कर दिखाया। सबने देखा वे घट-घट में व्याप्त हैं। इस प्रकार गोपियों को संसार के रहस्य का ज्ञान हुआ। (कड़वक ३३३-३४१)

[कृष्ण द्वारा मथुरा में धर्मशाला बनवाने और आगन्तुकों के लिए भोजन-व्यवस्था की चर्चा कवि की कल्पना है। इसी प्रकार अनासक्ति कर्म की महत्ता व्यक्त करने के लिए गोपियों के पकवान बना कर दुर्वासा ऋषि को खिलाने और यमुना के पार जाने-आने की कथा भी कवि की उद्भावना ही जान पड़ती है। उनमें प्रचालित प्रवादों के संकेत निहित हो सकते हैं। दुर्वासा ऋषि यमुना के पार रहते थे, यह अनुमान मथुरा नगर स्थित विश्रामघाट के सामने यमुना के दूसरे किनारे पर स्थित दुर्वासा-टीला नाम से प्रसिद्ध एक ऊँचे टीले के आधार पर किया जा सकता है। यह टीला ईसापुर ग्राम में, जहाँ से कुषाण और गुप्त-कालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं, अवस्थित है। लोकमानस में व्याप्त कृष्ण-कथा में दुर्वासा से सम्बन्धित इस ढंग की कोई कथा रही होगी। गोपियों द्वारा कृष्ण के साथ रमण न करने की बात कह कर यमुना पार करने जैसा प्रसंग सम्भवतः भागवत पुराण में है. किन्तु उसका प्रसंग सर्वथा भिन्न है। हो सकता है, इस प्रसंग के गठन में **जायसी** ने वहाँ से प्रेरणा ली हो।]

एक दिन कृष्ण ने सुना कि यमुना के किनारे अपने दल-बल के साथ मछन्दर नाथ के शिष्य, गोरखनाथ के अनुयायी कोई सिद्ध आकर ठहरे हुए हैं। जितने भी लोग हैं, वे सभी सिद्ध और पवन-आहारी हैं। वे लोग नाना प्रकार के रूप धारण करते हैं। यह सुन कर कृष्ण उस सिद्ध योगी को देखने निकले। उनके साथ दस सहस्र भक्त भी गोरख-सिद्ध के पास गये। योगी नें कृष्ण को गृहस्थ-जीवन त्याग कर योगी बन जाने की सलाह दी। कृष्ण ने भोग को ही तप बताया। और अपने को धर्म-रत होने की बात कही। इस प्रकार दोनों अपने-अपने मत—योग और भोग की सराहना करते रहे। अन्त में अपने अपने सिद्धान्त की श्रेष्ठता सिद्ध करने लिए दोनों ने परस्पर मार करने का निश्चय किया और कहा कि जो मरे वही पराजित समझा जाय। दोनों ने एक दूसरे के विरुद्ध अपने अपने शस्त्र चलाये; किसी का भी अनिष्ट नहीं हुआ। अन्त में निष्कर्ष निकला—**योगी केर योग भल, भोगी कर भल भोग**। गोरख सिद्ध सुमेरु को लौट गये और कृष्ण अपने घर आये। (कड़वक ३४२-३५०)

[चौदहवीं-पन्द्रहवीं शती ई० में गोरखपन्थी योगियों का इस देश में काफी प्रभाव था। इसका अनुमान इस बात से किया जा सकता है कि कबीर और सूरदास ने उनकी चर्चा अपने पदों में की है। हिन्दी के मुसलमान कवियों ने, जिनकी रचनाओं में सूफी-आध्यात्मिकता देखने की चेष्टा की जाती है, अपने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रेमाख्यानकों में नायकों को प्रायः योगी वेश में ही प्रस्तुत किया है। उन्होंने उनके योगी वेश का जो स्वरूप उपस्थित किया है, वह नाथ-पंथी योगियों का ही है। यह परम्परा **मौलाना दाउद** के **चन्दायन** से आरम्भ होकर **उसमान** के **चित्रावली** तक निरन्तर चलती रही है। **जायसी** ने स्वयं अपने **पदमावत** में योगी वेश का वर्णन किया है।

गोरख-पन्थियों का मत हठयोग पर आधारित रहा है। हठयोग की परम्परा काफी प्राचीन रही है; उसे ही गोरखनाथ और कदचित उनके गुरु मछन्दरनाथ (मत्स्येन्द्रनाथ) ने व्यापक और व्यावहारिक रूप प्रदान किया था। यों तो हठयोग की साधना का तात्पर्य परमानन्द और ब्रह्मानुभूति प्राप्त करना है पर लोक-विश्वास है कि हठयोगी अपनी साधना के बल पर जो रूप चाहे धारण कर सकता है। उसकी शक्ति अजेय होती है। उसी लोक-विश्वास को लेकर, **जायसी** ने काल-विपर्यय की उपेक्षा कर गोरखपंथी सिद्ध को कृष्ण के काल में उपस्थित कर योग और भोग की महत्ता सामने रखने की चेष्टा की है।]

एक दिन एक वृद्ध तपस्वी बैसाखी टेकता हुआ कृष्ण के पास आया। उसने अपने पेट पर लोहे का तवा (लोहँडा) बाँध रखा था। उसने कृष्ण से कहा—तुम्हारी कीर्ति बहुत सुनी है; तुम तपस्वियों की सेवा करते रहते हो। तुम्हारे सोलह सहस्र स्त्रियाँ हैं; उनमें से एक को वृद्धावस्था में सेवा करने के निमित्त मुझे दे दो। कृष्ण ने कहा—अभी तो आप भोजन करें। रात्रि के समय कोहबर (शयन गृह) में जाँय। जिस नारी की शय्या आपको सूनी दिखाई पड़े, उसे आप सहर्ष ले जाइये। यह सुन कर ऋषि बड़ा प्रसन्न हुआ। रात्रि को उसने मन्दिर में प्रवेश किया। जिस गोपी के सेज पर उसने दृष्टिपात किया, वहीं से उसे पुरुष के खाँसने की आवाज सुनायी पड़ी। प्रातःकाल हो गयी पर उसे किसी नारी की शय्या पुरुष-शून्य नहीं मिली। सत्य-भाव को उसने परख लिया और वहाँ से चल पड़ा। (कड़वक ३५१-३५२)

[कृष्ण की सर्व-व्यापकता को लेकर सोलह सहस्र गोपियों के साथ रमण करने की जो बात कही जाती है, उसी को **जायसी** ने इस रूपक के माध्यम से प्रस्तुत किया है।]

जब वह ऋषि जा रहा था तब उसे रास्ते में असंख्य यदुवंशी खेलते मिले। वे सब उसके विचित्र वेश को देख कर हँसने और उसका मखौल उड़ने लगे। ऋषि ने खीज कर शाप दिया कि मेरे पेट में जो लोहँडा है उसी से तुम्हारा नाश हो और तुम सब आपस में जूझ मरो। इस शाप की बात लोगों ने कृष्ण से

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जा कर कही। कृष्ण ने कहा कि दौड़ कर उससे लोहँडा छीन लाओ। यदुवंशी दौड़ कर उससे लोहँडा छीन लाये और यमुना के किनारे बैठ कर उस लोहँडा को घिसने और एक दूसरे पर हँसने लगे। फलतः वे एक दूसरे की बात सहन न कर सके और परस्पर लड़ने-जूझने लगे। अन्ततोगत्वा सारे यदुवंशी मर मिटे। (कड़वक ३५३-३५५)।

[ऋषि के शाप और उसके कारण यदुवंशियों के विनाश की बात पुराणों में भी कही गयी है। वहाँ भी शाप का कारण यदुवंशियों द्वारा ऋषियों के साथ मजाक करना कहा गया है, किन्तु यदुवंशियों के परस्पर जूझ मरने की घटना कृष्ण के द्वारिका जाने के बहुत बाद, प्रभास में घटी थी। यहाँ उसके मथुरा में ही यमुना के किनारे घटने का वर्णन है। इसका रूप भी किंचित परिवर्तित है]

लोहँडा को एक मछली चारा समझ कर निगल गयी। जब राम ने अवतार लिया था तब उन्होंने राजा बालि को छल कर मारा था। बालि ने इस काल में विरिया कोदया के रूप में जन्म लिया। उसने उस मछली को, जिसने लोहँडा निगली थी, मारा। पेट फाड़ने पर उसमें से वही लोहा निकला। उस लोहे से मछेरे ने बिचाखा (मछली मारने की बर्छी) बनायी। उसे लेकर वह नाव पर सवार होकर मछली मारने निकला। उधर कृष्ण ने जब सब यादवों के जूझ मरने की बात सुनी तो अनुमान कर लिया कि उनका भी अन्तिम दिन अब निकट है। तत्काल उन्होंने अपने भाई अर्जुन (बलदेव) को बुलाया और कहा कि मैं द्वारिका जा रहा हूँ। जो गोपियाँ मेरे संग आना चाहें उन्हें मेरे साथ आने दो। जो सती होना चाहें उन्हें सती होने दो। जो रह जायँ उनकी तुम रक्षा करना। किसी के साथ जबर्दस्ती मत करना। फिर कृष्ण ने सभी लोगों को रोता देख समझाया। उन्होंने जमुना पार किया और जब शाम हुई तो पानी के किनारे लेट रहे। उधर मछली मारता हुआ वह मछेरा आया। उसने समझा कोई रोहू मछली पड़ी है; दौड़ कर उसने अपना बिचाखा चलाया। वह कृष्ण के पैर के तलवे में लगा; तत्काल उनका प्राणान्त हो गया। (कड़वक ३५६-३६१)।

[पौराणिक वृत्त के अनुसार यदु-वंश के विनाश के पश्चात् कृष्ण ने अर्जुन को हस्तिनापुर से द्वारिका बुला कर स्त्रियों के सुपुर्द किया था। यहाँ भी अर्जुन के नाम का उल्लेख तो है किन्तु उसका प्रयोग कदाचित बलराम के लिए किया गया है। यहाँ स्त्रियों को सौंपने की बात में तनिक भिन्नता है। कृष्ण की मृत्यु पुराणों के अनुसार जरा नामक बहेलिए द्वारा छोड़े गये तीर के लगने से हुई थी।]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तिम कड़वक (कड़वक ३६२) में **जायसी** ने संसार की असारता की ओर संकेत करते हुए काव्य का समापन किया है।

इस प्रकार **कन्हावत** की कथा अपने बाह्य-स्वरूप (आउट-लाइन) में तो हरिवंश और भागवत पुराण में वर्णित कृष्ण चरित को छूती हुई है; किन्तु आन्तरिक रूप में वह उनसे अलग होकर काल्पनिक बन गयी है। इस काव्य-कथा में जिन काल्पनिक प्रसंगों का समावेश हुआ है वे **जायसी** की अपनी मौलिक उद्भावना नहीं लगतीं। राही (राधा) और चन्द्रावली को लेकर उन्होंने कथा की जो संरचना की है, वह बहुत कुछ **मौलाना दाउद के चन्दायन** की कथा के समानान्तर चलती है।

चन्दायन में गोवर नगर के वर्णन के बाद जिस प्रकार चाँदा के जन्म का प्रसंग उभरता है, ठीक उसी प्रकार इस काव्य में भी मथुरा नगर के वर्णन के बाद कृष्ण के जन्म का प्रसंग उठता है। दोनों काव्यों में नगर का वर्णन लगभग एक ही तरह और एक सा ही किया गया है। इसी तरह **चन्दायन** में जिस प्रकार **दाउद** ने, चाँदा के रूप का वर्णन किया है ठीक उसी तरह ही **जायसी** ने भी राधा का नख-शिख वर्णन प्रस्तुत किया है। **चन्दायन** में लोरिक के साथ रात्रि-मिलन के पश्चात् अपनी अस्त-व्यस्त अवस्था को छिपाने के लिए चाँदा ने बिल्ली कूदने जैसी बात वनायी थी, ठीक वैसी ही चन्द्रावली ने भी अपनी माँ से स्वप्न में सिंह द्वारा आक्रमण किये जाने की बात गढ़ी है।

अन्यत्र **चन्दायन** में रूपचन्द और सहदेव महर की सेनाओं के वीरों की नामावली जिस प्रकार **दाउद** ने प्रस्तुत की है, उसी ढ़ंग की नामावली **जायसी** ने भी कंस के मल्लों और नन्द के अहीरों की दी है। आगे, जिस प्रकार लोरिक के रण जीत कर वापस आने पर चाँदा ने अपनी दासी बृहस्पत से विजयी वीर के देखने की इच्छा प्रकट की थी और लोरिक को देख कर मूर्छित हो गयो थी; ठीक वैसा ही प्रसंग **कन्हावत** में भी है और लगभग उसी रूप में है। यहाँ कंस के रंगभूमि से विजयी होकर लौटते हुए कृष्ण को देखने की इच्छा चन्द्रावली ने अपनी दासी अगस्त से प्रकट की है और कृष्ण को देख कर मूर्छित हो गयी है। पुनः जिस प्रकार **चन्दायन** में विजय के उपलक्ष में किये गये भोज के आयोजन में चाँदा को देख कर लोरिक व्याकुल हो उठा और घर आकर पड़ रहा था और उसकी चिकित्सा के बहाने बृहस्पत ने चाँदा का सन्देश पहुँचाया था और लोरिक योगी वेश धारण कर मन्दिर में जा बैठा था; ठीक वैसा ही वर्णन **कन्हावत** में भी है। नन्द के यहाँ आयोजित विजयोत्सव में चन्द्रावली जाती है और उसे देख कर कृष्ण व्याकुल होते हैं और रोगी बन कर पड़ रहते हैं। उन्हें

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देखने के बहाने चन्द्रावली की धाई अगस्त उनके पास जाती है और चन्द्रावली के विरह की बात बता कर उनसे चन्द्रावली के पिता के बगीचे में जाने को कहती है; तदनुसार कृष्ण वहाँ बैरागी बन कर जा बैठते हैं।

चन्दायन में चाँदा के शयनागर में पहुँचने पर लोरिक और चाँदा में जिस ढंग का वार्तालाप होता है, बहुत कुछ उसी ढंग का विवाद **कन्हावत** में भी कृष्ण और चन्द्रावली के बीच बाटिका में होता दिखाई पड़ता है। और उसके बाद ही, दोनों ही काव्यों में समान रूप से प्रेमी-प्रेमिका एकाकार होते हैं।

चन्दायन में जिस प्रकार पर्व के अवसर पर मन्दिर में चाँदा और मैंना की भेंट होती है और चाँदा मैंना से उसके मलीन-मुख होने का कारण पूछती है, दोनों में प्रश्न-प्रति-प्रश्न के बीच गाली-गलौंज और फिर हाथा-पायी होती है और लोरिक आकर उन्हें अलग करता है, ठीक उसी प्रकार यहाँ भी पर्व के अवसर पर राही (राधा) और चन्द्रावली की मन्दिर में भेंट होती है और चन्द्रावली राही से उसके मलीन होने की बात पूछती है और दोनों में कहा-सुनी फिर हाथा-पायी होती है और कृष्ण आकर दोनों को अलग करते और बरजते हैं।

ये तथा इसी प्रकार के अन्य अनेक कई छोटे मोटे प्रसंग **चन्दायन** और **कन्हावत** में एक सरीखे हैं। दोनों काव्यों के बीच इस प्रकार की समानता अद्भुत है। उसे देखते हुए यह मानना कठिन है कि **जायसी** ने उन्हें स्वतन्त्र रूप से लोक-मानस से प्राप्त किया था अथवा वह उनकी अपनी कल्पना है। लोक-मानस में व्याप्त कथाओं में जब तब एक से प्रसंग अवश्य दिखायी पड़ते हैं पर यहाँ तो कथा-प्रसंग ही नहीं वरन् दोनों काव्यों की वर्णन शैली और शब्द संयोजन भी बहुत कुछ एक सी है। उन्हें सामने रख कर देखने पर किसी के लिए भी यह विश्वास करना कठिन होगा कि **जायसी मौलाना दाउद** और उनके **चन्दायन** से अपरिचित थे। आश्चर्य होता है जब हम देखते हैं कि **जायसी** ने इस बात को बड़े साहस के साथ नकारा है। **पदमावत** में उन्होंने अपने पूर्ववर्ती प्रेमाख्यानक काव्य-परम्परा का उल्लेख किया है, उनके नाम बताये हैं;[1] किन्तु उसमें उन्होंने **चन्दायन** की कोई चर्चा नहीं की है।

जायसी ने **कन्हावत** की रचना की प्रेरणा लोक-मानस से प्राप्त की थी, ऐसा उनका कहना है। मथुरा-वृन्दावन और उसके आसपास के लोक-जीवन में गीतों और कहानियों के रूप में कृष्ण-चरित बिखरा हुआ है। उनके संकलित करने का प्रयास कदाचित अब तक नहीं हुआ है। उनके संकलित होने पर

१. कड़वक २३३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्भव है **जायसी** के इस कथन पर कुछ प्रकाश पड़ सके। पर तब भी किसी सूत्र से यह न जाना जा सकेगा कि उन अनुश्रुतियों में कितनी **जायसी** के समय प्रचलित रहीं।

अन्तर्भूत धार्मिक-तत्त्व

प्रेमाख्यानक काव्यों के रचयिताओं ने अपनी रचनाओं में जिन पीर और गुरुओं का उल्लेख किया है, वे सभी सूफी सम्प्रदाय के जाने माने सन्त रहे हैं। इस कारण समझा जाता है कि ये कवि भी उसी परम्परा के सन्त रहे होंगे और उन्होंने सूफी सम्प्रदाय के आध्यात्मिक तत्त्वों को प्रतीकात्मक रूप में अपनी प्रेमाख्यानक रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है। इस धारणा को **चन्दायन** के सम्बन्ध में मखदूम शेख तकीउद्दीन बायज रब्बानी के इस कथन से बल मिलता है कि यह प्रेम और भक्ति के जिज्ञासुओं के उपयुक्त है; उसमें कुरान के कतिपय आयतों की व्याख्या है।[1] **जायसी** के **पदमावत** की कतिपय प्रतियों में एक ऐसा कड़वक प्राप्त होता है जिसमें उसके प्रतीकात्मक रूप की व्याख्या है।[2] इन धारणाओं के आधार पर **जायसी** के अध्येताओं ने उनकी आध्यात्मिकता के विवेचन का सफल अथवा असफल प्रयास किया है। हमने **चन्दायन** और **मिरगावती** का विवेचन करते हुए उनमें सूफी तत्त्वों के अभाव की चर्चा की है।[3] **जायसी** के **पदमावत** में सूफी आध्यात्मिकता है या नहीं, यदि है तो किस सीमा तक, इसके विवेचन करने का हमें कोई अवसर नहीं मिला; हम सम्प्रति इतना ही कह सकते हैं कि उनके **कन्हावत** में हमें उस प्रकार की सूफी आध्यात्मिकता जैसी कोई चीज देखने को नहीं मिली, जिसकी चर्चा प्रायः **पदमावत** के प्रसंग में की जाती है।

कन्हावत की कथा विशुद्ध रूप से भारतीय अवतारवाद पर आधारित है। भारतीय मान्यताओं और धारणाओं के अनुसार कृष्ण विष्णु के अवतार थे; और उनके उसी अवतारवादी स्वरूप का अंकन **जायसी** ने अपने ढंग से किया है।

---

१. मुनतखब-उत्तवारीख, विवलियोथेक इण्डिका सीरीज, भाग १, पृ० २५०; अनु० भाग १, पृ० ३३३।

२. माताप्रसाद गुप्त, पदमावत, पृ० ५५२, कड़वक १३३ क। इसे उन्होंने प्रक्षित ठहराया है (भूमिका, पृ० ११४)।

३. चन्दायन, पृ० ६२-६४; मिरगावती, पृ० ८०-८१।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्ण-चरित को जिस रूप में उन्होंने रूपायित किया है, उसके अनुसार स्वयं विष्णु ने दस अवतार ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की थी और ब्रह्मा ने उन्हें दस अवतार प्रदान किये थे।[1] उनके अवतार लेने का अभिप्राय था—

जो तिहुँ दीप बुरी कहुँ होई। मारै कँह अवतरै सोई॥[2]

इसमें भगवद्गीता के

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥[3]

की स्पष्ट प्रतिध्वनि है। विष्णु के अवतार ग्रहण करने का एक मात्र उद्देश्य था अनाचार का विनाश। किन्तु जब कंस ने झूठा गर्व किया और ब्रह्मा उस पर रुष्ट हुए तब उन्होंने विष्णु से मथुरा जाकर राजा बनने को कहा। उस समय विष्णु ने स्पष्ट इनकार कर दिया। लोक-कल्याण की भावना, जो अवतारवाद का मूल अभिप्राय था, उन्होंने एकदम भुला दिया। उनके सामने अतीत का स्वभोगित कष्ट सामने आ खड़ा हुआ—

दुख पायों रामा अवतारा। अब नहिं अवतरों यहि संसारा॥
जनम मोर विपत में बीता। एक इस्त्री जानों सीता॥
सो पुनि रावन हर ले गयऊ। बहु सँताप प्रिथमीं जनि भयऊ॥
जहाँ मरन दुख बिरहैं, लौटि तहाँ का जाउँ।[4]

विष्णु कृष्ण के रूप में तभी अवतरित हुए जब ब्रह्मा ने उन्हें आश्वासन दिया—

जस वहि जरम गही तप साजू। तस इँह जरम देउँ सुख राजू॥
सोरह सहस गोपिता साजीं। ते सब मैं तो कँह उपराजीं॥
गेह करों पै तोहि सब जोगू। अवतरि जगत मानु रस भोगू॥[5]

और विष्णु सोलह सहस्र गोपियों के साथ भोग करने के प्रलोभन में आ गये; उन्हें पिछला सारा कष्ट भूल गया और वे अवतरित हुए; वे लोक के बन कर रह गये।

---

१. कन्हावत, कड़वक ३७, पंक्ति ४-६।
२. वहीं, पंक्ति ७।
३. ४।७।
४. कन्हावत, कड़वक ४२, पंक्ति ५-७; ६।
५. कड़वक ४३, पंक्ति ३-६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देख सरूप इस्त्रीं, पुनि माया लपटान।
पाछिल दुख बिसरगा, जग अवतरा आन॥[1]

इस प्रकार समूचा काव्य कृष्ण और गोपियों के रस-भोग से ओतप्रोत है। अवतार लेने का मूल उद्देश्य लोककल्याण गौण अथवा प्रासंगिक मात्र बन कर रह गया है। जायसी ने कृष्ण को बिना किसी दुराव-छिपाव के स्पष्ट रूप से भोगी बताया है और मुक्त रूप से भोगवाद का प्रतिपादन किया है। वे कहते हैं भोग के लिए ही मनुष्य ने जीवन धारण किया है।

जगत आइ जो भोग न करा। सो प्रिथमी काहि क अवतरा[2]
भोगहिं कँह जिउ पहिना काया।
कस न भोग कै पुरवौं साधा।
थोड़ा जीवन भोग मँह नीका।[3]

उनकी धारणा है कि भोग करते हुए भी ईश्वर को पहचाना जा सकता है—

भोग करत विधिनैं पहिचाने।[4]

और उनकी दृष्टि में भोग और योग एक सरीखे ही हैं—

जोगी केर जोग भल, भोगी कर भल भोग।[5]

भारतीय आध्यात्मिकता के क्षेत्र में भोगवाद का यह प्रतिपादन भारतीय जीवन के लिए कोई नयी बात नहीं है। यहाँ धर्म और अर्थ के समान ही काम को भी मोक्ष का साधन माना जाता रहा है। मध्यकाल में (मुसलमानों के देश में प्रविष्ट होने से पूर्व) लोगों ने इसका मुक्त रूप से प्रतिपादन किया था; और वह खजुराहा, कोणार्क और पुरी के भित्तिमूर्तियों तथा अन्यत्र मन्दिर-द्वारों के बाहुओं में अंकित मिथुन मूर्तियों में मुखरित दिखायी पड़ता है। तत्कालीन यह भोगवाद योगियों से प्रभावित वामतन्त्र से सर्वथा भिन्न विशुद्ध भौतिक भोगवाद था और वह गृहस्थ जीवन पर आधारित था। **जायसी** को उसकी ही अभिव्यक्ति **कन्हावत** के माध्यम से की है। इसी भोगवाद ने आगे चलकर वैष्णवों की मधुरोपासना का रूप धारण किया।

कृष्ण को भोग-वादी प्रस्तुत करते हुए भी **जायसी** एक क्षण के लिए भी भूलना नहीं चाहते कि कृष्ण अवतार थे। उन्होंने इस बात को बार-बार जगह-

---

१. कड़वक ४३, पंक्ति ८-९।
२. वही ३४४, पंक्ति १।
३. वही ३४८, पंक्तियाँ २, ३, ४ और ५।
४. वही ३४६, पंक्ति ३।
५. वही ३५०।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जगह दुहराया है और याद दिलाते रहे हैं कि उनका अवतार कंस-वध के लिए हुआ है। आरम्भ में ही सूक कंस को बताते हैं—

जैं मारा रामाँ औतारा सो आउ बध करै तुम्हारा।[1]

नारद भी उससे देवकी के गर्भ से कृष्ण के जन्म लेने की बात बताते हुए कहते हैं—

अबहिं बार अवतारा होई, होई काल तुम्हार।[2]

फिर वे विष्णु के अवतारों का उल्लेख इन शब्दों में करते हैं—

विष्णु होइ समुँद जिन मथा। दस अवतार कहों सुनु कथा॥
प्रथम भयो मंछ औतारा। काढ़सि वेद जो अहै नियारा॥
पुनि होइ कच्छ रूप जल छेंकी। सभै भार धरती कै टेकी॥
लौटि बराह रूप वै कियो। नवहि खण्ड कर अंम्रित पियौ॥
पुनि भा बावन रूपी करा। सत करत बलि राजा छरा॥
पुनि नरसिंह भयउ बरियारा। हरनाकुस का पेट जिन फारा॥
पुन भा परसुराम धनुकारा। मारा सहसबाहु न पारा॥
पुनि भा सिरि राम, कीन्हेंसि लंका दाहु।
अब आवत है तुम कँह, राजा मनहि पतियाहु॥[3]

स्वयं कृष्ण के मुख से जायसी ने इन्हीं बातों अनेक बार कहलाया है। वे नाग-पत्नी से कहते हैं—

कन्ह रूप अवतरेउँ, मारे आयउँ कंस॥[4]

वे बलभद्र (बलराम) को अपने पूर्वजन्म में राम होने की बात बताते हैं—

जवहि आदि हौं सिरजा अहा। दस अवतार अवतरी कहा॥
पुनि जो भयउँ रामा औतारा। तुम लखमन होइ धनुक सँभारा॥[5]

राही (राधा) को भी बताते हैं—

हिये गुनहु सुनि राही नारी। हँही सो विस्तु सरूप मुरारी॥
मैं समुँद मँह लखमी काढ़ी। गोकुल आये कुदव जब बाढ़ी॥[6]

---

१. कड़वक ३४, पंक्ति ४।
२. वही ३७, पंक्ति ७।
३. वही ३१।
४. वही ८०, पंक्ति ६।
५. वही ८५, पंक्ति २ तथा ६।
६. वही १०२, पंक्ति २-३।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नन्द को भी इसी प्रकार आश्वस्त करते हैं—

कन्ह कहा झूरहु जनि पिता। हौं गोविंद मोसों को जिता॥
हहँहि करत दीठ खो अहा। मच्छ कच्छ औ रूप बराहा॥
हहँहि सो बावन रूपी करा। हहँहि सत बलि राजा छरा॥
हहँहि सो नारसिंह बरियारा। हरनाकुस क पेट जैं फारा॥
हहँहि सो परसुराम पतबाहू। मारा महीं सहस्राबाहू॥
हहँहि सो श्रीराम औतारा। महीं लंकपति रावन मारा॥
हहँहि सो नारायन बिरंजी। महीं मार कौरो दर रंजी॥
हहँहि सो पुरुख कन्ह अब।[1]

चन्द्रावली से भी वे कहते सुनाई पड़ते हैं—

हौं गोपाल सो कृष्ण, जाकर दस अवतार।
को सरवर मोसेउ कर, उतरहिं एहि संसार॥[2]

इसी प्रकार की चर्चा अन्यत्र भी अनेक स्थलों पर हुई है।[3]

अवतारवाद को प्रतिपादित करते हुए भी **जायसी** के मन में उसके प्रति सन्देह रहा है और उसे उन्होंने कंस के माध्यम से प्रकट किया है। नारद ने जब अवतारों की बात कही तो कंस शंका प्रकट करता है—

एक बार जो अवतरि मरै। सो दुसरैं कैसे अवतरे॥
पिंड जैसे माटी कर भाँडा। कैस जुरे जो भा दस खाँडा॥
जो पै फेर तिरोहित तोरा। मिलये न मिलै जुरै न जोरा॥
कैसै टूट होइहि एक ठाऊँ। औ जो उठै कही सो नाऊँ॥
मैं देखत सब जनम गँवावा। जो यहि सो गा फेरि न आवा॥
पुनि कैसे मन मानै, कहे कि सोई आह।[4]

अपनी इस शंका का उन्होंने समाधान भी प्रस्तुत करने की चेष्टा की है—

सूरज आवइ अथि कै जाई। लौटि आइ सो कैसे जाई॥
पूनो चाँद दुइज घटि होई। लौटि सपूरन देखी सोई॥

---

१. कड़वक १७१।

२. वही २२७, पंक्ति ८-९।

३. कड़वक २२७, पंक्ति ८-७; कड़वक २२८, पंक्ति १; कड़वक २३०, कड़वक २६९, पंक्ति ३-७; कड़वक २७२।

४. कड़वक ३९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बरखा मेघ जो बरखि बिलाहीं। लौटि कहाँ हुत आवहिं जाहीं ।।
जो अस करे ईह बहोरा। तिह रे करत नाहि कछु थोरा ।।[१]

जायसी का यह कथन पुनर्जन्म का प्रतिपादन करता अधिक जान पड़ता है।

जायसी का विश्वास है कि ईश्वर अजन्मा, अवर्ण, अरूप है—

ना वह काहुक जरमा होई। ना वै केहू जरमां कोई ।।
न काहू अस जोत सरूपा। ना कोइ अइस बनसि अनूपा ।।
निहकलंक निर्मल सब माहाँ। जिह लग परै धूप औ छाहाँ ।।
सब कह दिहस जरम औ जाई। आप अबरन अरूप बिहाई ।।[२]

अतः वे कहते हैं—

जो जग सिरजी सिरजनहारू। सो किह लइ मानुस अवतारू ।।[३]

फलतः वे अवतार को ईश्वर का अंश मात्र ही मानते हैं—

बूंद समुंद जस दीखै, तस हौं ताकर अंस ।।[४]

अवतारवाद के प्रति जहाँ उनका यह दृष्टिकोण है, वहीं वे कृष्ण में ब्रह्माण्ड के समाहित होने की बात भी करते हैं। कृष्ण ने गोपियों को अपना मुख खोल कर दिखलाया। उन्होंने देखा--

परी दीठ तर भुवन नौ खंडा। सरग पतार लोक ब्रह्मण्डा ।।
दैखी परबत सुमेरु पहारा। औ जाँवत सकल संसारा ।।
चाँद सुरुज औ नखत तराईं। औ जो आरथ कँह दुनियाईं ।।
सातो समुंद अठरहो गण्डा। दीख पिंड मँह सब ब्रह्मण्डा ।।[५]

राधा ने उनके विराट रूप के दर्शन किये —

पहिले बालक भा हुत छोटा। कीन्हसि रुदन भये बड़ धोटा ।।
पुनि धरि गा लागि अकासा। [··· ··· ··· ··· ···] ।।
धरती पाय सरग सिर लायसि। गहि दूनिउ कर सरग उठाइसि ।।
पुनि भा बृद्ध बयस अति नयऊ। काँप सीस खीन तन भयऊ ।।
धरती चलायसि जैस हिंडोला। सरग पतार लै खट डोला ।।[६]

---

१. कड़वक ४० ।
२. वहीं ८०, पंक्ति ३-६ ।
३. वहीं, पंक्ति २ ।
४. वहीं, पंक्ति ८ ।
५. वहीं ३३८, पंक्ति ३-६ ।
६. वहीं १०४ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विष्णु के चतुर्भुज रूप में **जायसी** ने कृष्ण को बार बार देखने की चेष्टा की है।[1] इस प्रकार प्रच्छन्न रूप से उन्होंने कृष्ण के विष्णु होने की लोक-धारणा को स्वीकार किया है। इस प्रसंग में उन्होंने उनके आयुध-धारण की जो चर्चा की है वह भी स्वरूप-चित्रण की दृष्टि से दृष्टव्य है।

चन्द्रावली के बगीचे में योगी-वेशधारी कृष्ण को उन्होंने मात्र तीन आयुध—गदा, शंख और चक्र धारण किये बताया है।[2] विष्णु के चौथे आयुध, पद्म का उन्होंने कोई उल्लेख नहीं किया है। सामान्य रूप से यह बात कुछ असाधारण सी लगती है पर पुराणों में चतुर्भुजी वासुदेव (कृष्ण) का उल्लेख केवल इन्हीं तीन आयुधों से युक्त यह कहा गया है।[3] केवल इन तीन आयुधों से युक्त विष्णु की कुशाण-कालीन अनेक मूर्तियाँ मथुरा से मिली हैं। इस प्रकार विष्णु-वासुदेव का यह रूप अत्यन्त प्राचीन है। वासुदेव (कृष्ण) के इस परम्परागत स्वरूप से सर्वथा भिन्न एक दूसरे स्थल पर उन्होंने उन्हें चार आयुधों से युक्त बताया है—

गुप्ती खरग चक्र दोइ हाथा। कीन्ह बज्र मूसल पुनि साथा॥[4]

यह विष्णु के मान्य आयुध चक्र को छोड़ कर शेष तीन—खड्ग, वज्र और मूसल का उल्लेख हमारे लिए सर्वथा अनजाना है। वैसे वज्र और खड्ग उनकी बहुभुजी मूर्तियों के आयुध के रूप में जाने जाते हैं।

एक तीसरे स्थल पर उन्होंने चार के स्थान पर आठ आयुधों का उल्लेख किया है—

गदा चक्र सारंग-सरखंडा। पद्म शंख मूसल भूदण्डा॥[5]

इसे देखने से लगता है कि वे कृष्ण (विष्णु) के चतुर्भुज रूप का नहीं, वरन अष्टभुजी रूप की चर्चा कर रहे हैं। इनमें गदा, चक्र, पद्म और शंख विष्णु के जाने माने आयुध हैं। शेष चार में सारंग-शर (धनुष-वाण) खड्ग और दण्ड अष्ट-भुजी मूर्तियों के आयुध हैं। सम्भव है मूसल भी किसी परम्परा में उनका आयुध माना जाता हो।

---

१. कड़वक २२६, पंक्ति २; कड़वक २८६, पंक्ति २; कड़वक २८८, पंक्ति २; कड़वक २८२, पंक्ति ५ आदि।

२. कड़वक २१२, पंक्ति ४।

३. विष्णु पुराण ५.२५।७; हरिवंश ४।२५।५०; भगवत १०।५५।२२३ आदि।

४. कड़वक २२६, पंक्ति ४।

५. वही २२८, पंक्ति ६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अवतारवाद की उपर्युक्त चर्चा के अतिरिक्त समूचे काव्य में किसी प्रकार की गूढ़ आध्यात्मिक विवेचन परिलक्षित नहीं होता। हाँ कुछ ऐसी पंक्तियाँ अवश्य हैं जिनमें प्रच्छन्न रूप से वे अद्वैतावाद का प्रतिपादन जान पड़ता है—

जो र ब्रह्मण्डे सोई पिण्डे, सब जग रहा समाइ ।।[1]

एक छाड़ दूसर सो नाहीं। सबे जगत ताकर परछाहीं ।।
जँह जँह दिष्टि पसारे हेरी। सो सब कला गुसाँई केरी ।।
किहसि खेल जस हुत चहा। चौदह भुवन पूर भरि रहा ।।
सब मँह बरनी जोति सरूपा। जस जस पसरै सूरज धूपा ।।
प्रगट गुप्त देखहु अस करा। वह सब मँह सब वह मँह भरा ।।[2]

देखि गोपी पावा भेदू। जस अण्डे भरि रहि मेदू ।।
फूल माझ जस रहि बासा। दूध माझ घिउ जैस अवासा ।।
काठी माझ आग जस अहै। कया माझ जैसे जिउ रहे ।।
दर्पण माझ जैस रहे छाई ।[3]

हौं अन्तर धोखे के नाइं। भोग करै सब आपु गोसाइं ।।
आपुहि आप चहसि जो देखा। गुपुत जगत सब कहसि बिसेखा ।।
आपुहि जगत फूल होइ फूला। आपुहिं भँवर बास रस भूला ।।
आपुहि फर आपुहिं रखवारा आपुहि सब चाखन हारा ।।[4]

हम तुम्ह एकै दूसर नाहीं। जैसे पिण्ड एक दोइ नाहीं ।।[5]

मोहि तोहि राही अन्तर नाहीं। जैस दीख पिण्ड परछाहीं ।।[6]

अद्वैतवाद के इस प्रतिपादन के साथ साथ जायसी ने ब्रह्म की खोज में अहं को खो देने की बात भी कही है—

---

१. कड़वक ३३८, पंक्ति ७।

२. वही ३४०, पंक्ति २-५।

३. वही ३४१, पंक्ति १-४।

४. वही ३३६, पंक्ति २, ४-५,७।

५. वही २१८, पंक्ति ४।

६. वही १४०, पंक्ति १।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हेरत हेरत आप हेराना। बूँद मनहु सब समुँद समाना ॥
बिधि पहिचानसि आपुहि खोई। प्रगट गुप्त रहा होइ सोई ॥[1]

इस पंक्तियों में जायसी ने पिण्ड और ब्रह्माण्ड की अभेदता, प्रकृति और पुरुष की एकता, समस्त सृष्टि में ईश्वर की अन्तर्भूत अभिव्यक्ति की ही चर्चा है। इसे ही भारतीय दर्शन और धर्म सनातन से दुहराते चले आ रहे हैं; जायसी ने भी उसे ही दुहराया है। इसमें हमें ऐसी कोई बात दिखायी नहीं पड़ी जिसे हम सूफी-अध्यात्म की संज्ञा दे सकें।

सूफी-साधना में परमात्मा की खोज में आत्मा की तड़प का महत्व है। इसी को उन्होंने प्रेम की पीर की संज्ञा दी है। उनका प्रेम निराकार ईश्वर के प्रति होता है; सूफियों के लिए प्रतीकों के माध्यम से ही उसे समझा पाना सम्भव होता है। अतः वे अपने ईश्वर-प्रेम की अभिव्यक्ति लौकिक-प्रेम-प्रदर्शन के प्रतीकों द्वारा किया करते हैं। वे अपने इस प्रेम के वर्णन में ईश्वर को नारी रूप में स्वीकार करते हैं और लौकिक प्रेम-वर्णन के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्याख्या उपस्थित करते हैं। इस दृष्टि से सूफियों द्वारा रचित प्रेमाख्यानक काव्य अन्योक्ति अथवा रूपक (अलेगरी) माने जाते हैं। इस तथ्य को सामने रख कर देखने पर **कन्हावत** किसी प्रकार सूफी हजल (रूपक) प्रतीत नहीं होता।

प्रेम की पीर की अभिव्यक्ति के माध्यम **कन्हावत** में कृष्ण, राधिका (राही), चन्द्रावली और गोपिकाएँ हैं। सूफी हजल में प्रायः साधक ईश्वर (प्रेमिका) के लिए तड़पता फिरता है। **कन्हावत** में इस प्रकार की तड़पन कहीं दिखायी नहीं पड़ती। प्रेमिका के रूप में इस काव्य में ईश्वर का कोई अस्तित्व है ही नहीं। कृष्ण के रूप में स्वयं ईश्वर इस काव्य के नायक हैं; और नायक के रूप में उनका राही और गोपियों के साथ यौवनोन्मत्त धृष्ट युवक सा व्यवहार सूफी साधना वाले प्रेम की परिभाषा में नहीं आता। इसी प्रकार चन्द्रावली के प्रति उनकी रूपासक्ति भी सूफी-अध्यात्म के किसी रूप का प्रतीक नहीं कहा जा सकता।

राधा का कृष्ण के प्रति अपना कोई आकर्षण नहीं है। कृष्ण के निमित्त ही उनकी सृष्टि हुई थी, इसलिए कृष्ण से परिचित होते ही वे आत्मसमर्पण कर देती हैं। बहुत कुछ यही बात चन्द्रावली को लेकर भी कही जा सकती है। कृष्ण को देखने के लिए वह व्याकुल अवश्य होती हैं और तड़पती भी हैं पर शीघ्र ही बिना किसी आयास के (सूफी दृष्टि से साधना के) वह कृष्ण को प्राप्त कर

१—कड़वक ३३० पंक्ति ४-७।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लेती हैं। इस प्रकार प्रेम की तड़प राधा और चन्द्रावली में लेश मात्र भी नहीं है। बारहमासा के रूप में गोपियों के वियोग को ईश्वर-मिलन के तड़प की संज्ञा दी जा सकती है पर वहाँ भी ऐसा कुछ विशेष नहीं है जिसे तड़प की तीव्र अनुभूति कह सकें।

ईश्वर की साधना में किसी प्रकार के राग-द्वेष का कोई स्थान नहीं है। सभी साधक बिना किसी पारस्परिक द्वेष की ईश्वर प्राप्ति के चेष्टा करते हैं। यहाँ यदि राही (राधिका) और चन्द्रावली को साधक का प्रतीक अनुमान करें तो ईश्वर (कृष्ण) के प्राप्ति के प्रयास के बीच किसी प्रकार का द्वेष और संघर्ष नहीं होना चाहिये था पर यहाँ तो उनमें विशुद्ध लौकिक राग-द्वेष प्रस्तुत है। इस प्रकार इस काव्य में सूफी-प्रतीकात्मक प्रेम-पीर का सर्वथा अभाव है। वह किसी भी रूप में आध्यात्मिक रूपक नहीं कहा जा सकता; उसमें सूफी आध्यत्मिकता नहीं खोजी जा सकती।

अन्त में **जायसी** ने **कन्हावत** में एक जगह गुरु के महत्त्व की चर्चा की है—

जो गुरु चेलहि चहे चढ़ावा। सरग काह सिवलोक सो पावा ।।

इसमें सूफी-विश्वास की झलक देखी जा सकती है। पर गुरु का महत्त्व भारतीय सन्त-परम्परा में उतना ही रहा है जितना सूफी-मत में। अतः अकेले इस उल्लेख के कारण इस काव्य का सम्बन्ध सूफी-मत से नहीं जोड़ा जा सकता।

सारांश, **कन्हावत** अपनी कथा-वस्तु में ही नहीं, चिन्तन-धारा में भी विशुद्ध भारतीय परम्परा का काव्य है। **जायसी** सूफी सन्त परम्परा के कवि हैं, इस कारण यदि कोई इसके किन्हीं शब्दों या वाक्यों में सूफी-पीर अथवा उससे सम्बद्ध किसी प्रकार की आध्यात्मिकता देखता है, तो वह उसकी कल्पना ही होगी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-परिचय और पाठ-प्रस्तुति

कन्हावत की मात्र एक प्रति ही अब तक ज्ञात हो पायी है। वह प्रति पहले डाक्टर ए० स्पेंगर के संग्रह में थी और अब बर्लिन (पश्चिमी जर्मनी) के राजकीय पुस्तकालय (बिब्लियोथेक स्तात) में है। इसका उल्लेख सबसे पहले गार्साँ द तासी ने किया था[१] और हाल ही में इसका परिचय **सैयद मुजाहिद हुसेन जैदी** ने अपनी उर्दू पुस्तकों की सूची में दिया है।[२] प्रकाश में यह रचना पहली बार आ रही है।

यह प्रति शाहजहाँ-काल में प्रस्तुत की गयी थी और वह फारसी लिपि में है। पुष्पिका के अनुसार इसे मुगल-सम्राट शाहजहाँ के ३१वें राज-वर्ष में मंगलवार (चहारशम्बा) २३ शाबान १०६७ हिजरी (४ अगस्त १६५७ ई०) को मसौली (कन्नौज) निवासी सादत अत्तार के पुत्र सैयद अब्दुर्रहीम हुसैनी ने कासिमपुर परगना भोगाँव, सरकार कन्नौज, निवासी कल्याणमल के पौत्र रामदत्त के पुत्र राजाराम सक्सेना कायस्थ के पठनार्थ तैयार किया था। मूल फारसी पुष्पिका इस प्रकार है—

तमाम शुद किताब कन्हावत मिन तसनीफ मलिक मुहम्मद जायसी बरोज चहारशम्बः बतारीख २३ शाबान अलमुअज्जम सन् ३१ जुलूस साहिबे-किरान-सानी[3] शाहजहाँ बादशाह गाजी मुआफिक सन् १०६७ हिजरी फुतबः अल-आबिद बन्दः फकीर जरः हकीर सैयद अब्दुर्रहीम हुसैनी साकिन कन्नौज बजहत मसौली बरखुरदार सादत-अत्तार राजाराम वल्द रामदत्त इब्न कल्याणमल कौम कायस्थ सक्सेना सकनः मौजा कासिमपुर दांजोरा मन अमाल परगना भोगाम सरकार कन्नौज निगाश्तः आमद।

---

१. इस्त्वार द ला लितरेत्यूर ऐंदुई ऐ ऐंदोस्तानी, खण्ड २, पृ० ६८-६९।

२. उर्दू हैंडश्रिफ्टेन, पृ० ३७-३८।

३. साहिबे-किरान-सानी, शाहजहाँ का लकब था जिसका अर्थ होता है—दूसरा साहिबे-किरान। साहिबे-किरान उपाधि शाहजहाँ से पूर्व, उसके पूर्वज तैमूर में धारण किया था। अबजद प्रणाली के अंक-गणना के अनुसार साहिबे-किरान और शाहजहाँ, दोनों के अक्षरों का योग एक समान ३६५ होता था जो इस बात का संकेत था कि उसका शासन तैमूर की तरह ही जाज्वल्लमान होगा। इस कल्पना से प्रभावित होकर शाहजहाँ ने यह उपाधि धारण की थी। उसके पश्चात् अन्य अनेक मुगल-शासकों ने भी अपने को साहिबे-किरान कहा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आकार में यह प्रति १६ × २७ सेंटीमीटर है और चमड़े की जिल्द में बँधी है। इसमें कुल १३२ पत्र हैं। प्रत्येक पृष्ट पर चारों ओर सुनहले रंग का हाशिया है। हाशिये के भीतर की भूमि ११ × २२ सेंटीमीटर है। इस भूमि पर खुश्कत नस्तालीक लिपि में १३ पंक्तियाँ हैं और प्रत्येक कड़वक के यमकों की पंक्तियाँ काली स्याही में और घत्ता लाल स्याही में लिखी गयी है। प्रत्येक पृष्ट के नीचे तर्क (अक्षर संकेत है)।

प्रति के प्रथम पृष्ट का आरम्भ **बिस्मिल्लाह रहमाने-रहीम** से हुआ है और अन्तिम पत्र पर उपर्युक्त पुष्पिका है। अपने इस रूप में यह प्रति अपने आप में पूर्ण प्रतीत होती है। वस्तुतः इसमें आरम्भ के ७।। पत्र (१५ पृष्ट) **जायसी** की एक अन्य रचना **कहरानामा** के हैं। ९वें पत्र के दाहिने पृष्ट से **कन्हावत** आरम्भ होता है। इस प्रकार **कहरानामा** का उत्तरांश और **कन्हावत** का आरम्भिक कुछ अंश अनुपलब्ध है।

कन्हावत के आरम्भ का कितना अंश अनुपलब्ध है, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। इतना ही निश्चित है कि काव्य का आरम्भ परम्परा के अनुसार **जायसी** ने ईश्वर-स्तुति से किया था। यह इस बात से स्पष्ट है कि उपलब्ध पृष्ठ ९क के आरम्भ की दो पंक्तियों में कड़वक का एक घत्ता है और उसके बाद एक पूरा कड़वक है जो स्तुति परक है। इसके आधार पर यह अनुमान होता है कि अनुपलब्ध पत्रों की संख्या अधिक न होगी। **मौलाना दाउद** और **कुतुबन** की रचनाओं में स्तुति पाँच कड़वकों में की गयी है। **जायसी** ने **पदमावत** में स्तुति दस कड़वकों में की है। इन्हें दृष्टि में रखते हुए यह अनुमान किया जा सकता है कि इस काव्य में स्तुति पाँच-दस कड़वकों की रही होगी और दो अथवा चार पत्र ही अनुपलब्ध हैं।

रचना के इस प्रकार खण्डित होने के साथ ही प्रथम दृष्टि में यह बीच से भी यत्र-तत्र खण्डित जान पड़ती है। किन्तु ध्यानपूर्वक देखने पर ज्ञात होता है कि केवल पत्रों का व्यतिक्रम है ग्रन्थ कहीं से भी खण्डित नहीं है। उसे तर्कों (अक्षर संकेतों) सहारे यथाक्रम दिया जा सकता है।

अपने वर्तमान रूप में ग्रन्थ की स्थिति इस प्रकार है—

१. पत्र ९क[1] से २७ख तक	कड़वक १[2]	पंक्ति ८	से कड़वक ५८	पंक्ति ४	तक
२. ,, २८क से ३७ख तक	,, ६४	,, ३	,, ९३	,, ४	,,

१. कन्हावत का अंश यहाँ से प्राप्त होता है। इसके पूर्व कहरानामा है।

२. कड़वकों का क्रम देने में हमने अप्राप्य कड़वकों की उपेक्षा कर पृष्ट ९क पर उपलब्ध ऊपर के घत्ते को कड़वक १ का अंश मानकर कड़वकों की गणना की है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३.	पत्र	३८क से	३९ख तक	कड़वक	५८	पंक्ति	५	से कड़वक	६४	पंक्ति	२	तक
४.	,,	४०क से	६८ख तक	,,	१९६	,,	१	,,	२८०	,,	७	,,
५.	,,	६९क से	७९ख तक	,,	१६३	,,	७	,,	१९५	,,	९	,,
६.	,,	८०क से	८१ख तक	,,	३१५	,,	७	,,	३२१	,,	४	,,
७.	,,	८२क से	१०५ख तक	,,	९३	,,	५	,,	१६३	,,	६	,,
८.	,,	१०७कसे	११७ख तक	,,	२८०	,,	८	,,	३१५	,,	६	,,
९.	,,	११८खसे	१३२क तक	,,	३२१	,,	५	,,	३६२	,,	९	,,
१०.	,,	१३२कसे	१३२ख तक				पुष्पिका					

इन अव्यवस्थित पत्रों को निम्न लिखित क्रम देकर काव्य को समुचित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है—

कड़वक	१	पंक्ति	८	से कड़वक	५८	पंक्ति	४	तक	पत्र	९क से	२०ख	तक
,,	५८	,,	५	,,	६४	,,	२	,,	,,	३८क से	३९ख	,,
,,	६४	,,	३	,,	९३	,,	४	,,	,,	२८क से	३७ख	,,
,,	९३	,,	५	,,	१६३	,,	६	,,	,,	८२क से	१०५ख	,,
,,	१६३	,,	७	,,	१९५	,,	९	,,	,,	६९क से	७९ख	,,
,,	१९६	,,	१	,,	२८०	,,	७	,,	,,	४०क से	६८ख	,,
,,	२८०	,,	८	,,	३१५	,,	६	,,	,,	१०६कसे	११७ख	,,
,,	३१५	,,	७	,,	३२१	,,	४	,,	,,	८०क से	८१ख	,,
,,	३२१	,,	५	,,	३६२	,,	९	,,	,,	११८क से	१३२क	,,
			पुष्पिका							१३२क से	१३२ख	,,

प्रतिलिपिकार के प्रमाद एवं असावधानता के कारण इस प्रति में स्थान स्थान पर कड़वकों में यमक के पंक्तियों की छूट है। कुछ स्थानों पर तो उसने अपनी भूल का अनुभव किया है और छूटी हुई पंक्ति को मार्जिन में अंकित कर दिया है; किन्तु इस प्रकार का कोई निर्देश नहीं है कि जिससे जाना जा सके वह कड़वक की कौन सी पंक्ति है। कड़वक २, ३, ७, ९, १०, १४, १८, १९, २२, ३०, ३२, ४७, ६६, ८७, ९०, ९९, १०९, १२५, १२७, १२८, १५१, १५४, १५६, १६७, २०१, २०९, २१२, २३४, २३८, २६५, २७५, २९०, ३०७ और ३२५ ऐसे हैं जिनमें एक-एक पंक्ति की छूट है और इनकी ओर प्रतिलिपिकार ने ध्यान नहीं दिया है। इसी प्रकार कड़वक २६५ में तीन पंक्तियों का अभाव है।

खुश्कत (सुलिपि) प्रति होते हुए भी प्रति सुपाठ्य नहीं कही जा सकती।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मात्राओं के संकेत—जेर, जबर, पेश आदि का प्रयोग लिपिक ने नहीं के बराबर किया है। नुक्तों की अव्यवस्था तो फारसी लिपि के लेखकों का सामान्य गुण रहा है। प्रस्तुत प्रति के लिपिक में यह गुण कुछ अधिक मात्रा में परिलक्षित होता है। जिसके कारण अनेक स्थलों पर शब्दों का अनुमान कर पाना असम्भव हो गया है। नुक्तों की इस अव्यवस्था के अतिरिक्त अनेक अक्षरों के शोशे भी यथा स्थान नहीं हैं। कहीं कहीं शब्दों में अक्षरों का उलटफेर भी है। अनेक स्थलों पर शब्दों अथवा अक्षरों के छूट भी हैं।

इन तथा इन्हीं की तरह के अन्य लिपिक-प्रमाद-जनित सामान्य दोषों के अतिरिक्त लिपिक की कुछ अपनी (अथवा पूर्व-प्रतिलिपिक की) निजी लेखन-प्रवृत्तियाँ भी परिलक्षित होती हैं। यथा—

१. सामान्यतः उकार अथवा इकार युक्त शब्दों में मात्रा-बोध के लिए किसी अक्षर का प्रयोग नहीं होता। उनका पाठ मात्रा संकेत के अभाव में अनुमान से किया जाता है। लिपिक ने ऐसे स्थलों पर भी बहुधा **उ** के लिए **वाव** का और **इ** के लिए **ये** का प्रयोग किया है। यथा—बहूत (बहुत); चीत (चित)।

२. प्राचीन काल से ही **व** के स्थान पर **ब** और **ब** के स्थान पर **व** का प्रयोग मिलता है अर्थात् **व** और **ब** का कोई भेद नहीं माना जाता। वही प्रकृति यहाँ भी देखने में आती है। लिपिक ने अनेक स्थलों पर **ब** के स्थान पर **व** बोधक **वाव** का प्रयोग किया है। यथा—जब को जव (जो); कब को कव (को)।

३. लिपिक ने ज के लिए मात्र **जीम** का प्रयोग न कर बहुधा **जीम-हे (झ)** का प्रयोग किया है। यथा—जिउ (झिउ); उजियार (उझियार)।

४. लिपिक ने आवश्यक-अनावश्यक का विचार किये बिना ही अनुनासिक-युक्त अक्षरों का अन्धाधुन्ध प्रयोग किया है।

५. आनुनासिकान्त शब्दों में, जहाँ अनुनासिक-बोधक **नून** को अलग लिखने की आवश्यकता है, वहाँ लिपिक ने **नून** को प्रायः अगले शब्द के प्रथम अक्षर से संयुक्त कर दिया है। यथा—अबँ होइ (अब/नहोइ)। हौं चल (हव/नचल; हिवंचल)।

उपलब्ध प्रति किसी समय पानी से भीग अथवा सील गयी थी। जिसके कारण अनेक स्थलों पर लेख (विशेष रूप से लाल स्याही से लिखी पंक्तियाँ) मिट कर अस्पष्ट हो गया है। साथ ही इस प्रति पर कीड़ों का आक्रमण हुआ था। उनकी कृपा से भी अनेक स्थलों पर शब्द या अक्षर नष्ट हो गये हैं। इसी प्रकार प्रति के संरक्षण और जिल्द बाँधने के प्रयास में भी अनेक पंक्तियों के आदि अथवा अन्त के शब्द अक्षर छिप गये हैं। इन दोषों के कारण पाठ-प्रस्तुति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की जटिलता बढ़ गयी है। शब्दों को समझने और उनका रूप निर्धारण करने में काफी माथा-पच्ची करनी पड़ी है। किसी किसी पंक्ति को समझने में तो दो-दो तीन-तीन दिन लगे है। अनेक स्थलों पर पंक्तियों के भाव के आधार पर शब्दों को समझने की चेष्टा की गयी है। इन सारे प्रयासों के बावजूद हमें अनेक स्थलों पर सफलता नहीं मिली है। काफी बड़ी संख्या में ऐसे शब्द और स्थल हैं जहाँ हम हतबुद्धि हैं। अपनी ज्ञान और अज्ञान की इस सीमा के बीच पाठ-प्रस्तुति का जो प्रयास हमने किया है, उनके सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें दृष्टव्य हैं—

१—जो अक्षर या शब्द किन्हीं कारणों से प्रति में अनुपलब्ध हैं और उसे हमने अनुमान के सहारे प्रस्तुत किया हैं, वे कोष्ठक [ ] में प्रस्तुत किये गये हैं। जहाँ इस प्रकार का अनुमान सम्भव न हो सका है वहाँ कोष्ठक के भीतर स्थान रिक्त छोड़ दिया गया है।

२—जिन शब्दों का लिखित रूप असंगत या गलत जान पड़ा है, उनके स्थान पर हमने अपने विवेक के अनुसार पाठ दिया है और प्रति के पाठ को संख्या-संकेत के माध्यम से अलग नीचे दे दिया हैं।

३. लिपिक ने उ और ऊ की मात्रा के लिए समान रूप से **वाव** का प्रयोग किया है; हमने विवेक के सहारे उ और ऊ का निश्चय किया हैं। शब्द के शुद्ध रूप की दृष्टि से जहाँ उ उचित है, ऐसे अनेक स्थलों पर भी हमने उ के स्थान पर ऊ को ही ग्रहण किया है। यथा—**पुरुख** के स्थान पर **पूरुख**। ऐसा हमने क्यों किया हम स्वयं नहीं बता सकते। हो सकता है, हमारा यह निर्णय गलत हो।

४. जिन कड़वकों में पंक्तियों की छूट है, और हम छूट का स्थल अनुमान कर सके हैं, वहाँ तो हमने यथा स्थान छूटी पंक्ति का निर्देश किया है। जहाँ यह सम्भव नहीं हो सका है (अधिकांशतः सम्भव नहीं हुआ है) वहाँ अभाव के संकेत के रूप में सातवीं पंक्ति को रिक्त मान लिया हैं।

५. जिन स्थलों का पाठ हम सन्तोषजनक रूप में प्रस्तुत करने में असमर्थ रहे हैं अथवा जिनके भाव अथवा अर्थ के प्रति हम आश्वस्त नहीं हैं, उन्हें हमने भिन्न टाइप में प्रस्तुत किया है ताकि पाठकों का ध्यान उनकी ओर जा सके और वे उस पर विचार कर सकें।

६. शब्द-रूपों के निर्धारण में हमने अपनी स्वेच्छा को महत्व दिया हैं। बिना किसी बोली या भाषा के पूर्वाग्रह के शब्द का जो रूप हमें पढ़ने-सुनने में अच्छा लगा, हमने उसे ही अपनाया है। हमारा यह दावा नहीं है कि कवि का अभिप्राय उसी रूप से रहा होगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७. वर्तनी की दृष्टि से निम्नलिखित तथ्य ध्यातव्य हैं--

क. लिपिक ने छोटी और बड़ी ये का प्रयोग बिना किसी भेद के स्वेच्छया किया है। हमने सामान्यतः उसका रूपान्तर ई अथवा ए के रूप में किया है। कहीं कहीं उसे ऐ अथवा इ के रूप में भी स्वीकारा है।

ख. वाव का रूपान्तर हमने सामान्यतः ऊ अथवा ओ किया है। आवश्यक होने पर हमने उसे उ की मात्रा का भी प्रतीक माना है। उ की मात्रा का प्रयोग हमने सर्वत्र अपने विवेक के अनुसार किया है।

ग. कुछ ही स्थलों पर लेखक ने आ की अभिव्यक्ति के लिए अलिफ के ऊपर मरकज का प्रयोग किया है। प्रायः अ और आ दोनों के लिए मात्र अलिफ का प्रयोग है। हमने अपने विवेक के अनुसार अ अथवा आ स्वीकारा है।

घ. जहाँ अलिफ और ये एक साथ प्रयुक्त हुआ है वहाँ प्रायः ऐ की कल्पना की गयी है; इसी प्रकार अलिफ और वाव के संयुक्त रूप को औ अथवा अव ग्रहण किया गया है। कहीं अलिफ और वाव का प्रयोग ऊ के रूप में (यथा—ऊपर) अथवा ओ के रूप में (यथा-ओबरी) भी हुआ है।

ङ. नुक्तों के समुचित प्रयोग के अभाव में अक्षरों की पहचान हमने अनुमान के सहारे ही की है। अक्षर के नीचे के एक विन्दु की हमने यथा आवश्यक ब और प अथवा ज और च माना है। प्रसंगानुसार सार्थक शब्दों को ग्रहण करने का प्रयास किया गया है। जहाँ एक ही तरह लिखे जाने वाले एकाधिक शब्द सार्थक जान पड़े, हमने शब्द का चयन अपने विवेक के सहारे किया है। शब्द गढ़ने के प्रयास को हमने यथासाध्य नियन्त्रित ही रखा है।

पाठ-प्रस्तुति के साथ हमने कड़वक के पाठ नीचे आवश्यक होने पर तत्संबंधी टिप्पणी दी है। कड़वकों के नीचे संख्या-संकेत से ऐसे प्रति-पाठ दिये गये हैं जो ग्रहीत पाठ से भिन्न हैं। अन्त में शब्दों के अर्थ अथवा उनसे सम्बन्धित टिप्पणी हैं। जो शब्द वहाँ नहीं है, वे या तो बहु परिचित हैं या फिर ऐसे हैं जो हमारे लिए नितान्त अपरिचित हैं; उनके अर्थ हमें नहीं मालूम। अपरिचय का कारण अपपाठ भी हो सकता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मलिक मुहम्मद जायसी

कृत

कन्हावत

स्प्रेंगर (बर्लिन) प्रति के आधार पर प्रस्तुत पाठ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१

[··· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। १
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। २
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। ३
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। ४
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। ५
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। ६
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। ७

९क झूठा गरब कीन्ह जैं, तिहँ खोयस संसार । ८
हौं हौं कहि पछताते, जब रे परे मुँह छार ।। ९

उपलब्ध प्रति के आरम्भिक ७।। पृष्ठ में जायसी के कहरानामा का अंश है । इस काव्य के आरम्भ के कुछ अंश (अनुमानतः ४–५ कड़वक) अनुपलब्ध हैं । कड़वक की उपर्युक्त अन्तिम दो पंक्तियों से ही काव्य उपलब्ध होता है । किन्तु इस घत्ते में ऐसा कुछ नहीं है, जिससे उसे ईश्वर-स्तुति का अंश कहा जा सके।

टिप्पणी—छार–राख; मिट्टी ।

२

ताकर अस्तुति कीन्ह न जाई । कौन जींह अस करौं बड़ाई ।। १
जो तन बहुत[1] मुख खोले । सहस जीह बकतक यक बोले ।। २
सबदाँ लिखी सिस्टि सब आई । सब भुइ लै लिखि पसराई ।। ३
का बरनों सो अइस समुन्दू । भा संसार तिह मुखिया बुन्दू ।। ४
सात सरग औ धरती साता । जग उपजै औ जाइ हिराता ।। ५
ओकर आस सबके सब गहई । वह न आस काहू कै चहई[2] ।। ६
[···· ···· ···· ···· ···· ····] । [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।। ७
जेत अहै जित होई, छेंका संसार । ८
सबहि दिहसि औ देहि, तो वहि भरा भँडार ।। ९

कड़वक में एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित । जहां भी इस प्रकार किसी पंक्ति का अभाव है, उसका संकेत सातवीं पंक्ति के रूप में किया गया है ।

प्रति-पाठ—१. बहूत । २. यही ।

टिप्पणी—अस्तुति–स्तुति, प्रशंसा । जीह–जीभ । बकतक–बात । सिस्टि–सृष्टि । भुई–भूमि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३

कहौं मुहम्मद दूसरै ठाऊँ । जीह मिठान लेत मुख नाऊँ ।। १
पहिले दिनैं सो सिरजा नूरू । तो सिस्टी कर भो अंकूरू ।। २
जो न होत ब्रह्म वह जोती । तो नाँ सरग न धरती होती ।। ३
तो उपजत नहिं यह संसारा । होत न चाँद सरग उजियारा ।। ४
९ख वह कैं प्रीति सभै जग साजा । बरन बरन सब कछु उपराजा ।। ५
जो आयत उन्ह लिखे बनाये । वहै तन्त जग चलन चलाये ।। ६
[.... ....] । [.... ....] ।। ७
पाप-पुन्न कै बखरी, सब कँह जोहहि बैठ । ८
वह से बखरि जो नाँघत, होइहि उहें बसीठ ।। ९

कड़वक में एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित ।

टिप्पणी—मुहम्मद–ईश्वर के दूत; पैगम्बर; इस्लाम धर्म के प्रवर्तक । मिठान–मीठा हुआ । सिरजा–उत्पन्न किया । नूरू–ज्योति । हदीस के अनुसार ईश्वर ने सर्व प्रथम नूर अर्थात् ज्योति उत्पन्न किया था; वही ज्योति मुहम्मद साहब के रूप में प्रकट हुई । अंकूरू–अंकुर । आयत–कुरान की पंक्तियाँ ।

४

चार मीत बिधनै बड़ कीन्हें । ते रसूल के गोहीं दीन्हें ।। १
पहिले अबा बकर सतबारू । एक मंत्री औ वीर अपारू ।। २
दूसरें उमर पुरुख हुत आदी । जीता न कोई बाद कै बादी ।। ३
तिसरैं उसमान पंडित सयानें । पढ़ि पुरान जिहि अरथ बखानें ।। ४
चौथे अली सिंघ बरियारू । खरग देखि काँपै संसारू ।। ५
जो रसूल बिधि आयसु दीन्हा । सोइ वचन चहुँहि मिलि कीन्हा ।। ६
औ चहुँहि मिलि एक मत मता । **मार सबहि आनाँ दोइ तता** ।। ७
चार खूँट चहुँ दिसि रहा, [....][1] रहा बड़ कीन्ह । ८
जगत न डोले कहु, जिता कुछ अरींन्ह ।। ९

प्रति-पाठ—१—अंश अपाठ्य ।

टिप्पणी—चार मीत–मित्र; मुहम्मद साहब के पश्चात होने वाले चार उत्तराधिकारी खलीफा । बिधनै–ईश्वर । रसूल–पैगम्बर अर्थात् मुहम्मद साहब । गोहीं–साथ । अबा बकर–अबूबक्र सिद्दीक (इनका समय ६३२–६३४ ई० है) । सतबारू–सत्यवादी । उमर–उमर फारूक (६३४–६४४ ई०) । बाद कै बादी–शर्त लगा कर । उसमान–(६४४–६५६ ई०), इन्होंने कुरान को अन्तिम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रूप में लिखित रूप दिया था। उन्हें कुरान का व्याख्याकार कहा जाता है। पुरान- यहाँ तात्पर्य कुरान से है। आयसु=आदेश।

५

देहली कहौं छत्रपति नाऊँ। बादशाह बड़ शाह हुमायूँ॥ १
१०क जैं फिरि कीन्ह नवो खंड डाँडा। चहुँ दिसि समुँद पखारा खाँडा॥ २
सात[हु]दीप फिराई आना। आठहु दिसान परी अहाना॥ ३
कै तुरकान सकल दुनियाई। अदल कीन्ह उमर कैं नाई॥ ४
गऊ सिंघ गवनहिं एक बाटा। पानीं पियहिं दोउ एक घाटा॥ ५
ऊ दातार सराहों काहा। हेतम करन न सरबर आहा॥ ६
खोल दीन्ह पुनि बन्द भँडारू। माँगत सब अघान सैंसारू॥ ७
सभै प्रिथिमी असीसै, देखिह-देखि ऊपम साज। ८
छात पाट तुम सोहे, करो सदा सुख राज॥ ९

टिप्पणी—देहली—दिल्ली। छत्रपति—शासक; राजा। हुमायूँ—मुगल-वंशीय बाबर का पुत्र, अकबर का पिता। फिरि—घूम कर। नवो खण्ड—कवि की कल्पना रही है कि पृथिवी के नौ खण्ड हैं। डाँडा—कर की वसूली। पखारा—धोया। खाँडा—तलवार। आनाँ—आदेश। अहाना—आतंक। अदल—न्याय। उमर—चार खलीफाओं में से एक; सत्-असत् का विवेक उनका गुण था, निष्पक्ष न्याय के लिए उनकी ख्याति थी। नाई—की तरह। बाटा—मार्ग। दातार—दानी। हेतिम—हातिमताई। अरबी कथाओं का नायक जो अपनी उदारता और दान के लिए प्रसिद्ध था। करन—कर्ण; महाभारत-कालीन एक वीर; दान के लिए उनकी ख्याति थी। अघान—तृप्त हुए। ऊपम—उत्तम। साज—ठाट-बाट।

६

कहौं शरीयत पीर पियारा। सैयद अशरफ जग उजियारा॥ १
साजा जहाँगीर कुल माहाँ[१]। धूप जरत पाये जग छाहाँ॥ २
निरमल चिश्ती निरमल भेसू। भूले सबहिं दीन्ह उपदेसू॥ ३
समुँद माँझ बोहित अस खेवहि। लागहि पार बार जो सेवहि॥ ४
[··· न][२] बोहित लीन्हि चढ़ाई। समुँद देखि जल जिउ न डराई॥ ५
१०ख भा दरसन हिय निरमल भयऊ। पायउ धरम पाप सब गयऊ॥ ६
अस जो सेवइ मन चित लाई। इंछा पूजै आस तुलाई[३]॥ ७
दास भयो हौं तिह कर, नित तिंह सेवों बार। ८
गाढ़ परै मोहि जहवाँ, बेगि करहि निस्तार॥ ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. भासू । २. अंश अनुपलब्ध । ३. तोलाई ।

टिप्पणी—शरीयत–इस्लामी धर्म-शास्त्र । पीर–श्रेष्ठ; महात्मा । सैयद अशरफ–परिचय के लिए देखिए पृ० १६-१८ । चिश्ती–एक सूफी सम्प्रदाय । बोहित–नाव । बार–द्वार । सेवइ–सेवा करे । इंछा–इच्छा । आस–आशा । तुलाई=पूरा हो ।

७

कहों तरीकत अगुवा गुरू । रोशन दीन दुनी सुरखुरू ।। १
[नाव पियार शेख बुरहान् । नगर कालपी हुत थानू][1] ।। २
औ तिह् दरस गुसाई क पावा । अलहदाद गुरु पंथ लखावा ।। ३
अलहादाद कुल सिद्ध नवेला । सैयद मुहमद के सिख चेला ।। ४
सैयद मुहमद महदीं[2] साँचा । दानियाल दीने सिध बाचा ।। ५
दानियाल लौ परगट कीन्हा । हजरत ख्वाजा खिज्रहि दीन्हा ।। ६
जुग-जुग अम्मर हजरत ख्वाजे । हजरत नबी रसूल नवाजे ।। ७
खरग दीन्ह वै जाकों, देखि [डरे] इबलीस । ८
जपा जपत सों भागै, धुनै औहट भा सीस ।। ९

प्रति-पाठ—१. पंक्ति प्रति में अनुपलब्ध है । अखरावट के आधार पर पाठ-पूर्ति । २. मुहीउद्दीन ।

टिप्पणी—तरीकत – इस्लाम की उपासना पद्धति । अगुवा – आगे चलनेवाला । रोशन दीन – धर्म का प्रकाश । दुनी – संसार । सुरखुरू – ख्यातिमना । शेख बुरहान – परिचय के लिए देखिए पृ० २६ । कालपी – कानपुर के निकट स्थित एक नगर । दरस – दर्शन । गुसाई – स्वामी । अलहदाद – देखिए परिचय पृ० २५ । सैयद मुहमद – देखिए पीछे पृ० २५ । सिख – शिष्य । चेला – शिष्य । महदीं – एक सूफी पंथ । साँचा – सच्चा । दानियाल – देखिए पीछे पृ० २५ । सिध – सिद्ध । बाचा – वचन । लौ – प्रकाश । हजरत ख्वाजा खिज्र – देखिए पीछे पृ० २४ । नेवाजे – अनुग्रह करने वाला । खरग – खड्ग, तलवार । इब्लीस –शैतान । जपा जपत – जप करते ही । औहट – आड़ । भा – होकर ।

कहों नगर बिद[रा]बन ठाऊँ । सदा सोहावन जानस नाऊँ ।। १
११क सतजुग हतो धरम अस्थानूँ । तहिया कहत नगर ऊ नानूँ ।। २
पुनि त्रेता गयेउ द्वापर भखीं । भूँजा राज महारिख रिखीं ।। ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहत रिखीसर सहस अठासी। खनी खन्त पोखर चौरासी।। ४
बाँधा घाट ईंट गढ़ लाये। औ चौरासी कुआँ बनाये।। ५
बिच बिच बाँधे भींट सोहाई। निसि भये गँगन जनहु तरायीं।। ६
ठाँव ठाँव परी पहारीं। तिह ऊपर सब मढ़ी सँवारी।। ७
बैठि तपा तप साधे, सबै पुरुख[1] औ नारि। ८
होम जाप जप निसि दिन, करहिं जग्य[2] अगियार।। ९

प्रथम पंक्ति का 'कहीं नगर वड़ आपुन ठाऊँ। सदा सोहावन जायस नाऊँ।' पाठ भी हो सकता है। वह आखिरी कलाम की पंक्ति—'जायस नगर मोर अस्थानू। नगर क नांव आदि उदियानू।।' का स्मरण कराता है। किन्तु यह इस कारण सम्भव नहीं हैं कि—(१) पूर्व काल में जायस नगर के किसी प्रकार के धार्मिक स्थल होने की कोई सूचना किसी सूत्र से प्राप्त नहीं होती। (२) जायस का क्षेत्र समतल है; वहाँ किसी प्रकार की कोई पहाड़ नहीं है, जिनका उल्लेख पंक्ति ७ में हुआ है। (३) कड़वक ६ में देहली के उसके निकट होने का संकेत है जो वृन्दावन के प्रसंग में ही सार्थक हो सकता है। इनके अतिरिक्त इस काव्य-कथानक में अनेक अनुश्रुति और प्रवाद ऐसे हैं जिनकी जानकारी ब्रज से वाहर नहीं प्राप्त होती।

प्रति-पाठ—१. पूरूख। २. जग।

टिप्पणी—बिदराबन—वृन्दावन; ब्रज प्रदेश के बारह प्रसिद्ध वनों में से एक। अन्य कुछ प्रमुख वन हैं—मधुवन, रामवन, रायवन, खदिरवन, झीरवन। कहते हैं यहाँ वृन्दा (तुलसी) का वन था। बह्मवैवर्त पुराण में इससे सम्बद्ध वृन्दा नामक व्यक्ति की कथा है। यह मथुरा नगर से ९-१० किलोमीटर की दूरी पर स्थित एक कस्बा है। इसके तीन ओर यमुना बहती हैं। हतो—था। तहिया—उस समय। नानूँ—नाम। महारिखि—महर्षि। रिखी—ऋषि। रिखीसर—ऋषिश्वर; श्रेष्ठ ऋषि। खनी-खन्त—ऊजड़ खावड़ भूमि। पोखर—पुष्कर, तालाब। मढ़ी—देवालय। सँवारी—सजाया, वनाया। होम—हवन। जग्य—यज्ञ। अगियार—आहूति।

९

[पुनि] कलिजुग[1] कीन्हों पैसारू। गये जो रिखीसर तजि संसारू।। १
[जिह] ठाइं पुनि बसगित रहा। भा अरन्न[2] **जगरन** गहा।। २
[आइ] चढ़ी तिह तनखन दसा। भा तुरकान पूर फिर बसा।। ३
[सब] भगवन्त सराहे जोगू। पान-फूल नौ निधि रस भोगू।। ४
[राइ] रंक घर ऊँच अवासा। अगर चन्दन घन आवै बासा।। ५
११ख मेर-सुगन्ध रहा भर पूरी। कुंकुम परिमल[3] औ कस्तूरी।। ६
[.... ....]। [.... ....]।। ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देखी नगर सुहावन, देहली हुत जस पास। ८
जस-जस नियरै जाइ, जनों चढ़ै कैलास॥ ९

कड़वक में एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. कैंजग। २. अरवन। ३. निरमल।

टिप्पणी—बसगित-बस्ती। अरन्न-अरण्य, जंगल। तुरकान-तुर्कों का राज्य। कहा जाता है कि दिल्ली के लोदी सुलतानों के समय में वृन्दावन फिर से बसा था; उसके पूर्व वह जंगल था। पूर-नगर। घन-तीव्र। मेर-एक प्रकार की सुगन्धि। कुँकुम-केसर। परिमल-अनेक सुगन्धियों को मिला कर बनायी गयो सुगन्धि। नियरैं-निकट। कैलास-स्वर्ग।

१०

एक कोट सुठि ऊँच अपारू। जाकर जनहु चौखंड बिस्तारू॥ १
खाइँ खनि[1] पतार लै लाइँ। गहन अबूझ न सूझैं जाइँ॥ २
बारह पँवरीं चहुँ दिसि राचीं। बैठि रहे रात दिन जाचीं॥ ३
घरी घरी बाजै घरियारा। पहर-पहरी चहु[2] दिसि चिहकारा॥ ३
बसे गिरहथी[3] नगर गरेरे। हाट-ह्वण्डी बसे[4] चहुँ[5] फेरे॥ ५
पौनि छतीसो भरगा आये। चहूँ खण्ड सब बिसार[6] बिकाये॥ ६
[.... ....]। [... ....]॥ ७
नाच कोड़ बहु कथा, खँड-खँड चहुँ दिसि होय। ८
मानुस केर कहौं का, देवता रहहिं विमोह॥ ९

एक पंक्ति की छूट; स्थाम अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. खाइँ इँ खनि। २. चहू। ३. नरहथी। ४. बहे। ५. चहूँ। ६. बीसार।

टिप्पणी—कोट-दुर्ग। सुठि-सुन्दर। खनि-खोद कर। पतार-पाताल। पँवरी-द्वार। राचीं-बनाया। जाचीं-याचक; भीख माँगने वाले। घरी-घरी-घड़ी-घड़ी। घरियारा-घड़ियाल; घण्टा। गिरहथी-गृहस्थ। गरेरे-चारों ओर। हाट-ह्वण्डी-व्यवसाय करने वाले। पौनि-श्रम करने वाले लोग। कोड़-कौतुक, खेल। केर-का। बिसार-विक्रय-वस्तु।

११

नगर चहूँ दिसि तीरथ[1] बासी। खनी खन्त पोखर चौरासी॥ १
उतरा पँथ हौं जस देखा। तैस हौं चलि कही बिसेखा॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२क दधि औ दूध **दोउ घन नीसें**। सिझे रखीं पिंडवा जैसें ॥ ३
सजीमान जनु सोइ हेंवारा। बिचबिच जलहर बहुत पहारा ॥ ४
भरा सँमुद जस नीर हिलोरा। पैरहिं पंछी हंस चकोरा ॥ ५
फूले कँवल कुमुद पौनारी। करहिं अन्हान केलि कै नारी ॥ ६
झुण्ड झुण्ड[3] पनिहारीं आवहिं। रहसि कोड जल भरहिं उठावहिं॥७
घाट चहूँ दिसि बाँधे, लागि सुहाइ ईंट। ८
एक चौरासी पोखर, औ चौरासी भींट ॥ ९

पंक्ति ६ मार्जिन में अंकित; अनुमान से यहाँ रखा गया है।

प्रति-पाठ—१. तिरजथ। २. हौ। ३. झूण्ड झूण्ड।

टिप्पणी—उतरा पँथ—रास्ते में रुक कर। हौं—मैं। सिझे—औटा कर। हेंवार—जमा हुआ श्वेत बर्फ। पौनारी—पौनाल; कमलदण्ड। अन्हान—स्नान। पनिहारी—पानी भरनेवाली। चौरासी पोखर—वृन्दावन की यात्रा प्रसंग में आज भी चौरासी तालाबों की ख्याति है। भींट—भित्ति; दीवाल।

१२

औ पुरपाल चहूँ[1] दिसि बासा। यस सुलतान अनूप अवासा ॥ १
नारदमी[2] पुरुख[3] सो आदी। उमर खिताब केर औलादी ॥ २
[तिह] गच कै छाइं चौबारी। बैठहिं मलिक होइ उजियारी ॥ ३
एक मंत्री और पंडित पढ़े। औ खंडाउ तुरंगम चढ़े ॥ ४
कोउ बैठे पढ़हिं[4] पुरानू। कोउ[5] किताब लै करै बखानू ॥ ५
सब **सेवाँ विदनाँ** सिर नावहिं। सातहु जून माथ भुइँ[6] लावहिं ॥ ६
[सु]रस कण्ठ नाद मन मोहा। सब कुँवर तिह बैठक सोहा ॥ ७
१२ख तहाँ कबि मलिक मुहम्मद, मरम न जानी कोय। ८
लिहै सो लाख करोरहिं, जो कोइ गाहक होय ॥ ९

प्रति-पाठ—१. चहू। २. यह निसन्देह मुसलमान शासन के नाम का अपपाठ है; नासदी (नासिरुद्दीन) अथवा तद्प्रभृति नाम रहा होगा। ३. पूरुख। ४. पूरानू। ५. को। ६. भौं।

टिप्पणी—पुरपाल—नगर रक्षक। यस—ऐसा। अवासा—अवास, निवासस्थान। खिताब—उपाधि। केर—का। औलादी—सन्तान। गच—चूना। चौबारी—बारादरी। खंडाव—खड्गधारी। तुरंगम—घोड़ा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१३

[ला]गेउ चहु[1] दिसि घन अमराई। सागर सरवर कुवाँ बनाई॥ १
सघन लागि फुलवारी बारी। भाँति भाँति छाइँ चौबारी॥ २
ठाँवहिं ठाँवहिं हसर ऐती। बहुल मिलों गोमट खेती॥ ३
ते सब तीरथ के अस्थानाँ। जनु बिहिस्त का करों बखानाँ॥ ४
गच कै भुइँ चहूँ[2] दिसि पोती। दीखै जैस चन्द्र कै जोती॥ ५
बरसै नूर होइ उजियारा। हरै पाप सब जाइ दुवारा॥ ६
बैठे रहहि मुजावर सोई। रातहि देवस जियारत होई॥ ७
फूल सीरनी लै लै, जगत जाइ वहि पास। ८
जो इंछा मन इंछै, ततखन पूजै आस॥ ९

प्रति-पाठ—१. चहू। २. चहू।

टिप्पणी—घन–घना। अमराई–आम का बगीचा। अस्थाना–स्थान। बिहिस्त–स्वर्ग। भुई–भूमि। पोती–लिपी हुई। नूर–ज्योति। मुजावर–पुजारी। जियारत–दर्शन। सीरनी–मिठाई। ततखन–तत्क्षण; तत्काल।

१४

सन नौ सै सैतारिस[1] अही। तहिया सरस बचन कबि कही॥ १
कातिक मँह जो परत देवारी। गावहि आहिर कन्ह कै मारी[2]॥ २
१३क तो मैं कहा एहै खँड गावों। कन्ह कथा कर सबहि सुनावों॥ ३
कथा कहों गाँठि संजोगू। पुनि मन भा[वै] जस[3] लोगू॥ ४
बोलत दोख परा जहँ होई। टूँट देखि नहि जो बड़ सोई॥ ५
सो मंत्री बड़ पंडित अपारू। जो निरगुन यक करै सँवारू॥ ६
[.... ....]। [........ ....]॥ ७
आपुहि आप सराहें, जग बड़ो भयो न कोय। ८
जिंहरे पाँच मिलि सराहें, पूरुख सराहा होय॥ ९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. सत्यारिस। २. कहत कै नारी। ३. जन।

टिप्पणी—सैतारिस–सैतालिस (४७)। अही–थी। तहिया – उस दिन। परत–पड़ती है। देवारी–दीवाली। एहै–यही। खण्ड–अंश। कन्ह–कृष्ण। गाँठ–गठन कर। संजोगू–घटनाएँ। दोख-दोष।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१५

जिह् कलंक कछु[१] बिधिनैं दीन्हा । गरब जोरि सोइ बड़ कीन्हा ।।१
चाँद कलंकहि जोति सँवारी । धरती सरग होइ उजियारी ।। २
नहीं दोस सभै वह दीसा । जग जोहारि कै देइ असीसा ।। ३
समुँद खार भा बहु[२] बिस्तारू[३] । अन्त न जानै सब संसारू ।। ४
जाँवत जगत नदी औ नारे । मिले जाइ सब वहै जोहारे ।। ५
भा तिरसूल सुमेरु सो ऊँचा । टेक प्रिथमी सरग पहूँचा ।। ६
सवा लाख परबत ढहि मुये । होइ समूल न सरबर भये ।। ७
१३ख एक नयन कवि मुहम्मद, दरसन लोग भुलाहिं । ८
सरग सूक जस उगवै, सबै नखत छपि जाहिं ।। ९

प्रति-पाठ—१. कछू । २. बहू । ३. निस्तारू ।

टिप्पणी—विधिनैं-ईश्वर । गरब–गर्व, घमण्ड । जोहारि–नमस्कार कर । जाँवत-जितने । नारें–नाले । तिरसूल–त्रिशूल, वज्र । सुमेरु–एक पर्वत । सरबर–बराबरी । सूक–शुक्र तारा । नखत–नक्षत्र । छपि–छिप ।

१६

कथा कहौं सुनहु[१] अब सोई । कहत रसाल सुनत[२] सुख होई ।। १
मथुरा नगर दयीं जो साजा । कंस राज कीन्हो बड़ राजा ।। २
एक छत राज तैस वहि दीन्हाँ । रावन राज लंक जस कीन्हाँ ।। ३
जित जग दानों राकस देवा । सबै गरह मानैं ओकर[३] सेवा ।। ४
सूक आइ मंत्री भा आगें । नारद रहे कान नित लागें ।। ५
सात दीप औ नौ खंड ताईं । फिरी आन सगरी दुनियाईं ।। ६
बासुकि[४] इन्द्र कीन्हि मन संका । काँपा डरहि भिभीखन लंका ।। ७
सुर नर मुनि गुनि गन्धरब, सबै कीन्ह वह साथ । ८
लीन्हें रहें रजायसु, नित उठि नावहिं माथ ।। ९

प्रति-पाठ—१. सुनों (मार्जिन में) । २. सूनत । ३. तोर । ४. बासुखि ।

टिप्पणी—रसाल–सरस । दयीं–ईश्वर । साजा–निर्माण किया । एकछत–एकछत्र । तैस–वैसा । वहि–उसे । जस–जैसा । दानों–दानव । राकस–राक्षस । देवा–देवता । गरह–ग्रह । तुर-तुरन्त; तत्काल । सूक–शुक्र; राक्षसों के गुरु । नारद–ब्रह्मा के पुत्र; एक-दूसरे में कलह कराने में निपुण ऋषि । ताईं–तक । आन–आदेश; आज्ञा । सगरी–सारी । दुनियायी–संसार । बासुकि–नागराज । भिभीखन–विभीषण । रजायसु–राजाज्ञा । माथ–सिर ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१७

राजैं कहा हँकारि दईता। रावन कौन हरी जें सीता॥ १
ओह कर राज एक हुत[1] लंका। हौं राजा सब जगत[2] [निसंका] ॥२
१४क [सोन[3]] कोट गढ़ चहुँ फेरे। औ जराउ नग गढ़ गरेरे॥ ३
[ऐ]स सुनाँ[4] तुम वहि कर राजू। तिह होत मोर दून अस साजू॥ ४
[—]र जिह कँह रसोई तपयी। मारि बिपारों जो कहीं जिययी ॥५
[औ] मसियार होइ निसि जोती। बैसन्दर नित धोये धोती॥ ६
बहुत डपेटा होंहि दुवारा। पवन करे नित बार बुहारा[5]॥ ७
ग्रह[6] इन्द्र बलि बासुकि, ब्रह्मा बिस्नु महेस। ८
सब मिलि आइ जोहारहिं, कोपा कंस नरेस॥ ९

प्रति-पाठ—१. होत (हूत)। २. जग। ३. कंचन पाठ भी सम्भव। ४. सूनाँ। ५. बहोरा। ६. गह।

टिप्पणी—हँकार–पुकार कर। दईता–दैत्य। जें–जिसने। ओहकर–उसका। हुत–था। बिपारों–नष्ट कर दूँ। मसियार–काला। बैसन्दर–वैश्वानर; अग्नि देवता। डपेटा–द्वारपाल। बार–द्वार। बुहारा–झाड़ू लगाना। बलि–पाताल नरेश। जोहारहिं–प्रणाम करते हैं।

१८

[·····न्ह] सोइ भाँत चलाई। लंका कोट समुँद अस खाई॥ १
[बा]रह बानी अवटि कै सोनाँ। साजैं लीन्ह कोट अति लोना॥ २
[चहूँ] कोट गढ़ जैस उठावा[1]। कंचन कूटि कपूर गिलावा॥ ३
[भा] जराउ सब कोट गरेरे। जनहु कचपचीं ऊइँ चहुँ फेरे॥ ४
हीरा रतन पदारथ मोतीं। दीखैं जस दरपन कै जोती॥ ५
चमकहिं रतन सेत रतनारे। जगमगाहिं जस दीपक बारे॥ ६
[··· ···· ···· ···· ····]। [··· ···· ···· ···· ···· ··· ···]॥ ७
१४ख चढ़त माँग सुकवाह अति, पौरि सात खँड सात। ८
बरन बरन सब दीसहि, पौरीं चढ़ि के ऊपर जात॥ ९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. ऊठावा।

टिप्पणी—बारह बानी–शुद्ध सोना। अवटि–घोट कर। लोना–सुन्दर। कंचन–सोना। गिलावा–गारा, दीवार जोड़ने के लिए प्रयुक्त चूना अथवा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मिट्टी। कचपचीं-पूर्व दिशा में दिखाई देनेवाली छोटी तारावली; कृतिका नक्षत्र। पदारथ-रत्न विशेष (जायसी ने इस शब्द का अपनी रचनाओं में बराबर प्रयोग किया है। वासुदेवशरण अग्रवाल ने इस का तात्पर्य हीरा अनुमान किया है; किन्तु जायसी ने सर्वत्र हीरा का स्पष्ट और स्वतन्त्र चर्चा की है। अतः इसका तात्पर्य हीरे से भिन्न किसी अन्य रत्न मूल्यवान पत्थर से होना चाहिए। किसी कोष में उसकी व्याख्या प्राप्त नहीं है। आश्चर्य नहीं पदारथ अपपाठ हो; मूल 'विदारथ' हो और उसका तात्पर्य वैदुर्य (मूँगे) से हो; किन्तु इस अनुमान के प्रति हम आश्वस्त नहीं हैं।)। सेत-श्वेत, सफेद। रतनारे-लाल। बरन बरन-किस्म किस्म के।

१९

पहिल पँवरि रूपै कै साजे। दुहुँ दिसि सिंह उठि जनुँ गाजे॥ १
दूसर पँवरि सँवारीं सोनें। जनु कौंधा लौकहि दुहुँ कोनें॥ २
तीसर पँवरि जो मोतीं रची। जानहु आइ ऊईं कचपची॥ ३
चौथहि पँवरि मणि मानिक जरे। दीखैं जानहु दीपक धरै॥ ४
पाँचैं हीरा पँवरि सवारी। जानों नखत करहि उजियारी॥ ५
[छठें···· ···· ··· ··] । [···· ···· ···· ·· ···· ···· ····]॥ ६
सातें पँवरि पदारथ लागे। भानु अलोप होइ तिंह आगे॥ ७
लाग सरब सोनें कै, सातहुँ पँवरि केवार। ८
पाजी बैठहिं लाख दस, एक एक पँवरि दुवार॥ ९

छठीं पंक्त अनुपलब्ध। इसमें छठें पँवरि उल्लेख रहा होगा।

प्रति-पाठ—१. जनूँ।

टिप्पणी—रूपा चाँदी। दुहुँ दिसि·······-दोनों दिशाओं में गरजते हुए सिंह थे। (द्वार के दोनों ओर सिंह के मूर्तन की परम्परा मध्यकाल में रही है। उसके अवशेष आज भी यत्र-तत्र देखने में आते हैं।)। गाजे-गर्जन करते हुए। कौंधा-बिजली। जर-जड़े हुए। पदारथ-देखिए कड़वक १८ की टिप्पणी। भानु-सूर्य। अलोप-अदृश्य। सरब-सर्व; सभी। केवार-दरवाजे। पाजी-पैदल सैनिक; सिपाही। दुवार-द्वार।

२०

गढ़ तस ऊँच गँगन कह लागा। ऊपर हेरि परै खसि पागा॥ १
जोजन बारह ऊँच देखावै। चढ़े जगत पास नियरावै॥ २
बिखम खाँउ गढ़ चहूँ दिसि कीन्हा। धरती खनि पतार कै दीन्हा॥ ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१५क फों रि पतार पानि तहँ[1] काढ़ा । भयउ समुँद्र पानि तस बाढ़ा ।। ४
मगर मँच्छ सूसै घरियारा । पैरन्हि भीतर कढ़ि उछियारा[2] ।। ५
झाँकत नियरै जाइ न जाई । काँपहि जाँध देखि गहिराई ।। ६
तैस असूख[3] असूझ अपारा । जो र परे सो जाइ पतारा ।। ७
जउन तीर गढ़ साजा, देखि सुहावन ठाँवँ । ८
जग कैलास सराहा, राखा मथुरा नाँवँ ।। ९

प्रति-पाठ—१. पानी तहाँ । २. ओजियारा । ३. अमोख ।

टिप्पणी—तस–इस तरह का । गँगन–गगन; आकाश । हेरि–देखना । परै–पड़ै । खसि–गिर । पागा–पगड़ी । जोजन–दूरी का एक प्राचीन नाप । (सामान्यतः लोग इसे चार अथवा आठ कोस अनुमान करते हैं; पर यह निश्चित नहीं है ।) बिखम–विषम । खाँउ–खाई । खनि–खोद कर । पतार–पाताल । कै–कर । फोर–फोड़ कर । मच्छ–मत्स्य; मछली । सूसैं–एक जल जन्तु; जल हस्ति । घरियार–घरियाल; मगर की एक जाति । पैरन्हि–तैरते हैं । कढ़ि–निकल कर । उछियारा–उछलते हैं । झाँकत–नीचे देखते हुए । नियरै–निकट । जउन–यमुना नदी । मथुरा–हरिवंश पुराण के अनुसार राम के भाई शत्रुघ्न ने जंगल काट कर यमुना-तट पर इस नगर को बसाया था । यहाँ यदुवंशियों का कई पीढ़ियों तक राज्य रहा । कंस इस वंश का अन्तिम शासक था; इस नगर का संस्थापक नहीं । कवि की यह उद्भावना अपौराणिक है । इसके सम्बन्ध की अनुश्रुति यह भी है कि यहाँ मघु नामक राक्षस रहता था जिसके कारण इसको मधुवन और मधुपुरी भी कहते हैं । कुछ विद्वान इस से सहमत नहीं हैं । वे मधुपुर (मधुबन) को मथुरा से भिन्न मानते हैं । उनका कहना है कि वर्तमान मथुरा नगर ही प्राचीन मथुरा नगर है और मधुपुर (मधुवन) उसके दक्षिण-पश्चिम ७-८ किलोमीटर हट कर वहाँ था जहाँ आज महोली ग्राम है । उनका तर्क है कि मथुरा आरम्भ से ही यमुना-तट पर अवस्थित था जब कि महोली यमुना तट से दूर है । वस्तु-स्थिति जो भी हो, प्राचीन संस्कृत साहित्य में मथुरा, मधुवन, मधुपुरी परस्पर पर्याय ही समझे जाते हैं । जायसी ने भी इसी को स्वीकार किया है (देखिये कड़वक २९) ।

२१

राजमंदिर गढ़ि सोनहि बनायउ । जगमग चहु दिसि[1] करै जरायउ ।। १
चौदह खंड धौराहर पाटा । कंचन साजि चित्र सब काटा ।। २
भाँत भाँत लाली ओ[पई] । भाँति भाँति चितरावरि भई ।। ३
ऊपर करस चन्द जस उवा । चढ़तहिं सरग जाइ कर छुवा ।। ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[बहु]त दीप कै रानी भरी। जनु कैलास माँझ अछरी ।। ५
रूप सरूप सुरंग सोहाई। जनु बैकुण्ठ हुतैं सब आई ।। ६
[चन्द्र] देखि तिह होइ मलीनाँ। दरसन सूर जाइ होइ खीनाँ ।। ७
१५ख　और अनेक अखाड़े, जेत कहे संसार। ८
सबै रजै मन्दिर मँह, सबद होइ झंकार। ९

प्रति-पाठ—१. चहू। २. चढ़ी तह।

टिप्पणी—करी-किया। जरायउ-जड़ाऊ। घौराहर धवलगृह; अन्तःपुर; रनिवास। कंचन-सोना। काटा-नक्काशी की। लाली-लाल रंग। ओपई-लगाया। चितरावरि-चित्रावली। करसि-कलश; भवन के सबसे ऊपर का गोल अंश। जस-समान। उवा-उगा। सरग-आकाश। कैलास-स्वर्ग। माँझ-मध्य; में। अछरी-अप्सरा। हुतैं-से। खीना-क्षीण। अखाड़े-संगीतशाला। रजे-विराजमान थे।

२२

मढ़ि बारीं मंडप कीन्ह चहुँ[1] बासा। राइ राँक घर ऊँच अवासा ।। १
सोनें रूपै सबै सँवारी। भाँति भाँति दीसहि [अटारी] ।। २
औ अनूप आगें चौबारीं। खेलहिं बैठि पाँसा सारीं ।। ३
ठाँव ठाँव भरि बैठि अथाई। का बरनों तिह कै उजराई ।। ४
जानु सभा फुलवारी फूली। बैठक देखि जाइ जग भूली ।। ५
जानु बसन्त [—हो][2] हारू। घर घर होंहि मंगलाचारू ।। ६
[.... ....]। .... ।। ७
चन्दन अगर कुमकुमाँ[3], नित जस खेलहि फाग। ८
हरखि अनन्द रहहि नित, जानहिं नहिं बैराग। ९

चौथी पंक्ति मार्जिन में है; अनुमान से यहाँ रखी गयी है। इस कड़वक में एक अन्य पंक्ति की भी कमी है। अभाव का स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. चहूँ। २. यहाँ नुक्तों से विहीन कोई शब्द है, जिसका अनुमान कर पाना संभव नहीं है। ३. कूमकुमाँ।

टिप्पणी—मढ़ि-छोटा मन्दिर। बारी-बगीचा। राइ-राँक-अमीर गरीब। अवासा-आवास, रहने का स्थान; भवन। रूपै-चांदी। चौबारी-चौपाल, बारामदा। पासा-चौपड़। सारी-फैला कर। अथाई-सभ्य जन। अगर-अगुरु; एक प्रकार की सुगन्धि। कुमकुमाँ-केसर। लाख के बने गोले को भी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुमकुमाँ कहते हैं जिसमे रंग अथवा सुगन्धित पदार्थ भर कर होली खेला जाता था; फेंकने पर वह फूट जाता था।

२३

गा दैखै चलि राज दुआरू। बास सुगन्ध[1] होइ महकारू ॥ १
राजसभा सब झार बईठी। जानु बसन्त कियेउ बड़ दीठी ॥ २
औ सब देस देस कै राजा। जिह कर नाँउँ चहूँ खँड बाजा ॥ ३
छत्रपती औ बिखम जुझारा[2]। बाग न मोरँहि चढ़े तुखारा[3] ॥ ४
१६क [—]ख माँझ गहे खँडवाही[4]। दान जूझ संसार सराही ॥ ५
नर नरिन्द सूराँ भुवारा। खरे पौरुख[5] अति बड़वारा ॥ ६
अबला बल पोंहैं बड़यारा। पछिलैं डर होइ रहँहि बिहारा ॥ ७
टारें टरँहि न काउ, अति खर बरवण्ड। ८
मान परों तब बहके, धाई[6] बढ़हि चहु खण्ड। ९

प्रति-पाठ—१ सूगन्ध। २. जूझारा। ३. तोखारा। ४. वाही। ५. पूरुख पाठ भी सम्भव। ६. भाइ।

टिप्पणी—राजदुआरू–राजद्वार, दरबार। दीठी–दृष्टि। चहूँ खण्ड–चारो ओर। बाजा–फैला हुआ। बिखम विषम; भयंकर। जुझारू–लड़ाकू। बाग–घोड़े का लगाम। मोरँहि- मोड़ते हैं। तुखार–मध्य एशिया से आने वाले घोड़े। माँझ–मध्य। गहे–धारण करे। खँड–तलवार। बाही–हाथों में। जूझ–युद्ध। सराही–सराहना की। नरिन्द–नरेन्द्र; राजा। भुवारा–भूपाल; राजा। पौरुख–शक्ति। बड़वारा–बलवान। बरवण्ड–वीर।

२४

[पा]हन गढ़ि के गढ़ी[1] बनायी। धन राजा जिह केर उठायी[2] ॥ १
चहुँ दिसि निसरीं चौदह बाटा। तोंपह लागहि अपूरब हाटा ॥ २
सोन रूप औ मानिक मोती। हीरा रतन पदारथ जोती ॥ ३
बरन बरन सब देखी धरा। जो चाहे सो सब कछू धरा ॥ ४
बीर सिंगार जोग जित कहा। सबै बिकाई जैस कोइ चहा ॥ ५
देखि चरित सब भरम न होई। साध भरे बिसाहि सब कोई ॥ ६
माल भांड नट नाटक नार्चहि। पण्डित बैठि सास्तर बाँचहिं ॥ ७
गीत नाद रस कथा, बहुल होइ बिसराम। ८
१६ख गिरहि[2] लोग भयउ सुखीं, दिन देहि भल दाम। ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. नरही । २. ऊठाई ३. चहू । पाठ सन्दिग्ध; माइक्रोफिल्म अस्पष्ट ।

टिप्पणी—पाहन–पत्थर । गढ़ी–दुर्ग । निसरीं–निकलीं । बाटा-मार्ग; रास्ता । तोपह–तिस पर । हाटा-बाजार । भरम–आश्चर्य । साध भरे–इच्छा लिए हुए । बिसाहि–खरीदते हैं । माल-मल्ल, पहलवान । भाँड़–नकल करने वाले, विदूषक । सास्तर–शास्त्र; धर्म-ग्रन्थ ।

२५

सागर सरवर अति औगाहा । ताल अनूप सराहों [काहा] ।। १
भरे हिलोरहिं उलथैं नीरू । देखा जानु समुन्द कै [तीरू] ।। २
गढ़ि रावटि सब घाट बनाये । फटिक सिला कह लाग [....ये] ।। ३
पुरइन पूर रही बहु छाई । फूले कँवल रहे बिग[साई] ।। ४
पैरहिं हंस चकवा बड़वारे । फिरे करँजवा सोन [कजरारे] ।। ५
पानि भरन पनिहारीं आवँहि । कनक कलस सिर बाँह डो[लावँहि] ।। ६
कुवाँ बावरीं अगिनत भराईं । जगत[1] चलहि रहट कै घिर[नाई] ।। ७
आस पास मढ़ि मंडप,[2] भाँति भाँति चहु फेर । ८
पूजा पाती चहू दिसि, होइ देवतहि केर ।। ९

प्रति-पाठ—१. जगथ । २. मण्डफ ।

टिप्पणी—औगाहा-अथाह । गढ़ि–गढ़ कर । रावटि–काला पत्थर; कसौटी पत्थर । फटिक–स्फटिक । सिला–शिला । पुरइन–कुमुदनी । कँमल–कमल । करँजवा करंज; पक्षी विशेष । सोन–सुनहले । कजरारे–काले । कनक-सोना । बावरीं–बावड़ी । जगत-कुँए का चबूतरा । रहट–पानी निकालने का यन्त्र । घिरनाई–चरखी । मढ़ि–मन्दिर । केर–का ।

२६

चहुँ दिसि लांगि सघन फुलवारी । औ अनूप सब हेरत [बारी] ।।१
कुवँहि खाँड चारिहु दिसि मेली । तिह सीची अँबरित रस[बेली] ।।२
औ नौलखा अँवराउँ[1] सुहावा । फरे खजहजा[2] गिनत न [रहावा] ।।३
१७क [दिन]हि रात होइ तिह माँहाँ । लागे जाड़ पैठत तिह माहाँ ।।४
[को]स बीस लौ छाहीं जाई । तहवाँ[3] धूप नहिं देइ दिखाई ।।५
[आ]स पास घन तार खजूरी । माँझ जमाये सजीवन मूरी ।।६
ठाँव ठाँव बहु[4] खँड खाई । तिह ऊपर मढ़ि मंडप छाई ।।७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बैठि तपा तप साधे, औ जोगी बहु जोग। ८
लागि समाधि रहे नित, करहि जात्रा लोग ।। ९

प्रति-पाठ—१. अँबरायेउँ। २. कझकझा। ३. तहों। ४. बहू।

टिप्पणी—हेरत—देखते हैं। खांड—शक्कर। मेली—मिलाया। नौलखा—नौ लाख वाला। अँबराँउ—आम का बगीचा। खजहजा—खाने योग्य उत्तम फल। माँहा—में। छाहीं—छाया; साया। तहवाँ—वहाँ। जात्रा—यात्रा; विशेष उत्सव पर होने वाला मेला (यह प्रयोग अत्यन्त प्राचीन है। देवी आदि के मेले को अब भी जात कहते हैं।)

२७

[तिह] में फरे खजहजा[1] टाके। सघन अंब अँब्रित रस पाके ।। १
फरे जाम्बु[2] दीखे अति कारे। औ अंजीर फरे रतनारे ।। २
फरे जो नारंगि दारिउँ दाखा। जनम न बिसरै जैं रस चाखा ।। ३
[नी]बूँ तूत सदाफर फरे। संखदराउ गलगल रस भरे ।। ४
कटहर बड़हर औ बहु खीरीं। केला करना [तु]रंज जभीरी ।। ५
नरियर गुवा[3] सुपारी न्यौंजी। हरपारेउरी बेर चिरौंजी ।। ६
महुव[4] मिठास बरनि नहि जाई। चुवत घनीं भुइँ लागे जाई ।। ७
१७ख सबहि पंखि बैठि तिह, अपने अपने ठाँवँ। ८
अपने अपने भाखा, लेंहि दयी कर नाँवँ ।। ९

प्रति-पाठ—१. खजखजा। २. जाँव। ३. खोवा। ४. बहू।

टिप्पणी—फरे—फले। अंब—आम। जाम्बु—जामुन। कारे—काले। रतनारे—लाल। नारंगि—नारंगी। दारिउँ—दाड़िम; अनार। जैं—जिन्होंने। तूत—शहतूत। सदाफर—(आइने-अकबरी के अनुसार) शरीफा। संखदराउ—(वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार) अमलबेत (एक प्रकार का खट्टाफल), शंखद्राव; (हमारी अपनी धारणा) सन्तरा; नारंगी की एक जाति (मूलतः पुर्तगाली शब्द संगतरा) (रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार जायसी ने पदमावत (५२५।३) में फिरंगी शब्द का प्रयोग पुर्तगालियों के लिए किया है। इसका अर्थ यह है कि उस समय तक पुर्तगाली इस देश में आ चुके थे। उनके साथ सन्तरा इस देश में आया होगा)। गलगल—खट्टा नीबू; त्रिजौरा। कटहर—कटहल। बड़हर—बड़हल। खीरीं—खिरनी। करना—वसन्त में खिलने वाला पुष्प (यहाँ सम्भवतः किसी फल से तात्पर्य है)। तुरंज—एक प्रकार का नीबू। जभीरी—खट्टे नीबू का एक प्रकार। नरियर—नारियल। गुना—सुपारी का एक किस्म। न्योंजी—बेर की जाति का फल।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हरपारेउरी–कमरख की जाति का खटमिट्ठा फल जिसे संस्कृत में लवली कहते हैं। महुव–महुवा, मधूक। ठाँव–स्थान। चुवत–टपकते ही।

२८

पल्ली पार जउन के तीरा। तहवाँ गोकुल बसे अहीरा॥ १
वारँहि पार नगर तस बाढ़ा। जग कौतुक देखै होइ ठाढ़ा॥ २
बाढ़ा नन्द महर महराई। सात कोस लौं सुरभिह गायी॥ ३
बोस सहस घर कै थनवारा। तीस सहस अउरो[1] गोवरारा॥ ४
कपिला गऊ झारि सब फाँसी। अहिर चरावँहि बाजहि बाँसी॥ ५
भल सुर वह गायें औ बिहसैं। वरनि न जाई ऊपम[2] तैसे॥ ६
दहिउ दूध का बरनों सोई। गागर सहस बीस घिउ होई॥ ७
रात माँत नित आछहि, बाढ़े सकल[3] गोवार। ८
जुरै अथाई सबकै नित, आवहिं महर दुवार॥ ९

प्रति-पाठ – १. अउर। २. आपम। ३. विकल।

टिप्पणी—पल्लीपार–उस पार; नदी के दूसरे किनारे। जउन–जमुना, यमुना। तहवाँ–वहाँ। गोकुल-वर्तमान मथुरा नगर से पूर्व-दक्षिण, लगभग सात-आठ किलोमीटर की दूरी पर स्थित एक गाँव (वल्लभाचार्य के समय में इसे धार्मिक महत्ता प्राप्त हुई और यह वल्लभ-सम्प्रदाय का केंद्र बना। प्राचीन संस्कृत साहित्य में गोकुल को ही महावन कहा गया है)। वारँहि पार–आर-पार। ठाढ़ा–खड़ा होकर। महर–सरदार। महराई–प्रभुत्व। सुरभिह–एक ऊँची नस्ल की गाय। गायी–गाय। थनवारा–गायों के रहने का स्थान। गोवरारा–गोशाला। कपिला गऊ–श्वेत रंग की गाय; कामधेनु। फाँसी-फाँस कर रक्खा। बाँसी–बंशी; बाँसुरी। ऊपम-उत्तम। दहिउ–दही। वरनों–वर्णन करूँ। गागर–घड़ा। घिउ–घी। अथाई–नागरिक; सभ्य-जन।

२९

दधि बेचै जो लेंहि गुवारीं। रुपवन्ती सब जोबन बारीं॥ १
गोकुल हुत मधुपुर कह आवइ। जनु अछरीं कैलास सिधावइ[1]॥ २
१८क हिरनिह केर झुण्ड[2] अस सोहै। जो देखै सो रूप बिमोहै॥ ३
जासों दिस्टि करहिं सब जैसें। देखत हिरनिह मिरिग को तैसें॥ ४
उठहि चमकार जो अभरन पहिरीं। जनु मैमंत हस्ति पाखरीं॥ ५
हंस चाल सब चलहिं सयानीं। बोलि उठहिं कोकिल कैं बानीं॥ ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केउ रे झुण्ड[2] आगें केउ पाछें। सब पातुर अस आवँहि काछें॥ ७
[मुहमद] जस बसन्त रितु, देखै साँहुत फूल॥ ८
देखि चरित गोपिह कर, कबित रहे सब भूल॥ ९

प्रति-पाठ—१. सिधारइ। २. झूण्ड।

टिप्पणी—गुवारीं–ग्वालिन। रुपवन्ती–रूपवती। जोबन–यौवन। बारीं–बालाएँ; नवयौवना। हुत–से। मधुपुर–मथुरा (देखिये कड़वक २० के सन्दर्भ में उल्लिखित टिप्पणी)। अछरी–अप्सराएँ। सिधावें–जा रही हों। केर–का। चमकार–चमक। मैमँत–मदमत्त। हस्ति–हाथी। पाखरें–झूल। सयानी–चतुर। बानी–वाणी। केउ–कोई। पाछे–पीछे। पातुर–नर्तकी। काछे–सजी हुई।

३०

एक दिवस निसि भा आई। राजैं चहै करै कटकाई॥ १
फिरी दुहाई जहाँ लग राजू। गुदर लेहि भुवँ देखौं साजू॥ २
ठाँवँहि ठाँवँहि दइत सब साजे। फेकरे हस्ति मेघ जनु गाजे॥ ३
हय-गय[1] चाँप पुहुमि सब डोली। परलो भयेउ सिस्टि सब डोली॥४
सबै छत्रपति लागि जोहाई। छत्र[हिं] छत्र सरग गा छाई॥ ५
चले जो रथ धसमसे पहारा। लागत चक्र जाँहि होइ छारा॥ ६
[.... ... .]। [.... ....]॥ ७
१८ख डरेउ इन्द्र बलि बासुकि[2] किह सिर खाइहि घाउ। ८
काकह बोल रिसायेउँ, सप्त दीप कर राउ॥ ९

सातवीं पंक्ति का अभाव।

प्रति-पाठ—१. हय-मय। २. बासुखि।

टिप्पणी—कटकाई–दलबल के साथ चलने की तैयारी; सैनिक-यात्रा। गुदर–सेना। दइत–दैत्य। फेकरे–चिलाए, चिघाड़े। गाजे–गर्जन किया। जनु–मानों। हय-गय–(हय-गय स्यंदन साजहु जाई—रामचरित मानस, बालकाण्ड, २९८) घोड़ा-हाथी। चाँप–दबाव। पुहुमि–पृथिवी। परलो–प्रलय। सिस्टि–सृष्टि। जोहाई–पुकार; खोज। धसमसे–धँस गये। चक्र–पहिया। छार–चकनाचूर। घाउ–घाव, चोट। रिसानेउ–क्रुद्ध हुआ।

३१

चढ़ा नरेस कंस बरवण्डा। नरै सुखान अठार[हो गण्डा][1]॥ १
सूक सनीचर अगुवा भये। सुनत परान लंक [पहँ गये]॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काकँह सेती राकस देवा। चलहिं डाँड लै माँगै[2] [सेवा]॥ ३
उठी खेह जग बदली कारी। जनु भादों निसि भई अँधियारी॥ ४
को जिह न सूझे तिहो असूझा। कैं अँकोप राजा सों जूझा॥ ५
सप्त दीप नौ खंड कै राया। आइ कीन्हि मेल नंगे पाया॥ ६
खरभर पड़ा सकल दुनियाई। बहुरे मया कर मीर गुसाई॥ ७
राजैं गरभ कीन्ह जियें, देखि कटक[3] दर साजा। ८
भुइँ सकल नँहि राजा, मोरें सतुरहिँ[4] राज॥ ९

प्रतिपाठ—१. 'खण्डा' भी हो सकता है। २. मानै। ३. कनक। ४. सतुहर।

टिप्पणी—सखान—शंकित हुए। सूक—शुक्र। सनीचर—शनिश्चर। अगुवा—आगे चलने वाला, नेता। परान—भाग गये। लंक—लंका। काकँह—किसके। सेती—के लिए। राकस—राक्षस। देवा—देवता। डाँड—कर। खेह—धूल। कारी—काली। जनु—मानों। राया—राजा। खरभर—खलबली। बहुरे—लौटे। मया कर—ममता दिखा कर। मीर—श्रेष्ठ। गुसाँई—स्वामी। गरभ—गर्व।

३२

त्रिभुवन लोक सिस्टि सब जुरे। लाग फिरे सब राकस [पूरे]॥ १
ब्रह्मा महादेव सुन धाये। तैंतीस[1] कोटि देवता आये॥ २
१९क सेसनाग बलि बासुकि चले। अष्टकुली नाग कलबले॥ ३
निनानवे जाख सब आये। औ छानवे मेघ जित छाये॥ ४
छप्पन कोटि बैसन्दर बरा। सवा लाख परबत भरहरा॥ ५
डोला मेरु गँगन मह खम्भू। सात समुंद भा महारम्भू॥ ६
[.... ....]। [.. ....]॥ ७
ग्रह[2] नखत ससि[3] सूरज, राहु केतु भा एक। ८
सुनि इन्द्रासन डोला, देव करे अब टेक॥ ९

एक पंक्त अनुपलब्ध; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. तीस। २. गरेह। ३. सेस।

टिप्पणी—जुरे—एकत्र हुए। धाये—दौड़े। कलबले—घबरा गये। जाख—यक्ष। बैसन्दर—अग्नि। भरहरा—गिर पड़े। डोला—हिला।

३३

सबै साथ मति मंत्री[1] टेकी। राजा सूक हँकारा बेगो॥ १
भा अइस मैं सब जग नावा। पै जम खोज न कितहूँ पावा॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सिस्टि आइ जुरा सब केऊ। तुम्ह प्रताप क करहि बरखेऊ।। ३
सतुरै नाँव जिह क सुन पावों। तिहें बेग धरि सरग चलावों।। ४
एत कटक है मोरे साथाँ। अहै मीचु धौं किहके हाथाँ।। ५
रावन टेक दीप दस आधी। पाटीं लाइ मीचु तैं बाँधीं।। ६
[हौं] अब सप्त दीप कर राजा। मोहि अस गरब न काहे छाजा।। ७
१९ख करहु खोज वह ताकर[3], कहाँ रहे सो मीच। ८
ततखन बेगि मगावों, अन्त मुवै यह नीच।। ९

प्रति-पाठ—१. मेरी। २. नावा। ३. भगायऊँ।

टिप्पणी—हँकारा—बुलाया। बेगी—शीघ्र। जम—यम; मृत्यु। कितहू—कहीं भी। जुरा—एकत्र। बरखेऊ—विरोध। सतुरै—शत्रु का। नाँव—नाम। धरि—पकड़। कटक—सेना। मीचु—मृत्यु। किहके—किसके। दस आधी—पाँच।

३४

सूक कहा सुनु जम कर नाँऊँ। राजा काउँ न हहि तिह ठाँऊँ।। १
देखहु मीचु चढ़ी है काँधे। पै कछु[1] होइ न तेकरें[2] बाँधे।। २
रावन मीचु बाँधि तप[3] भूँजा। सो न रहा काल जव पूजा।। ३
जैं मारा रामाँ औतारा। सो आँवथ[4] खों करे तुम्हारा।। ४
है गोहन नारद जमदूतू। किंकार ब्रह्मा कर पूतू।। ५
मोरैं कहत [जो] ना पतियाहू। तो हँकारि के पूछहु ताहू।। ६
ओकँह पुनि पोथा है सब लिखा। वैं यह भेद अन्त सब सिखा।। ७
पहले हुत महेस संग, [अब] तुम्ह भयो संघात। ८
वहि हँकारि कै पूछहु, आगिल पाछिल बात।। ९

प्रति-पाठ—१. कछू। २. तकरें। ३. तवत। ४. अवन्ध।

टिप्पणी—काउँ—कहीं भी। ठाउँ—स्थान। तेकरे—उसके। भूँजा—भोग। पूजा—पूरा हुआ। किंकार—किंगरी वाला। खो—विनाश। पतियाहू—विश्वास करो। हँकारि—बुला कर। ओकँह—उसका। संघात—साथ। आगिल-पाछिल—आगे-पीछे की।

३५

राजैं नारद बेगि हँकारा। पान दीन्ह आगें बैसारा।। १
तू मोरैं पण्डित सहदेऊ। मैं तोहि छाड़ि न बूझत केऊ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२०क कहु मोसों बातें जोतिखी। ककरें हाथ मीचु है लिखी॥ ३
सो है कहाँ सत्रु बरियारा। मारों खोजि जो सरग पतारा॥ ४
[अ]बहिं ताकर सुनि पावों नाऊँ। कटक सहित छेकों[1] सो ठाऊँ॥ ५
[इ]न्द्र होइ इन्द्रासन टारों। बासुकि होइ पतारहिं फारों॥ ६
मृत लोक अस आह न कोई। जाकह चढ़ों जाइ बर सोई॥ ७
और परै अस कोई, मोसों करै विरोध। ७
कहु सो बेगि मोहि नारद, तारों तिह क[2] नरमोध॥ ९

प्रति-पाठ—१. छेको। २. जिह क।

टिप्पणी—दीन्ह–दिया। वैसार–बैठाया। सहदेव–पाण्डवों में से एक जो अपनी विद्वत्ता के लिए प्रख्यात थे। बूझत–जानने की चेष्टा। केऊ–किसी से। जोतिखी–ज्योतिष की; भविष्य की बात। बरियारा–बलवान। सरग-पतारा–आकाश-पाताल। छेकों–घेरूँ। ठाऊँ–स्थान। फारों–फाड़ डालूँ। आह–है। बर–जल।

३६

[ना]रद आइ चही अपकारा। जिह रे कंस रहि परैं खभारा[1]॥ १
[तिं]ह चिन्ता उरझा मरई। जिह काहू कै चिन्त न करई॥ २
[त]वहि हरख सेंउ पोथा[2] काढ़ा। कहसि सोइ जिह बिसमो बाढ़ा[3]॥ ३
राजा कहों साँच सुन सोई। दई लिखा [सतुर] तुम कोई॥ ४
बिस्नुहिं महर [घर] अवतरी। सो तोहि मार राज पुनि करी॥ ५
[ब]हिन तोर देवकी अही। तिहकैं कोख अवतरा चही॥ ६
२०ख जिह क पिता बसुदेव रिखी। तिह कैं हाथ मीचु तोर लिखी॥ ७
बिसहर केर करँहु खो, हौ कीन्हाँ अवतार। ८
सत्रु तो तोरहिं[4] घर, का खोजसि गा संसार[5]॥ ९

प्रति-पाठ— १. खारा। २. पोमा। ३. ताढ़ा। ४. तोरही। ५. शहार।

टिप्पणी—अपकारा–अहित। खभारा–परेशानी। उरझा–उलझा। मरई–मरे। बिसमो–विस्मय, आश्चर्य। साँच–सत्य। अही–है। कोख–कुक्षि, गर्भ। खो–विनाश। तोर–तुम्हारा।

३७

प्रथम जो भा मानुस कैं भेसू। सिरजा ब्रह्मा[1] बिस्नु महेसू॥ १
ब्रह्मा उरझा बेद पुराना। महादेव मायाँ लिपटाना॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विस्नु एक देव मन चीन्हा। सूर होइ सेवा जब दीन्हा ।। ३
सहस बरस लहि आपुहि टाँगेसि। दस अवतार दयी सो माँगसि ।। ४
दइह लाइ जो जिउ[2] परछेवा[3]। अस कृपाल न मेटै सेवा ।। ५
भा दयालु सो सेवा कीन्हें। औ औतार दसो वहि दीन्हें ।। ६
जो तिहु दीप बुरी कहुँ होई। मारे कँह अवतारी सोई।। ७
अबहि बार अवतारा होई, होई का[ल] तिहार।। ८
अब नवहें अवतरि के, पुनि खेउ करिह तुम्हार ।। ९

प्रति-पाठ—१. ब्रह्म। २. झिउ। ३. इस शब्द समूह का प्रयोग जायसी ने पदमावत में दो स्थलों पर किया है। वहाँ रामचन्द्र शुक्ल ने इसे दो शब्दों के रूप में ग्रहण किया है-(१) जो अस कोइ जीउ पर छेवा (२८८।६); (२) तुम्ह कारण मैं जिउ पर छेवा (२२३।४)। वासुदेवशरण अग्रवाल और माताप्रसाद गुप्त ने भी उन्हीं के रूप को ग्रहण किया है। किन्तु हमें यह एक शब्द जान पड़ता है। मूल पाठ 'जिउ परछेवा (बरछेवा)' ही होगा।

टिप्पणी—मानुस–मनुष्य। भेसू–वेश। सिरजा–उत्पन्न किया। उरझा–उलझा। सूर–सूर्य (विष्णु को सूर्य का रूप कहा जाता है)। सहस–सहस्र; हजार। टाँगेसि–लटकाया। दयी–ईश्वर। दइह–दयी, ईश्वर। लाइ–के लिए। जिउ परछेवा (जिउ बरछेवा)–जान दिया; प्राण निछावर किया। तिहु दीप–तीनों द्वीप, त्रैलोक्य। बुरी–अनाचार। तिहार–तुम्हारा। नवहें–नवीं बार। खेह–विनाश।

३८

विस्नु होइ समुन्द जिन मथा। दस अवतार कहों सुनु कथा ।। १
२१क [प्र]थम भयो मंछ औतारा। काढ़सि[1] वेद जो अहै नियारा।। २
पुनि होइ कच्छ रूप जल छेंकीं। सबै भार धरती कर टेकीं।। ३
लौटि बराह रूप वै कियो। नवहि खण्ड कर अँब्रित पियो ।। ४
पुनि भा बावन रूपी करा। सत्त करत बलि राजा छरा ।। ५
पुनि नरसिंघ भयो बरियारा। हरिनाकुस कर पेट जै फारा ।। ६
पुनि भा परसुराम धनुकारा। मारा सहस्रबाहु नपारा ।। ७
पुनि भा सिरी राम, सो कीन्हेसि लंका दाह। ८
अब आवत है तुम कँह, राजा मन पतियाह ।। ९

प्रति-पाठ—१. काढ़यास।

टिप्पणी—नियारा–न्यारा, अनोखा। सत्त–सत्य। छरा–छला। नरसिंघ–नरसिंह। बरियारा–बलवान। हरिनाकुस–हिरण्यकश्यप; एक दैत्य; प्रह्लाद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का पिता। फारा फाड़ा। धनुकारा–धनुर्धारी। निपारा–विनाश किया। पतियाह–विश्वास करो।

३९

[क]हु नारद सत पूछों तोही। सुनत अचम्भो[1] लागे मोही ।। १
एक बार जो अवतरि मरे। सो दूसरैं कैसे अवतरै ।। २
पिण्ड जैस माटो कर भाँडा। कैस जुरै[2] जो भा दस खाँडा ।। ३
जो पै फेर तिरोहित तोरा। मिलै न मिलै जुरैं न जोरा ।। ४
[कै]से टूट होहि एक ठाऊँ। औ जी उठै कहाँ सो नाऊँ ।। ५
२१ख मैं देखत सब जनम गँवावा। जो यहि[3] सो गा फेरि न आवा ।। ६
तन सब सरि जरि जाइ बिलाई। पुनि सो पवन लवटि मिल जाई।।७
यहि रे पिंड अपिंड प्रिथमी, एक सेउ एकहि जाह। ८
पुनि कैसे मन मानै, कहै के सोई आह ।। ९

प्रति-पाठ—१. अजहो। २. जोरे। ३. मोसो।

टिप्पणी—सत–सत्य। पिण्ड–शरीर। माटी–मिट्टी। भाँडा–भाण्ड, बर्तन। जुरै-जुड़ै। खाँडा–खण्ड, टुकड़ा। फेर–फिर। तिरोहित–लुप्त। यहि सो–यहाँ से। गा–गया। तन-शरीर। सरि–सड़। जरि-जल। बिलाई–लुप्त। लवटि–लौट कर।

४०

सुनु राजा तो अति बड़ जानूँ। हया हियें न[2] होइ गियानू ।। १
जो कर बार सबही चहू[1] दीसै। का करिहैं औ का न करीसै ।। २
सूरज आवइ अथि[3] कै जाई। लौटि आइ सो कैसे जाई ।। ३
पूनों चाँद दुइज घटि होई। लौटि सपूरन देखी सोई ।। ४
बरखा मेघ जो बरख बिलाहीं। लौटि कहाँ हुत आवँहि जाहीं ।। ५
जो अस करे ईह बहोरा। तिह रे करत नाहीं किछु थोरा ।। ६
मुवहि जियावहि जियहि मारे। चहै तो सहस बार अवतारे ।। ७
वह कै हिरदैं बातैं, कहँ लग करे बखान। ८
जेत करै सब छाजै, करत न बरजे आन ।। ९

प्रति-पाठ—१. चहू। २. भौ। ३. 'उठि' पाठ भी सम्भव।

टिप्पणी—गियानू–ज्ञान। पूनों–पूर्णिमा। दुइज–द्वितीया। सपूरन–सम्पूर्ण। बरसा–वर्षा। बरखि–बरस कर। बिलाहीं–लुप्त होते हैं। थोरा–थोड़ा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुवहि–मरे हुए को। जियहि–जीवित को। जेत–जितना। छाजे–शोभा देता है। बरजे–मना करता है। आन–दूसरे को।

४१

२२क सुनि बैरी राजहि रिस आवही। चहसि[1] मारों देवकी करमुही[2] ।। १
पुनि गियान भा और मति फिरी। महापाप मारैं इस्तिरी ।। २
कस न बाँध लावउँ[3] रखवारा। मारों सोइ होई[4] जो बारा ।। ३
रहे न राजा काहु क टेका। जाइ मँदिल देवइ कर छेका ।। ४
कहा खंगी चहु दिसि गहा। पौन सँचार न कितहू रहा ।। ५
चौदह सै भल दइत बुलाये। लै चहु दिसि रखवारे लाये ।। ६
बाँधे देवइ औ बसुदेऊ। दंडनाँ मेली चोर[7] ज हो[ऊ] ।। ७
राखे रहहिं देवकी, जबही[5] बालक होइ[6] । ८
आन बज्र के पाटाँ, बेग पछारे सोइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. चब्रसि। २. करमुकी। ३. लायउँ। ४. न होइ। ५. जबही। ६. न होइ। ७. जवइ।

टिप्पणी—रिस–क्रोध। चाहसि चाहा। करमुही–काले मुखवाली (अपशब्द के रूप में प्रयुक्त)। गियान–ज्ञान। मति फिरी–विचार बदला। इस्तिरी–स्त्री। रखवारा–पहरेदार। बारा–बालक। काहु क–किसी का। टेका–हठ। मँदिल–मंदिर, निवास-स्थान। देवई–देवकी। छेका–घेर लिया। खंगी–खड्गधारी। पौन–पवन। सँचार–प्रवेश। दइत–दैत्य। दण्डनाँ–बेड़ी। मेली–डाला। ज–जैसे, मानो।

४२

[कं]स जो गरब कीन्ह मन झूँठा। उपनी रिस परमेसर रूठा ।। १
दई बेगि बिस्नु उपराजा। भा आयसु मथुराँ भौ राजा ।। २
बिस्नु सिर नाउ असमाया। बिनती कीन्हि देखि अस दाया ।। ३
तोरें हाथ जीवन[1] औ मरनाँ। करहु गुसाँई जो कछु करनाँ ।। ४
२२ख दुख पायों रामा अवतारा। अब नहि अवतरों यहि संसारा ।। ५
जरम मोर सब बिपत[2] मँह बीता। एक इस्तिरी जानों सीता ।। ६
सो पुनि हर रावन लै गयऊ। बहु सँताप प्रिथमीं जन भयऊ ।। ७
तौ हुत जगत करो का, लीन्हि न भावइ नावँ। ८
जहाँ मरन दुख बिरहें, लौटि तहाँ का जावँ ।। ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. झौन, झवन । २. बितत ।

टिप्पणी—गरब-गर्व । कीन्ह—किया । उपजी—उत्पन्न हुआ । रिस—क्रोध । दई—ईश्वर । उपराजा—उत्पन्न किया । आयसु—आदेश । दाया—दया । गुसाँई—स्वामी । जरम—जन्म । सँताप—दुःख । जन-जन्म लेकर ।

४३

भा अइस[1] मैं कीन्ह जो चाहा । चरित मोर तोहि दोस न आवा ॥ १
जानों सै मैं कीन्ह जो चाहा । चरित मोर तोहि दोस न लावा ॥ २
जस वहि जरम गही तप साजू । तस इँह जरम देउँ सुख राजू ॥ ३
कौकुत देखहि सभ कैलासाँ । अछरिन मुख जो देहि झाँसाँ ॥ ४
सोलह सहस गोपिता साजीं । ते सब मैं तो कँह उपराजीं ॥ ५
गेह करों पै तोहि सब जोगू । औतरि जगत मानु रस भोगू ॥ ६
बैरी केर करसि जनि चिन्ता । जो तैं चहब सो होंहि तुरन्ता ॥ ७
देखि सरूप इस्तिरी, पुनि माया लपटान । ८
२३क पाछिल दुख सो बिसरिगा, जग अवतरा आन ॥ ९

द्वितीय पंक्ति पहली पंक्ति की पुनरुक्ति मात्र है । इस प्रकार दूसरी पंक्ति का अभाव है । ऐसा लगता है कि प्रतिलिपिकार पहली पंक्ति का उत्तरार्ध और दूसरी पंक्ति का पूर्वार्ध छोड़ गया है ।

प्रति-पाठ—१. आयस । २. झयाँसा ।

टिप्पणी—भा—हुआ । अइस—ऐसा । कौकुत—कौतुक (बोलचाल में वर्ण-विपर्यय) । झाँसा धोखा । गोपिता—गोपियाँ, गोप बालाएँ । साजी—सजाया । ते—उन्हें । उपराजी—उत्पन्न किया । जनि—मत । तैं—तुम । चहब—चाहोगे । पाछिल—पिछला । बिसरिगा—भूल गया । आन—आकर ।

४४

[आ]ठ पूत देवकी के मारे । रहा [दु]ख जो तिरी न पारे ॥ १
[सँ]वर सोक पूतहिं कर मरे । सरीर क गिनत भै जरै ॥ २
अन्त न होई रोइ न पारे । सुनै कंस तवही जिय मारे ॥ ३
भा उदभान माँस नौ टरी । कोहसि अठौ मारत सरी ॥ ४
तैं पापिन भूजा का बोवा । जाकर हिय दूध कै पोवा ॥ ५
बालक आये से सेव चढ़े । काकह दयी सँवारे गढ़े ॥ ६
सही न जाय कठिन सो पीरा । आँवसँ होइ[1] जउनाँ कै तीरा ॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आपुहि पूत नही छली, सो कस होइ निरबंस ।। ८
दई इह[2] जो तू देइ[3], सो पुनि मारत कँस ।। ९

प्रति-पाठ—१. न होइ । २. दिन । ३. अठौ ।

टिप्पणी—तिरी—स्त्री । पारे—सहन । सँवर—स्मरण कर । उदभान—गर्भ । पोवा—अत्यन्त कोमल । काकह—किसको । पीरा—पीड़ा । इहौ—यह भी । आवसि—आयी ।

४५

जासोदर महरि महराईं । पल्ली पार आइ सो पाई ।।१
रोवत रोज सुवन वहि परा । उठा मोह औ हिय घबरा ।।२
[रो]हहिं केउ[1] मन कहा जसोंई । वइ पार बिनवइ केउ रोई ।।३
२३ख महरिह मोह मया सभ[2] होई । पैरि आइ दुख पूछी सोई[3] ।।४
कस तिरिया रोवसि हिये बिहाई । किह दुख रोवत रहसि लझाई ।।५
कै तोहि आन परा कछु सोकू । कै तिह लै गेरि परतोंकू ।।६
कै तूँ कारन कहु जरसि । किह कारन अस रोदन करसि ।।७
आह तिवइ जनि रोवसि, झिव चाहिय [अ]पघात ।। ८
हिया मोर चर्रानेउ, कहु आपुन दुख बात ।। ९

प्रति-पाठ—१ न केउ । २. सह । ३. कोई ।

टिप्पणी—जासोदर—यशोदा; नन्द की पत्नी । महरि—रानी । महराइ—महारानी । पल्ली पार—उस पार । रोज—क्रन्दन (तँह नहिं हँसी न रोज, मुहम्मद ऐसे ठाँव वह—अखरावट २३) । सुवन—श्रवण; कान । वहि—उसके । जसोई—यशोदा । तिरिया—त्रिया; स्त्री । हिये—हृदय । बिहाई—त्याग कर । आन परा—आ पड़ा । गेरि—गिराया । परतोंकू—अपवाद; लांछन । जरसि—जल रही हो । तिवइ—स्त्री; नारी । अपघात—आत्मघात; आत्म-हत्या । हिया—हृदय । चर्रानेउ—फट गया ।

४६

काह कहों तहूँ न दुख देखा । आपु बची सो धन करम की [रेखा] ।।१
कंस मुहि लाये दूता । मारे सबै [ज]नी जित पूता ।।२
आठ पूत जरमी मैं पापिन । आठहु खाये कारीं सापिन ।।३
ना जानौं कैं कोसा रहा । आठों पूत निपूती कहा ।।४
उठै हनै बज्र कै पाटा । अस भइ बुद्धि[2] देखि हिय फाटा ।।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब नौवें उदभान जो रहा। सो दुख सँवर जाइ न कहा ॥६
तिह रे आगि भुनि[3] जउनाँ आई। बूड़ि[4] मरों सब दुख नसाई[5] ॥७
२४क यह सताप जग[6] परिहस, परत हतों[7] जल माँह ॥ ८
केउ नाहीं मोर खेवक, जो धरि काढ़े बाँह ॥ ९

प्रति-पाठ—१. नही। २. बूभि। ३. भूनि। ४. तोद। ५. नहि जाई। ६. जस। ७. पठौं।

टिप्पणी—कारी—काली। सँवर—स्मरण। परिहस—उपहास; जग हँसाई। परत हतो—डूब रही थी। खेवक—खेने वाला। काढ़े—निकाले। बाँह—हाथ।

४७

इहो बार लै मारिहि कंसू। बसदेउ केरँ होंहि[1] निरबंसू ॥ १
को अस जासो करों पुकारा। को उठि[2] काढ़े मझधारा ॥ २
को रख्या कर बालक केरी[3]। ताकरँ हौं[4] मानहु यह[5] चेरी ॥ ३
को र मया[6] कै करै सँभारा। को परबेदन पूछन हारा[7] ॥ ४
को अस[8] देइ सहारा पावों। किह आगें दुख रोइ सुनावों ॥ ५
को अस मया मरोही आवइ। साँकर काटि बन्दि मुकरावइ ॥ ६
[..... ....]। [... ....] ॥७
को मरमीं और धरमीं, को मेटे इँह पीर। ८
बूड़त कालिन्द्रीं, बेगि लगावइ तीर ॥ ९

एक पंक्ति का अभाव है; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. कर न होंहि। २. को वत। ३. केर आई। ४. न हौं। ५. नहि। ६. कया। ७. पूछनभारा। ८. दयी सवारा।

टिप्पणी—इहो—इस। जासो—जिससे। रख्या—रक्षा। केरी—का। ताकर—उसका। हौं—हूँ। मया—दया। सँभारा—सँभाल। परवेदन—पर दुःख। पूछनहारा—पूछने वाला। मरोहं—ममता करने वाला (वासुदेवशरण अग्रवाल ने पदमावत (३८८।७) में इसका अर्थ मरणासन्न किया है जिसकी कोई संगति न तो वहाँ है और न यहाँ।)। सांकर—जंजीर। मुकरावै—बन्धन मुक्त करै। मरमीं—सहृदय। धरमीं—धर्मवान। मेटे—मिटाये। पीर—दर्द। कालिन्द्री—कालिन्दी; यमुना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४८

कहा जसोदरैं सुन देवई। तोरें पीर पीर[2] मों भई ।।१
जनि रोवसि अब मन करु धीरा[1] । बोलत हौं[2] जउनाँ कैं तीरा ।।२
महिनहि दिन एक उदभाना[3] । मैं तोसों यह करब मिताना[4] ।।३
२४ख पठै दिहसि यह बालक मोरें। आपुन बारि पठवों तोरें ।।४
जनि चिंता मानसि इँह[5] बाता । मोंहितोंहि[6] अन्तर्साख विधाता ।।५
अस बर करब मूर जो बोलों । अपने बचन हुतै नहिं डोलों ।।६
वहँ कह वँह वहि मँदिर सिधावहु । पठै देंहु जो पठवइ पावहु ।।७
कहि सो जसोदरा गवनी, पैरि जउन गैं पार । ८
देवइ आई मँदिर मँह, भई मन बोल अधार[7] ।। ९

प्रति-पाठ—१. धरा । २. तहौं । ३. ऊदभाना । ४. मीताना । ५. नहिं । ६. मोइह पूतहि । ७. औधार ।

टिप्पणी—पीर–दर्द । जनि–मत । धीरा–धीरज । हौं–हूँ । मिताना-मैत्री । पठै–भेज । दिहसि–देना । अन्तर्साख –साक्षी; दोनों के बीच गवाह । विधाता–ईश्वर । मूर–असत्य । अधार–सहारा ।

४९

निसि भादों आहीं[1] अँधियारी । नैन[2] न सूझै हाथ[3] पसारी ।। १
तवहि सो कन्ह लीन्हि अवतारू । अछरिंह रचा मंगलाचारू ।। २
विधि सुनि निंदरा जोग सँचारे । सोये दूत ज हुत[4] रखवारे ।। ३
सुनि निरखे देवता अनन्दू । जगत[5] प्रगट भा बालगोविन्दू ।। ४
अति सुदिष्टि परमेसर हेरा । बन्दि मोख भा सबही केरा ।। ५
जनु अँधियारे दीपक वारा । सगरैं मँदिर भयउ उजियारा[6] ।। ६
बसुदेव मँदिर चन्द अवतरा । सहसकराँ जोति [निरमरा] ।। ७
२५क मन बिहसें रिखि देवता, गुनि गँधरब सब आइ । ८
सूरज चन्द तराईं रहसीं, करहिं बधाइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. अहीं । २. तैन । ३. माथ । ४. ज होत । ५. जलक । ६. ऊजियारा ।

टिप्पणी—निसि–रात्रि । आही–थी । निंदरा–निद्रा । सँचारे–संचार किया । बन्दि मोख–कैदियों की मुक्ति । सहसकराँ–सहस्र किरण ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५०

देवइ कहा अहो बसुदेवा । जिह बंस रहे करँहु सो सेवा ।। १
तूँ जो रिखी औ बाँभन तपा । कौनें काज तोर सब जपा ।। २
आठ पूत मारे लइ कंसा । रहा न तोरे एको बंसा ।। ३
जाकर अइस बुझाई दिया । सो का जिये बहुत रे पापिया ।। ४
लै उबार कितहूँ यह बारा । न त मारब होइहि अँधियारा ।। ५
गवराँ नन्द महर कै बारी । सो मीतिन भई मोर पियारी ।। ६
बालक मोर कहसि है लेई । बोलसि आपन पुरवत देई ।। ७
सकसि त तहाँ जाहु लै, तैस रात वहि आन । ८
न त प्रगट जो होइह, मारब होत बिहान ।। ९

टिप्पणी—उबार–बचा । बारा–बालक । मारब–मार डालेगा । गवराँ–ग्वालों की बस्ती; गोकुल । बारी–पत्नी । मीतिन–मित्र; सखी । पुरवत–बदले में देना । सकसि–सको । त–तो । तहाँ–वहाँ । बिहान–प्रातः काल ।

५१

बसुदेव बार देखि सुठि लोना । अति निर्मल चमकै जनु सोना ।। १
तपत मीन[1] जानहु जल पावा । उठा छोंह लेइ हिरदैं लावा ।। २
२५ख कहाँ छपाँओं लै अस दिया । लेउँ[2] घालि जो फाटै हिया ।। ३
लीन्हसि छोह-मोह अति भरे । पाइ केर दँडियाँ खसि परे ।। ४
पौंर-पौंरिया गै सब सोई । निद्रा-जोग न जागै कोई ।। ५
सातहु पौंर बज्र[3] कै तारा । बिनु कुंजी गये उघरि[4] केवारा ।। ६
जउनाँ तीर जाइ भय ठाढ़ा । पार न सूझ पानि तस बाढ़ा ।। ७
भर भादों अँधियारी, भरा हिलोरै नीर । ८
ठाढ़हि झूखै मन बसदेऊ, कइसैं लागब तीर ।। ९

प्रति-पाठ—१. मीत । २. लेउ । ३. बजरा । ४. उघरी ।

टिप्पणी—सुठि–सुन्दर । लोना–लावण्यपूर्ण । तपत–तड़फड़ाती हुई । छोह–ममता । घालि–डाल । हिया–हृदय । पाइ केर–पैर के । दँडियाँ–बेड़ियाँ । खसि–गिर । पौंर–द्वार । पौंरिया–द्वारपाल । बज्र–न टूटनेवाले । तारा–ताला । कुंजी–ताली । उघरि–खुल । केवारा–दरवाजा । भै–हुआ । झूखै–झंखै; बिसूरे, अफसोस करे । लागब–लगूँगा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५२

कठिन गाढ़ औ साँकर पड़ा[1] । नाउ न बेरा झखै खड़ा[2] ।। १
लेइ फिरौं तो कंस जियँ मारे । चलों तो धारहिं[3] होइ न पारे ।। २
पाछे सिंघ कूँवा भै आगें । सिर पर परीं न उबरत भागे ।। ३
चल मनसाँ सो हियें धँस लेऊँ । कै पठो कै जउन जिउँ[4] देऊँ ।। ४
कै धीरज तू पैठि धधाई । बालक छोह कण्ठ लै लाई ।। ५
चलतहि चलत जउन सब नाघी । उतरा पार बूड़ न जाँघी ।। ६
२६क **बहुलाखी पै** सिरजन हारू[5] । लागै जुगत न बाँकै बारू ।। ७
लै बालक बसुदेव गया, नन्द महर कैं बार । ८
जनहु चन्द परगासा, भा गोकुल उजियार ।। ९

प्रति-पाठ—१. परा । २. झकै खरा । ३. धार हियों । ४. झिउ । ५. मारू ।

टिप्पणी—सांकर—संकट । नाउ—नाव । बेरा—बेड़ा, नावों का समूह । फिरौं—लौटूँ । पीछे—पोछे । उबरत—उद्धार । मनसाँ—हे मन । हियें—यहों । धस—घुम । पठवों—जाऊँ । धधाई—आँख मूँद कर । नाघी—पार किया । जाँत्री—जाँत्र । जुगत—उपाय । बाँकै बारू—बाल बांका होता है ।

५३

तवँहि जसुदरहि[1] भई हुत बारी । जागत अहे पुरुख औ नारी ।। १
दुरगा [का]ली सो वैं अवतारी । सभहि दइत कै मार बुहारी[2] ।। २
बसुदेव तवहि हँकारा जाई । लै भीतर गै बेग बुलाई ।। ३
देखि जसुदरैं[3] चन्द अजोरा । **बारों सभ** बालक कै कोरा ।। ४
सहस कराँ भयउ प्रकासू । भो अजोर सब रहा अवासू ।। ५
नौ निधि लखमीं गोहन आयी । ठाँव न कितहूँ[4] जहाँ समायी ।। ६
पलट करम दाहिन दिसि[5] भयऊ । दारिद भाग देसन्तर गयऊ ।। ७
नन्द अनन्द कीन्ह जियें, देखि हरख मन लाग । ८
दयौं इँह अस बालक, जिह कछु होइ न खाँग ।। ९

प्रति-पाठ—१. चँदरहि । २. निहारी । ३. चदरैं । ४. केहूँ । ५; निसि ।

टिप्पणी—भई हुत—हुई थी । तवहि—उसी समय । हँकारा—पुकारा । लै भीतर गै—भीतर ले गये । बेग—तत्काल । सहसकराँ—सहस्त्र किरण । भो—हो । लखमी—लक्ष्मी । देसन्तर—दूर देश । खाँग—अनिष्ट ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५४

बसुदेव सहस लीन्ह सो बारी। जो दुरगाँ हुत विधि[1] औतारी।। १
२६ख नन्द महर पहुंचावै आवा। लै बसुदेव कँह नावँ चढ़ा[वा]।। २
भइ कूँसर नाँघी कालिन्दी। आयउ घर[2] देवइ आनन्दी।। ३
निंद्रा छूट उठा सब जागी। तवहि बारि फुनि रोवै[3] लागी।। ४
सुन[त]हि कंस दूत दौराये। तुरत बेगि आगें लै आये।। ५
भा आयसु चल धूत हँकारा। बज्र कै पाटाँ आन पछारा।। ६
देवहीं आन तवहि सिरनावा। पाटा कंस आन दोइ पावा।। ७
जवहि उठाइ भयउ अस, भइ बिजुरी सो बारि।८
गइ[4] ऐसें सरग कँह, बाहें [कंस] उपारि[5]।। ९

प्रति-पाठ—१. पढ़। २. उघर। ३. सोवै। ४. लइ। ५. ऊपार।

टिप्पणी—सहस–सहर्ष। बारी–बालिका। नाँघी–पार किया। आयसु–आदेश। धूत--दूत। बजर–पत्थर। पाटाँ–शिला-फलक; पत्थर की पटिया। आन–लाकर। पछारा–पटक दिया।

५५

अंतरिख चमकि खसि होइ गाजा। बैरी मोर कंस सरि राजा।। १
जहाँ काँस नाँउँ सुन[1] पाऊँ। बदि के तरप परों तिह ठाँऊँ।। २
कोभक भवइह दाइउ हजारा। अस मारों खन जास पतारा।। ३
राजैं सुनीं मीचु सहदायी। कुछ [न]बसाइ सब संग [···यी]।। ४
जौले[2] रही हाथ सेंउ छूटी। [ऊ]पर हो गिरी बज्र होइ टूटी।। ५
२७क जिह कारण धरि देवइ बाँधी। सो विधि हुत भई पूर हसादी।। ६
तीन चार दो खिन भइ चिन्ता। खरग हियें लागी सो तन्ता।। ७
सोच पूर भा राजहिं, सबहि पलटि जिउ आई।८
चेत लेस बिसरावै, कैसहु सोक न जाइ।। ९

प्रति-पाठ—१. सुनेह। २. जौले ले।

टिप्पणी—अन्तरिख–अन्तरिक्ष। खसि-गिर कर। गाजा-वज्र, बिजली। कंस–काँसा; पीतल से बना एक मिश्र धातु। बदि के–निश्चित रूप से। (प्रवाद है कि बिजली निश्चित रूप से काँसे पर गिरती है)। खन--खोद। हसादी—हँसाई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५६

भा बिहान खबर[1] होइ गयऊ। बालक रात जसुदरो[2] भयऊ।। १
नन्द महर घर बाज बघावा। सब गोकुल ततकालै आवा।। २
हरखे सुनि[3] पुरुख औ नारी। मगल गावँहि सकल गोवारीं।। ३
पतुरीं नाचें[4] पँवर दुआरा। दान देंहि भल सकल गोवारा।। ४
माल[5] भाँड़ नट नाटक गावँहि। भनैं भाँट ठाढ़ परभावँहि।। ५
बाँभँन आये कोटि पचीसा। बेद भनहिं औ देंहि असीसा।। ६
इन्द्रसबद घन बाजन बाजे। बन्दनवार मँदिर मँह साजे।। ७
ढोल भेरि औ माँडर, तबलहिं धिरगज होइ। ८
कोड अनन्द हरख सों, मिलि नाचे [सब] कोइ।। ९

प्रति-पाठ—१. हसद। २. चंदरो। ३. सुनी। ४. पितरतन काछें। ५. बाल।

टिप्पणी—बिहान–प्रातःकाल। ततकालै–तत्काल, तुरन्त। पतुरीं--नर्तकी। भनै–उच्चारण करते हैं। भाँट–त्रिरुदावली गाने वाले। परभावहि--प्रशंसा करते हैं। बाँभँन--ब्राह्मण। भनहिं--उच्चारण करते हैं। इन्द्रसबद--इन्द्रशब्द; इन्द्र के दरबार में अप्सराओं के नृत्य के समय वीणा, वेणु, मृंदग, कास्यताल आदि वाद्य-यंत्रों की मधुर झंकार। घन--बहुत से। बन्दनवार--मांगलिक अवसरों पर टाँगी जाने वाली पत्र-पुष्प से युक्त रस्सी। भेरि--शहनाई की तरह का मुंह से बजाया जाने वाला वाद्य। माँडर--एक प्रकार का मृंदग। धिरगज--तबले की थाप से निकलनेवाला स्वर।

५७

२७ख तिसरैं देवस भयउ तिंह भोगू। घर घर गोकुल न्योता[1] लोगू।। १
बहुल भाँति सीझे ज्योनारा[2]। औ अनेक सब भये परका[रा]।। २
भाँति भाँति औ पातिह पातीं। न्योति जेवाये[3] भातिह माँ[तीं]।। ३
पाँचो देवस रात जिह भई। भा रतजग निसि जागत गई।। ४
उठी जसुदरहि दूध अन्हाई। लै कोरा सो बाल कन्हाई।। ५
पुव[ा] सोहारी भये पकवाना। घर घर बाँटे होत बिहाना।। ६
लोकचार[4] भा जस हुत रीती[5]। अहिरँहि **पियत** रात सब बीती।। ७
यहि भाँत[6] होइ ना[च]इ[7], गावहिं सकल गोवार। ८
अबहू देवारी पाइ, फुनि बैकुण्ठहिं[8] अवतार।। ९

प्रति-पाठ—१. नतवता।, २. झोनारा। ३. ज्योरे। ४. लाकचार। ५. रती। ६. भंत ७. शब्द अस्पष्ट ८. वकुण्ठ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—न्योता—निमंत्रण। सीझे—पकाये गये। परकारा—प्रकार। कोरा—गोद। पुवा—गुड़ से बनी मीठी पूरी। सोहारी—सादी पूरी। लोकचार—समाज में प्रचलित रीति-रिवाज और व्यवहार। रीती—रीति।

५८

छठि के दिन सब पँडित हँकारे। गुनि पोथा मँह लग्न बिचारे॥ १
बड़ पूरुख यह उपना आई। महादेव ब्रह्मा कर भाई॥ २
नहपा विस्नु भा संसारा। अब अपनाँ कीन्हा अ[वतारा]॥ ३
वैं कहँहि येकर दस नाऊँ। दस अवतार लीन्ह[1] दस ठाऊँ॥ ४
३८क वासुदेव ऊधो हरि बिशन। रामनरायण केशो किशन॥ ५
सो यह कीन्हि गोविन्द गोपालू। तुम्ह कँह दाहिन भयो दयालू॥ ६
जाकँह जवहि चढ़ि रन गवई। रहहि न कोइ सामनहि अवई॥ ७
राज करिह यह मंदिर मैं, अस है लग्न सँजोग। ८
सोरह सहस गोपिता, तिह संग मानहि भोग॥ ९

प्रति-पाठ—१. दीन्ह।

टिप्पणी—छठि के दिन—जन्म के छठवें दिन। हँकारे—बुलाये। गुनि—गणना-कर। लगुन—जन्मपत्री। उपना—उत्पन्न हुआ। दाहिन—दहिने, दक्षिण। गवई—जायेगा। अवई—आवेगा। लग्न-संयोग—राशियों का योग।

५९

पेम[1] लगुन पत्री अरथायीं। गोकुल गोपीं उपनीं आयीं॥ १
सब अवधान भईं ग्वालिनी[2]। घर घर सबहि भईं पदुमिनी॥ २
मेंट न जाइ बात जो होनीं[3]। एक चाह एक सुठि लोनी॥ ३
जानहु सुरुज किरन हुत हुईं[4]। सोरह कराँ चन्द घट उईं॥ ४
तिह मँह एक गोपिता राही। ओहिक रूप संसार सराही॥ ५
सहसकराँ होइ[5] तैस दिपाये। सबै जोति वहि जोति छपाये॥ ६
नखतहि माँह चन्द्र वह लोनी। भई प्रगट हुत सरग अलोनी॥ ७
राम रूप हुत सीता, कन्ह रूप तेहि[6] राहि। ८
३८ख अस रुपवन्ति अवतरी, जगत सराहै ताहि॥ ९

प्रति-पाठ—१. मीम से पहले ये के दो नुक्ते मात्र हैं। २. ग्वालीं। ३. होतीं। ४. हूई। ५. न होई। ६. तही।

टिप्पणी—लगुन-पत्री—जन्म पत्री। अरथायी—विस्तार से समझाया; भविष्य-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

फल बताया । अवधान–गर्भवती । पदुमिनी–पद्मनी, सर्वांग सुन्दर नारी । मेंट–मिटा । होनी–भवितव्य । एक चाह एक–एक से एक । सुठि–सुन्दर । लोनी–लावण्यमयी । छपाये–छिपा लिया ।

६०

एक रात सूत हा कंसू । आवा पुरुख बजावत बंसू ।। १
ऊपर चढ़ि तस मारसि हाका । डरपा कंस बोल मुख थाका ।। २
चानक आइ भया भुइँ चाँपा । हस्ती परा केहरी[1] डर काँपा ।। ३
आइ देखायसि कर तस भेसू । जिउ काँपैं[2] जियें भयउ तरेसू[3] ।। ४
घरि यक काल रूप होइ कोंपा । पुनि ततखन होइ गयेउ अलोपा ।। ५
राजैं मरत लौटि जिउ पावा । रहा न ज्ञान तैस डर खा[वा] ।। ६
नैनँहि दुहौं टकटका लागा । नींद न परी सभ निसि जा[गा] ।। ७
भोर होत पहु फाटत, बेगि हँकारा सूक । ८
देखु रैन मुँहि मारिगा, धानुक एक अचूक ।। ९

प्रति-पाठ—१. निस्ती परा किह करी । २. कापैं । नरेसू ।

टिप्पणी—सूत–सोया । हा–था । बंसू–वंशी । तस–ऐसा । हाका–जोर से चिल्लाया । डरपा–डरा । चानक–अचानक; अकस्मात । भया–भय । चाँपा–दबाया । तरेसू–त्रास । घरि–थोड़ी देर । ततखन–तत्क्षण । अलोपा–अदृश्य । टकटका–टकटकी; अपलक देखते रहना । भोर–प्रातःकाल । पहु फाटत–पौ फटते ही; अँधेरे में सफेदी आते ही । धानुक–शिकारी ।

६१

तिहौं जो रात[1] सूत हुत परा । सपने माँझ काँहु हौं [छरा] ।।१
पुरुख एक आवा होइ कालू । मारसि हाक परा सिर सालू ।।२
धरती पाइ सरग सिर लायसि । होइ बिसेख जमरूप देखा[यसि] ।।३
३९क स्याम सरीर होइ जस रीठा । तिहैं रूप परखत मैं दीठा ।।४
घरि एक देवस डरावन[2] भयऊ । पुनि अलोप होइ ततखन गयऊ ।।५
तौ हुत जनु जिउ लेइगा काढ़ी । बिनु जिय कया सून है ठाढ़ी ।।६
चेत जीउ पौढ़ों करवट[3] ना होई । तिह लाग रहा जनि सोई ।।७
देख भेस अस ताकर, जिउ न रहा डर मेट । ८
मुये बार पुनि मारिय, लौटि होइ जो भेट ।। ९

प्रति-पाठ—१. राग । २. डारवन । ३. करवन ।

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—सूत हुत परा—लेटा हुआ; सोया था। माँझ—में। छरा—छला। मारसि हाक—भयावनी आवाज की। सालू—साल; पीड़ा। जम—यम; मृत्यु। परतख—प्रत्यक्ष; साक्षात; सामने। दीठा—देखा। पौढौं—लेटा रहूँ।

६२

सूक कहा सुनु सपन बिचारू। राजा यँहा कथा अवतारू ॥१
स्याम बरन होइ तो मैं देखा। सपने किसन जो भयउ[1] बिसेखा[2]॥२
वहैं गदर ऐसैं लै कीन्हें। रैन त्रास आइ तोहि दीन्हें ॥३
तिह परतँख्या जाइ न चिन्ता। सूरत सोइ सपनैं दिख[न्ता] ॥४
जौलहि बालक सपने आई। पुनि संजोग होइ सौतुख देखाई ॥५
जामत बिरवा जो न उचारा। भयें बिरिख को उलावै पारा ॥६
जस जस आगैं होई सयानाँ। होई त ऐस तिह काहु कै नाँ माना॥७
३९ख जो कछु पंख लेहिकै, उठै उपार। ८
खादें दाइ समहहि, टूट एक फिर बार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. भा। २. सेखा।

टिप्पणी—किसन—कृष्ण। गदर—उत्पात। त्रास—कष्ट; दुःख। परतख्या—प्रत्यक्ष देखने के कारण। सौतुक—प्रत्यक्ष, साक्षात घटना। जामत—उगते हुए। बिरवा—पौधा। उलावइ—टेढ़ा करना। माना—शक्ति।

६३

उठ नारद राजा सों कहा। भा सो कछु जो होनीं[1] अहा[2]। १
सुनहु कहउ जब[3] कन्ह भयऊ। बसदेउ लै[4] गोकुल मँह गयऊ ॥ २
सौंपि जसुदरहि आपुन बारी। सो राजा तुम धोखैं[5] मारी ॥ ३
अब है नन्द महर घर बारा। करहु सोइ जस होइ बिचारा ॥ ४
अब तिह महरिह बाधहु धाई। अस्थन[6] लाइ देइ बिख जाई ॥ ५
अइसैं मेंटी जाइ जो बारा। और नाहिं एको उपकारा ॥ ६
राजैं रकसीं [बेगि] हँकारी। लै बीरा कर सबै बिचारी ॥ ७
है कोउ अइस धनि, दौरि पान लै लेइ। ८
[चौ]था राज देउँ तिह, जो कन्हहि बिख देइ ॥ ९

प्रति-पाठ—होइं। २. अथा। ३. जव। ४. ए। ५. धौकें। ६. असहन।

टिप्पणी—होनी—होने वाला, भवितव्य। अहा—था। बारी—बालिका।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बारा—बालक। धाई–धात्री, दूध पिलाने वाली। अस्थन–स्तन। बिस–विष। उपकारा–उपाय। रकसी–राक्षसी। लै–लेकर। बीरा–बीड़ा; मसाला लगा पान (बीड़ा लेना मुहावरा हैं, जिसका तात्पर्य है किसी काम करने का दायित्व लेना। मध्यकालीन युग में दायित्व सौंपने की बात आने पर शासक अथवा अन्य कोई हाथ में पान का बीड़ा लेकर घोषणा करता था कि जो अपेक्षित कार्य करने को प्रस्तुत हो वह उसके हाथ से बीड़ा ले। वही भाव यहाँ है।)। धनि–नारो। दौरि–दौड़ कर।

६४

सभ मँह नारि पूतना भली। लै बीरा गोकुल कहँ चली ॥१
नन्द महर घर जाइ पईठी। पेट गुपुत मुख बातैं मीठी ॥२
२८क [बात]न मँह जसुदरैं[1] राँधा। अस्थन लाई बिखम बिख साधा ॥३
[कन्ह]जो झूलत अहा हिंडोला। दौरि छोह कै लीन्हें[2] कोराँ ॥४
[घ]री एक हँस हँस बैंलाइसि। पुनि मुख अस्थन लैके लाइसि ॥५
बिधिनाँ केर चरित अस भयऊँ। बिख मुख मँह अँब्रित होइ गयऊ ॥६
दूती पोख कन्ह जनु पोखा। कया[3] क रकत झार सब सोखा ॥७
मुई पूतना पियावत, उठा कन्ह तब[4] रोइ। ८
दूध देत जिउ[5] दीन्हसि, नेहर नींद गँ सोइ ॥ ९

प्रति-पाठ—जदरहयें। २. लिहस। ३. खया। ४. तव। ५. झिउ। ६. वेद।

टिप्पणी—सभ–सब। पईठी–घुसी। राँधा–बहलाया; भुलावा दिया। बिखम–विषम। हिंडोला–पालना। छोह–ममता। लीन्हें–लिया। कोराँ–गोद में। बैलाइसि–बहलाया; खेलाया। सोखा–सोख लिया; खींच लिया। जिउ–प्राण।

६५

जासों दौरि कीन्ह पै झारो। कहसि पूतनहि रही तवारी ॥१
गा डोलाइ भई[1] बिनु जीवाँ। तन भा काठ ऐंठ[2] गइ गीवाँ ॥२
नन्द कहा मन भई भलाई[3]। गहि अचकैं [दुख] दीन्हि छुड़ाई[4] ॥३
सबके पेट परी हरबरी। भवइ दूसर कै मो सर परी ॥४
यह राजा कै बहिन दुलारी। जो यह सुनिह का करिह हँकारी ॥५
कौन उतर अबैं होइ[5] उबारा। काँपे जादव सकल गोवारा ॥६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२८ख मिलि के आये सभ एक ठाऊँ। प्रात छाड़ि देहिं [यह] गाँऊँ[६] ॥ ७
तुरत बेगि डर काँपत, नन्द महर कब कीन्ह। ८
कालिन्दी के नीर मँह, अगर आग पै दीन्ह ॥ ९

प्रति-पाठ—नही। २. अबँह। ३. भलानी। ४. छवाई। ५. न होइ। ६. कारों।

टिप्पणी—जासों–यशोदा। झारो–झाड़ फूँक की। काठ–लकड़ी। गीवाँ–गर्दन। अचकै–अचानक। हरवरी–घबराहट। प्रात–सुबह।

६६

मुई पूतना कंस जो सुनाँ। भा क्रोध मन औ सिर धुनाँ ॥ १
है[१] कोउ राकस कर बंसू। जिह निहत राज करँहि कंसू ॥ २
काल करत हुत बेगी दूनों। [··· ···· ··· ···· ···· ···· ···] ॥ ३
[···· ···· ···· ···· ···· ···] । बीरा लेंहि आइ तिह बेगी ॥ ४
पान दीन्हि दूनों बहिराये। गाढ़ काज आज तुम्ह आये ॥ ५
जित खन तुम्ह आवहु कै अन्धा। देवों राज नित पौंरी धन्धा[२] ॥ ६
राज केर तिह बीरा पावा। बीरहिं बहुत लै तहँहि चढ़ावा ॥ ७
जनि चिन्ता अब मानहु, हम गवनत निसि आज। ८
बहुरे बाट दुहूँ केतक, आईहि करत सो काज ॥ ९

प्रति में केवल ८ पंक्ति हैं। चौथी पंक्ति की दूसरी अर्धाली तीसरी पंक्ति की दूसरी अर्धाली के रूप में है। तुकों के अन्तर के आधार पर उसे यहाँ विलग किया गया है।

प्रति-पाठ—भये। २. घघा।

टिप्पणी—निहत–निःशंक। खन–क्षण। गवनत–जायेंगे। बहुरे–लौटे।

६७

काल करत भये दूनों कागा। सबही देख अचम्भो[१] लागा ॥ १
बोलत भाखा दुउ औदाई। जाइ पैठि गोकुल महराई ॥ २
२९क कन्ह कहा मन आये दूता। मिस कै रहा जानु भर सूता ॥ ३
जाहि कहाँ[२] अब गोकुल माहाँ। जोजन सहस पसारों बाहाँ ॥ ४
दुहुँ दिसि धरि के बाँहहि माथाँ। दुहों कै मूंड धरे दुहुँ हाथाँ ॥ ५
गींवँ मरोरसि दूनों मारे। रुण्ड मुण्ड[२] धर कीन्ह निरारे ॥ ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुनि फटकारे अति रिस लागें । मथुराँ परे कंस के आगें ।। ७
आइ परे दोइ जिह खन, राजै उन्ह गै चीन्ह । ८
भा मन भ्रम दून होइ, आगल चिन्ता कीन्ह ।। ९

प्रति-पाठ—१. अचहों । २. कहा । २. मूँठ ।

टिप्पणी—अचम्भो–आश्चर्य । महराई–राज्य-सीमा । मिस–बहाना । भर–अच्छी तरह । सूता–सोया । पसारों–फैलाऊँ । रुण्ड मुण्ड–सिर और धड़ । निरारे–अलग । खन–क्षण । आगल–भविष्य की ।

६८

[कं]स सूक लै मतै बईठा । मारे गोकुल दोउ बसीठा ।।१
[अ]ब वह करँहु एक उपकारा । कौनै जतन जाइ सो मारा ।।२
[सू]क कहा सुनु कंस नरेसा । हौं तुम्ह देंउ एक उपदेसा ।।३
[है] पतार नगरी मह बारी । सिव महेस कै सब फुलवारी ।।४
तहाँ मान सरोवर[1] अति नवला । सहस पखुरिह फूलै कवला ।।५
[से]स -नाग ताकर रखवारा[2] । मानुस जातँ होइ[3] जर छारा ।।६
२९ख तहाँ नन्द[4] जो पठवा होई । नन्द न जाइहि जाइहि सोई ।।७
अगम पंथ जलहर मँह, माछ नियर पुनि घात । ८
जो गा लौटि न बहुरा, अस वह निबहुर बाट ।। ९

प्रति-पाठ—पनि सरवर । २. रखवाला । ३. न होइ । ४. नट ।

टिप्पणी—मतै–परामर्श करने । बईठा–बैठा । बसीठा–दूत । दहुँ–क्या । उपकारा–उपाय । जतन–यत्न, प्रयत्न । उपदेसा–सलाह । पतार–पाताल । बारी–बगीचा । सिव महेश–शिव । नवला–नवल; सुन्दर । कवला–कमल । ताकर–उसका । जर–जल । छारा–क्षार; राख । पठवा–भेजना । निबहुर–न लौटने वाला । बाट–मार्ग ।

६९

मति भया राजें नन्द हँकारा । सीस नाइ कै कीन्ह जोहारा ।। १
भा आयसु हँस बोला राजा । गवनहु बेगि हमारे काजा ।। २
ईं छहि एक मैं ईछीं पूजा । कासों कहौं न तुम्ह अस दूजा ।। ३
सहस पखुरिह कँवल पतारा[1] । लाख कँवल सों काज हमारा ।। ४
तुम्ह हुत भलहि काज सो होई । बेगि आन पहुंचावउ[2] सोई ।। ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो इँछहि न देवँ तप सादू । नतु मोहि तुम्ह पूर रिसवादू ॥ ६
मेटि न जाइ रजायस भयो । परा खभार नन्द घर गयो ॥ ७
कंस कँवल लै माँगे, जो न कितहूँ संसार ॥ ८
को पतार हुत आयउ, कैं रे करत निस्तार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. पताराँ । २. पहुँचावर ।

टिप्पणी—मति भया–मंत्रणा हुई । इँछहि–मनौती । कासों–किससे । आन–लाकर । मेटि मिटा । खभार-खलबली । निस्तार–छुटकारा ।

७०

पाँच बरिस मँह भयउ गोपाला । कण्ठ सोह मणि मुक्ता माला ॥ १
३०क कान कनक अण्टी दुहुँ मेली । और सिर पैनी बाँकी सेली ॥ २
कन्धवार धरसि[1] अस बनी । खेलै चला रहस चौगनी ॥ ३
उन्ह बलभद्र मिला संग धाई । जैस राम संग लछमन भाई ॥ ४
और मिले संग बहुतै डोटा ।लाँब छोट और जोटहि जोटा ॥ ५
मिलि के सब जन गोहन भये । जउन तीर होइ गोईं किये ॥ ६
[एक] बार बलभद्दर दीन्हें । दूसर बार कन्ह सन लीन्हें ॥ ७
दुहुँ दिसि खेल पसारा, भा कन्दुँ खिन पार ॥ ८
बाद कीन्ह आपस मैं, को आइ पँव[रि] उस पार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दरहस । २. पँवइ ।

टिप्पणी—अण्टी–कान का एक आभूषण जिसे पुरुष पहनते हैं । पैनी–नुकीली । बाँकी–सुन्दर । सेली–सेल्ही; पतले चौड़ाई की पगड़ी, जो ऐंठ कर बाँधी जाती हैं । कन्धवार–कन्धे का दुपट्टा । चौगनी–चौगान; गेंद का एक खेल । डोटा–बालक । लाँब–लम्बे । जोटहि जोटा–जोड़ीदार । कन्दुँ–गेंद । खिन–एक क्षण में । बाद–शर्त । पँवरि–तैर कर ।

७१

कन्ह कहा मन भइ बड़बारा । कँवलहिं कँह अब जाउँ पतारा ॥ १
कन्दुहिं कह आनों यहि दोखू । और फिर करों नन्द कर मोखू ॥ २
खेलत धरि कन्दु उफँकारा । पराँ जउन मँह होइ मझधारा ॥ ३
गेंद गेंद[1] कहि आवसि[2] तीराँ । आपुहि धाइ परा मझनीराँ ॥ ४
लौटि न उठा गयेउ नर बोरा । साथि देखि न हबस बहोरा ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३०ख दौरि कहहिं जा[सो सों] जाइ। बूड़ जउन मँह बाल कन्हाई॥ ६
नन्द महर घर[3] भय जो गुहारी। धाये दौरि पुरुख औ नारी॥ ७
जया कोट कोहरा पैठि, गोकुल परी पुकार। ८
जाँवत नाँव नौरिया, लेके धावहिं जार॥ ९

प्रति-पाठ—१. गेद गेद। २. औबस। ३. भर।

टिप्पणी—बड़बारा–अच्छा सुयोग। उँफकारा–उछाला। बोरा–बूड़ा। बहोरा–लौटि। गुहारी–पुकार। जाँवत–जितने भी। नौरिया–नाव खेनेवाले; मल्लाह। जार–जाल।

७२

सुनि केवट सब गये जो आयी। नावहिं नाव छाइ ले आयी॥ १
केवटहिं पैठि नदी ढ़कढोरी। खोजि न पायहि उठी धँधोरी॥ २
मेले जार वहि वारहि पारा। छानि लीन्हि पानि मझधारा॥ ३
न जाने का भयउ सो बारा। नैन **तलावट** किये सब **फारा**॥ ४
रोये नन्द पुरुख औ जोई। असद होइ बहुरा सब कोई॥ ५
सँवरि सँवरि मन मेलहिं **दहारा**। कस रे कन्ह तू गयँहु पतारा॥ ६
मोर बार खेलत सुठि लोनाँ। कें हर लीन्ह मंदिर कै सो[नाँ]॥ ७
राजा घर अनन्द भा, सुनतहि खबर असोक॥ ८
मन कै इंछा पूजी, बिन औखद गा रोग॥ ९

टिप्पणी—केवट–मल्लाह। ढकढोरी–पानी को हिलाहिला कर देखा। धँधोरी–हाहाकार। मेले–फेंका। जार–जाल। वारहि पारा–आर पार। असद–हताश। कै–किसने। असोक–सुखद। इंछा–इच्छा। औखद–औषधि।

७३

३१क चला कन्ह गा गही नसैनी। अगम पंथ तीरथ तिरबेनी॥ १
आगे मिलीं सोन सारदा। देवहा गंडक और नर्बदा॥ २
जहाँ मिलीं सुरसरि कालिन्दी। दरस देखि दोउ आनन्दी॥ ३
नमस्कार कै कीन्ह जुहारू। भलैं गुसाइँ इँहा पग धारू॥ ४
पायहिं परी दौरि गोमती। सिन्धु **पती**[1] और रावती॥ ५
जँह लग नदी अठारह गण्डा। दण्डवत कीन्हि जोरि भूदण्डा॥ ६
आज भवो दिन औ कुसल हमारे। कँवल चरन जो दीख तुम्हारे॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आइ समुद्र ठाढ़ भा, सीस नाइ कर जोर। ८
साथ न केऊ लीन्हों, सबै चला वह[2] भोर॥ ९

प्रति-पाठ—१. पाठ अस्पष्ट; किसी नदी का नाम। २. वह।

टिप्पणी—गही–पकड़ी। नसैनी–सीढ़ी। तीरथ–तीर्थ। तिरबेनी; त्रिवेणी। सारदा–शारदा। देवहा–बलिया के आगे सरयू इस नाम से पुकारी जाती हैं। एक अन्य नदी का नाम भी देवहा है जो नैनीताल जिले में एक पहाड़ी तलहटी से निकलती है और पीलीभीत, बीसलपुर, शाहजहाँपुर, शाहाबाद होती हुई कन्नौज से सात मील उत्तर गंगा में आकर गिरती है। शाहजहाँपुर तक इसका नाम देवहा है। कवि का तात्पर्य कदाचित सरयू से ही है। गण्डक–गंडकी। सिन्धु–सिन्ध नद अथवा काली सिन्ध। रावती–राप्ती। गण्डा–चार की संख्या। भोर–भुलावा देकर।

७४

चल पतार गा कन्ह मुरारी। देखी महादेव कै बारी॥ १
मानसरोदक बरनि न जाई। फूले कँवल रहे बिकसाई॥ २
अधिक सरूप सरग जस तारे। अष्टो कुली नाग रखवारे॥ ३
ठाँव न कितहूँ, भरे सब नागा। एक एक डाँडी एक एक लागा॥ ४
३१ख अंब्रित कुण्ड भरे अतिवानी। घिर्री घिरे सीचहिं तिह पानी॥ ५
पखुँरी टूट परें बहु देहीं। अब्रित पूर पूरि तिह लेहीं॥ ६
धन महेस जाकर अस बारी। देखि लोभान कन्ह फुलवारी॥ ७
सेसनाग तिह बारी, आस पास चहुँ फेर। ८
जनु पहार चारहुँ दिसि, अस होइ बैठि गरेर॥ ९

टिप्पणी— मानसरोवर–मानसरोदक। ओहिक–उसका। अष्टो कुली नाग–आठ कुलों के नाग (वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंखचूड़, धनंजय और कुलक)। ठाँव–जगह। कितहूँ–कहीं भी। डाँडी–डण्ठल। अतिवानी–अत्यधिक। घिर्री–चर्खी; पानी खींचने का एक यन्त्र। घिरे–घुमा कर। पूर–छिड़क कर। पूरि–जोड़ा। पहार–पहाड़। गरेर–कुण्डली मार कर।

७५

देखत कन्ह गये चल तहाँ। बासुकि केर माथ हुत जहाँ॥ १
नागिन बैठि सेस कर दारा। सोये सेसनाग मनियारा॥ २
कहस रे बालक तू कहाँ आ[वा][1]। जहाँ जियत केउ[2] जाइ न[पावा]॥ ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जौलहि न जागा मोर पीऊ। बेटा भाग जाहु लै जीऊ ।। ४
उठहि झार नाग फुंक्कारा। तैं तिह आग होहसि[3] जर छा[रा]।। ५
कन्ह कहा यह डर नहि मोही। बेगि जगाउ साध जो तो[ही] ।। ६
लाख कँवल सों काज हमारा। दीन्हें छूटी नाग तुम्हा[रा] ।। ७
जो लै चले कँवल सहस[4], मोख मुकुति तो देउँ। ८
३२क [नाहि त][5] नाथ चलावों, औ बरियाइहि लेउँ।। ९

प्रति-पाठ—१. कहा रहा। २. को केउ। ३. भोहस। ४. सैं। ५. माइक्रो-फिल्म अस्पष्ट, पाठ अनुमानित।

टिप्पणी—बासुकि–नागराज। माथ–सिर। सेस–शेषनाग। मनियारा–मणिधारी। दारा–पत्नी। केउ–कोई। साध–आकांक्षा। नाहि त–नहीं तो। बरियाई–बलपूर्वक; जबर्दस्ती।

७६

नागिन सुनत कोह मँह आई। देखहु बालक केर ढिठाई[1] ।। १
कँवलहि लाग बहुत[2] अस मुए[3]। काहूँ न पाये भँवर बिछोए ।। २
इहाँ आइ फिर होइ न गवनाँ। सेउ तूँ चाहस कीन्ह खिलौना ।। ३
जनि इँह दीप भिंग होइ ब[रसी][4]। जीउ लै जाहु कित रे जरसी[5] ।। ४
जो पतार ते कँवल बिकासा। हाथ चढ़ै कै छाड़उ आसा ।। ५
कन्ह कहा सुन बौरी नारी। चहों त सबै बिधाँसों बारी ।। ६
काह करी पिउ बारी तोरा। चोरत धरे हाथ[6] को मोरा ।। ७
दूनों हाथ पसारों, जिह लग सरग पतार। ८
से सब[7] जर मूरि उखारों, हहि जित केवलहि तार ।। ९

प्रति-पाठ—१. दोढाई। २. बहुप। ३. मूए। ४. बरे। ५. जरोसी। ६. बहाथ; भाथ। ७. सेस।

टिप्पणी—कोह–क्रोध। दीप-भिंग–दीप का पतंग। बरसं–जलना चाहते हो। जिउ–प्राण। जरसी–जलना चाहते हो। छाड़हु–छोड़ो। बौरी–पगली। बिधाँसों–विध्वंस करूँ। बारी–बगीचा। ब री–नारी। चोरत–चोरी करते हुए। धरे–पकड़े। बाँह–हाथ। जर-मूरि–जड़ मूल। केउलहि–कमल। तार–ताल; सरोवर।

७७

हठा कन्ह मन संक न मानी। चढ़ा कोंप नागिन अकुलानी ।। १
सूता सेस नाग सुनि जागा। रहा ठाढ़ होइ कन्ह न भागा ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तस छाड़ी वैं रहत फुंकारा। उठी अगिन सरघ कै झारा॥ ३
३२ख सोन जरे जस रावट होई। स्याम बरन किसन भा [सोई]॥ ४
गै बिसभाँर बिसहर होइ परा। सुनाँ इँन्द्र इन्द्रासन [टरा]॥ ५
ब्रह्मा महादेव गै आई। पार्वती अँम्रित कै धाई॥ ६
आवा गरुर नाग डर डरा। अँम्रित पाँखि झारि बिस [हरा]॥ ७
सींचि महारस अँम्रित, पुनि सब गये अलोप॥ ८
कन्ह सूत [अ]स जागा, उठा सिंघ अस कोप॥ ९

प्रति-पाठ—१. अही। २. बिसँहार।

टिप्पणी—संक-शंका; डर। कोंप-क्रोध। अकुलानी-व्याकुल हुई। सूता-सोया हुआ। ठाढ़-खड़ा। सरघ-स्वर्ग। झारा-दाह। सोन-सोना। जरै-जलने पर। रावट-कसौटी पत्थर (यहाँ तात्पर्य उसके काले रंग से है)। बिसभाँर-बेहोश। बिसहर-विषाक्त। गरुर-गरुड़। झारि-झाड़ कर। अलोप-अदृश्य। सिंघ-सिंह।

७८

कहसि नाग अब जाब न होईं। जें तोहि बेधि कन्ह हौं [सोई]॥ १
दौरि धरा फन पा आपुन हाथाँ। डाँडी कँवल केर लै नाथाँ॥ २
अब जो चहों मारि फन फारों। रकत सोख मुख दाँत उपा[रों]॥ ३
कँवल लाख दोइ लीन्हें तोरी। लादे आनि दुहूँ दिसि जो[री]॥ ४
ऊपर चढ़ बैठि पुनि आपू। बज्र साँप सों भाँगा [सापू]॥ ५
चला कन्ह लै बासुकि नाथी। जनु सादूर बैठि चढ़ि हा[थी]॥ ६
कुछ न बसाइ नाग कलमला। गरजि जोत परबत अस [चला]॥ ७
३३क राजा बलि जो कहावत, नाघि बिलँब न लाग॥ ८
लै पतार गै बाँधों, तू दहुँ किह मँह नाग॥ ९

प्रति-पाठ—१. झन। २. मूख।

टिप्पणी—जाब-जाना; बचाव। बेधि-बेधन करेगा। हौं-है। धरा-रक्खा। फन-फण। पा-पर। नाथा-नाक में रस्सी पिरोया। फारों-फाड़ डालूँ। सोखि-सोख कर। उपारों-उखाड़ूँ। तोरी-तोड़। सादूर-शार्दूल; सिंह। बिसाइ-बस चला। कलमला-व्याकुल हुआ। कहावत-कहलाता था। नाँघि-नाँघना। तूँ दहुँ किह मँह-तुम क्या हो (अर्थात तुम किस खेत की मूली हो?)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७९

क्रन्दन[1] करै धावहि नागिनी। महासरूप जाति पदमिनी ।। १
एक तों मोर स्याम बरियारू। जैं टेका हैं सरग पतारू ।। २
दूसर तूं को बालक छोटा। जो अस बाँधि जासि लै ढोटा ।। ३
किय तूं परे ऐस सब रोसी। जैं महेस कै बारि[2] बिधोसी[3] ।। ४
कै तूं बली कै[4] सिरी केसू। कै तूं ब्रह्मा बिस्नु महेसू ।। ५
कै तूं इन्द्र[5] चन्द्र उपदेऊ। कै तूं सुर नर गँध्रब[6] केऊ ।। ६
दई के बौनैं से अस होई। और न सकै अस कै कोई ।। ७
ऐस जान मैं पूछों, कहु मोहि आपुन नाँव ।। ८
न तु अखरान मरब मैं, हिया फाटि तिंह ठाँव ।। ९

प्रति-पाठ—१. कन्दल। २. बारी। ३. बोसी। ४. क। ५. ईन्द्र। ६. गन्धप।

टिप्पणी—मोर–मेरा। स्याम–पति। बरियारू–बलवान। जैं–जिन्होंने। टेका–रोक रक्खा। जासि–जा रहे हो। किय–क्यों। रोसी–रुष्ट हो। सिरीकेसू–श्री केशव। उपदेऊ–उपदेवता। दई–ईश्वर। बौनै–वामन (यहाँ बामन अवतार से अभिप्राय है)। नतु–नहीं तो। मरब–मरूँगी। हिया–हृदय।

८०

कन्ह कहा भेंट रे साँपिनी[1]। मनुसहि देव कहस पापिनी ।। १
जो जग सिरजै सिरजनहारू। सो किह लै मानुस अवतारू ।। २
३३ख ना वह काहु क जरमा[2] होई। ना वै कहियो जरमाँ कोई ।। ३
ना काहू[3] अस जोत सरूपा। ना कोइ अस[4] बंस अनूपा ।। ४
निहकलंक निर्मल सब माँहा। झलक परै घूप औ छाँहाँ ।। ५
सब कँह दिहसि जरम औ जाई। आप अबरन अरूप बिहाई ।। ६
ऐस गोसाँई राजाँ[5] कर राजा। भुवन मानुस ताकर उपराजा[6] ।। ७
बूंद समुंद जस दीखै, तस हौं ताकर अंस[7] ।। ८
कन्ह रूप अवतरेउँ, मारे आयउँ कंस ।। ९

प्रति-पाठ—१. साँपिन। २. जरमाँ। ३. कामो। ४. ऐस। ५. राझाँ। ६. उपराजा। ७. ऐस।

टिप्पणी—जरमा–जन्मा। निहकलंक–निष्कलंक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८१

भागा नाग चला डार न सैंनो। पवन जाहि मन धावहि जैनो ।।१
चला कन्ह सँवर कुल [दि]वा। समुँद माझ बोहित अस खेवा ।।२
जानु सरग कँह रची विवाना। सेसनाग आवइ उतरानाँ ।।३
सत्र धड़ बूड़ि पानि मँह आवै। माथ जैस गिरि मेरु देखावै ।।४
फुलवारि[1] पूर जउनँ होइ[2] गयऊ। कँह काँदो सब जलहर भयऊ ।।५
जनु परबत सो आवइ चला। मंछ कच्छ गा [सब कलमला] ।।६
३४क इहँ विधि बालक आइ तुलाना। भयउ भरिक गोकुल नियराना ।।७
कौकुत देखि लोगहिं, घर होइ कीन्ह बखान। ८
माँझ धार कछु आवइ, परबत अस उतरान।। ९

प्रति-पाठ—१. फुलकारि। २. न होइ।

टिप्पणी—विवाना–विमव। माथ–सिर। पूर–भर। कांदो–कीचड़। मंछ–मछली। कच्छ–कच्छपः कछुआ। कलवला–परेशान। तुलाना–पहुँचा। भरिक–मालवाहक, व्यापारी। कोकुत कौतुक।

८२

सुन के सबहि बिसरिगा सोगू। औ देखै धावा सब लोगू।। १
तबहीं जितत सब धाये आवइ। देखिह जिह नाँवँ का पावइ।। २
ना यह मगर गोह घरियारा। ना यह मंछ न कच्छ अपारा।। ३
यहि ऊपर मानुस यक आवइ। जनु तरुवर पर पंखि देखावइ।। ४
जो नियरान कहँहिं रे दइया। सज्जमान जनु बाल कन्हैया।। ५
सोइ मुरारि दई कर गढ़ा। आवै सेसनाग पर चढ़ा।। ६
लादे कँवल दुहों दिसि सोई। वहि छाड़ें कोउ आन न होई।। ७
जाइ कहा मिल सबहीं, जहाँ जसोदरा नन्द। ८
आवा कन्ह कुसल सों, अब घर करहु अनन्द।। ९

टिप्पणी—बिसरिगा–भूल गया। सोगू–शोक। धावा–दौड़े। नाँवँ–नाम। मगर–मकर। गोह–मगर से छोटा, उसी के आकार का जन्तु। घरियारा–घड़ियाल। नियरान–निकट आया। रे दइया–आश्चर्य बोधक स्वर; बाप रे बाप। सज्जमान–विराजमान। आन–अन्य, दूसरा। जसोदरा–यशोदा।

८३

[क]न्ह कँवल लै तीरहिं आवा। अलदे कँवल नाग मुकरावा।। १
३४ख नन्द जसोदरा दूनों[1] धाये। भा दरसन जनु मरत जियाये।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

औ बलभद्र भाइ हसि भेटा। उपना सुख सब दुख डर[2] मेटा ॥ ३
सखा[3] सहित मंदिर महँ गयऊ। नव-अवतार आज जनु भयऊ ॥ ४
बाजँहि मंदिर मँह झाँझ-मजीरा। नाचँहि गावँहि सकल अहीरा ॥ ५
आरति उतारँहि सब ग्वालिनीं। जानु अपछरा औ पदमिनी ॥ ६
कै सिंगार सब आपन बारीं। पहिरीं चोला चीर सँवारीं ॥ ७
कै भाँवर-न्योछावर चहुँ दिसि, दीन्ह असीस। ८
राज करहु गोकुल मँह, जीवहु लाख बरीस ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दनों। २. घर। ३. सख।

टिप्पणी—अलदे—उतारा। दूनों—दोनों। बलभद्र—बलराम। उपना—उत्पन्न हुआ। आपन—अपना। बारीं—स्त्रियाँ। चोला—कंचुकी; चोली। चीर—साड़ी। भाँवर—प्रदक्षिणा। न्योछावर—सिर के ऊपर घुमा कर दी जाने वाली धन-राशि अथवा वस्तु।

८४

हसि बलभद्र कहा हो बिसुना। हुते सेत अब काहे [किसना] ॥१
कनक बरन तन चमकत रहा। काहें चन्द्र गहन अस ग[हा] ॥ २
काहें सूर अइस भा खीनाँ। खीन जोत भा बदन मलीनाँ ॥ ३
एक रात दोइ दिन तुम आहे। पाछ कलेवाँ कैसे [र]हे ॥ ४
कहँवा कँवल जाइ तुम्ह पाये। कैसे सेसना[ग नथ पाये] ॥ ५
३५क मैं तुम्ह बिन अन-पानि न चाखा। तुम्ह कैसें आपन जिउ[1] राखा ॥६
मरों कै **मन पर** हेले। बिन बन्धू अस रहों अकेले ॥ ७
जुग जुगन्तर[2] मिलँहि पल, अस हौं रहेउँ अकेल। ८
तुम्ह जानों दहुँ कहँवा, औ भूले किह खेल ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जीउ। २. जुग जुगतर।

टिप्पणी—हुते—थे। सेत—श्वेत, गोरे। किसना—कृष्ण, काले। कनक—सोना। बरन—वर्ण, रंग। गहन—ग्रहण। गहा—ग्रसा गया। खीनाँ—क्षीण। बदन—मुख। पाछु—पीछे; बिना। कलेवा—भोजन। अन-पानि—अन्न-पानी। जुग जुगन्तर—युग-युगान्तर। जानों दहुँ—न जाने कहाँ। कहवाँ—कहाँ।

८५

कन्ह कहा अस बूझि न कोई। मकु जानहु औ पूछहु सोई ॥ १
जवहि आदि हौं सिरजा अहा। दस अवतार अवतरी कहा ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तहिया जानेउँ ईंह बनाथी। एकहि दूसर माँगों साथी ॥३
[तौ] हुत तुम्ह मोरें सँग लागे। जहवँह[1] चलों होहु चलि आगे ॥४
[जि]ह जिह रूप जहाँ होइ अवनाँ। तिंह तिंह तुम सब कँहु पौ पवरना ॥५
[मैं] जो भयउँ रामाँ अवतारा। तुम्ह लखमन होइ धनुक सँभारा ॥६
[तूं] अस मोहि सेवा सारेंहु[2]। सीता हरी कनक बँसारेहुँ ॥७
सो तुम्ह सो हौं इतहू; सँवरहु मनहिं विचार। ८
जान अजान होहु कस, बातैं सबै बिसार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जहवथ। २. सारवन्ह।

टिप्पणी—मकु जानहु—जानते हुए भी। जहवँहि—जहाँ भी। अवनाँ—आगमन। पौ—पैर। पवरना—पैसार करना। लखमन—लक्ष्मण। सेवा-सारेंहु—सेवा किया। जान—जान कर। अजान—अज्ञान। कस—कैसे।

८६

३५ख निहकलंक निर्मल सो अकेला। जिन जग सिरिज खेल सब खेला ॥१
औ जो निर्मल भयउ अवतरा। चढ़ा कलंक खीन भइ करा ॥२
नन्द क दुख[1] मैं बैठि[2] न पारा। कँवल लेंहि कँह गयउँ पतारा ॥३
मोरें चाउ न कोई जावा। देखत गा रहि तुम्ह सब छावा ॥४
सेस[3] महेस कै राखी बारी। सो मैं जाइ जर-मूर उखारी ॥५
सेस नाग [क] सहों फुंकारा। स्याम सरीर भयो तिंह झारा ॥६
ऐसैं भाँत कँवल सभ पायों। बासुकि नाथ लादि[4] लै आयों ॥७
चौबीस भीत तहिया, मथेंउँ समुन्द जस खीर। ८
अब केतन पुनि सोई, जादो जात अहीर ॥ ९

प्रति-पाठ—१. देख। २. बैठी। ३. मुनि। ४. ललादि।

टिप्पणी—निहकलंक—निष्कलंक। सिरिज—सृष्टि कर। पारा—सहन कर सका। गाढ़—संकट। छावा—छा गया। झारा—आँच। खीर—क्षीर; दूध।

८७

नन्द महर गा राजदुआरा[1]। सीस नाइ हस कीन्ह जुहारा ॥ १
कँवल जो माँगी अही गुसाँईं। लाये हमरें बाल कन्हाईं ॥ २
अब जो रजायसु होइ सो कीजा। लै पूजा तिंह देवतहिं पूंजा ॥ ३
सभा क लोग बैठ जित अहा। सुनि राजा सब अचम्भहिं[2] रहा ॥ ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३६क [पा]न दीन्ह औ नन्द बहोरा। परा पेट जिउ[3] उठै मरोरा॥ ५
ई पठवाहि सत्रु[4] सो नाँनूँ। औ हिय मँह पैठि पखानूँ॥ ६
[.... ....]। [.... ....]॥ ७
मंत्री सूक हँकारा, औ नारद जमदूत। ८
सोइ मंत्र उपराजहु, हटै नन्द कर पूत॥ ९

एक पंक्ति अनुपलब्ध। स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. दूआरौं। २. ऍसहिं। ३, झिउ। ४. सतूर।

टिप्पणी— जुहारा–प्रणाम। अही–थी। हमरे–हमारे। रजायसु–राजाज्ञा। कीजा–करूँ। जित–जितने भी। बहोरा–लौटाया। मरोरा–खलबली। मंत्र–उपाय। उपराजहु–पैदा करो, सोचो।

८८

नारद सूक कहा सुन राजा। अब हम एक मंत्र उपराजा॥ १
हसत जो होय न कीजै क्रोधू। जो विधि सकैं कढ़ै[1] बिरोधू॥ २
अस कर काज न अति रिस कीजै। जो गुड़ मरै [न] माहुर दीजै॥ ३
ओकँह दाहिन अवँहि दयालू। मारैं जर होई सठ कालू॥ ४
ऊ अइसैं[2] जाँहि न मारा। जूझ मरहि सब कटक खँडारा॥ ५
जहँवा कन्ह होइ चरवाहीं। दइतहि कहहु मेघ होइ जाहीं॥ ६
हँग-सिला सम[3] लेहि पखाना। मारहि बरसि होइ मसवाना॥ ७
राजैं दइत हँकारे, सबहि दीन्हि अस पान। ८
जहवाँ कन्ह चरावइ, बरसहु जाइ पखान॥ ९

प्रति-पाठ—१. न कढ़ै। २. जियें। ३. सब।

टिप्पणी—हसत–हँसते हुए। विधि–उपाय। माहुर–विष। दाहिन–दाहिने, अनुकूल। दयालू–ईश्वर। हंग-सिला–ओला। फ्खाना–पाषाण, पत्थर। मसवाना–चकनाचूर।

८९

३६ख [तौ]लहि कन्ह बेग भा धोटा। टेकी जोग बज्र कै कोटा॥१
मन मँह कोपि माल जिमि काछा। बन कँह चला चरावइ बाछा॥२
कंक डंक सो टेकै पाऊँ। चलत अनूप सबे डगराऊँ॥३
बाँह नचाँहि बने मुरारी। लौक रही सौंहहि भुजारी॥४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माला कण्ठ दीन्ह गजमोती । बिच बिच रतन नखत कै [जोती] ॥५
कुण्डल[1] सुवन जरे सब हीरा । सोह रहे मकु स्याम [सरीरा] ॥६
राती पाट कर सिर सेली । कापर काँध पाट कै मेली ॥७
हाथ जराउ बाँसली, रहे पदारथ सोह । ८
भूलहिं मृग सबद सुनि, देवता जाँहि बिमोह ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कुण्डा ।

टिप्पणी—जौलहि–जब तक । घोटा–बालक । टेकी–सम्भाली । जोग–योग । बज्र कै कोटा–पत्थर का कोट । जिमि–की तरह । बाछा-बछड़ा । टेकै–रखता है । डगराऊँ–रास्ता; मार्ग । राती पाट–लाल रेशम । सेली–शिरोवस्त्र; पगड़ी (देखिये पीछे कड़वक ७० की टिप्पणी) । कापर–कपड़ा । काँध–कन्धा । पाट–रेशम । बाँसली–बाँसुरी ।

९०

गा बिंदराबन कन्ह मुरारी । सबै बनास्पति भई फुलवारी ॥ १
बंसि बजाउ चराउ बछेरो । भूले साउन म्रिग बघेरो[1] ॥ २
मेघ मलार मधुर धुन गाये । सँवर अकास[2] सेत होइ आये ॥ ३
आइ[3] दइत मेघ होइ छाये । भाँते दोठि छत्र गति पाये ॥ ४
[··· ···· ···· ···· ····] । [···· ··· ···· ···· ···· ···] ॥ ५
३७क जोजन बारह ऊँच पहारू । जोजन सात केर बिस्तारू ॥ ६
बायें हाथ टेकि सब राखा । परबत ढुरे सो आयउ लाखा ॥ ७
हाँकि गवाउ सब आनी, तिंह तर लीन्हि उतार । ८
कछु न बसानी कन्ह सों, हारे दइत सब झार ॥ ९

एक पक्ति (सम्भवतः पाँचवीं) अनुपलब्ध ।

प्रति-पाठ—१. पखेरू पाठ भी सम्भव । २. सुनर अकार । ३. अने ।

टिप्पणी—बनास्पति–वनस्पति । बछेरो–बछड़ा । साउज–जंगली पशु । बघेरो–एक जंगली पशु । मेघ-मलार-संगीत का एक राग, जिसके गाने से, प्रवाद है कि मेघ घिर आते हैं । अकास–आकाश । सेत–श्वेत । ढुरे–गिरे । लाखा–लखा; देखा । आनी–ले आये । बसानी–वश ।

९१

[जाँ]वत गोगिरि लै सब चापा । गाँ पारहिं औ गढ़ थापा ॥ १
[आ]पु घुनि पुनि भा बनवारी । जैसैं भँवर भवइ फुलवारी ॥ २
ठाँवहिं ठाँव सनवा जोरा । अपने रंग कान्ह[1] लदबोरा ॥ ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दीसीं[2] सबहि आवथ गोरसाही। दूध बेचै मथुरा[3] कँह जाई॥ ४
काहू कर उठि दहिउ अचोरी। काहू केर मटुकि हँस फोरी॥ ५
काहू कर उठि अंचल गही। काहू कण्ठ लगावा चही॥ ६
काहू बिहसि[4] गरे लै लावा[5]। काहू ताकि[6] पेम मिलावा॥ ७
काहू पूछहि अमीं रस, हाथ चलावइ चीर। ८
अनचाखो फिर चाखी, नारंग तुरंज जभीर॥ ९

प्रति-पाठ—१. काह २. दीन्हीं। ३. महरा। ४. येहस ५. ने लावा। ६. ताकी।

टिप्पणी—जाँवत–जितने भी। गोगिर–गोवर्धन पर्वत। दीसीं–दिखाई पड़ीं। गोरसाही–गोरस बेचने वाली। मटुकि–वड़ा। गरे–गले। नारंग–नारंगी। तुरंज–एक प्रकार का नीबू। जँभीर–एक प्रकार का नीबू। (यहाँ फल वाचक शब्दों का प्रयोग कवि ने नारी के अंग विशेष के लिए किया है।)

९२

३७ख फिरि गोकुल सब गयीं गुवारीं। नन्द महरि सों जाइ पुकारीं॥ १
देखहु कान्हा कै लागनी। कंचुकि फारी तोरी तनी॥ २
मधुबन जात गहीं हम बाहाँ। बरबस लइगा धरि बन माहाँ॥ ३
जस फूलन्ह मँह भँवर अवासा। घरीं घरीं भर कीन्हस बासा॥ ४
डार उनाइ बेल रस लीन्हा[1]। गहि नारंग दारिउँ नख दीन्हाँ॥ ५
लागीं उर सैं नखमर रहीं[2]। रकत देखु दीसहि नस कही॥ ६
गोरस चहै सभै कर खावा। बिन गोरस घर उतर न आवा॥ ७
साचँहि बात न आवइ, ओरहन दयीं गोवार। ८
अइस करै बरियाई, बरजहु आपुन बार॥ ९

प्रति-पाठ—१. कीन्हा। २. रली।

टिप्पणी—फिरि–लौट कर। गुवारीं–ग्वालिनी। नन्द महरि–नन्द की पत्नी। लागनी–छेड़खानी। कंचुकि–चोली। फाटी–फाड़ डाला। तोरी–तोड़ा। तनी–वन्द; बाँधने की डोरी। डार-डाल। उनाइ–झुका कर। गहि–पकड़ कर। ओरहन–उलाहना; उपालम्भ। बरियाई–जबर्दस्ती। बरजहु–मना करो। बार–बालक।

९३

देखा हरि विवाद तो लागा। लीन्ह काढ़ माथे कर पागा॥ १
रोवत पास नन्द के आवा। देखहु हौं यह बहुत खिझावा॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काहूँ दौरि धरी मोर चूनी। काहूँ खैंचत लीन्हि[1] धरि झूनी ।।३
कौनिउँ आन मटुक सर दीन्हीं। केउ बरबसँहि लाइ कँठ लीन्हीं ।।४
८२क [के]उ अधरँहि पै अधर मिलावँहि। केउ मथुरा कँह संग चलावँहि ।।५
[के]उ जगतन केउ धरहिं नगोटीं। छाड़ँहि नहिं कितँहु भुइँ लोटी ।।६
[के]उ तिन्ह लाइं रही[2] बतैनाँ। जीउ बिमोहगा आउ न बैनाँ ।।७
हँस हँस लगीं[3] रोवावइ, घाल आपु मँह बाद।८
पुनि अपुनहि उठि धाईं एती करे बिवाद ।।९

प्रति-पाठ—१. दीन्ह। २. रह। ३. लई।

टिप्पणी—बिवाद—झगड़ा। कढ़ि—निकाल। माथैं—सिर का। पागा—पगड़ी। नन्द—यहाँ तात्पर्य नन्द की पत्नी से है। खिजावा—परेशान किया। चूनी—चोटी, शिखा। कौनिउँ—कोई। बरबसहिं—जबर्दस्ती। नँगोटी—लँगोटी। भुइँ—भूमि। लोटी—लेटा। बिमोहगा—विक्षिप्त हो गया। बैनाँ—वाणी। घाल—डाल कर। बाद—शर्त। एती—यहाँ।

९४

देखि जसोदरें कन्ह[1] रोवाई। आप रूप भै कोह लेवाई ।।१
देखहु ई धीठी उदमादीं[2]। हँस बारी सों आइ बिवादीं ।।२
तुम न रहँहु धौ[र] परोरा। तिंह धर बार मोर झककोरा ।।३
तुम्ह अभरैल आहु जिह जोगू। तिंह सों तनहु जो पुरवँहि भोगू ।।४
बालक मोर दूध कर पोवा। सो कित खिझावहिं[3] जिह अस रोवा ।।५
जो रे हहु जोबन मैमाती। तहवाँ जाहु होइ जिह साँती ।।६
बारहिं बार विवादैं आईं। गोवहु नाँहि होतैं झुठाईं ।।७
हिय भै मौनों बेकहें, जरि [के] उठों घधाइ।८
८२ख कोउ नहि पार उतारत, चुक नहि जाँहि बुझाइ ।।९

प्रति-पाठ—१. कह। २. ऊदमादीं। ३. खिजावहि।

टिप्पणी—कोह—क्रोध। धीठी—धृष्ट। उदमादी—उन्मत्त। धौर-परोरा—नाजुक परोरं की लता। अभरैल—उच्छृङ्खल। तनहु—शरीर से लगो। पुरवहि—प्रदान करे। पोवा—नाजुक। जोबन—यौवन। मैमाती—मन्मत्त। साँति—शान्ति।

९५

नन्द के मन कुछ दुख कुछ हँसी। सुनै न कोई गोपीं बन लसीं ।। १

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तो राजा सेउँ कहाँ[1] उबारा। गोकुल न बाँची यहि बारा॥ २
रिस सें दुअउ बरजीं[2] समुझाई। समुझि गोपिता घर कँह[3] आई॥ ३
कन्ह लौटि बन सवरा सोई। जहाँ केलि गोपिंह सों होई॥ ४
बंसिकार पूरै होइ बिहाने। मिरगारन मँह मिरिग भुलाने॥ ५
फिरै अकेल तिंह बन माहाँ। दंडकारन बीच पनाहाँ॥ ६
कितहूँ छाँह कितहूँ धूपा। कितहूँ घन[4] बन अति अँधकूपा॥ ७
कितहूँ कितहि[5] ठाँउ अस, जहाँ छाँह न धूप। ८
तिंह ले सेज सँवारी, भोग चरित यह रूप॥ ९

प्रति-पाठ—१. कहा। २. बरीं। ३. घर। ४. खेल। ५. किनह।

टिप्पणी—लसीं–रहीं। सेउँ–से। उबारा–उद्धार। गोपिता–गोपियाँ। बिहाने–प्रातः होते हो। मिरगारन–मृगारण्य; वह बन जहाँ मृग ही मृग हों। मिरिग–मृग। दंडाकारन बीच बनाहाँ–यह पंक्ति पदमावत (१३७।४) और चन्दायन (१६६।३) में भी है। वासुदेवशरण अग्रवाल ने इसका पाठ 'दंडक आरन बींझ बनाहा' दिया हैं और इसकी व्याख्या 'दण्डकारण्य और विंध्याचल का वन' के रूप में किया हैं। उनके कथनानुसार यह मालवा का पठार और दक्षिण का पहाड़ी प्रदेश एवं नर्मदा के दोनों ओर का जंगल था। प्राचीन मार्ग उज्जयिनी से जाता हुआ महेश्वर के पास नर्मदा पार कर पूर्व की ओर बढ़ता था। इसमें उन्होंने चँदेरी और बीदर, दो स्थानों का संकेत देखा है। पदमावत में प्रसंग के अनुसार इस व्याख्या की सम्भावना हो सकती है, किन्तु चन्दायन के प्रसंग में ऐसी किसी प्रकार की सम्भावना नहीं हैं। अतः हमने वहाँ उसका पाठ 'दण्डाकरन बीजु पनाहा' स्वीकार किया था। कन्हावत में स्पष्ट प्रसंग वृन्दावन के वन-प्रदेश का हैं; अतः यहाँ किसी प्रकार भी वासुदेवशरण अग्रवाल की व्याख्या स्वीकार नहीं की जा सकती। यहाँ स्पष्टतः 'दण्डकारन का लाक्षणिक अर्थ गहन बन है। दूसरा शब्द स्पष्टतः 'बीच' हैं; उसे 'बींझ' नहीं पढ़ सकते। हमें 'बीच' ही पाठ संगत लगता हैं। अर्थ होगा मध्य में। तीसरे शब्द को 'बनाहाँ' अथवा 'पनाहाँ'—दोनों पढ़ सकते हैं। हम उसे 'पनाहाँ' पढ़ते हैं। अर्थ होगा—मार्ग में। समूचे वाक्यावली का अर्थ होगा—गहन वन के बीच रास्ते पर। कितहूँ कितहि—कहीं कहीं।

९६

राही सब गोपिंह क सिंगारू। जस अभरन पर सोहै हा[रू]॥ १
देवचन्द महरै कै बारी। चन्द्रबदन मृगलोचन [बारी]॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८३क केहरि लंक जात पदमिनी[1]। कोकिल कण्ठ हँस गामिनी ।। ३
सखी सहस दोइ गोहन चलीं। एक एक चाह सो एक एक भलीं ।। ४
सो मधुपुर गवनीं वहि संगे। औ कछु औरँहि दिहसि निरंगे ।। ५
खालि न कितहूँ काहु मन माँहा। ठुमकत[2] चलहि डोलावत बाहाँ ।।६
देख देवता लाल करेहीं। गरँभहि काहू उतर[3] न देहीं ।। ७
बाला अबला प्रौढ़ा[4], सब मिलि चली सँघात। ८
होइ निसरीं बिंदरावन, जानु कुसुम बन रात ।। ९

मूल प्रति में पंक्ति ५ पंक्ति ३ के रूप में अंकित है; किन्तु वहाँ उसकी कोई संगति नहीं है।

प्रति-पाठ—१. पदूमनि। २. ठगवँहि। ३. ऊतर। ४. परबढ़ा।

टिप्पणी—गोहन—साथ। चाह—से। खालि—सन्देह। लाल—लालसा। गरँभहि—गर्व से। प्रौढ़ा—वयस्क। रात—लाल।

९७

कन्ह कराँ एक भेस भरावा। बन अरन्न कै पंथ[1] भुलावा ।। १
गोपिंह रोक ठाढ़ आ आगें। अब न रहौं तुम्ह सेउँ बिनु लागें ।। २
इहवाँ हौं राजा कर दानी। दान मारि तुम्ह नितहि परानी ।। ३
और जितीं आईं ग्वालिनी। देह देईं दान गयीं सब जनी ।। ४
तुम्ह न कबहु भेटैं मैं पायीं। हतो खोज भल भा तुम्ह आयीं ।। ५
अब मैं करब मोर जस मानी। दूध-क-दूध पानि-कर-पानी ।। ६
फोरि मटुकि दहि सबकाँ घालों। अब कित बात दान कै चालों ।।७
८३ख बन मोर तिंह बेखड, दान जाहु कस मार।
चलहु सबै संग मोरें, लै राखों बैसार ।। ९

प्रति-पाठ—१. पन्ह।

टिप्पणी—भेस भरावा—छद्मवेश धारण किया। अरण्य—वन। गै—जाकर। फन्द—छल। ठाढ़—खड़ा। इहवाँ—यहाँ। दानी—कर उगाहने वाला। दान—कर। मारि—चुरा कर। हतो—था। करब—करूँगा। बँसार—बैठा।

९८

ठाढ़ीं भईं सबै ग्वालिनीं। बोलि उठी राही पदुमिनी[1] ।। १
कै हम लौंग सुपारी लादी। कै परमार क परबत आदी ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कै चन्दन कस्तूरी केवरू। कै हरदी औ मोंठ कचूरू॥ ३
कैधौं नरियर दाख चिरौंजी। पीपर मिरिच क जभींर न्योजी॥ ४
कै पटुवँह खिरदार चलाये। कौन टाँड़ तुम्ह पूरै आये॥ ५
दान न होइ दही औ पानी। कौन दान तुम्ह माँगो दानी॥ ६
तुम्ह अकेल दोइ सहस गुवारीं। मार जाँहि का चलै तुम्हारीं॥ ७
जो गोरस कुछ चाहहु, माँग रसहिं रस लेहु। ८
चलत पंथ जनि लागहु, जाइ गुवारिन्ह देहु॥ ९

प्रति-पाठ—१. पदूमिनी।

टिप्पणी—ठाढ़ी भई–खड़ी हुई। केवरु–केवड़ा। हरदी–हल्दी। मोंठ–एक प्रकार का अन्न। कचूरू–कचूर; एक प्रकार की औषधिक जड़ी। नरियर–नारियल। दाख–मुनक्का। पीपर–पीपल। मिरिच–मिर्च। जभीर–नींबू। न्योजी–लीची। पटुवँह–पट्ट; वस्त्र। खिरदार–धारीदार। टाँड–व्यापार को सामग्री। गोरस–दूध-दही।

९९

सुनु राही अब बात हमारी। कहाँ जाइ मोसों कै[1] मा[री]॥१
टाड़ देखि बहुतै हँहु लागों। छूँछहि नाहिं डोलावन माँगों॥२
८४क [ज]नि भूलहु यँहि गरब[2] गुवारीं। का कै सकहि पुरुख सेउँ नारीं॥३
गोरस मोरें काज न आवा। घरहि बहुत का करों परावा॥४
तों मैं देखी नारि सलोनी। देवि सरूप महरि सुठि लोनी॥५
भोग भुगुति मन मैल न कीजै। रति माँगी तुरत[3] सों दीजै॥६
[·· ·················] । [·· ·························· ····]॥७
यहि बनखँड तुम्ह तिवई[4], आवत जात[5] सकाहु। ८
हम सेउँ करहु चिन्हारी, जिह सुख आवहु जाहु॥ ९

एक पंक्ति का अभाव; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. लै। २. करत। ३. करत। ४. बिनवइ। ५. जाह।

टिप्पणी—राही–राधा। मोसों–मुझसे। कै–कर। मारी–मार। हँहु–हूँ। छूँछहि–बिना किसी आधार के। डोलावन–पथ-कर। जनि–मत। काज–काम। परावा–दूसरे का। सलोनीं–लावण्यमयी। भुगुति–भुक्ति; भोजन। सँकाहु–शंका करती हो। चिन्हारी–जान-पहचान।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१००

सुनि गोपीं यह बात सकानी । केउ बिहसी केउ मुँह मुस्कानी[1] ।।१
काहूँ सुनि दहिनें होइ हेरा । काहूँ मुस्कियाइ मुख फेरा ।।२
काहूँ मुख अंचल लै दीन्हाँ । काहूँ दौरि बेलि बन लीन्हा ।।३
कौनों हँसहि बिछूँदें ठाढ़ीं । केउ भागी औहट लेइ[2] बाढ़ीं ।।४
केउ पूछहि यह भई कस बाता । केउ खीमस मिलि करँहि सँघाता ।।५
राही राह गहे हौ दानी । सबै बिखमकै मनहि सकानी ।।६
[अ]ब रे दहिउ मँह काढ़त घीऊ । दुबुखि चलीं भागि[3] लै जीऊ ।।७
८४ख जैस झुण्ड[4] हिरनिह कर, बिदर चलें बन बेल । ८
भागीं आपु आपु कँह, राही छाड़ अकेल ।। ९

प्रति-पाठ—१. सकानी । २. लह । ३. भागी । ४. झूण्ड ।

टिप्पणी—सकानी–शंकित हुईं; डरीं । हेरा–देखा । ओहट–आड़ । बाढ़ी–बढ़ीं । खीमस–हँसी मजाक । सँघाता–साथी । गहे–पकड़े । हौ–है । बिखम–विषम-स्थिति । दुबुखि–दुबक कर । बिदर–छितर बितर होकर भागना ।

१०१

तो रिसान राही गोपिता । सती न पार मोर अस तपा ।।१
एइ क गरब हो लावइ दारा । तूँ अकेल किह कर बैसारा ।।२
देखु दई हौं ताकह लिखी । करँहि बखान सकल जोतिखी ।।३
जाकर मथा समुँद्र अतिवानी । बासुकि दीढ़ सुमेरु[1] मथानी ।।४
सुर नर मुनि गुनि गँधरब देवा । सब मिलि करँहि रैन-दिन सेवा ।।५
अस पिउ[2] तज जो अन्त जिउ[3] लावा । भेट भयें का मुख दरसावा ।।६
एक एक मन सँवरों सोई । मकु[4] जिउ[5] जाउ न दूसर होई ।।७
हौं ताकर घनि दूलहि, धरम दसा जिह नाँउँ । ८
नियर न हौं तहाँ खिन, पाप होइ जिह ठाँउँ ।। ९

प्रति-पाठ—१. समर । २. पीउ । ३. जीउ । ४. मख । ५. जीउ ।

टिप्पणी—सती–पार्वती । पार–बराबरी । जस–जैसा । तपा–तप; साधना । बैसारा–बैठाया हुआ; नियुक्त किया हुआ । अतिवानी–अथाह जल । दई–ईश्वर । हौं–मुझे । ताकह–उसको । दीढ़–दृढ़ । अन्त–अन्यत्र । दरसावा–दिखायेगा । सँवरों–स्मरण करूँ । धनि–स्त्री । दूलहि–दुलहिन; पत्नी । नेरि–निकट ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०२

बिहँस कन्ह मन भयउ बिसेखा। मैं राधिका तोर सब देखा ॥१
हियें गुनहु सुनु राही नारी। हहीं सो बिस्नु सरूप मुरारी ॥२
८५क मैं समुन्द मँथि[1] लखमीं काढ़ी। गोकुल आये कुदव जब बाढ़ी ॥३
मँही चहा तुम्ह सेंउँ सुख बासा। महीं कन्ह दरसन कैलासा ॥४
महीं सोईं औ मँहि[2] बनवारी। महीं सो भँवर महीं फुलवारी ॥५
महीं सो तरुवर पंखि बसेरी। महीं सो साउज महीं अहेरी ॥६
महीं सो कन्ह गोबिन्द गोपालू। अस प्रसन्न[3] मोहि भयउ दयालू॥७
सो दिन आज जो चाहत, मुहि तुम्ह भयउ मिराउ। ८
पुराउँ आस हिय कर, रहसि[4] करहु बधाउ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. मँह। २. तिह। ३. परस। ४. रहसी।

टिप्पणी—बिसेखा—विशेष। मँथि—मथ कर। लखमी—लक्ष्मी। कुदव—अनाचार। सुखवासा—शयन-कक्ष। पंखि—पक्षी। बसेरी—वास करने वाले। साउज—वन-पशु। अहेरी—शिकारी। मिराउ—मिलाप; भेंट। रहसि—प्रसन्न होकर। बधाउ—बधाई।

१०३

जो गुसाइँ[1] तुम्ह जें बलि छरा। आपुन कस न दिखावहु करा ॥ १
भानु न कवहु छपायें छपै। देखै जगत गँगन तस[2] तपै ॥ २
बनु नारायन जें जग चीता। प्रगट होइ सुनहि गोपिता ॥ ३
कब[3] लग रहु ऐस अलोपी। नित उठि बैठि निहारहिं गोपी ॥ ४
देहु दरस आपुन मुख चन्दू। मुख जोवइ नित बालगोबिन्दू ॥ ५
जोरहु गाँठ देउ सुख भाऊ। तन मन प्रान करहु न्योछाऊँ[4] ॥ ६
८५ख जौलहि न देखों आपु[न] नैनाँ। तो न पतीजों तुम्हरे बैनाँ ॥ ७
तुम जो गही बहुरूपी, जैस छाँह औ धूप। ८
सो मोहि बेगि दिखावहु, भाँतिह भाँत अनूप ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जो क आई। २. बस। ३. कव। ४. न्योछारू।

टिप्पणी—छरा—छला। कस न—क्यों नहीं। करा—कला। छपाये—छिपाये। चीता—चित्रित किया; रचा। अलोपी—अदृश्य। जोरहु गाँठ—विवाह करो। भाऊ—भाव।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१०४

कहत जो बात राधिका नारी । आप सरूप भा कन्ह मुरारी ।। १
पहिलें बालक भा हुत छोटा । कीन्हसि रुदन भये बड़ [धोटा] ।। २
पुनि धर गा लाग अकासा । डरपी नारि देख तिंह पासा ।। ३
धरती पाय सरग सिर लायसि । गहि दूनिहु कर सरग उठायसि ।।४
पुनि भा वृद्ध बयस अति नयऊ । काँपे सीस खीन तन भयऊ ।। ५
धरति चलायसि जैस हिंडोला । सरग पतार लों खट डोला ।। ६
पुनि सरूप भा सुन्दर लोनाँ । बारह बानि कें जस सोनाँ ।। ७
रेख उठत मसि भींजत, तिंह बिधि भयउ सँजोग । ८
गहसि बाँह राही कै, चलहु करँहि रस भोग ।। ९

टिप्पणी—धर–धड़ । लाग–लग गया । डरपी–डरी । पाय–पैर । गहि–पकड़ कर । बयस–वयस । नयऊ–झुक गया । खीन–क्षीण । हिंडोला–झूला । बानी–सोने की शुद्धता का नाप । बारहबानि–विशुद्ध सोना । रेख उठत मसि भींजत–आते हुए मूँछों की हलकी कालिमा । गहसि–पकड़ा ।

१०५

पाठ पढ़ीं धनि चतुर सयानी । अमर कोक कन्या गुन ग्यानी ।। १
८६क बहुत लखाउ तोहि धनि सदा । इहै पुरुख मोकह बिधि बदा ।। २
कहत जो पंडित अरथ विचारी । सो किह निधबो रूप मुरारी ।। ३
करत जो बात गरब [कै] धीठी । मन लजान कै तरहुत दीठी ।। ४
घूँघट काढ़ि रही मुख झाँपी । गहनैं लीन्हि जोन्ह मुख काँपी ।। ५
हौं रे वहैं जाकँह हुत गढ़ी । तिह कै सेज आइ हौं चढ़ी ।। ६
अब कस करों कौन चतुराई । जिंह अछूत घर पायउ जाई ।। ७
जँह हुत सौर-सुपेती, लइगा कन्ह मुरारि । ८
राह गही बन राही, भई अचेत बर नारि ।। ९

टिप्पणी—धनि–स्त्री । कोक–कोक पण्डित रचित कामशास्त्र । गुन–गुण । मोकह–मेरे लिए । धीठी–धृष्टता । तरहुत–नीचे । दीठी–देखा । घूँघट–लज्जा और शील के प्रतीक स्वरूप शिरोवस्त्र से मुँह ढँकने की प्रक्रिया (प्राचीन काल से ही इस देश में इसका प्रचार था; किन्तु प्राचीन कालीन अवगुण्ठन से मध्य-कालीन घूँघट का रूप कुछ भिन्न था । मध्यकाल में मुसलमानी प्रभाव से इसका प्रचार बढ़ा । मनूची ने लिखा है कि परिवार से बाहर के लोगों के सामने स्त्रियाँ अपनी साड़ी का पल्ला खींच कर मुख ढँक लेती थीं) । झाँपी–छिपा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गहनें—ग्रहण । काँपी—कतर दिया, कम कर दिया । सौर-सुपेती—ओढ़ना-बिछौना (यहाँ तात्पर्य शय्या से है) ।

१०६

देखी काह कन्ह कै बासू । देखि ठाँउ बिसरा कैलासू ।। १
पुहुप सुगन्ध अमिय रस बेली । केवरा केतकि कुन्द चबेली ।। २
सोनबरन रूपमंजनी[1] । बिच बिच जाही जूही घनी ।। ३
चहूँ कोन[2] फूली फुलवारी । नागेसर सदबरग नेवारी ।। ४
कुसुम गुलाल सघन सेवती । चम्पा मौलसिरी[3] मालती ।। ५
८६ख बौलसिरी औ बकुंजन लावा । निरख सिंगारहार मन भावा ।। ६
सुरंग बकौरी पीली फूली । देखि नारि सुदर्शन[4] भूली ।। ७
देवता तरसैं कितहू, बास होइ महकार । ८
और फूल को बरनै, पादर और कचनार ।। ९

प्रति-पाठ—१. रूपमंजरी । २. कोध । ३. फूलसिरी । ४. सूदर्शन ।

टिप्पणी—काह—क्या । ठाँउ—स्थान । अमिय—अमृत । बेली—लता । केवरा—केवड़ा; काँटेदार पँखुरियों वाला एक फूल । केतकी—केवड़े की जाति का एक अन्य फूल । कुन्द—बेले की जाति का फूल । चबेली—चमेली (यह दो प्रकार की होती है—राय चमेली और सोनजर्द चमेली) । सोनबरन—पीले रंग की चमेली, जिसे सोनजर्द भी कहते हैं । रूपमंजनी—रूपमंजरी; चमेली की तरह का लाल फूल; सदाबरग । जाही—चमेली अथवा मालती की जाति का बरसात में खिलने वाला फूल । जूही—गर्मी के दिनों में खिलने वाला एक सफेद फूल । नागेसर—नागकेशर; बसन्त में फूलने वाला पाँच पँखुरियों का लाल फूल । सदबरग—गेंदा । नेवारी—नवमालिका; बसन्त में खिलने वाला श्वेत पुष्प । कुसुम—केसर । गुलाल—गुल्लाला; बसन्त में फूलने वाला फूल (आइने-अकबरी) । सेवती—श्वेत गुलाब जो बरसात में खिलता है । मौलसिरी—मौलश्री । बौलसिरी—बकुल । बकुंजन—सम्भवतः मुचकुन्द । सिंगारहार—हारश्रृंगार; पारिजात; शेफालिका; केसरिया डंडी वाला छोटा पुष्प । बकौरी—गुलबकावली (क्राइसेंथिमम) । सुदर्शन—श्वेत रंग का बड़ा पुष्प ।

१०७

चहुँ दिसि दोह सेत रतनारे । रैन माँझ जस दीपक बारे ।। १
दीसहिं जैस सरग मँह तारे । अँधियर रैन भा उजियारे ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बहुतैं करीं तहाँ विधि रचीं। सज्जमान जानहु कचपचीं ॥ ३
औ सोने रूपै कै जोती। जगमगाँहि जनु मानिक मोती ॥ ४
तिह लै पालँग सेज बिछाई। पाट बनीं औ सुरंग सुहाई ॥ ५
[तिह] ऊपर पटम्बर[1] डासा। फूल भरे आवै घन बासा ॥ ६
दुँहु दिसि गेंडुवा[2] नेत ऐसें। जानहु अछरि चली तिह बैसें ॥ ७
तिंह पर कन्ह बोलावैं, चाहै कीन्ह[3] बिरास। ८
जपत माल जिमि राही, काँपी पिरम तरास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. ततसमर। २. कन्दा। ३. कह।

टिप्पणी—दीह–दीख; दिखाई पड़ता है। वारे–जलाये। अँधियर–अँधेरी। करीं–कलीं। सज्जमान–सजी हुई। कचपचीं–कृतिका; लघु तारों का समूह। पालँग–पलंग। पाट–इस शब्द का प्रयोग हमें मौलाना दाऊद के चन्दायन से पूर्व के किसी साहित्य में नहीं मिला। उस काल में भी इसका उल्लेख अन्यत्र नरपति नाल्ह के बीसलदेव रासो में ही हुआ जान पड़ता है। वहाँ इसका उल्लेख पाट-पटम्बर के रूप में हुआ है। तदनन्तर इसका उल्लेख हमें यहाँ पहली बार देखने को मिल रहा है। कदाचित यह शब्द संस्कृत पट या पट्ट से बना है। ग्यारहवीं शती के वैजन्ती कोष (१६८।२३१) और बारहवीं शती ई० के अभिधान चिन्तामणि (३।३६६-६७) के अनुसार पट वस्त्र की सामान्य संज्ञा जान पड़ती है। दशवीं शती ई० के प्रारम्भ में लिखे गये त्रिविक्रम भट्ट कृत नलचम्पू के एक उल्लेख से ऐसा लगता है पट सामान्य रूप से वस्त्र को कहते थे। इसके विपरीत ऐसे भी उल्लेख उपलब्ध होते हैं कि पट किसी विशेष प्रकार के, सम्भवतः रेशमी, वस्त्र को कहते थे। पश्चिमी चालुक्य नरेश सोमेश्वर (११२४-११३८ ई०) ने अपने मानसोल्लास में चित्रित वस्त्रों के विविध सूत्रों का उल्लेख किया है। उसमें कर्पास (कपास, रुई), क्षौम (सन-पाट आदि पौधों से निकलने वाला सूत), रोम (ऊन) के साथ पट्टसूत्र का भी उल्लेख किया है। प्रसंग के अनुसार यहाँ तात्पर्य रेशमी सूत से अनुमान किया जा सकता है। राजतरंगिणी में कल्हण ने एक स्थान पर कहा है कि पट्टन (पाटन—श्रीनगर-बारामूला के बीच स्थित स्थान) पट्टवानम् के लिए प्रसिद्ध था। इससे भी ध्वनित होता है कि पट्ट रेशम को कहते थे। ज्योतिरीश्वर ठाकुर (चौदहवीं शती ई०) ने वर्ण-रत्नाकर में वस्त्रों की तीन सूचियाँ दी हैं। एक सूची तो सूती वस्त्रों की हैं। दूसरी दो सूचियाँ पटम्बर जाति और देशी पट्ट के वस्त्रों की है। इनसे स्पष्ट है कि पट्ट सूती वस्त्रों से भिन्न वस्त्र को कहते थे। हो सकता है पाट से जायसी का अभिप्राय उस रेशमी वस्त्र से हो जिसे ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने देशी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पट्टवस्त्र कहा है। किन्तु लोक में प्रचलित व्यवसाय-जाति-संज्ञा पटुआ और पटहरा इस ओर संकेत करते हैं कि लोक में पाट सूती वस्त्र की संज्ञा के रूप में ग्रहण किया जाता रहा है। पटम्बर—नरपति नाल्ह ने बीसलदेव रासो में पाट-पटम्बर का उल्लेख किया है। कदाचित यह रेशमी वस्त्र का नाम है। एक प्रकार के रेशमी वस्त्र को आज भी पीताम्बर कहते हैं, जो कदाचित पटम्बर का ही भ्रष्ट रूप है। डासा—बिछाया। गेंडुवा—लम्बोतरा गोल तकिया। नेत—नेत्र; एक प्रकार का वस्त्र जिसका उल्लेख बाणभट्ट और उसके पश्चात के प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य में प्रायः मिलता है। नेत्र का अर्थ बटा हुआ है, जो इस बात का संकेत है कि यह बटे हुए सूत का बनता रहा होगा। ऐसा जान पड़ता है कि यह वस्त्र मुख्य रूप से शय्या के उपकरणों में प्रयुक्त होता था। क्षीरस्वामी के कथनानुसार यह जटांशुक था। अन्यत्र उसे सूक्ष्म रेशमी वस्त्र (सूक्ष्मपट्टकूल वारलानां) बतलाया गया है। बिरास—विलास। माल—माला। राही—राधा। पिरम—प्रेम। तरास—त्रास।

१०८

८७क बिनयी कन्ह नारि होइ आगें। एक बोल दीजै मोहि माँगें॥ १
नवल नेह नव प्रीतम आजू। नव सुहाग ते धनि लै साजू॥ २
आजु बियाहु[1] मोर जनु होई। जस हौं कहौं करहु पिय सोई॥ ३
आपन जाइ सिंगार बनावों। औ संघि-सखि[2] साथ है आवों॥ ४
अरति उतारी तिनँहि दीजै। जोरि संघ भावर पुनि कीजै॥ ५
काक छोर कर मस पावत। बीनै फूल बिहनैं बन आवत॥ ६
जनि जानहु लिहीं परावों। माथ छुवों जो बेग न आवों॥ ७
बचा बाँधि कै राही, घर गवनी सत भाँवँ। ८
हँस हँस पूँछहि गोपीं, कस कीन्ह तिह ठाँवँ॥ ९

प्रति-पाठ—१. बियाहू।

टिप्पणी—बिनये—निवेदन किया। बोल—वचन। पीतम—प्रियतम। सखि—संघि—सखी-साथी। अरति—आरती। बीनै—चुनने। बिहनै—कल प्रातःकाल। परावा—भाग जाउँगी। माथ छुवो—सिर की कसम खाकर कहती हूँ। बचा—वचन। राही—राधा।

१०९

पुलखि बदन तो राही बोला। तुम्हरे हमहि दई अभमोला॥१
और सुनहु दुख मह सुख बाता। जो पिय पुरवै आस विधाता॥२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिह खोजत हुत मरन बिसेखा। दानी भेस सोइ मैं देखा ।।३
पूँछत पूँछत भई चिन्हारी। देखा प्रगट कन्ह मुरारी ।।४
८७ख हुँत प्रतिग्या जैस सरूपा। भाँतिह भाँत देखा तिह रूपा ।।५
पै बिन तुम्ह न कीन्हेउँ बिरासी[1]। बाचा बाँधि अन्तरमन आसी ।।६
[··· ···· ···· ···· ···· ···· ····]। [···· ···· ···· ···· ···· ····] ।।७
गा यह च्योंरा इह, मानत रितु बसन्त। ८
बीनै फूल चलहु तँह, औ देखैं सो कन्त ।। ९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. बीरासी।

टिप्पणी—पुरवै—पूरा करे। आस—आशा। विधाता—ईश्वर। चिन्हारी—पहचान। बिरासी—विलास। बाचा बाँधि—प्रतिज्ञा कर। अन्तरमन—हृदय से। आसी—आई।

११०

कन्ह का चीत राही सेउँ लागा। बंसि बजाइ रैन सब जागा ।। १
काम लुबुध मन भई राधिका। रहि न जाइ बिरहें तन दहका ।। २
दरस जीव लीन्ह हरि काढ़ी। बिन जिय कया रैन अति बाढ़ी ।। ३
अंग अंग लीन्हें धुनि सबई। जागत खिन बरिसा सो भई ।। ४
रंगराती जियें कछु न सुहायी। पल जस पहर पहर जुग जायी ।। ५
दोउ रहे आस कर ऐती। चार पहर चार जुग बीती ।। ६
हियें अगिन[1] जियें परजरई। तिंह बियोग वँह नींद न परई ।। ७
दया भोर हौइ कोउ, टूट बिहसाइ। ८
नतुर रात निसि बाढ़े, नेक[2] न जियें सुहाइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. एकै। २. पेग।

टिप्पणी—जागत—जागते हुए। खिन—क्षण। बरिसा—वर्ष।

१११

८८क दई-दई कै भयउ बिहानाँ। उगवा सुरुज कँवल बिकसाना ।।१
राही कहा बुलाइ सहेली। अइस रात हौं रहेउँ दुहेली ।।२
अब लहि मोर हतों तस जीऊ। जानत नहिं वँह कस पीऊ ।।३
न जनों कस रे फूल कस भौंरा। छाछो धौर दूध पुनि धौरा ।।४
काल्ह जो कहों कन्ह सों बाता। रह न जाइ दरस मन राता ।।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हरि जिउँ लीन्ह कीन्ह[1] पुनि सूनाँ। सुख बिसरा[2] भयउ दुख दूनाँ ॥६
नींद न परी सेज मोंहि चाँटी[3]। सेजवाँ अगिन फूल जनु काँटी ॥७
घरी सो बरिस भइ जागत, परा लोर [पर]लोर ॥ ८
यहि विधि रैन गवायों, बहु दुख पायों भोर ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कह। २. बिसराम। ३. चायी।

टिप्पणी—दई-दई कै–ईश्वर-ईश्वर करके। बिहानाँ–प्रातःकाल। दुहेली–अकेली। हुतो–था। जनों–जानों। छाछो–छाछ भी। धौर–धवल; सफेद। चाँटी–चींटी। काँटी–कील; काँटा। भोर–प्रातःकाल।

११२

सँखिह[1] कहा रे राधिका। पिउ पिउ करै देखु जनु पिका ॥ १
बरस देवस लग रहै पियासा। पानि न पिये स्वाति[2] कँ आसा ॥ २
ओकह भाउ स्वाति कै बुन्दू। काइ करे जो भरा समुन्दू ॥ ३
जिंह अस हियें घर कै कोई। तिंह वँह बुन्द कहाँ कै होई ॥ ४
८८ख तस तूँ प्रेम फाँद उरझाई। इँह सो बूझसि खेल सुहाई ॥ ५
प्रेम खेल है कठिन दुहेला[3]। सो खेलवार जो सर सों खेला ॥ ६
सँवरत[4] होइह मरम बिसेखा। हिय कै आँखिह करहस देख ॥ ७
तौलहि लाग[5] रहु मन, प्रेम[6] सनेही पास। ८
जौलहि इंछा पूजहि, मानत भोग बिरास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. संख। २. सान्त। ३. दोहेला। ४. सवरत। ५. लग। ६. परम।

टिप्पणी—पिका–पिक; पपीहा। देवस–दिवस। आसा–आशा। ओकह–उसका। भाव–चाहा। फाँद–फन्दा। उरझाई–उलझी। सुहाई–सुहावनी। सँवरत–स्मरण करते। हियकी आँखि–हृदय की आँख से। ईंछा–इच्छा; कामना। बिरास–विलास।

११३

तिंह सब गोपीं मिल आईं। रच रच भाँति अनूप बनायीं[1] ॥ १
कँहहि काह सबै तुम राही। आइ आज जो पिय रति चाही ॥ २
मान लीन्ह बसन्त सुहावा। घर घर पंचम सबही गावा ॥ ३
चलहु फूल बीनन बन जायी। पूजि गौरि कर जोरि मनायी ॥ ४
सुन सब उठीं जो आयसु पावा। राही आइ सिंगार बनावा ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केस छोर[2] मुख पाँछहि टारे। इंगुर पूर कीन्ह रतनारे॥ ६
कुंकुह मर्दन कै तन माँजा। कै अन्हान सब अभरन साजा॥ ७
चन्दन चीर झारि सब, राग जो होइ सँवार। ८
८९क देख बिमोहे देवता, राही केर सिंगार॥ ९

प्रति-पाठ—१. बनायी। २. कैं पिछौर।

टिप्पणी—पंचम—पंचम स्वर। बीनन—बीनने; जमा करने। गौरि—गौरी; पार्वती। आयसु—आदेश। कुंकुह—कुंकुम; केसर। मर्दन—मल कर। माँजा—रगड़ा। अन्हान—स्नान। अभरन—आभरण; आभूषण। चन्दन-चीर—चन्दनी रंग का वस्त्र जिसे जायसी ने पदमावत में चँदनौटा (चन्दन-पट्ट) (३२९।३) कहा है।

११४

माँग झार कै पाटीं पारीं। रचि रचि चित्र बिचित्र सँवारीं॥ १
तस कै झरि केस[1] चिकनाये। दर्पन जानु दुवँहु[2] दिसि लाये॥ २
पाँत पाँत मुक्ताहल बने। सरँग नखत जनु दीसहि घने॥ ३
उगवत सूर किरन जस फूटी। रेंग चलीं जनु बीरबहूटी॥ ४
रचि सोरह निसरी गोबदनी। राते पाट बनाइ फूँदनी[3]॥ ५
सेंदुर माँग भाव तस पाये। **खेचकी** जैस रात दिखराये॥ ६
कनक खंभ जनु बिसहर चढ़ा। गारुर भूल मन्त्र को पढ़ा॥ ७
बिच बिच रतन पदारथ, बिच-बिच मानिक मोंत॥ ८
जगमग दीसै **जग, बेग** तिह जोत॥ ९

प्रति-पाठ—१. कंस। २. दूबह। ३. फूदनी।

टिप्पणी—पाटी फारी—बालों को बीच से अलग किया। मुक्ताहल—मुक्ताफल; मोती। सरँग—स्वर्ग, आकाश। राते पाट—लाल वस्त्र। बिसहर—सर्प। गारुर—सर्प का विष उतारने वाला। बिच-बिच—बीच-बीच में।

११५

मणि ललाट जनु कंचन रेखा। दूँज[1] क चाँद उवा तस देखा॥ १
बदन सपूरन ससिहर दीसा। जग[त] जोहारे देइ असीसा॥ २
सूरज कराँ आवत[2] होतीं। सहस कराँ भै निरमल जोतीं॥ ३
८९ख तिलक बनाइ जो जोती रची। चाँद संघ जानहु कचपची॥ ४
स्रवन सीप[3] अस देख न काऊ। सोहहि तरौनाँ कनक जराऊ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हीरा लाग दुहों पटिहारी । चमकत रहहिं होइ उजियारी ॥ ६
मनिक खूंट दीप जनु धरे । बिनवइ चाह अधिक निरमरे ॥ ७
चमकहि बारन कै नग, जनु ससिहर[4] मँह तार । ८
दुँहु दिसि कौंधा लौकै, कानहि कै चमकार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दूँज । २. 'उवत' पाठ भी सम्भव । ३. सेत । ४. बिसहर ।

टिप्पणी—ससिहर–चाँद । जोहारे–प्रणाम करे । तरौनाँ–कान का एक आभूषण; कर्णफूल । पटिहारी–पट्टियों में । कौंधा–बिजली । लौके–चमकै । चाह–से भी ।

११६

नैन सरूप सुरगंम दीठी[1] । कँवल पत्र जनु मँवर[2] बईठी ॥१
सुरंग बिरंग सेत[4] मँह राते । डोलहिं सहज जानु मदमाते ॥२
चपल बिलोल बंक[5] औ बाँके । थिर न रहाँहि लेंहि जिउ ताके ॥३
भाव सहित जवही चख मोरा । उलथि समुँद्र घटि उठहिं[6] हिलोर[7] ॥४
अंजन रेख बने अति कारे । खंजन चाह अधिक उनियारे ॥५
भौंह धनुक धनि जानु अहेरीं । जो बन करत मोंह रह फेरी ॥६
लोचन बान सान देइ राखी । बिनु सर मारै काम कटाखी ॥७
९०क सुरंग कपोल सुहाइ, जिह तिल एक बिधि दीन्ह । ८
भा संजोग मसि बुन्दा, अचल गगन धुव कीन्ह ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दीती । २. भवर । ३. बईती । ४. सीप । ५. बंख । ६. घब अबहि । ७. बिलोरा ।

टिप्पणी—सेत–श्वेत । राते–लाल । मदमाते–मदमत्त । थिर–स्थिर । ताके–देखते ही । भाव सहित–अदा के साथ । मोरा–मोड़ा; घुमाया । चाह–से । उनियारे–नुकीले । अहेरीं–शिकारी । कटाखै–कटाक्ष । मसि–कालिख । धुव–ध्रुव तारा ।

११७

सुये[1] नासिक मुँह क सिंगारू । भाव देख भूला संसारू ॥ १
पातर ऊँच बनी सोनारी । तिह रे दिपै बेसर मनियारी ॥ २
गँगन अगस्त रहै जनु उई । कर मीचे चुँक जाइ न छुई ॥ ३
तिह तर अधर दईं जो सँवारे । सेत बरन दीसहि रतनारे ॥ ४
सज्जमान जनु विद्रुम धारे । जानु मिलाये चीर पँवारे ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अति रसाल अँब्रित भर राखे। रहे अछूत न काहूँ चाखे॥ ६
खात तँबोल अधिक रंग चढ़ा। काँकह दयी वदन अस गढ़ा॥ ७
मुख सो कँवल जिमि बिगसी, फूल परहि जनु बात॥ ८
मौलि बसन्त रहा जग, दरसन देखें प्रात॥ ९

प्रति-पाठ—१. सूये।

टिप्पणी—सुये—शुक; तोता। पातर—पतला। सोनारी—सुघर। दिपै—दीप्तिमान हो। बेसर—नाक के बीच पहना जाने वाला आभूषण; लटकन; बुलाक (सम्भवतः यह मुस्लिमकालीन आभूषण है। भारतीय प्राचीन साहित्य और कला में नाक के किसी भी आभूषण का उल्लेख नहीं है।)। अगस्त—एक नक्षत्र। उई—उगा। सज्जमान—सजे हुए। विद्रुम—मूँगा। रसाल—रसयुक्त। अछूत—अनछुए। चाखे—चखा। तँबोल—ताम्बूल; पान। कार्कहि—क्या कहें! बदन—मुख। गढ़ें—रचना की। परहि—गिरते हैं। मौलि—पुष्पित होना।

११८

दसन पाँत[1] जनु बैठे हीरा। तिल तिल सोह खात[2] मुख बीरा॥ १
माँजे चौक भलें रंग सोई। अन्तरिख[3] चमकार जस होई॥ २
९०ख बिहसत जानहु बीजु दिखावइ। हँसे तो जग उजेर होइ आवइ॥ ३
अधरँहि माँझ नखत जनु ऊइहि। बचन सीप[4] मोंती जनु जूइहि॥ ४
कोकिल कंठ[5] बात जो कहे। सुनत बिमोह जगत[6] सब रहे॥ ५
फूल परहिं चू जो कहि बोला। जनु अँब्रित चू सुरंग कपोला॥ ६
दारिउँ दाँत बने दोइ पाँती। बरनि न जाहि ऊपम भाँती॥ ७
सब अछरीं लजाईं, राही केरें रूप। ८
तिह क बनाव कहों का, कस सिगार सरूप॥ ९

प्रति-पाठ—१. पात। २. खाब। ३. अतरँह। ४. सब। ५. कँह। ६. जग।

टिप्पणी—दसन—दाँत। पाँत—पंक्ति। बैठे—जड़े हुए। खात—खाते हुए। बीरा—पान। माँजे—मले हुए। चौक—दन्त-पंक्ति (चौक मूलतः एक मुहावरे का शब्द है जो समूह के रूप में बैठने के प्रसंग में प्रयोग होता है।)। अन्तरिख—अन्तरिक्ष में। बीजु—बिजली। उजेर—उजाला। सीप—वह पुटिका जिसमें मोती रहती है। जूइहि—रखी हुई है। परहि—टपक पड़ते हैं। दारिउँ—दाड़िम; अनार।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

११९

गीउँ केर का कहौं बनाव। तस कछु नाँहि देउँ जिह भाव ॥ १
जनु सोनार साँचे भर काढ़ी। गीउँ पुँछारि मूरत जनु ठाढ़ी ॥ २
कै कनका कर यारीं ठासा। फिरन करै मन भरैं हुलासा ॥ ३
होइ जगमगी[1] अभरन जोती। रतन पदारथ मानिक मोंती ॥ ४
रहे पूर भरि हारैं[2] ताइँ। जानु उइँ भरि नखत तराइँ ॥ ५
भा जराउ घन कै नग लाये। पाँत पाँत सब भाँत सुहाये ॥ ६
९१क थोक अभरन औ चन्दन चोला। हीरा बारंग बने अमोला ॥ ७
हाँस लवइ जनु बिजुरी, लाग रहे चमकार। ८
जोति न रहे छपाइ, जगत होइ उजियार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जगगी। २. होर।

टिप्पणी—गीउँ—गर्दन। बनाव—बनावट। भाव—उपमा। सोनार—स्वर्णकार। काढ़ी—निकाला। पुछारि—मोर। कनका कर—सोने का। हारैं—हार के लिए।

१२०

हिय थार देखी जस माँजी। कुच कचोर दोइ तिह मँह साँजी ॥ १
अमीं कलस लै जनु[1] लाये। विदरत रतन जानु बैसाये ॥ २
कै रे सिंधोरा सेंदुर भरे। कूँदीं फेरि हियें पर धरे ॥ ३
कठिन कठोर ऊभ उनियारे। जनु कंचन[2] मालूर सँवारे ॥ ४
नारंग दारिउँ तुरंज[3] जभीरा[4]। बनी अनूप सुरंग सरीरा ॥ ५
देखि न काहूँ छुवइ न बाहाँ। हासब उलथहिं कँचुकी माँहाँ ॥ ६
झाँप रहे अति अभरन घने[5]। औ मोखला मेखला बने ॥ ७
बनी तौहर कठिन अति, कसत जाहि बँद टूट ॥ ८
सक न कंचुकी देखै, निकस [न] चाहहिं[6] फूट ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जानु। २. खंजन। ३. तुरबज। ४. जहीरा। ५. घये। ६. चाहि।

टिप्पणी—हिय—वक्ष; छाती। थार—थाल। माँजी—माँजा हुई। कुच—स्तन। कचोर—कटोरा। साँजी—सजाये। सिंधोरा—सिन्दूर रखने का पात्र। कूँदीं—खराद। ऊभ—ऊँचे। उनियारे—नुकीले। कंचन—सोने का। मालूर—विल्वफल; बेल। उलथहिं—कसमसाते हैं। कंचुकी—चोली। झाँप—ढँका। मेखला—घेरा। बँद—चोली कसने की डोरी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२१

भुजा सो बरनन[१] किह लै लाँवों। जिह रे जोग सब्द[२] कछु[३] पाँवों ॥१
९१ख कनक दण्ड जनु साँचे मरे। औ कुंदी फेरि कै[४] निरमरे ॥२
बाँह डोलाइ चलै जो लोनी[५]। सोहँहि बाहूँ टाड़ सलोनी ॥३
वारीं बरन अनूप बनाई। औ सोहँहि कर कंगन कलाई ॥४
बाँधहि हिय चढ़ा औतारा। कँवल बरन सो अति सुकुवारा ॥५
बनी हथौरीं सुरंग सुहाईं। अँगुरीं छीमीं की पतराईं ॥६
मुँदरिंह भरीं बीजु लै दूनीं। नग पन्नी औ लागी चूनी ॥७
अभट बान कित डाकै, जनु बाँद कर भाउ ॥ ८
लंक रहै जग ऊपर, होइ दान वर चाउ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. बरतक। २. बसन्त। ३. कछू। ४. कुन्द निर मर ले। ५. बोनी।

टिप्पणी—बरनन–वर्णन। लोनी–लावण्यवती। बाहूँ–बाहों में। टाँड–बाजूबन्द की तरह का आभूषण; अंगद। हथौरी–हथेली। अँगुरी–उँगली। छीमी–मटर की फली। मुंदरिंह–अँगूठियाँ। बीजु–बिजली। लै–से। पन्नी–पन्ना; हरे रंग का मणि। चूनी–लाल रंग का रत्न; मानिक। लंक–कमर।

१२२

दुउ थन बीच[१] रोमावलि धारी। अलप लंक रहीं हेंगुर वारीं ॥१
पुहुप बास लगि भँवर फिराहीं[२]। देखि देवता लाल कराहीं ॥२
बेनी बहिर बनावा कूँपा। आँचर धरीं बाँके झूँपा ॥३
हीरा रतन पदारथ लागें। जगमग करहिं नखत जनु आगें ॥४
औ झिलमिलहिं लाग गज मोती। दीप दिपहिं जनु मानिक [मोती] ॥५
९२क घन कटाउ कै पहिरीं आँगी। अछहि बचाइ दिस्टि तस लागी ॥६
स्याम पाट बनफूल उभारे। दीखै जैस गँगन मँह तारे ॥७
तनी पाट कै दुँहु दिसि, फुलरहिं लागे मोंति। ८
कंचुकि काह सराहों, छिटक रही जग जोति ॥ ९

प्रति-पाठ—१. सहज। २. फिरहीं।

टिप्पणी—दुउ–दोनों। थन–स्तन। रोमावलि–रोमावली। धारी–रेखा। अलप–अल्प। हेंगुरवारी–दण्ड के समान पतली। फिराही–चक्कर लगाते हैं। लाल–लालसा, लालच। बेनी–त्रिवेणी (दृष्टव्य कुतबन कृत मिरगावती

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(७१।३)। बहिर—से बाहर। कूँपा—कूप। आँचर—अंचल। कटाउ—कटाव-दार। आँगी—अँगिया; चोली; कंचुकी। स्याम-पाट—काला वस्त्र। तनी—बाँधने की डोरी।

१२३

पहिर सुरंग चीर भड ठाढ़ी। जानहुँ सुरुज किरन हुत काढ़ी॥ १
चार अँग लाँबी चँहु[1] छोटी। चार अंग पातर चहुँ[2] मोटी॥ २
सोरह कलाँ सिंगार सिंगारी। काम कराँ औ जोबनबारी॥ ३
हस्ति सिंह[3] दूनों सम तूला। अन्न न खाइ सूँघि रहि फूला॥ ४
निसि दिन फूल तँबोल अहारू। औ केवर भा प्रान पियारू॥ ५
बेना परिमल औ कस्तूरी। सुगन्ध बास बन रहे अपूरी॥ ६
अगर कुंकुमाँ पुहुप **पनारू**। चोवा बास करै महकारू॥ ७
सवरि सनस सों लीजै, तो जिउ[4] रहे सरीर। ८
पाछु कुसुम बन **सोंधों**, घरी न बाधे धीर॥ ९

प्रति-पाठ—१. छहुँ। २. यह। ३. हथ-सह। ४. झिव।

टिप्पणी—चीर—वस्त्र, साड़ी। चार अंग……मोटी—मध्यकालीन कवियों ने नारी सौन्दर्य-वर्णन में उसके अवयवों को लम्बे, छोटे, मोटे और पतले चार रूपों में कल्पना की है। उनके अनुसार लम्बे केश, उँगली, नेत्र और ग्रीवा; छोटे दाँत, कुच, ललाट और नाभि; मोटे अर्थात भरे हुए कपोल, नितम्ब, जँघ और कलाई तथा पतले नाक, कटि, पेट और अधर सौन्दर्य के प्रतीक हैं। सोलह कलाँ सिंगार—प्राचीन साहित्य में शृंगार की परियोजना सोलह कलाओं के रूप में पायी जाती है। समतूला-समान। केवर—केवड़ा। बेना—खस। परिमल—कई सुगन्धियों को मिला कर बनायी हुई सुगन्धि। कस्तूरी—मृग की नाभि से प्राप्त सुगन्धि। चोवा—अगुरू (अगर) की लकड़ी से टपकायी हुई सुगन्धि।

१२४

९२ख पातर लंक सिंघनी चीन्ही। बरें लंक चाह अति खीनो॥ १
चलत बनै धनि आगें पाछें। सज्जमान जनु पातुरि काछें॥ २
औ कटि छुद्रघंटिका बनी। घंटि जराऊ सोहँहि घनी॥ ३
वाजि उठै डोलत **कड़ावा**। उठि[1] नारद जनु बीन बजावा॥ ४
औ झालर लाये चँहु फेरे। मानिक मोती लागि गरेरें॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नीवी कँवल बरन जनु बाँधे[२]। चली बनाइ कन्ह कँह राधे ॥ ६
राती पाट डोरियहि लाई। फुलरहि मोंतीचूर सुहाई ॥ ७
चोली दीन्हि चौहरी, जनु कचपची अकास। ८
बास सुगन्ध झिरकैं, भँवर फिरँहि चहुँ पास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. उठी। २. बाहे।

टिप्पणी—पातर–पतली। लंक–कमर। सिंघनी–सिंहनी। चाह–से। खीनी–क्षीण; पतली। छुद्रघंटिका–छोटे छोटे घुंघरुओं से बनी करधनी। झालर–गोट। गरेरे–चारों ओर। नीवी–नाड़ा; ईजारबन्द। डोरियहि–धारीदार। मोतीचूर–नन्हीं बुँदको वाली।

१२५

पुनि कस बनी चलैं दोइ खाभा। जनहु अहँहि केला कै गाभा ॥ १
लीन्हें पद चन्दन जस जोती। दीखै जैस चन्द्र कै जोती ॥ २
पाइ कहौं जस बहु रंग भरै। अति कोवँर[१] जनु पुहुमि न धरे ॥ ३
देखत कुँकुह[३] बदन सो देहा। कँवल चरन तिह लागि न खेहा ॥ ४
९३क चूरा जैस चाँद उजियारा। पायल बीजु करँहि चमकारा ५
अँगुरीं जानहु[४] दारिउँ करीं। दस नख माँझ महावर भरीं ॥ ६
[.... ....]। [.... ....] ॥ ७
अनवट बिछियाँ सोहँहि, नख सिख बनी सिंगार। ८
हंस गमन जिमि गवनी, सब्द होइ झनकार ॥ ९

एक पंक्ति अनुपलब्ध; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. केवर। २. न धेरे। ३. खुंकुह। ४. जाहु।

टिप्पणी—खाभा–खम्भा, स्तम्भ। जंघ–जाँघ। गाभा–केले के वृक्ष का कोमल भाग। कोवँर–कोमल। पुहुमि–पृथिवी। खेहा–मिट्टी। चूरा–पैर में पहनने की चूड़ियाँ (अब इस आभूषण का रिवाज समाप्त हो गया है अतः नयी पीढ़ी इससे अपरिचित है)। पायल–छागल; पायजेब। दारिउँ–अनार। करीं–कली। महावर–आलक्तक। अनवट–पैर के अँगूठे में पहना जाने वाला छल्ला अथवा अँगूठी। बिछिया–पैर की उँगलियों में पहना जाने वाला आभूषण।

१२६

साज सिंगार चली सो राही। पाट महादेइ रूप सराही ॥ १
पहिरि रात गुजराती[१] चोला। हंस गवन मुख खाइ[२] तँबोला ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सोन छाप तिह् चीर सँवारी। दीखहि चित्र विचित्र निरारी।। ३
सँखी सहस दोइ [गोहन] मिलीं। जानहुँ कँवल कली सब खिलीं।।४
हाथहि डालि फूल सब लीन्हें। औंर सिंगार सब आपुन[2] कीन्हें[3] ।। ५
केहु पहिरीं पेमचा अँबीरीं। केउ छायल चीर बिन्दरीं।। ६
केउ फुँदिया केउ छाँप सेंदुरिया। चकवा चीर ~~म~~ हही डो[रि]या।। ७
चली चन्द होइ राही, नखत उवइ चहुँ पास। ८
जानु झुण्ड[4] अछरीं कर, उजरि[5] चलीं कैलास।। ९

प्रति-पाठ—१. कजराती पाठ भी सम्भव। २. लीन्हें। ३. अपून। ४. झूण्ड। ५. उछरि।

टिप्पणी—पाट महादेइ—पट्टमहादेवी; महारानी। पहिरि रात गुजराती चोला—गुजरात में आज भी लाल रंग के कंचुकी का प्रचलन बना हुआ है। यदि पाठ कजराती है तो अर्थ काले रंग का वस्त्र होगा। सोन-छाप—सोने की जरी का काम किया हुआ वस्त्र। पेमचा—एक प्रकार का रेशमी वस्त्र। छायल—गुजरात का छपा हुआ सूती वस्त्र। विन्दरी—बीदर का बना वस्त्र। फुँदिया—एक प्रकार का मूल्यवान वस्त्र जिसमें सोने और रत्नों का प्रयोग होता था (कनक सु कोमल फूँदड़ी ए बिचि रतन बईठा—कान्हडदे प्रबन्ध, २।१५३)। सेंदुरिया—सिन्दूरी रंग का। चकवा—इसका उल्लेख जायसी ने पदमावत में भी किया है। उस प्रसंग में रामचन्द्र शुक्ल ने इसे चीकट नामक रेशमी वस्त्र बताया है। शब्दसागर के अनुसार विवाह के अवसर पर नेग के रूप में दिये जाने वाले वस्त्र को चीकट कहते हैं। चकवा का उल्लेख न तो पदमावत में और न यहाँ विवाह के अवसर पर दिये जाने वाले वस्त्रों के प्रसंग में हुआ है; अतः इसे चीहट के रूप में नहीं पहचाना जा सकता। मोतीचन्द्र ने इसे गहरे खाकी रंग का रेशमी वस्त्र बनाया है (कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स इन सल्तनत पीरियड, पृ० ५२)। उन्होंने सम्भवतः यह अनुमान उसके चीकट वाली पहचान के आधार पर किया है। बनारसी बोली में चीकट अत्यन्त मैले वस्त्र को कहते हैं)। हमारी अपनी धारणा है कि चकवा का ही उल्लेख जीवनवार परिधान विधि नामक वर्णक में चकवटा नाम से हुआ है (वर्णक-समुच्चय, पृ० १८०)। चकवटा (चक्रपट) कोई ऐसा रेशमी वस्त्र रहा होगा जिस पर चक्र अथवा फूल बने रहते होंगे। डोरिया—धारीदार वस्त्र। उजरि—उजड़ कर।

१२७

९३ख बन गवनीं[1] सब गोपीं बनी। चन्द मिलीं जनु तरइं घनी।। १
भाँतिहि भाँति चलीं सब गोरीं। नारीं-कुंजल पहिर पटोरीं।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काहू सोह खिरोदक[2] भारी। केऊ गुनियाँ और फुलवारी।।३
काहू किरमिजी कपूर गलाई। केउ रे सब्ज[3] केउ जर्द चकाई।।४
केउ रे मधौना[4] औ चँदनौटाँ। जिह जस सोह सो तस निरलौटाँ।।५
काहूँ तरुवन काहू बीरा। लाग जराउ जरे सब हीरा।।६
[···· ···· ···· ···· ···· ···· ····]। [···· ···· ···· ···· ···· ····]।।७
सोहँहि सुरंग आँगी, उरहीं मोतिउँ हार। ८
जगमग करहिं पदारथ, मानिक रतन पनवार।। ९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. गनयी। २. खिरोधक। ३. सेज। ४. मघौटा।

टिप्पणी—तरइं—तारे। घनी—घने। कुंजल—कुंजर; हाथी (यह यदि किसी जातिवाचक शब्द के आगे प्रयुक्त होता है तो वहाँ उसका भाव श्रेष्ठ अथवा प्रधान होता है।) नारी-कुंजल का तात्पर्य यहाँ श्रेष्ठ स्त्रियों से है। पटोरी—पटोर, पटोल, पटोला नामक वस्त्र आज भी गुजरात में काफी प्रसिद्ध है। वहाँ ऐसे वस्त्र को पटोला कहते हैं जिसके सूत को बुनने से पहले ही, निश्चित डिजाइन के अनुसार बाँधनू पद्धति से रंग लिया जाता है। चौदहवीं शती में वहाँ इसका प्रचार साड़ी के रूप में काफी हो गया था, ऐसा वहाँ के प्राचीन फागुओं के देखने से जान पड़ता है (प्राचीन फागु संग्रह, ४।३९; ६।५१ आदि)। वर्णकों में इसका उल्लेख पटोलु, पटुला, पटुली आदि नामों से हुआ है (वर्णक समुच्चय, १८१)। देवगिरि से अलाउद्दीन खिलजी को प्राप्त वस्तुओं में पटोला का उल्लेख इतिहासकार जियाउद्दीन बारनी ने किया है (पृ० ३२३)। पटोल का प्राचीनतम उल्लेख सोमदेव के यशस्तिलक चम्पू में मिलता है; वहाँ इसकी गणना 'पट्ट-कूलवस्त्राणि' के अन्तर्गत की गया है (पृ० ३६८)। मेदनी कोष (बारहवीं शती ई०) में पटोल को रेशमी वस्त्र कहा गया है (१८७।१६६)। पटोर का उल्लेख वर्ण-रत्नाकर में पहली बार हुआ है। ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने उसे देशी पट्ट-वस्त्रों के अन्तर्गत रखा है। चन्दायन में मौलाना दाऊद ने पटोर का उल्लेख कई स्थलों पर किया है (३२।२; ४२।२; ४३।०; ८१।३; ९४।५; १२८।४; २५१।२; ४००।३)। उन्होंने एक आध स्थलों को छोड़ कर, इसके साथ किसी न किसी विशेषण का प्रयोग किया है। इससे जान पड़ता है कि मध्यकाल में पटोर रेशमी साड़ी के लिए लोक-प्रचलित सामान्य संज्ञा थी। खिरोदक—क्षीरोदक; इस वस्त्र का उल्लेख भारतीय साहित्य में सातवीं शती ई० से मिलने लगता है। बाण ने इसका उल्लेख अपने हर्ष-चरित में किया है। परिशिष्ट परवण और नलचम्पू में इसके जो उल्लेख मिलते हैं उससे अनुमान होता है कि अत्यन्त हल्के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सफेद रंग के वस्त्र को क्षीरोदक (खीरोदक) कहते थे; उसमें समुद्र के लहरों की सी आभा झलकती थी (क्षीरोदलहरी व्यूत; क्षीरोदोर्मिमयानिव)। गुनया—इस वस्त्र की पहचान हमें किसी सूत्र से उपलब्ध नहीं है। हो सकता है पाठ ही ठीक न हो। फुलवारी—पुष्प-पंक्ति से युक्त साड़ी। किरमिजी—गहरे पीले रंग वाली। कपूर गलाई—कपूरी रंग की। सब्ज—हरा। जर्द—हलका पीला। चकाई—सम्भवतः इसे ही अन्यत्र चकवा कहा गया है (१२६।७)। मघौना—इसका उल्लेख पृथ्वीचन्द्र चरित (प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह, बड़ौदा, १९०९, पृ० १०२) और मौलाना दाऊद के चन्दायन (९४।२) में हुआ है। सम्भवतः यह वही वस्त्र है जिसे ज्योतिरीश्वर ने वर्ण-रत्नाकर में मेघवर्ण और मेघडम्बर नाम से पटम्बर जाति के वस्त्रों में किया है। विविध वर्णक (चौदहवीं शती ई०) में भी मेघडम्बर, मेंघाडम्बर और मेघावली नामक वस्त्रों का उल्लेख है (वर्णक समुच्चय, संपादक बी० जे० संडेसरा, पृ० ३४-३५)। मेघडम्बर साड़ियों का उल्लेख प्राचीन बंगला साहित्य में भी मिलता है। अनुमान है कि आसमानी (बादली) रंग का रेशमी वस्त्र मघवना वहा जाता रहा होगा। चँदनौटा—चन्दायन में चँदरौटा नामक वस्त्र का उल्लेख हुआ है (९४।५)। सम्भवतः इसे ही जायसी ने चँदनौटा रूप में यहाँ और पदमावत (३२९।२) में उल्लेख किया है। वासुदेवशरण अग्रवाल ने इसे चन्दन के रंग का वस्त्र (चन्दन पट्ट) बताया है। हमारी धारणा है कि यह सम्भवतः रेशमी वस्त्र है जिसे ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने वर्ण-रत्नाकर में चन्द्रमण्डल कहा है। इस पर चन्द्रमा जैसी आकृति बनी या छपी रहती होगी। आँगी—अँगिया; चोली; कंचुकी।

१२८

चली बनाउ सहित राधिका। रुनझुन करहिं छुँद्रघंटिका ॥ १
गोपीं माँझ भाव तस पावा। [·· ···· ···· ···· ····] ॥ २
[···· ···· ···· ··· ···· ····]। कौतुक देखि जगत सब भूला ॥ ३
झूडँहि झूंड हिरिनि[1] तस छूटी। रेग चलीं जनु बीरबहूटी ॥ ४
एक सरूप औ[2] बनी छबीली। सबै सुहाइ रंग रँगीली ॥ ५
फूलन्ह कँह बिन डरायीं आवहिं। जानु मत्त गज पाउ उठावहिं[3] ॥ ६
९४क दारिउँ[4] दसन हसत चमकाहीं। जानहु बीज लौकि मुख जाहीं ॥ ७
बनी झुण्ड[5] अछरिन्ह कै, अपने अपने साज। ८
केलि करत सब डोलहिं, धन गोबिंद कर राज ॥ ९

एक पंक्ति का अभाव। दूसरी और तीसरी पंक्ति के एक एक अर्धाली के रूप में यह छूट है जो तुकों के देखने से स्पष्ट है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. घिरन । २. अ । ३. ऊठावहिं । ४. दारिव । ५. झूण्ड ।

टिप्पणी—छबीली—छविवाली; कान्तिमती । मत्तगज—मतवाला हाथी ।

१२९

ठोके तबल[1] पखावज तूरा । झाँझ बजाइ संख बन पूरा ।। १
भयउ सबद महुअर बाँसली । औ वँह[2] घूमँहि चाचर मिली ।। २
औ रबाब सुरमंडर बाजा । इन्द्रसब्द सों पंचम साजा ।। ३
सिरी पंचमीं पंचम गावँहि । पाँचों बान मदन सर लावँहि ।। ४
सुनत राग भूला संसारा । कँह औ होत बहुत[3] झंकारा ।। ५
सुनतैं[4] [राग] प्रिथिमी फूली । सुरस कंठ[5] कोकिलैं भूली ।। ६
देखत कौतुक जगत भुलानाँ[6] । भई बसन्त बसन्त लजानाँ ।। ७
जँह लग दिस्टि पसारे, दीखै राता भेस । ८
देखि सुरंग रँग तिंह कर, लाग भेख[7] बन टेस ।। ९

प्रति-पाठ—१. तार ठोका नहीं जाता; पाठ स्पष्ट यहाँ अशुद्ध है । २. वह । ३. बहूत । ४. सूतीं । ५. सोरस कन्ह । ६. भूलाना । ७. भेक ।

टिप्पणी—तबल—नक्कारा सम्भवतः यहाँ तात्पर्य तबले से है जो तबल से छोटा होता है। पखावज—मृदंग की तरह का एक वाद्य (कदाचित यह वाद्य पन्द्रहवीं शती ई० के आस पास इस देश में विदेश से आया । पृथिवीचन्द्र चरित (१४२१ ई०) में सम्भवतः इसका प्राचीनतम उल्लेख है । इससे पूर्व के साहित्य में यह अनजाना है । पखावज का उत्तर भारत में और मृदंग का दक्षिण भारत में प्रचलन है, ऐसा पोपली का कहना है (म्यूजिक आफ इण्डिया, १९५०, पृ० १२५) । टी० एन० मुखर्जी के कथनानुसार दोनों में अन्तर इतना ही है कि पखावज आकार में मृदंग से कुछ लम्बा होता है (आर्ट मैन्यूफैक्चरर्स आफ इण्डिया, १८८८, पृ० ९३) । तूरा—तुरही, मुँह से बजाया जाने वाला एक वाद्य । झाँझ-संगीत-रत्नाकर के अनुसार तेरह अंगुल के कास्य के बने दो गोल पत्र, जिनके बीच में कटोरीनुमा गड्ढा होता है; दोनो को परस्पर टकरा कर बजाया जाता है । संख—शंख । महुअर—शब्दसागर के अनुसार सपेरों द्वारा बजायी जाने वाली बीन । कदाचित इसी को संगीत-रत्नाकर में मधुकरी कहा गया है जो सींग या लकड़ी की बनी आकार में २८ अंगुल लम्बी होती थी । उसके एक सिरे पर ताँबे की पतली नली लगी रहती थी । उसमें मुखरन्ध्र से चार अंगुल नीचे सात छिद्र होते थे । एक आठवाँ छिद्र नीचे की ओर मुखरन्ध्र के बीच होता था । सूरदास ने कृष्ण को महुअर बजाने में प्रवीण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बताया है (सूरश्याम जानी चतुराई जिहि अभ्यास महुअर को ।—२१०५)। इससे अनुमान होता है कि मध्य काल में वंशी की तरह के वाद्य को महुअर कहते थे। बाँसली—बाँस का बना मुँह से बजाया जाने वाला वाद्य यन्त्र; वंशी; मुरली; बाँसुरी। चाचर—चर्चरी; एक मण्डली नृत्य जिसमें भाग लेने वाले प्रत्येक हाथ में एक-एक छोटा डण्डा लेकर घूमते और उसे परस्पर टकराते रहते हैं। सम्भवत; गुजरात में इसी नृत्य को गरबा कहते हैं। रबाब—सारंगी और सरोद समूह का वाद्य जो मालकोस, कान्हड़ा आदि भारी रागों के बजाने में प्रयुक्त होता था। कहा जाता है कि यह मूलतः अरब और ईरान देश का वाद्य है। अरब से उसका प्रचार स्पेन में हुआ और यूरोप में उसे रेवेक कहा जाने लगा। भारतीय वाद्य शास्त्रियों का मत है कि रुद्रवीणा ही रबाब है (मुखर्जी, आर्ट मैनुफैक्चरर्स आव इडिया, पृ० ८२; पोपली, म्युजिक आव इण्डिया, पृ० १०२-१०३)। कतिपय किंवदन्तियों में तानसेन को इसका आविष्कारक कहा जाता है। यदि इन किंवदन्तियों में कुछ भी तथ्य है तो कन्हावत और पदमावत (५२७। ३) में रबाब का उल्लेख निसंदिग्ध रूप से इस बात का प्रमाण है कि जायसी की ये रचनाएँ हुमायूँ-अकबर काल से पूर्व की नहीं हैं। सुरमंडर—स्वरमण्डल; संगीतशास्त्री मल्लिनाथ (पन्द्रवी शती का उत्तरार्ध) के मतानुसार स्वरमण्डल का दूसरा नाम मत्तकोकिला था (मत्तकोकिलैव लोक स्वरमण्डलमित्युचते।) संगीत-रत्नाकर में मत्तकोकिला को सर्वोत्तम वीणा का रूप कहा गया है उसमें २१ तार होते थे (९।११०-११३)। उसमान ने चितरावली में सुरमण्डर में ३२ तार बताये हैं (सुरमण्डर तहँ अपुर बदीसा। एक सरासन पइँच बतीसा ॥)। पोपली के अनुसार यह तीन फुट लम्ब्रा, डेढ़ फुट चौड़ा और सात इंच ऊँचा वाद्य है जिसके तार लोहे के होते हैं और मिजराब से बजाये जाते हैं। इन्द्रसब्द—इन्द्र के यहाँ अप्सराओं के नृत्य के समय होने वाला संगीत जिसमें वीणा, वेणु, मृदंग, कास्यताल (झाँझ) आदि बजाये जाते थे। पंचम—मधुरतम स्वर। सिरी पंचमी—श्रीपंचमी (माघ शुक्ल पंचमी); इस रूप में इसकी यहाँ कोई संगति नहीं है। इसका तात्पर्य निश्चय ही किसी राग अथवा रागिनी से है। असम्भव नहीं, किसी राग-सूची में श्रीराग को इस नाम से अभिहित किया गया हो। पंचम—छ रागों में से एक राग। पाँचो बान—कामदेव के पाँच बाण। टेस—गाढ़ा लाल; टेसू; पलाश का फूल।

१३०

पूजी अवधि बार जो लागी। बन मँह कन्ह भयउ बैरागी ॥ १

९४ ख अब[······] झूरत मानी। कहाँ सो रही राधिका [रानी] ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऊँच बिरिख हुत चन्दन केरा । तिंह चढ़ कन्ह[2] पंथ सो हेरा ।।३
देखै गा[3] सो आइ तुलानी । भइ धरती सब सेंदुर [बानी] ।।४
औ गोपिता सबै संग आईं । चन्द मिलीं जनु नखत तराईं ।।५
उतर गोपाल पैठ बन माँहाँ । जहाँ न धूप रैन दिन छाँहाँ ।।६
अति असूझ जँह बन अँधकूपा । रहेउ लुकाइ[4] सो बालक रूपा ।।७
आइ गोपिता पहुँचीं, तिंह बन तूल मतूल । ८
छिटक गयीं सगरें बन, बीनैं लागीं फूल ।। ९

प्रति-पाठ—१. तीन अक्षरों का शब्द जिसका नुक्तों के अभाव में निर्धारण असम्भव । २. कंठ । ३. काह । ४. विकाइ ।

टिप्पणी—अवधि–वचन दिया गया समय । बार–देर । हुत–था । सेंदुर-बानी–सिन्दूरवर्णी; सिन्दूरी । तूल-मतूल–झुंड का झुण्ड । छिटक–बिखर । सगरें-सारे । बीनैं–बीनने ।

१३१

घन फुलवारि देखि रस बासा । उठा चाउ मन भयउ हुलासा ।।१
जिहि जिहि फूलन पर चित होई[1] । गहि गहि डार उनावँहि सोई ।।२
चमकहिं बलय पसारत बाँहाँ । लटकहि हार-हीर उर माँहाँ ।।३
उनमद जोबन लाव गहीलीं । जो रहि कलीं खिलीं अनखिलीं ।।४
फूल चुनहिं औ डालि भराहीं । औ हँसि हँसि सब केलि कराहीं ।।५
९५क [हा]थहिं कुसुम पुहुँप कै बारा । बिहँस बिहँस कैं घालहि हारा ।।६
फूलहि मारि करहिं सुकुवारा[2] । जिह लागै सो जाइ बिकरारा ।।७
पुनि सँभारि कै अरकँहि, हार न मानहि कोइ । ८
हँसी खेल तस उरझीं, बहु कौकुत तिंह होइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. होनी । २. बसकवारा ।

टिप्पणी—चाउ–इच्छा । हुलासा–उल्लास । उनावँहि–झुकाती हैं । बलय–चूड़ियाँ । पसारत–फैलाते ही । बिकरारा-विकल । सभँरि कै-सँभल कर । उरझीं-उलझीं । कौकुत–कौतुक ।

१३२

[क]न्ह कहा अब चलिहँहि गोपीं । प्रगट हों न रहौं अलोपी ।। १
पुनि आहट[1] लइ आपुहि गवहँहि । अब सब आपु कँह भवँहहि ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक कराँ होइ मानहु सकवों । दूसरैं कराँ लौटि कै छकवों ॥ ३
औ तिंह जोग करों सब साजू । रितु बसन्त सुँख मानों आजू ॥ ४
चन्दन खौरा अगर चढ़ावा । चोवा मेद बहुत कै लावा ॥ ५
माल कंठ पहिनीं गज मोती । कुण्डल सुवन दिपहि जग जोती ॥ ६
स्याम सरीर मनोहर बाँसी । औ कर कुसुम कुन्द[2] नवलासी[3] ॥ ७
कनक जराऊ बाँसली, लँखत चले मुरारि । ८
फूल बीनहिं जिंह गोपीं, देखी सो फुलवारि ॥ ९

प्रति-पाठ—१. अहट । २. गेंद । ३. बौलासी ।

टिप्पणी—अलोपी–अदृश्य; छिपा । आहट–टोह । सकवों–शंकित करूँ । छकवों–छकाऊँ । खौरा–पोता । चोला–अगर की लकड़ी से टपकायी हुई सुगन्धि । मद–किसी पशु के नाफे से बनायी जाने वाली सुगन्धि । बाँसी–वंशी; बाँसुरी ।

१३३

९५ख हतीं जो बीनि फूल गोवारी[1] । आइ परा ऊधो फुलवारी ॥१
हाक मारि पूँछी सब गोरीं[2] । को तुम्ह फूल बीनहु बन चोरीं ॥२
कौन जात [औ] अहु किंह केरीं[3] । फिरहु बनहिं बन रहहु अकेरीं[4] ॥३
मैं इँह विधि रसबेलि जमाई । सो तुम्ह **अरकत** चोर बसाई ॥४
डारीं मोर फूल सब लीन्हीं । तरुवर मारि अधमर[5] कीन्हीं ॥५
नित चोरीं तुम्ह मोरें करीं । अब किंह जाहु आइ बस परीं ॥६
जो फर तरुवर हुत अकासा । हाथ चढ़ै कै न हुत आसा ॥७
तुम्हरे फूल हों मधुकर, जो अस जोगहि जोग । ८
आज भोग रस मानों, करीं करीं रस भोग ॥ ९

प्रति-पाठ—१. हई जो पैं खेल दवारी । २. गोपीं । ३. कहु क भेरीं । ४. अनेंरीं । ५. अवदमर ।

टिप्पणी—ऊधो–कृष्ण (असामान्य प्रयोग) । हाँक मारि–डाँट कर । अधमर–अधमरा । फर–फल । करीं–किया । करीं-करीं–कली ।

१३४

भानु केर रथ टेकि अकासा । भुवन[1] भानु [कीन्ह] प्रकासा ॥ १
गोपिह आस पास चहुँ फेरीं । भा सेउ तेकर कोट गरेरी ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हिरनिंह केर झुण्ड[२] अस घेरा । वैं वो सों वै वो सों हेरा ॥३
जो वँह कूदहि मनुस घेरि धावहिं । उठी पुकार न मारग[3] पावहिं ॥४
९६क सब आईं राही कै पासाँ ! भर जिउ[४] लींन्ह रही बेबासा ॥५
मिलतहि एक अचम्भों भयऊ । कनक कोट चहुँ दिसि होइ गयऊ ॥६
पन्थ औंधि गा आयीं जौनीं । दीस[५] न द्वार जाब अब कौनीं ॥७
दइया अब कस होइहि, कैं यह कीत अकोट । ८
कौन भाँति अब छूटब, कस नाघत कोट ॥ ९

प्रति-पाठ—१. सहौं । २. झूण्ड । ३. बमारग । ४. झिउ ।५. दस ।

टिप्पणी—भानु केर........अकासा—आकाश में सूर्य का चलना रुक गया । वो सों-उसकी ओर । हेरा-देखा । बेबासा—विवश । औंधि गा--बन्द हो गया । जौंनी-जिस । दीस--दिखाई नहीं पड़ता है । जाब--जावेंगी । कौंनी--किस । दइया--हे भगवान ! कस--क्या । कैं--किसने । कीत--किया । कस--कैसे । नाघत--उल्लंघन करना; पार होना; निकलना ।

१३५

रुकमिनि दइ सब जानत अही । गयो रे **सिंघनी** जिह सों हुत गही ॥१
कै रे कन्ह जो रहै अलोपी । और न जानै कौनिउँ गोपी ॥२
देख गोपितहि कँह दुख[१] लागें । बिनवइ चलीं नारि होइ आगें ॥३
सखी साठ एक गोहन लागीं । चुनि चुनि लिहीं सरूप सुभागीं ॥४
दासि बहुत बदन हरि चीन्हा । औ ठठाइ[३] कँह हँस दीन्हा ॥५
जनि गोपी केउ मरे डराई । इहै तो आह बाबुल बाल कन्हाई ॥६
कौन देखि तुम हम सों चोरी । कहहु[3] तो फूल तुम्ह देंहि बहोरी ॥७
जो जानत अस होइह, **तबहि न** आवत कोइ । ८
९६ख बिनवइ ठाढ़ी राधिका, दहुँ का आयसु होई ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दुखर । २. ठहयाइ । ३. कहोह ।

टिप्पणी—रुकमिनि देइ—राधिका (यह सम्बोधन असाधारण है) । कै रे—या तो । अलोपी—अदृश्य । कोनिउ—कोई भी । बिनवइ—विनय करने । केउ—कोइ । बाबुल--प्रियतम । बहोरी—लौटा ।

१३६

यह सब लाग राउ कह खोरी । तैं[१] हर लीन्ह सब जग चोरी ॥ १
बदन लिहसि हर पूनों चन्दू । चाल लिहसि हर हंस गयन्दू ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नैन हरसि मृग कै नैनाँ। कंठ हरसि कोकिल कै बैनाँ ॥ ३
भौंह धनुक अर्जुन कै चुराइस। नासिक कंठ सुवा कर पाइस ॥ ४
अधर चोरायस विद्रुम जाती। दसन चोरयसि हीरा पाँती ॥ ५
गींउ पुछारि हंस जग हेरी[2]। लंक चोरयसि केहरि केरी ॥ ६
भुज पौनार चोरायसि सोभा। जाँघ चोरायसि केला गोभा ॥ ७
चार भुवन जग[3] देखत, तैं[4] चोरी धनि कीन्ह। ८
नित सब आइ पुकारँहि, आपन आपन चीन्ह ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जैं। २. हरी। ३. जगत। ४. तप। ५. चीह।

टिप्पणी—खोरी--रास्ता; मार्ग।

१३७

तुम्ह हरि कछू न जानहु चोरी। जैं जग ढँका सरग सकोरी ॥१
पै छन्द नौ खण्ड काहू न जानैं। प्रगट दीखहु रहहु लुकानें ॥२
हियें पैठि सब करैं डुलावहु। आपु करहु हम दोखन लावहु ॥३
९७क दरस तुम्हार जगत सब भूला। तुम्ह जग सेंउ जग तुम्ह सेंउ फूला॥४
चरित लुभाने चोरहि साहू। जेतक लाग रहा सब काहू ॥५
नैनहि हुतैं [रहहु] नहि डोलहु। जेतैं नियर ओहट भै बोलहु ॥६
छाड़हु महिउ जो लावहु घीऊ। प्रगट लगै रहहु हर जीऊ ॥७
कहाँ सरग कँह धरती, हौं राही तुम्ह राह। ८
तुमँहि करत सब छाजै, और न छाजै काह ॥ ९

टिप्पणी—ढुका–छिपाया। सकोरी–सिकोड़ कर। छन्द–छल। जेतक–जितने भी; सभी।

१३८

सुनु राही जो सब छँद जानेउँ। तुम्ह रस नारि भोग कँह आनेउँ ॥१
औ तुम्ह कारन्ह बनखँड लीन्हों। सबै गुप्त गुन परगट कीन्हों ॥२
अब कस सखीं ओट भै बोलहु। दूर[1] करहु अन्तपंट खोलहु ॥३
मैं तुम्ह आनीं अपनैं ताईं। तुम्ह कित बोलहु ओट पराईं ॥४
कर दीन्हा दरपन[2] हस होही[3]। तूं मोहि देखु हौं देखों तोही ॥५
यह रे सुदिन भा मिलन सँजोगू। रितु बसन्त मानै सब लोगू ॥६
होइ धमार बजाओं बाँसी। कीजै मार गेंद लौलासी ॥७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

९७ख सँवरहु आपुन बाचा, बेगि चलहु कैलास। ८
हँसी खेल तँह कोजै, खिन एक बैठहिं पास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दर। २–दरसन। ३. होनी।

टिप्पणी—छन्द–छल। हस–अस; ऐसा; की तरह। होही–होकर। धमार–होली का उत्सव; हुड़दंग; उन्मुक्त नृत्य-गीत।

१३९

कस न गहही हम कह ओटा। जो अस घालि सकोचहु कोटा ॥१
पींजर माँह पंखि जस परीं। तुम्ह मुक्तीं हम केउ साँकरीं ॥२
तिहरे हार अब कछु न बसाई। सब सुमन्त[1] कुमन्त[2] भुलाई ॥३
अबहीं आपुन बचा पूर तो आनी। औ सब सखीं साथ लै आनी ॥४
अबही तिंह सों मिलहु मुरारी। जो तुम्हरीं सब नारि पियारी ॥५
हौं अबहीं तस कछू न जानों। दूधो-दहियो धौर कर मानों ॥६
यहि सुख निसि दिन निसोकी रहों। जिंह दुख होइ सो बात न[3] करों ॥७
मैं ऐसैं पत[4] राखब, आपुन जिउ समुझाय। ८
लौटि जो मिलि कै बिछुरन, सो दुख सही न जाय ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कोमन्त। २. सोमन्त। ३. पुन। ४. पुन।

टिप्पणी—ओट--आड़। धाल--डाल। सकोचहि--घेरने के लिए। पींजर--पिजड़ा। साँकरी--जंजीर। सुमन्त कुमन्त--सुमति कुमति। बचा--बचन। दूधो दहियो--दुध भी दही भी। धौर--सफेद। निसोकी--बेफिक्र।

१४०

मोहि तोहि राही अन्तर नाहीं[1]। जैस दीख पिण्ड परछाहीं ॥ १
जवहि दयी कर आयसु पायों। औ देखै कैलास सिधायों ॥ २
९८क लै बैठायों तिह खण्ड माहाँ। सोलह सहस गोपिता जाहाँ ॥ ३
तिह मँह बैठि मात तोहि देखों। नखतहि माँह चन्द्र अस लेखों ॥ ४
तोरें जोत चढ़ा जो रंगू। भा अजोर हौं भयों पतंगू ॥ ५
तो मै कहा कि[3] यहै पिय रानी। औ सब सात पाट परधानी ॥ ६
देख रूप तस प्रेम भुलानेउँ। चित्र उतार[2] जगत मँह आनेउँ ॥ ७
तवही हुत तू जो चढ़ी चित, जैस स्वाति बैठि पिक जोउ। ८
जासेंउ ऐस बसै मन, तासो कौन बिछोउ ॥ ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. नाही । २. अवतार ।

टिप्पणी—पिण्ड–शरीर । अजोर–प्रकाश । पतंगू–दीप पर जल मरने वाला कीड़ा । सात पाट–सात पट्टमहारानियों में । परधानी–प्रधान । पिक–पपीहा ।

१४१

छाड़हु हरि मोसों चतुराई। ऐसैं लाल कहाँ नियराई ॥ १
बाउर होइ सोइ बउराई। हौं अस कहाँ जो वहँ कै पायी ॥ २
सुनहिं बलि छरा जो रहस सतवादी। हौं तुम्हार सब जानौं आदी ॥ ३
जब[1] तुम्ह राम त[2] हौं हुत सीता। सीता जरम करत तप बीता ॥ ४
अब तुम्ह कान्ह भये बहुरंगी। सोरह सहस गोपितहि संगी ॥ ५
सुरस[3] करँहि बहुर हम आउब। सौ मैं कहाँ बहुर[4] पतियाउब ॥ ६
१८ख खिनक सुख रे मिलत खन होई। पुनि बिछुरें चौगुन दुख सोई ॥ ७
नेह सनेह गहे सो, [जो] छाड़े न चित लाइ। ८
मकु जिउ जाउ छाड़ तन, पै जो प्रीत न जाइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जब । २. न । ३. सोरस । ४. नेहोर ।

टिप्पणी—लाल–लालसा । नियराई–निकट आयेगा । छरा छला । आदी–स्वभाव । त–तो । हौं हुत–मैं थी । पतियाउब–विश्वास करूँगी । खिनक–तनिक । खन-क्षण ।

१४२

जो राही अस रहस सयानी। जान-बूझ कस होस अयानी ॥१
गँगन सूर जो आदि[1] सरूपा। सब जग पसरैं ताकर धूपा ॥२
सब सैंसार बसै अस सोई। जिह सो धूप सब ऊपर होई ॥३
अस हौं सब गोपिह महँ तपा। काहू हुतैं न रहौं छपा ॥४
सूर करौं मैं करब प्रकासा। जिह रहेउँ सब वैठिह पासा ॥५
सब सेउँ प्रीति करब[2] नित दूनीं। सेज न रहिह काहू कै सूनी ॥६
जो जस होइह तिह तस जोगू। सब सों निसि दिन मनिहौं भोगू ॥७
सरग चन्द जस पून, रूप देखु तस मोर। ८
हौं कितँहु अपने रंग, घर घर करौं अजोर ॥ ९

प्रति-पाठ—१. आदी । २. करत ।

टिप्पणी—अयानी–अज्ञान; अनजान । छपा–छिपा; अदृश्य । पून–पूर्णिमा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१४३

राहीं बिहस सखिह मुख चाहा । तिहकै उतर दिहौं कीजै काहा ॥१
९९क [जो] चतुराई करों घनेरी । तो हरि कहँहि ढीठ नित केरी[1] ॥२
[जो] चुप रहों तो मुरुख कहावों । दुहों भाँति अब दोखन पावों ॥३
जस कछु अब[2] तुम्ह परे बिचारू । दुहों बात कर करहु सँवारू ॥३
बारी हुतीं भयउँ हौं ऐती[3] । ते न बोलेउँ काहू सेतीं ॥५
सबै जुहारहि मुहि नित आई । मैं न जुहार कीन्ह सिर नाई ॥६
गरब न काहू लौटेउँ लेखीं । अब सब भूलि गयउ हरि देखीं ॥७
हरि सो ठगौरी खाई, जिह रे गयेउँ बौराइ । ८
जित सर कीन्ह चहौं हहि, तो पै न कछु बसाइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कहेरी । २. आप । ३. आई ।

टिप्पणी—चाहा–देखा; अपेक्षा की । घनेरी-अधिक । ढीठ–धृष्ठ । नित केरी–नित्य की; सदा की । मुरुख–मूर्ख । सँवारो–स्मरण कर; सोच कर । बारी हुतीं–बचपन से ही । ऐती–इतनी । सेतीं–से । जुहारहि–अभिवादन करते हैं । गरब–गर्व; अभिमान । लौटिउँ लेखीं–घूम कर देखा । ठगौरी–धोखा ।

१४४

सुनि बोलीं सब सखीं सयानी । सुनहु बात रुकमिनि दइ रानी ॥१
पहिलँहि तुम चतुर गापिता[1] । हरि क सेतें फिर[2] काँहि न चिता ॥२
धनि औ धनुक करेर न चढ़े । अधिक नवइ तवही लै गहै ॥३
हठ कीन्हें पुनि चढ़े[3] किरोधू । मान करत तो होइ विरोधू ॥४
हाथ क मानिक सँमुद[हि] जायी । लौटि न पाई हीर हेरायी ॥५
९९ख तस पिउ बरजें कहें ढिठाई । जाई करुवी अन्त मिठाई ॥६
हरि क बचन माथें पर लीजै । आयसु होई[4] सोइ पै कीजै ॥७
लेहि सखिह राही, चली कन्ह के पास । ८
जहाँ भोग रस[5] सँजोआँ, घालिह यह कैलास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कोतहा । २. सर । ३. चहे । ४. हयीं । ५. रस रस ।

टिप्पणी—करेर–कड़ा । नवइ–नम्र होती है; झुकती है । किरोधू–क्रोध । हेराई–खो जायेगा । बरजे–मना करने पर । करुई-कड़वा । सँजोआँ–सजोया ।

१४५

लीजै कन्ह राधिका नारी । मान किहस कीजै मनुहारी ॥ १

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिह पिय चहै गोपाल गोबिन्दू । राख न सकै होइ बरवण्डू ॥२
हुत जो लुकान आन धर दीन्हीं । आपन चोर लेहु अब चीन्ही ॥३
मान भोग बिधि बिरसीं[1] तोकाँ । ब्रह्मा वेद[2] भनै सिव[3] [लोकाँ] ॥४
महादेव तँह माडो छावा । पार्वती सती[4] मंगल गा[वा] ॥५
इन्द्रसब्द सब बाजन बाजे । बन्दनवार मँदिर मँह [साजे] ॥६
अँचरहि जोर गाँठ दइ भाँवरि[5]। चौक पूर कीन्ही न्योछावरि ॥७
ससि दिनयर रिखि देवता, न्योत फिरा सब काहु । ८
तीनहु लोक भयउ सुख, सुनि राही का ब्याहु ॥ ९

प्रति-पाठ—१. परसन । २. भेद । ३. शेव । ४. सैं । ५. भावरि ।

टिप्पणी—किहसि—किया । मनुहारी—मनौनी; खुशामद । बरवण्ड—बलवान । लुकान—छिपा । आनि—लाकर । धर—पकड़ । चीन्ही—पहचान । तोकाँ—तुम्हें । अँचरहि—आँचल । भाँवर—विवाह के समय अग्नि के चारों ओर की परिक्रमा । न्योत—निमंत्रण ।

१४६

१००क [बि]हस दुउ सुख सेजवाँ[1] चढ़े । मान सँजोग[2] दयीं जस गढ़े ॥१
गहसि होत संकी मन बाला । डोली जैस जँप कै माला ॥२
कन्ह चहौं रस प्रेम बढ़ावा । चँहहि [करहि] रस भोग मिलावा ॥३
मन सों मन तन सों तन गहा । होइ गै एक न अन्तर रहा ॥४
तैस गयउ मिल जिय सों जीऊ । मिरवा जैस खाँड मँह घीऊ ॥५
जनु स्वाति कँह चातक मिला । औ ऋतु लै बोली कोकिला ॥६
रहचह करँहि सो सेज सँवारी । चहचहाँहि जनु सूआ सारी ॥७
पैठि भँवर फुलवारी, करै भोग रति केलि । ८
अंब्रित पान दे बस, औ चाखे रस बेलि ॥ ९

प्रति-पाठ—१. सजवाँ । २. सजोग ।

टिप्पणी—सेजवाँ—सेज; शय्या । डोली—हिली; काँपी । जँप के माला—जपमाला । मिरवा—मिलाया । खाँड—शक्कर; चीनी । घीऊ—घी । सूवा-सारी—शुक—सारिका, तोता-मैना ।

१४७

राही कन्ह भये एक संगाँ । लाग चन्दन होइ एकँहि अंगाँ ॥ १
नवल नेह पैठेउ फुलवारी । पुरुख सुआ भा सो घन बारी ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुँभस्थल कुच गहि नख दई। अधर अधर मिरै रस लई ।। ३
कुसुम करी पाई अनखीली। अधिक रंग भइ रंग रँगीली ।। ४
१००ख सीत बिकसि उठी पँखुरीं। छावँहि आँवहि अधिक रस भरीं ।। ५
नवल नेह नइ धनि नइ कन्तू। औ पाये नइ प्रीति[1] बस[न्तू] ।। ६
सेज मिली बढ़ माधो नवला। देखि भँवर बिकसे जल कँव[ला] ।। ७
सब फूल बन फूले, करीं रहीं बिगसाइ। ८
रहस कन्त रति मानी, रुकमिन दइ कँठ लाइ ।। ९

प्रति-पाठ— १. रीत।

टिप्पणी—करी–कली। अनखीली–अनखिली। नइ–नई। नय–नया।

१४८

हरि क मिलन कुछ कही न जाई। मिला सबहि रस पेम अघाई ।।१
हुत जो काम बिरहिन राधिका। जैसें भानु जेठ मँह धिका ।।२
गरज असाढ़ लाग जनु आये। दिपे नाँह रहे जग छाये ।।३
सरग मेघ बरसे अतिवानी। धरती बूड़ि उठै तिह पानी ।।४
न्योरी भोग पियास बुझाई। पाँच भूत आतमाँ सि[राई] ।।५
तपत मीन जानहु जल पावा। कै रे पियासहि पानि पियावा ।।६
नौ खण्ड[°] कर अंब्रित पिया। फिरा जीउ मरत तन जिया ।।७
भा सोहाग राही कर, मिला गोबिन्द गोपाल। ८
१०१क बहुरे भोग भुगुति दिन, दाहिन भयउ [द]याल ।। ९

टिप्पणी—भानु–सूर्य। धिका–गर्म हुआ। सरग–आकाश। अतिवानी–अति पानी। पाँचभूत–पंचभूत (क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर); शरीर। सिराई–तृप्त हुई।

१४९

ताकर चतुर बिचक्खन पीऊ। भइ पुनि महिउ लीन्हि मथ घीऊ ।।१
कंचुकि फाटि टूटि गा हारू। गा विधँसि सब कीन्ह सिंगारू ।।२
बदन सुरंग रंग बिन भयऊ। तिलक ललाट केर मिट गयऊ ।।३
काम कटक हरिहँहि धनि लूटी। गा सेंदुर काजर सब छूटी ।।४
बलया फूटि टूटि गै न्यारी। गजरा टूटि फूटि हथवारी ।।५
कुँडर सुवन मोति बिहरे। खुँटिला टूटि सबै नग परे ।।६
नेउर छूटि हियें जो चुनीं[1]। छुद्रघंटि टूटीं झुनझुनीं ।।७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अस कै बारि बिधाँसी, भई अचेत बर नारि । ८
नैन रात मुख भींभर, डोलै जस मतवारि ॥ ९

प्रति-पाठ—१. चूनीं ।

टिप्पणी—बिचक्खन–विलक्षण; प्रवीण । महिउ–मही; मट्ठा । मथि–मथ । घीऊ–घी । बिधँसि–विध्वंस । करे–का । काजर–काजल । बलया–वलय; चूड़ियाँ । हथवारी–हाथ में पहनने वाला कड़ा । बिहरे–बिखरे । खुटिला–कर्णफूल । नेउर–नूपुर । छुद्रघण्टि–करधनी । भींभर–उतरा हुआ । मतवारि–मतवाली ।

१५०

बिकसित नारि गई कुँभलाई । रस सीची तवहू न बिकसाई[1] ॥ १
समुझे न जो अधिक रंग राते । भृंग जाइ पेम मद माते ॥ २
अभरन टूटि टूट नग परे । जानुक नखत बीच निसि बिहरे ॥ ३
१०१ख देखा कन्त[2] नारि रंग भीनी । पूनिउँ चाँद जोति भइ खीनीं ॥ ४
हसि मुख सीतल नीर चुआवा । निरंग देखि रचि रंग चढ़ावा ॥ ५
हसि हसि पूँछहि पुरुख मयेरी । औ कँठ लइ दीनिह मुख बीरी ॥ ६
अँब्रित पानि जो बेलि पलुहानो । पुनि होइ सहसकराँ बिकसानी ॥ ७
कीन्ह रंग रस रतिपति, अधरहि अधर मिलाइ । ८
भोग करत सब दिन गा, निसि पुनि गई बिहाइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. निकसाई । २. कण्ठ ।

टिप्पणी—जानुक–मानो । बिहरे–बिखरे । चुआवा–डाला । निरंग–उड़ा हुआ रंग । मयेरी–ममता करने वाला । बीरी–पान का बीड़ा । पलुहानी–पल्लवित हुई । रतिपति–कामदेव; कृष्ण । बिहाइ–समाप्त ।

१५१

रैन गये रुकमिन दइ रानी । भा बिहान मन बैठि सँकानी ॥ १
भै सब चरित तुम्हार मुरारी । जैं रे कीन्हि ऐस थाथारी ॥ २
जों घर पूछहिं लोग हमारा । कौन उतर पाउब[1] पैसारा ॥ ३
जो गोपीं आई [सब] संगा । तिन्ह बोलियाव देखि अस हंगा[2] ॥ ४
अभरन सबै टूटिगा मोरा । बिथुरीं मोंति टूटि सब डोरा ॥ ५
हरि संभार अभरन कर कीजै । बेगि पिरोइ हार मोहि[3] दीजै ॥ ६
[.... ....] । [.... ....] ॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कन्ह कहा सुनु राही, जस कीन्हे[४] भयउ सबेर[५]। ७
१०२क देखउ आन सब गोपिंह, कस रे चरित वहि केर॥ ९

एक पंक्ति की छूट ; स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. पाउत । २. अहंगा । ३. महि । ४. लीन्हे । ५. नसेर ।

टिप्पणी—बिहान—प्रातःकाल । सँकानी—शंकित हुई; डरी । थाथारी—उत्पात । पाउब—पाउँगी । पैसार—प्रवेश । बोलियाब—बोली बोलेंगी; आवाजा-कशी करेंगी; उपहास करेंगी । हंगा—अस्तव्यस्त रूप । बिथुरीं—बिखरों । सँभार—सँभाल । अभरन—आभूषण । पिरोइ—पिरो कर ।

१५२

उठि देखी रुकमिन दइ काहा । भा कैलास जेत हुत आहा॥ १
आस पास जित हुत फुलवारी । सबै रही होइ चित्तरसारी॥ २
जँहहि देखै जँहहि बासा[१] । भइ गोंपीं कै[२] झार अवासा॥ ३
ठाँवहि ठाँव कन्ह सब रहें । सबै लेंहि रंग बिनु रंग[३] भयें॥ ४
जैस खेल राही सेंउ भये । तैस खेल सब गोपिंह भये॥ ५
बिहरंग सबै लटैं सिर छूटीं । हरिहँहि काम कटक सब लूटीं॥ ६
जिंह गोपिंह पूछी जो बोलाई । सोइ कही कन्ह हौं राई[४]॥ ७
सबै फूल जिमि मुरझीं, सूख रही कुँभिलाइ । ८
देखि चरित गोपिंह कर, हँसत राधिका आइ॥ ९

प्रति-पाठ—१. पासा । २. गोंपकही । ३. बिन रङ्ग । ४. राही ।

टिप्पणी—काहा—क्या । जेत—जितना । हुत—था । कैलास—स्वर्ग । चित्तर-सारी—चित्रसारी; रति-केलि गृह । झार—एकदम; सभी । लटैं—केश । राई—रमण किया ।

१५३

देखि दरस हरि चन्द अजोरी । नायसि सीस दोउ कर जोरी॥ १
धन्य सो कन्ह तुम्ह पुरुख अकेले । जैं भर करा खेलि सब खेले॥ २
सूरज घटि तुम्ह किरन पसारे । सब गोपिंह कँह मिले मुरारे॥ ३
१०२ख मैं जानाँ मोही सों रहे । तुम्ह यहि भाँत सबहीं सों रहे॥ ४
गोपीं जेतीं साथ मिलि आईं । ते तुम्ह काम कलाँ सब राईं॥ ५
अब रे भरम का पूछहिं जोगू । तिंह सब मिलीं जो होइ सो होगू॥ ६
पाइ सब तुम्हार परतिग्या । अब घर जाँहि[१] होइ जो अज्ञा॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हरे कहें पाछु हम, कैसे कै घर जान्ह। ८
आयसु देहु मया कर, सब गोपिन्ह कँह कान्ह॥ ९

प्रति-पाठ—१. जान।

टिप्पणी—राई–रमण किया। भरम–शंका। जो होइ सो होगू–जो होना होगा सो होगा; चाहे जो कुछ भी हो। परतिग्या–प्रतिज्ञा। अज्ञा–आज्ञा। कहे पाछु–कहे बिना। जान्ह–जाँय। आयसु–आदेश। मया–ममता।

१५४

कन्ह कहा रुकमिन दइ रानी। तो मैं कीन्ह पाट परधानी॥ १
सब गोपिंह लै आउ हँकारी। खेलों आज बसन्त धमारी॥ २
अगर चन्दन घसि खसि बहु अंगा। कुँकुँ[1] केसर मरदहुँ अंगा॥ ३
खस बेनाँ परिमल पुनि आनहु[2]। चोवा मेद कुमकुमाँ सानहु॥ ४
बहु कपूर कस्तूरि[3] मिलावहु। मिरै अरगजा सब लै आवहु॥ ५
खौरहु अंगहि सकल सरीरा। बरन बरन सब पहिरहु चीरा॥ ६
[.... ....]। [.... ....]॥ ७
साजहु बरहो अभरन, औ सोरहो सिंगार। ८
१०३क लेहु फूल लौलासी, चम्प कुसुम कै हार॥ ९

एक पंक्ति का अभाव; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. कुहकुह। २. आवहु। ३. कस्तूरो।

टिप्पणी—पाटपरधानी–पट्ट-प्रधान; प्रधान पत्नी। हँकारी–बुला कर। घसि–घिस कर। खसि–लगा कर। मरदहु–मलो। बेनाँ-खस। परिमल–अनेक सुगन्धियों से मिला कर बनायी बास। चोवा–सुगन्धि विशेष। अरगजा-केसर, चन्दन, कपूर आदि से बनी सुगन्धि। खौरहु–लगाओ। बारह अभरन सोलह सिंगार–प्राचीन काल में नारी प्रसाधन के सम्बन्ध में यह उक्ति प्रचलित रही है। बारह आभरण (आभूषणों) में माँग के ऊपर लगाने वाले चुट्ल (शिर फूल), माँगटीका, बिन्दी, कान के आभूषण, गले के हार (कण्ठश्री), बाजू और कलाइयों की चूड़ियाँ, उँगली की अँगूठियाँ, कटि की करधनी, पैर के नूपुर (किंकणी) और पैर के उंगलियों के अनवट-विछिया का उल्लेख होता रहा है। इसी प्रकार सोलह शृंगार में मुख-मंजन, स्नान, केश-प्रसाधन, नेत्र-अंजन, गाल पर तिल बनाना, ताम्बूल चर्वण (मुख राग), वस्त्राच्छादन, हाथ पैरों में मेंहदी लगाना, पैरों का आलक्तक, आभूषण धारण, सुगन्धि लेपन आदि की चर्चा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की जाती रही है। साहित्य-चर्चित शृंगार और आभूषणों की सूचियों में यत्र-तत्र भिन्नता भी दिखायी पड़ती है। किन्तु जायसी की कल्पना कुछ और ही जान पड़ती है। उन्होंने पदमावत (कड़वक २९५) में बारह आभरणों और सोलह शृंगारों का जिस प्रकार वर्णन किया है, उसे देखने से लगता है कि उनकी दृष्टि में आभरण और शृंगार में कुछ अन्तर न था। बारह आभरण के रूप में उन्होंने शरीर मंजन, वस्त्रधारण, सिन्दूर, तिलक, अंजन, कुण्डल, नक-फूल, ताम्बूल, हार, कंगन, छुद्रघंटिका और पायल को गिनाया है। इनमें केवल छ आभूषणों के नाम हैं और शेष छ शृंगार के साधन। इसी प्रकार उन्होंने शृंगार की चर्चा के रूप में नारी-शरीर के सौन्दर्य के मान-दण्ड—दीर्घ, लघु, पतले और मोटे अवयवों का उल्लेख किया है। लौलासी—नवलासी; ताजे खिले हुए। चम्प—चम्पा।

१५५

भा गोपाल कर आयसु ऐसें। सबहि कहा अब मेटें कैसें॥ १
पुनि आयसु अब झूठ न होई। जों हरि कहँहि करहु अब सोई॥ २
गोपिंह सबहि सिंगार बनावा। जनहु झुण्ड[1] अछरिन्ह कर आवा॥ ३
भाँतिह भाँत बनीं सब गोरीं। चन्दन चीर[2] सुरंग पटोरीं॥ ४
कोउ रातीं को पियरीं सारीं। केउ रे हरीं कोउ सेत सँवारीं॥ ५
सेंदुर मांग सोह रतनारा। जानु बसन्त भयउ संसारा॥ ६
नैनन्हिं काजर मुखहिं तँबोला। औं सोहै गिउँ हार अमोला॥ ७
बन बन चलीं अछराँई, फाग बनी जग भेसु। ८
मौला आँब सो गहन घन, औ फूला बन टेसु॥ ९

प्रति-पाठ—१. झूण्ड। २—चोई।

टिप्पणी—मेटैं—मिटायें; अवहेलना करे। बिनु आयसु—बिन आदेश पालन किये। छूट—छुटकारा। सुरंग—रंगीन। रातीं—लाल। पियरीं—पीली। सेत—श्वेत; सफेद। मौला—मुकुलित हुआ; बौर आये। आँब—आम। टेसु—टेसू; पलाश-पुष्प; गहरा लाल रङ्ग।

१५६

काहू आन हार गियँ घाला। [.... ....]॥ १
[.... ....]। काहू सेंदुर भरा कपोला॥ २
काहूँ अगर चन्दन कै खौरा। कोइ बनाउ कीन्ह[1] लदबोरा॥ ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कोरे **नँबोलिह** खेल कराहीं। कुंकुह केसर तन भर आहीं॥ ४
१०३ख कोउ रे बिहस मुख बीरी देहीं। कोउ कुमकुमाँ रहसि भरेहीं॥ ५
राही कान्ह दोउ संग काछें। औ गोपीं सब आगें पाछें॥ ६
सबै नारि मिलि **सेवाँ भूलीं**। जानु करीं फुलवारी फूलीं॥ ७
सोरह सहस गोपिंह मँह, बनाँ गोपाल गोबिन्द॥ ८
लाग भोग रस मानै, जस अछरिह मँह इन्द॥ ९

एक पंक्ति का अभाव। प्रथम पंक्ति की दूसरी और दूसरी पंक्ति की पहली अर्धाली अनुपलब्ध।

प्रति-पाठ—१. कन्ह।

१५७

हरखत पूरी बंसि मुरारी। भूलि गईं सब सबद गुवारीं॥ १
महुअर संख **पूरीं** पूरा। बाजे झाँझ पखावज तूरा॥ २
बीन उपंग चंग घन बाजे। बाजा जन्त्र कुमाइच[1] साजे॥ ३
सुरमण्डर डफ दीन्हि तलोरी। सबहि गोपीं मिल चाचर जोरी॥ ४
सखी सहेलिह पंचम गावा। गीत नाद भा सबद सुहावा॥ ५
माँझ बजाउ कन्ह बाँसली। चहुँ दिसि गोपीं भाँवर मिलीं॥ ६
करहिं **भोल बोला सब**[2] नारी। खेलहिं रितु[3] बसन्त धमारी॥ ७
अगर कुमकुमाँ चन्दन, परिमल चोवा बास। ८
१०४क फिर फिर लेंहि गोपिता, आउ उछरि जिह पास॥ ९

प्रति-पाठ—१. कुमाबज। २. सुथि। ३. रीत।

टिप्पणी—पूरी–बजायी। महुआर, झाँझ, पखावज, तूरा–देखिए कड़वक १२७। बीन–वीणा। उपंग–उपांग; नभ-तरङ्ग; तुरही के ढंग का वाद्य जिसे गले पर लगा कर नसों को फुलाकर बजाया जाता था। सूरदास ने इसका उल्लेख किया है (सूरसागर १७९८)। यह विशुद्ध देशी बाजा था। राजस्थान में यह आज भी अपंग नाम से प्रचलित है। मुखर्जी के कथनानुसार मथुरा-वृन्दावन की ओर इसका विशेष प्रचार था (आर्ट मैनुफैक्चरर्स आव इण्डिया, पृ० ९५)। वासुदेवशरण अग्रवाल ने चुन्नीलाल शेष के माध्यम से सूचना दी है (पदमावत पृ० ६९२) कि ब्रज में यह डमरू के आकार का वाद्य है जो एक ओर खाल से मढ़ा रहता है। खाल के मध्य से एक ताँत जाती है जो दूसरी ओर के खुले भाग से निकल कर एक लकड़ी पर लिपटी रहती है। बायें हाथ में लकड़ी पकड़ी जाती है और बायें बगल में दबा कर बजाया जाता है। ताँत को घटा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बढ़ा कर इसका स्वर-सन्धान किया जाता है। चंग—डफ से बड़े आकार का खँजड़ी नुमा वाद्य जिसे लावनीबाज आज भी बजाते हैं। घन—घण्टा। जन्त्र—गज भर लम्बी लकड़ी के दोनों ओर अधकटी तूँबी लगा वाद्य, जिसके गर्दन पर सोलह खूँटियाँ होती हैं जिनमें लोहे के पाँच तार बँधे होते हैं। खूँटियों द्वारा स्वरों का उतार चढ़ाव नियंत्रित होता है। कुमाइच—कमरचा अथवा कमाँचा नामक वाद्य; अलाबू नामक सारङ्गी; सम्भवतः कूर्म-वीणा। सुरमण्डर—देखिए कड़वक १२९। डफ—चमड़े से मढ़ा एक गोल वाद्य; जिसके पीछे भाग में ताँत का जाल बुना होता है। तलोटी—हथेली से दिया जाने वाला ताल। चाचर—देखिए कड़वक १२९। भाँवर—गोलाकार। बसन्त-धमारी—औधत्यपूर्ण नृत्य।

१५८

सब दिन बीता करत धमारी। औ निसि पास डसीं सब नारीं ॥१
भोर होत हरि आयसु दीन्हा। गोपिह गवन घरहिं कँह कीन्हा ॥२
भइ संका मन चली डराई। कवन उतर घर दींहहि जाई ॥३
नाघि पौरीं बाहर भयीं। देउ मनावत घर कँह[1] गयीं ॥४
जौन दहिउ हुत कीन बिलोई। दहिउ[2] जो मथा धरा है सोई ॥५
देखि का कहि होई सब कोई। तीन दिन का दिन भा सोई ॥६
तीन देवस ते बनखँड रहीं। तवहु सो दिन जिह गोपिह आहीं[3] ॥७
संखिह सो कहि सूरज सेंउ, आज तैस रथ टेक। ८
बनमँह होंहि तीन दिन, गोकुल मँह दिन एक ॥ ९

प्रति-पाठ—१. घर। २. दहतो। ३. आई।

टिप्पणी—डसीं—सोयीं। आयसु—आज्ञा। कवन—क्या। नाघि—लाँघ कर। पौंरीं—द्वार। जउन—जो। बिलोई—मथा। हतो—था।

१५९

घर घर गोपीं पूछी लीन्हीं। कैं रे तुम्हार थपा अस कीन्हीं ॥ १
साज-सिंगार आफ तुम्ह गयीं। काँह चहत भंग सब भयीं ॥ २
मुख कँवल बिगसत कुँभलानाँ। पान बरन दरसैं[1] पियरानाँ ॥ ३
१०४ख चन्द्र दिपत जनु गहनैं लीन्हाँ। साँवर बदन जाइ न चीन्हाँ ॥ ४
ठाँव ठाँव अभरन सब टूटा। औ काजर सेंदुर सब छूटा ॥ ५
चोली फाट चीर दुरमुसा। कंचन जानु कसौटी कसा ॥ ६
सोरह कराँ जोत जो अही। सो पूनिउँ परवा होइ रही ॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बलय फूटि गई सब, होत जो तिलक गा मेंट । ८
उरहिं लाग नख दीसहि, जनु रावन गा भेंट ।। ९

प्रति-पाठ—१. दरसन ।

टिप्पणी—पूछी लीन्हीं–पूछ हुई । आफ–करके; देकर । (इस शब्द का प्रयोग विष्णुदास ने रामायन कथा में 'देने' के भाव में अनेक बार किया है । यथा—सीता आफि करत किन संधि; लै आफहु रघुनाइक वाम ।) । दानबरन–रक्तवर्ण; रक्तिम । दरसैं–दिखायी पड़ता है ।

१६०

तेहि क उतर सब गोपिंह कहा । देखहु ऐस अवखर को सहा ।।
तै रे सखी नावँ का पावँहु । जै रे अदोसहि दोस अकावँहु ।। २
तिह तो सोरह सहस गुवारीं । को अस जैं रायें सब नारीं ।। ३
बीनै फूल गयीं बन माहाँ । पहुँच न जाय पसारत बाहाँ ।। ४
अस काँटे लागे हैं सोई । अरुझी चली हींस मकोई ।। ५
यह झकझोर छुड़ावत भई । कंचुकी फाटि चीर अरगई[1] ।। ६
बलयें फूटि अभरन गा टूटी । रोइ मरिहिं पै जाइ[2] न छूटी ।। ७
१०५क चहों कोड़ जो खंड बन, पैठत परिह भुलाइ । ८
बेग निकास न भा तिह, मरिह डराइ डराइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. अरगइँ । २. जार ।

टिप्पणी—अवखर–अपशब्द; गाली । अदोस–निर्दोष । अकावँहु–लगाती हो । तेहि–वहाँ । रायों–रमण किया । बीनै–चुनने । पसारत–फैलाते हुए । अरुझी–उलझी । हींस-मकोय–एक कटीली झाड़ी । अरगई–उलझ गयी । बलयें–चूड़ियाँ । कोड़–क्रीड़ा; खेल ।

१६१

कन्ह करै जस दिन दिन भोगू । लाग कंस कँह उपजै रोगू ।। १
नारद सूक हँकारै दोऊ । तुम्ह अस मंत्री आह न कोऊ ।। २
सुनीं जो कन्ह केर मैं बाता । कीन्हेसि गोगिरि परवत छाता ।। ३
सबै सिला वै मार बराये । बरिस पखान दइत बहुराये ।। ४
तौहुत लागेउ सीस पिराई । एकहुँ[1] भाँत पीर न जाई ।। ५
अब अस औखद आनहु हेरी । जिह[2] रे पीर जाइ सिर केरी ।। ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दिन दिन बज्र होइ बिनु हटे। मारे न पारे एकँह मिटे ।। ७
औ सत्रु तस चाँपै, धरहर[3] करै न कोइ ।। ८
जो यह गरह[4] उतारे, मीत पियारा सोइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. बरस एकहुँ । २. जँद । ३. धरधर । ४. गरो ।

टिप्पणी—गोगिरि—गोवर्धन पर्वत । बराये—बचाये । पखान—पाषाण । तौहुत—तबसे । सीस पिराई—सिर दर्द होने लगा । पोर-दर्द । औखद—औषधि । सिर केरी—सिर का । चाँपे—दबाये । धरहर—बचाव । गरह—ग्रह; बुरी अवस्था । उतारे—मंत्र आदि से रोग दूर करने की क्रिया ।

१६२

दुहों कहा मिलि हियें बिचारी। राजा आवै देहु देवारी ।। १
नन्द देवारी खेलै आइहि। सब अहिरँहि सो मार कराइहि ।। २
१०५ख तिंह गोहन हम कन्ह बुलाउब। धरि मालँह सों जूझ कराउब ।। ३
भल भल माल दइत अगुसारी[1] । जूझ एकौझँहि करब बिचारी ।। ४
हमरे हिय है चाँवरो अपारा। तेंहि रे कान्ह कर करब संघारा ।। ५
जनि अपनें जियँ ऐसें हारो। बेगि होहि रंगभूमि सँवारो ।। ६
भल भल माल अखारैं घालो। बहुतै खाँड दूध कै पालो ।। ७
लागहिं सरों साधना, सिख सों दाँउ[2] बराउ। ८
नित उठि कौकुत देखैं, जौलहि होइ सो दाउ ।। ९

प्रति-पाठ—१. अलसारी । २. दाँख ।

टिप्पणी—दुहौ—दोनों । देवारी—दीवाली । आइहि-आयेगा । अहिरँहि सों—अहीरों से । बुलाइब—बुलायेंगे । धरि—पकड़ कर । मालँह—पहलवानों से । अगुसारी—आगे कर के । जूझ—युद्ध; कुश्ती । कराइब—करायेंगे । भल-भल—अच्छे अच्छे । एकौझँहि-एकाकी । हिय—निकट; पास; यहाँ । चावरो-चाणूर नामक मल्ल । रंगभूमि—अखाड़ा । घालो-डालो । पालो—पालन करो । सरो-साधना—व्यायाम-साधना । सिख-सिखाओ । दाउँ-बराउ—दाँव-पेंच । कौकुत-कौतुक; खेल । जौलहि-जबतक । दाउ—कुश्ती ।

१६३

सो भा मँति जो मंत्रिहि दीन्ही। औ रंगभूमि सँवारी लीन्हीं ।। १
सोरह जोजन कैं बिस्ताराँ। ऊँच खाल यक सम पटसाराँ ।। २
बहुत पुहुमि घोट गच पारे। औ तिंह[1] ऊपर कंचन ढारे ।। ३
तस मिरये जस काहु बिसेखी। दर्पन मँह जानु मुख देखी ।। ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भल भल दइत जेत बरवण्डा। आनें खोज खोज चहुँ खण्डा ।। ५
जिन्ह मानुस गज-हस्ती पेली। ते सब आन अखारैं मेली ।। ६
६९क़ लाग करै सरों साधनाँ। एक एक माल लाख बर गुनाँ ।। ७
औ चाँवरो बुलावा, पान जूझ कै दीन्ह। ८
मया बहुत कुछ बोले, औ ऊपर सभ कीन्ह ।। ९

प्रति-पाठ—१. नह।

टिप्पणी—मँति—सलाह। रंगभूमि—अखाड़ा; युद्धस्थल। सँवारी—बनाया; सजाया। ऊँच-खाल—ऊँचा-नीचा। पटसारा—समतल किया। पुहुमि—भूमि। घोट—चिकना कर। गच—चूना। पारे—डाले। ढारे—ढाल। मिरये—मिलाया। आनें—ले आये। पेली—ढकेल दिया। आन—लाकर। अखारैं—युद्धस्थल। मेली—डाला; रखा। मया—छोह।

१६४

कातिक पूजी आइ देवारी। माल पर्व गोवार गोवारी ।। १
आन अमावस जागे बारा। खेलें कोउ करँहि ललकारा ।। २
नन्द महर सब लीन्हि गोवारा। आवहु जाई राजदुआरा ।। ३
[सह]स बीस संग लाग गोवारा। बाजे मंडर झाँझ मजीरा ।। ४
औ रंगराते माते भये। खेलत राजदुआरहि गये ।। ५
जाइ कंस कँह कीन्हि जुहारा। अहिरँहि सबहि लाग हँकारा ।। ६
घरी एक हम नाचहिं गावहिं। औ परसाद आज कछु पावहिं ।। ७
देहु दान हँसि[1] राजा, तोर बहुत हम आस। ८
सब केउ नित आइहि, हम पुनि बरहें मास ।। ९

प्रति-पाठ—१. हस।

टिप्पणी—पूजी—समाप्त हुई; पूरा हुआ। देवारी-दिवाली। माल-पर्व—मल्लों का पर्व। आन-आया। बारा—बालक। मंडर—एक वाद्य। झाँझ-देखिए कड़वक १२९। मंजीरा—कास्य का बना दो छोटी कटोरी नुमा घन वाद्य जो डोरी में बँधा, हाथ से पकड़ कर बजाया जाता है। परसाद—अनुग्रह। आस—आशा। बरहें मास—बारहवें महीनें; एक वर्ष पश्चात।

१६५

राजैं हँस के नन्द बोलावा। पान दीन्हि आगें बैसावा ।। १
६९ख काहूँ कहाँ आन देखाई। तुम्हरे बालक नाँव कन्हाई ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुनत अही परसहिं कर छोटा। पै भल सरों करे सो धोटा ।। ३
वँह बिहान गोहन लै आवहु। औ अहिरँह संग आन खेलावहु ।। ४
देखहिं हँमहु सरों कस होई। औ पहिराइ पठावों सोई।। ५
जित गोवार आनहु संग लाई। सब कँह देवों दून बिसाई।। ६
तोकँह दीहों तुरी तुखारा। **पड़हुत** करिहों असवारा।। ७
राजैं दीन्हि रजायसु, भा बरा बिरसाउ। ८
भोर होत चल आवँहु, कहा आप मँह **पाउ** ।। ९

टिप्पणी—आन देखाई-आकर दिखाओ। नाँव—नाम। कन्हाई-कन्हैया; कृष्ण। परसहिं-देखने में। सरों—व्यायाम; कुश्ती। धोटा—बालक। बिहान-दूसरे दिन प्रातःकाल। गोहन—साथ। पहिराइ—वस्त्र-प्रदान कर। पठवों—भेजूं। दून—दूना। बिसाई—उपहार। तुरी तुखारा—तुखार देश का घोड़ा। रंजायसु—राजाज्ञा। बिरसाउ—दुःख की बात। भोरे—प्रातःकाल।

१६६

भा बिहान रबि उठै न पावा। चलि हँकार राजा कर आवा ।। १
ससनँ दीन्ह सोंटिया लागें। चलहु नन्द कहँहि लै आगें ।। २
जहाँ अहे रंगभूमि[1] सँवारी। करहु तहाँ होइ खेल धमा[री] ।। ३
कन्ह तवहि हिरदैं अस बूझा। आज करब मालँह सेउँ जूझा ।। ४
औ वलभद्र जानि यह बाता। और न कोई जान संघाता ।। ५
७०क दोउ भाई बालक सर जोरी। चले दोउ मिलि बाँहाँ जोरी ।। ६
सहस बीस सँग लागि गोवारा। जो भल भल हुत दाँग जुझारा[2] ।। ७
ले तिह गये सोटिया, जिह मालँहि क अखार। ८
जुरे आन सिंघ होइ, भल भल दइत जुझार[3] ।। ९

प्रति-पाठ—१. भुम। २. जूझारा। ३. जूझार।

टिप्पणी—बिहान—प्रातःकाल। रवि उठै न पावा—सूर्य उगा भी न था। हँकार—बुलाहट। ससनँ—शासन; राज्यादेश। सोंटिया—लाठी लेकर चलने वाले दूत। सँघात—साथी। जुझारा—युद्ध करने वाले; जूझने वाले। ठाँउ—स्थान।

१६७

जँह हुत ऊँच दमदमाँ साजा। देखै जूझ बैठि चढ़ि राजा।। १
मेघडम्बर[1] सिर छत्तर तानाँ। चँवरधार धारहिं परधानाँ।। २
कुबलाहस्ति कीन्हि एक आगें। रहे न और हस्ति गँध लागें।। ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

दानो-दइत कोटि सौ जुरे। राकस जानु मेघ सम घिरे ॥ ४
माल-जूझ कर होइहि अखारा। भिरिहँहि दूनों[2] दइत गोवारा ॥ ५
सुनि मधुपुर देखैं सब धाये। चहुँ दिसि लोग जुरे सब आये ॥ ६
[... ....]।[... . ...] ॥ ७
जुरे गज दर उहि मे, दर बादर गा छाइ। ८
कोपा कंस मनहि मन, अब रे कन्ह कँह जाइ ॥ ९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. मेघहिंडम्बर। २. दनों।

टिप्पणी—जित–जहाँ। हुत–था। दमदमा–दमामा; नक्कारा; नगाड़ा; युद्ध घोष का वाद्य। साज़ा–रखा। जूझ–युद्ध। मेघडम्बर–काले रेशम का वस्त्र। छत्तर–छत्र। चंवरधार–चामर धारण करने वाले सेवक। परधाना–प्रधान; राजा। दानो–दानव।

१६८

तिहूँ भुवन सो परी अहानाँ। कंस जूझ बिस्नु सों ठानाँ ॥ १
७०ख ब्रह्मा महादेव सुनि आये। अपने अपने पर सब धाये ॥ २
आसन टरका डोला इन्दू[1]। कोपा कन्ह गोपाल गोबिन्दू ॥ ३
सवा लाख परबत घहराने[2]। औ छानबे मेघ चौहा[नें] ॥ ४
अष्टोकुली नाग खरभरे[3]। छप्पन कोटि बैसन्दर [बरे] ॥ ५
आये देउ छतीसो कोटी[4]। निन्नानबे जाख तिह जू[टी] ॥ ६
नवो[5] नाथ सिद्धा चौरासी। जपा-तपाँ जो[6] सहस अठा[सी] ॥ ७
भा अकूत प्रिथवी मँह, कन्ह कंस कै जूझ। ८
भानु अलोप गयेउ होइ, अस **भा कहे अनूझ** ॥ ९

प्रति-पाठ—१. एन्दू। २. घिर आने। ३. खरबरे। ४. कोरी। ५. नवे। ६. जपा जो तपाँ।

टिप्पणी—अहाना–खलबली। टरका–हिला। अष्टोकुली नाग–आठो कुल के नाग (नामों के लिए देखिए कड़वक ७४)। खरभरे–खलबलाये। बैसन्दर–अग्नि। जाख–यक्ष। नवो नाथ–नाथ पन्थ के नौ आचार्य (गुरु); इन आचार्यों की कोई सर्व-मत सूची नहीं है। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इनकी कई सूचियाँ प्रस्तुत की हैं (नाथ सम्प्रदाय, पृ० २५-२६)। आदि नाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ, तीन ही नाम ऐसे हैं जो सभी सूचियों में मिलते हैं।

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चौरासी सिद्ध–सिद्ध कहे जाने वाले कदाचित मूलतः वज्रयान बौद्ध धर्म से सम्बन्ध रखते थे। इन सिद्धों की रूढ़िगत संख्या चौरासी कही जाती है किन्तु उनकी कोई सुनिश्चित सूची नहीं है। महामहोपाध्याय हरिप्रसाद शास्त्री ने वर्ण-रत्नाकर के आधार पर एक सूची दी है (बौद्धगान ओ दोहा, पृ० ३५); राहुल सांकृत्यायन ने तिब्बती सूत्रों से एक दूसरी सूची प्रस्तुत की है (पुरातत्व निवन्धावली, पृ० १४४); हजारीप्रसाद द्विवेदी की एक तीसरी सूची है (नाथ सम्प्रदाय, पृ० ३३-३६)। इन सूचियों में ऐतिहासिक और काल्पनिक दोनों प्रकार के नाम जान पड़ते हैं। अकूत–अनुमान से बाहर।

१६९

देखि कंस मन भयउ अनन्दू। आयसु भा सो हँकारा [नन्दू][1] ॥ १
तुम्हरे सरों करे जो गोपाला। हमरहुँ हुतहि सरवनियाँ मा[ला]॥ २
दूनहु जूझ एकौझा होई। जूझ मारै जीतै[2] सोई॥ ३
नन्द क मुख तो गयउ झुराई। बालक कन्ह गँवायेउँ आई॥ ४
का जाने बालक पट आदी। तासों कहे होइ जो बादी॥ ५
७१क [मैं] जादो औ सूध[3] अबूझा। मालँहि कर का जानों जूझा॥ ६
आयसु होइ अहिर सब खेलहिं। आपु आपु मँह देखै मैलहिं॥ ७
अबहीं जोग हौं नाहीं, आयसु भा जो तुम्हार। ८
बरु ऐसहि जो जानी, सो लै करे धमार[4]॥ ९

प्रति-पाठ—१. अनंदू। २. जितै। ३. सूद। ४. हमार।

टिप्पणी—आयसु भा–आदेश हुआ। हँकारा–पुकारा। हमरहुँ–मेरे भी। हुतहि–हैं। सरवनियाँ–सरों करने वाले। माला–मल्ल। झुराई–सूख। पट आदी–कुश्ती आदि। बादी–बराबर वाला। सूध–सीधा। अबूझा–अज्ञानी। मालँहि कर–मल्लों का। का–क्या। जानों–जानूँ।

१७०

कौनिहु कहा रे बौरी नन्दा। बाल तुरे ठाकुर कह बन्दा[1] ॥ १
हिये बूझ[2] बातहि चाड़ँहु। आपुन ऐंठ[3] परै कै छाड़हु॥ २
[क]ठिन अरजा कन्ह पै अरहीं। और न करँहि सोइ पै करहीं॥ ३
[माँ]थें परछि रजायसु लीजै। खिनक खेल सो कौकुत कीजै॥ ४
[रा]जा के जीं[4] सुख पुनि होई। औ प्रसाद लेहु पुनि सोई॥ ५
[जा]कँह नित उठि नाये गीवाँ। का बिसाइ जो मारे जीवाँ॥ ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[ले]हु पान तूँ पुरुख सयानाँ। करहु जूझ राजा भल माना ॥ ७
राजा केर रजायसु, बूतें मेंट न जाइ। ८
नन्द पान लै बहिरा, पैदर ठाढ़ हो आइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. मन्दा। २. बतूझ। ३. ऐंध। ४. जन।

टिप्पणी—कौनिहु–किसी ने। तुरे–तुम्हारा। ठाकुर–स्वामी। बन्दा–दास। ऐंठ–अकड़। परै–दूर। केर–कर। अरजा–आदेश; हुक्म। अरहीं–सौंपा। परछि–निछावर कर। खिनक–क्षण भर। कौकुत–कौतुक; मनोविनोद। उठि नाये गीवाँ–गर्दन झुका कर प्रणाम किया। बूते–शक्ति। मेंट–मिटा। बहिरा–बाहर निकला; लौटा। पैदर–बाहरी द्वार। ठाढ़–खड़ा।

१७१

७१ख कन्ह कहा झूरहु जनि पिता। हौं गोबिन्द मोसों को जिता ॥ १
हँही **करत दीठ खो आहा**। मंछ कंछ औ रूप बराहा ॥ २
हहीं सो बावन रूपी करा। हँही सत बलि राजा छरा ॥ ३
हहीं सो नारसिंघ बरियारा। हिरनाकुस क पेट जिन फारा ॥ ४
हहीं सो परसुराम पतियाहू। मारा महीं सँहसराबाहू ॥ ५
हहीं सो स्रीराम औतारा। महीं लंकपति रावन मारा ॥ ६
महीं सो नारायन पुरंजी। महीं मार कौंरो दर रंजी[1] ॥ ७
हँहीं सो पुरुख कन्ह अब, जनि डर मानहु जीउँ। ८
आज भिरों मालँहि सेंउँ, जस भारथ कै भीउँ ॥ ९

प्रति-पाठ —१. रजी।

टिप्पणी—झूरहु–अफसोस करो। जनि–मत। हँही–मैंही। दीठ–दृष्टि। खो–विनाश। पतियाहू–विश्वास करो। पुरंजी–पुरंजय; एक सूर्यवंशी नरेश। देवासुर संग्राम में देवता दैत्यां से हार कर जब भगवान के पास गये तो उन्होंने पुरंजय से कहा; पुरंजय ने दैत्यों से युद्ध कर उन्हें पराजित किया। कौरों–कौरव। दर–दल। रंजी–रौंदा। मालँहि–मल्लों से। भारथ–महाभारत। भीउँ–भीम।

१७२

कन्ह के कहत भई मन आसा। रुपचन्द, गुरुचन्द पाउ हुलासा ॥ १
खेंवचन्द देवचन्द औ महराजू। हरिचन्द जैचन्द लै पँवराजू ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूसिंघ, रौसिंघ, हरसिंघ मँहगू। सहदेव जयदेव सँवरू सँहगू ।।३
नकमल हकमल मधुकर सहसू। हमजित खमजित लखमन रहसू ।।४
७२क सन्ती, मंती, घोगा, [गाँ]गू। बुधकर, सुधकर, आदी, जागू ।।५
हरियर, वरियर, तन्नूँ, धरमूँ। नौरंग, अजतू, सुक्खी, करमूँ ।।६
होरिल, अहिमन, हुतै सयानै। रमई अगई, गुनई, राने ।।७
भल भल पुरुख आफे, जाँवन सकल गोवार। ८
आइ जुरे सनमुख होइ, खतरी वीर अपार ।। ९

इस कड़वक में ग्वाल-दल के वीरों की नामावली है। ये नाम ठेठ अहीरों के हैं जो अब तक प्रचलित रहे हैं।

टिप्पणी—कहत—कहते ही। आस—आशा। आफे—लाये; दिया।

१७३

देखि गोवार दइत सब बहिरे। भल भल आइ माल रन जुरे ।। १
साहंग, सामरथ, सरेऊ। औ हमधार धमधीर गंगेऊ ।। २
समुँदसोख बलवीर मँझधारा। पुहुपदन्त भगदन्त खँडारा ।। ३
महासिंघ नभासुर मेरू। कोकवीर अवधूत कँपेरू ।। ४
नारबीर, गजबल भुसुँगी। धूधर साँवर [और] मदंगी ।। ५
भरन कालभैरों कालिका। गुनहि सभहि रुधंग जालका ।। ६
सीथमल और खाँडें देऊ। दुरजना नथ सरभंग न[रेऊ] ।। ७
सबै माल अबली अबल, आये जूह दर साज। ८
७२ख धरती पाइ [गगन[1]] सिर; उठे मेघ गति गाज ।। ९

इस कड़वक में कंस पक्ष के दैत्यों की नामावली है।

प्रति-पाठ—१. शब्द अस्पष्ट; पाठ अनुमानित।

टिप्पणी—खँडारा—खड्ग-धारण करनेवाले; वीर।

१७४

तो बलभद्र कहा हो कान्हाँ। बढ़े सतैं सर करे न ता[हाँ] ।।१
वै सब माल दैत बहु प्रेता। तिह सेउँ केहु[1] गोवार [नहि जीता] ।।२
जो लेहँहि दर चाँप हमारा। होइह हँसी कहि भाग गोवारा ।।३
पौं पहिले पुनि होइ न दाऊ। किये रे असत रन घा[लब] घा[ऊ] ।।४
जो यह चला न पछिला कोई। करों पेच यक रख सोई ।।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हरे भयउँ हौं अर्जुन साथी[2] । कहु मार चलाँवों हाथी ।।६
माँजरि पैंठ मारों सब माला । कंसहि[3] परै जीउ कर लाला ।।७
हौं सेवक नित-नित कर, जहाँ परा तुम्ह काज । ८
करौं जूझ मालँहि सेउँ, कौकुत देखहु आज ।। ९

प्रति-पाठ—१. खोवह । २. साती । ३. कन्ह ।

टिप्पणी—केहु—कोई भी । दर—दल । चाँप—दबा । कहि—कहीं; यदि । अर्जुन साथी—बलराम ने यहाँ अपने को अर्जुन के समान कृष्ण का साथी कहा है । कवि ने आगे अनेक स्थलों पर बलराम के लिए अर्जुन नाम का प्रयोग किया है । माँजरि—बिल्ली । पैंठ—दाँव ।

१७५

भा आयसु अरजुन कस[1] कोपा । दौरि पाउ अंगद जिमि रोपा ।। १
एकँहि बार भयउ मन भंगा । गयउँ पतारहिं नहिं हरि के संगा ।। २
सो मोहि लाग बहुत कुछ रीसी । आज मिटाओं आपुन खीसी ।। ३
७२क टेके सबै माल जित काछे । सब गोवार दर मेले पाछे ।। ४
दाबी ठोंक फूल भा ठाढ़ा । हतो जो छोट सरग लहि बाढ़ा ।। ५
मालहिं आइ भिरहि हम पाहाँ । खिनक आपु मँह पेली बाहाँ ।। ६
तुम्ह सरवनियाँ जीत न कोई । हमरे[2] संघ सरों जस होई ।। ७
पहिलै कीजै हाथहिं, पुनि कीजहि बहु पेल । ८
पुनि बाजै सनमुख होइ, माल जूझ जस खेल ।। ९

प्रति-पाठ—१. कसन । २. हम पुन ।

टिप्पणी—कस—कस कर; जोर से । अंगद—बालि-सुत । अंगद ने रावण के दरबार में अपने पैर टेक दिये थे और कहा था जिसे शक्ति हो उसे हटाये । भंगा—भंग । रीसी—झुँझलाहट; क्षोभ । खीसी—खीज । दर—दल । इन पंक्तियों में कुश्ती के दाँव-पेंच का वर्णन है ।

१७६

दौरि माल अर्जुन सेउँ गाजे । जैसें हस्ति सिंघ सेउँ बाजे ।। १
धरि अर्जुन सो माल भँवावा । तस फटकारा फेरि न आवा ।। २
जानहु गेंद सरग कँह ढीला । धरि मेघहि सो उपरहिं लीला ।। ३
पुनि दस लाग धाइ दोउ बाहाँ । चाँपे सबै गये भुइँ माँहा ।। ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुनि मिल बीस लाग चहुँ पासाँ। फिरा चक्रघट जेकँह गाँसा ।। ५
रोवहिं रोवँ आप मँह टूटे। मुण्डहि मुण्ड बेल जिमि फूटे ।। ६
कै पुरवट चापर अस खेले। मारे दइत चले बसेले ।। ७
७३ख एकतिस दइत सँघारे, तवहि परी रन हूह ।। ८
परा सिंघ हस्ति मँह, बिदर चली गज जूह ।। ९

टिप्पणी—गाजे–गिरे। बाजे–लड़े। भँवावा–घुमाया। फेरि–फिर; दुबारा। चाँपे–दबाया। चक्रघट–मलयुद्ध का एक दाँव। गाँसा-दबोचा। पुरवट, चाँपर–मल्लयुद्ध के दाँव। हूह–घबराहट। बिदर–बिखर। गज जूह–हाथी का झुण्ड।

१७७

तवहि कंस चाँवरो विचारा। उहै बीर है रैन भुयारा ।। १
हठि चाँवरो पाइ भुइँ चाँपा। इन्द्र चन्द्र रबि बासुकि काँपा ।। २
सब नागहिं मिलि टेका पाऊ। जिह न डोलावे डोल न काऊ ।। ३
इन्द्र माँथ टेका उपराहीं। जम गै बासुकि पाव तराहीं ।। ४
सरग पतार पूर तस बाढ़ा। भा सुमेरु परबत अस ठाढ़ा ।। ५
बज्र गजा यक लीन्हों हाथाँ। [··· ···· ·· ···· ···· ····] ।। ६
कहाँ जाइ अब बालक नान्हाँ। मारों आज सहस जो कान्हाँ ।। ७
मारों गजा गुवारहिं, सब गोकुल कैखान। ८
एक न हेरैं पाये, तैस भुवँहि मसवान ।। ९

सातवीं पंक्ति हाशिये में है। छठों पंक्ति की दूसरी अर्धाली सातवीं पंक्ति की दूसरी अर्धाली की पुनरुक्ति मात्र है। वास्तविक अर्धाली लिपिक छोड़ गया है।

टिप्पणी—चाँवरो–चाणूर; एक दैत्य; कंस के यहाँ का एक योद्धा। उपाराहीं–ऊपर की ओर। तराहीं–नीचे। गजा–गदा। कैखान–उजाड़। हेरैं–लौटने। मसवान–स्मशान; निर्जन।

१७८

धरि ध्यान जो देख मुरारी। अर्जुन कँह तो घालसि मारी ।। १
तवंहि सरग हुत माँगी गाजा। ताकर गजा बेग यक साजा ।। २
हाक मारिकै लाग गुहारी। आज करों रन कीचक मारी ।। ३
७४क तुम्ह अर्जुन जनि घालहु घाऊ। अइसैं मारें मरो न काऊ ।। ४
इँह चाँवरो अपार समुन्दू। मेट न जाइ परें एक बुन्दू ।। ५
रकत कै बूँद परहि भुइँ जोई। उठि चाँवरो होइ पुनि सोई ।। ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक चाँवरो जाइ न मारा। कैं ऐतीं कर करब सँघारा[1]॥ ७
तिह क जूझ हौं जानों, उहाँ मोर अब काज। ८
तुम्ह सँग लागें देखहु, हौं मारों यँह आज॥ ९

प्रति-पाठ—१. संकारा।

टिप्पणी—घालसि मारी—मार डालेगा। गाजा—वज्र। गजा—गदा। हाक-मारि कै—चिल्लाकर। लाग गुहारी—पुकारा। घाऊ—चोट। ऐंती—इसका। करब—करूँगा। मोर—मेरा।

१७९

कोप कन्ह आगे भा रथी। लै पाछें अर्जुन सारथी॥ १
दाहिन भयो स्री भगवन्तू। धजा आइ बैठो हनिवन्तू॥ २
करों भींउ भारथ रन आजू। मारि चलाओं बैरि दर साजू॥ ३
आज चाँवरों कर खो करों। आजु दइत दानौं संघँरों॥ ४
आज़ सकल महि रुहीरा बोरों। आजहिं गरब कंस कर तोरों॥ ५
आज देखावों कै पोसाऊ। आज बिलावों जादो राऊ[1]॥ ६
आज पैठि रन चाँचर खेलों। आज अपेल हस्ति सब पेलों॥ ७
७४ख यह रँगभूमि[3] सँवारी, आज करो कुरुखेत। ८
जँह लगि सोनें ढारी, मारि उठावों रेत॥ ९

प्रति-पाठ—१. राआऊँ। २. रंगभुमि।

टिप्पणी—हनिवन्तू—हनुमान। भींव—भीम। भारत—महाभारत। बैरि दर—बैरी-दल। खो—नाश। संघँरों—संहार करूँ। रूहीरा—रुधिर में। बोरों—डुबाऊँ। पोसाऊ—पुरुषार्थ। बिलावों—मटिआ मेंट करूँ। जादो राऊ—कंस। अपेल-जो ढकेले न जासके; पीछे हटाये न जासके। पेलों—पछाड़ दूँ। कुरुखेत—कुरुक्षेत्र; वह क्षेत्र जहाँ महाभारत हुआ था। ढारी—ढाला है। रेत—बालू।

१८०

आइ कन्ह रन सनमुख भयऊ। कंस केर आयसु फिरि गयऊ॥ १
देखों मालँहि कर पोसाऊ। औ चाँवरो कर थिर पाऊ। २
आज जूझ तस करहु जुझारा[1]। बैरी मोर जाइ जिह मारा॥ ३
रख वख दूनों दइत बुलाये। दुहुँ दिसि दोउ[2] हकारें आये॥ ४
जवहि कन्ह सों होइ अभेरा। लागँहु दुहुँ दिसि दोउ भटेरा॥ ५
कपट रूप सब लागे ढुके। दीठ न होइ दाउ न चुके॥ ६
दौरि दइत पुनि लागे हेरे। मारहि सबै आइ चौफेरे॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रचा गोल सब दइतहि, घालि आप मँह बाद । ८
हरि मन भ्रम न मानाँ, अधिको भा अभिलाद ।। ९

सातवीं पक्ति मार्जिन में है । मूल स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. जूझारा । २. दो दोउ ।

टिप्पणी—अभेरा–भिड़न्त । भटेरा–भट; योद्धा । दीठ–दिखाई । दाउ–बाजी । चुके–खाली जाय । गोल–व्यूह । बाद–शर्त बद कर । अभिलाद–आह्लाद; हर्ष ।

१८१

कन्ह कहा अब कपट न आछों । माल जगत प्रकट होइ काछों ।। १
आप रूप भा कन्ह मुरारी । उठा चतुर्भुज कला सँवारी ।। २
चारिहु भुजा कोपि बर कीन्हा । औ कर बज्र क मूँसल लीन्हा ।। ३
७५क चक्र फिराइ गजा तँपारा । संख[1] पूरि कै घनुक सँभारा ।। ४
आज बीज ऐसैं बड़ खाँचों । हहीं नचाओं हहीं सो नाचों ।। ५
हहीं आज मारों चाँवरो । हहि सो बाँधि चलों सिरमौरो ।। ६
हहि आज मारों हौं मरों[2] । हहि भक्ति सैं आपुन करों ।। ७
हहीं खेल आज नौ निधि, खेलों आपुन खेल । ८
हहीं मार बिचलावों, जो गज गुना अपेल ।। ९

प्रति-पाठ—१. संक । २. बरों ।

टिप्पणी—आछों–रहूँ । काछों–सामना करूँ । सिरमौर–सिरमौलि ।

१८२

मैं चाँवर गरब सेउँ बोला । **अवरत** उठा जगत सब डोला ।। १
जानहु गरज उठे सब मेघा । सरग टूट जनु जाई थेघा ।। २
घालासि गजा कन्ह कँह मारे । अपुन गजा कन्ह दै टारे ।। ३
जिह[1] खन गजा गजा सेउँ बाजा । उठी अगिन सरग[2] कै गाजा ।। ४
दूनो गजा एक गै लागी । बाजा सार उठी बज्रागी ।। ५
छाड़ि गजा दूनों[3] रिसि भिरे । जानहु हस्ति सिंघ दोइ भिरै ।। ६
चहे चाँवरो बेगि पछारा[4] । परै कन्ह उठि परै न पारा । ७
७५ख और दइत लागि गै कन्ह, चहुँ दिसि चौकि[5] बिठाइ[6] । ८
कन्ह उतरि छँकाये, काहु क कछु न बसाइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. जिन । २. सरख । ३. दनों । ४. पयारा । ५. चौकी ।
६. शब्द अस्पष्ट, पाठ अनुमानित ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—थेघा—सहारा; वह लकड़ी जिसके सहारे छप्पर टँगा रहता है। घालसि—फेंका। टारे टाला। जिंह खन—जिस क्षण। गाजा—बिजली। सार—फौलाद; लोहा। बज्रागी—वज्राग्नि; बिजली से निकलने वाली चिनगारी। रिसि—क्रुद्ध होकर। छकाये—हैरान किया। काहु क—किसी का। बसाइ—वश चला।

१८३

जस हनुवंत लंगूर फिरावा। मारा सोइ नियर जो आवा ।।१
लागत चक्र होहिं दोई आधा। अर्जुन बाण धनुक कर साँधा ।।२
जौनहि दइत आवइ तिह नेरें। लागे बान घाइ[1] सो हेरें ।।३
सहस बान यक यक संग छूटहि। **निसर दुसाल**[2] जानु तस फूटँहि ।।४
दौर घाउ को करै न पावा। धरें हीक सोइ बहिरावा ।।५
कौनिउँ घरे न पाइहि हँका। लागत उत्तर जाँहि रहि थका ।।६
चाँवरहु सब कै अवसानाँ। हरि सेउँ भिरे[3] न होई कुछ मानाँ[4] ।।७
कुछ न बसाइ कन्ह सों, कर बर देखेसि जूझि। ८
आइ मीचु अब पहुँची, कहसि हियें मँह बूझि ।। ९

प्रति-पाठ—१. धाइ। २. दो साल। ३. भिर। ४. नानाँ।

टिप्पणी—लंगूर·पूँछ। फिरावा—घुमाया। नियर—निकट। नेरें—निकट। घाइ—घाव। हेरे—देखे। कै-करके। अवसाना—हताश; थक गया।

१८४

कै पोसाउ कन्ह मन गाजा। जनु सादूर सिंघ सों बाजा ।।१
कोपि चतुर्भुज भिरा अपारा। चहूँ बाँह बैरीं[1] संहारा ।।२
७६क दोइ बाँहें सरगहि लै लायें। दोइ बाँहें पातार चलायें ।।३
बासुकि इन्द्र दुहों दिसि छावा। डोला धरि जो कन्ह हुत **कावा** ।।४
गहि जो कन्ह चाँवर फिरावा। तस मारा भुइँ रकत न आवा ।।५
जस सँचान पंखि हहि धरा। के रे मिरिग चीता बस परा ।।६
तेहि रंगभूमि[2] घाल कस घोटा। हाड़ पिसान माँस भा रोटा ।।७
तजी प्रान चाँवर, आइ पहुँचा काल ।।८
बाजे तार चहूँ दिसि, जीता[3] गोबिन्द गोपाल ।।९

प्रति-पाठ—१. बरीं। २. रंगभुमि। ३. जिता।

टिप्पणी—पोसाउ—पुरुषार्थ; शक्ति लगा कर। सादूर—नील गाय। सँचान-बाज

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पक्षी । घालि–गिरा कर । घोटा–मसला; रगड़ा । पिसान–आटा । रोटा–रोटी । परान–प्राण । तार–ताली ।

१८५

लाग उतर चहु दिसि तस भवै । मारै लीन्ह झार कस चकवै ॥ १
ठाँव-ठाँव बान तस ओधा । घायल होइ लाग तस जोधा ॥ २
नर नरन्द नरवै सब काँपे । कर-पल्लो सभैं मुख चाँपे ॥ ३
भाग दहों दिसि सबै चली । धन तूँ ऐस कन्ह जो बली ॥ ४
डरपा कंस देखि हरि कोहू । मारि चँवरहि मारिहि मोहू ॥ ५
नन्द हँकार बेग दइ बीरा । पौरि धरहु सब बरजि अहीरा ॥ ६
७६ख कनक चक्र रथ बेगि मँगावा । दीन्ह कन्ह कँह औ पहिरावा ॥ ७
चला जीत रन गोकुल, बिहसत जादो राइ । ८
कंस भागि गढ़ होइ, भा हरिह क बड़ाइ[1] ॥ ९

प्रति-पाठ—१. हरि नहि यक बार ।

टिप्पणी—भवइ–घूमैं । कर-पल्लो–हथेली । चाँपा–बन्द किया । दहों दिसि–दसो दिशा । सबई–सभी । पौरि धरहु–बाहर ले जाओ । बरजि–रोक कर; मना कर । जादो राइ–यदुराइ; कृष्ण ।

१८६

बाजन बाजे भइ ललकारा । नाँचत गावत चले गोवारा ॥१
आज दीन्हि बिधि नव औतारू । अब नित मानब सुख ब्योहारू ॥२
बड़ चाँद-सुरुज दोइ साखी । जैस कान्ह दर मँह पत[1] राखी ॥३
धन तूँ औ धन तोरे पिता । जैं अस माल जुद्ध[2] रन जिता ॥४
धन जननी[3] जैं अस जावा । सुन गोकुल मँह भयउ बधावा ॥५
गावत निसरीं सकल गोवारीं । सदा खेल अस होइ तुम्हारी ॥६
जाइ नियर भा रूप मुरारी । लीन्हि जसोदरैं रोकि सवारी ॥७
सेंदुर फूल[4] तँबोलहि, चहुँ दिसि आरति होइ । ८
चन्दन अगर कुमकुमाँ, लागिं[5] भरै सब कोइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. तब । २. जुघ । ३. जनती । ४. फून । ५. लागीं ।

टिप्पणी—नव औतार–नया जन्म । जाँवा–जन्म दिया ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१८७

चन्द्रावलि राही कै जोटी। कुछ वहि चाहि बरस दोइ छोटी ॥ १
७७क सब गोपिंह मँह निरमल गोपी। निसि प्रगट दिन रहे अलोपी ॥ २
सोरह कराँ धनि सो गढ़ी। सो देखै धौराहर चढ़ी ॥ ३
हँस कै धाइ अगस्त हकारी। पूँछी कौन सो कन्ह मुरारी ॥ ४
को सो पुरुख जैं अस जस लीन्हाँ। कैं रे चाँवरो कर खो कीन्हाँ ॥ ५
कैं अस माल चढ़ रन जिता[1]। कैं राखी गोकुल को पता ॥ ६
कौन सो महावली बरवण्डा। काकर बज्र केर भूदण्डा ॥ ७
जैं कंसहि[2] दर मारा, **लोखरी** अस आहि। ८
पतै जीउ जो देखौं, धाइ देखावहु ताहि ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जीता। २. कंकहि।

टिप्पणी—जोटी–जोड़ी। चाहि–से। अलोपी–अदृश्य। पता–पत; इज्जत। काकर–किसका। लोखरी–लौहखण्ड। पतै–विश्वास हो।

१८८

देखु चाँद सुरुज कै करा। सहसो भाँति जोति निरमरा ॥ १
किसन सरूप सुरंग सलोनाँ। गोरे बदन चमक जस सोनाँ ॥ २
मदन मुरारि दइँ सो गढ़ा। आवै कनक चक्र रथ चढ़ा ॥ ३
माथे मटुक हार गियँ घाला। कुण्डल स्रवन सोहहि कँठमाला ॥ ४
अबहीं मसि भीजी लै रेखा। जगत्त बिमोह गयेउ जैं देखा ॥ ५
७७ख जहाँ लोग सब देखै झूका। उतहीं कन्ह बहु सेंदुर बूका ॥ ६
औ चहुँ दिसि न्योछावर होई। बाल गोबिन्द कन्ह देखहु सोई ॥ ७
औ मौर सिर बाँधें, चन्दन खौरें गात। ८
जस बरात मँह दूलह, देखहु ऊ बिहसात ॥ ९

टिप्पणी—मटुक–मुकुट। मार–माला। मसि भीजी–मूछों की कालिमा की हलकी झलक। झूका–झुका। बूका–बुक्का; अबीर। खौरे–मले। गात–शरीर। बिहसात–मुस्कराता हुआ।

१८९

चाँदहि सुरुज परा जो चीन्ही। देखि विमोही जिय[1] हर लीन्ही ॥ १
जनु खर लाग घाम कै झारा। काम कराँ धनि गइ बिकरा[रा] ॥ २
सहँहि कराँ बिरह रत नयी। सोरह कराँ खीन भइ [गँ]यी[2] ॥ ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दरस दीपक भयउ सुरंगू[3] । देखि रूप हर जीउ पतंगू ।। ४
काम लुबुध धनि औ सुकुवारा । भई अचेत मन कछु न सँभारा ।। ५
घायल **घोम** जानु भुइँ परा । घाव न रक्त जीउ पै हरा ।। ६
तन बिख झार[4] जो संग चढ़ा । गारुर भूल मंत्र को पढ़ा ।। ७
भै बिसहर बिसभारी, पेम माँत मतवार । ८
ऊतर बढ़ै बकत होइ, मोइ सेउ अगस्त पुकार ।। ९

प्रति-पाठ—१. जन । २. भैंनयी ।३. सोरंगू । ४. झर ।

टिप्पणी—खर–खरा; तेज । घाम–धूप । झारा–लपट; गर्मी । गारुर–गारुड़ी; सर्प-विष उतारने वाला । बिसहर–साँप । बिसभारी–बेहोश ।

१९०

७८क धाइ अगस्त नीर लें[1] आई । कै सीतल तन तपत बुझाई ।। १
[उ]ठि रे[2] अचेत चेत कर हियें । सबै न कोइ पेम मद पियें ।। २
तूँ अजान का जानसि पीऊ । दहिउँ कस महेउ होइ कस घीऊ ।। ३
मुँह कर दूध छूट न तोरा । सो जमाइ कित चहत बिलोरा ।। ४
सुनी महर तोहि जियत न छाड़ो । अपनैं लाज तोहि खनि गाड़ी ।। ५
बात रिसाइ धाइ बहुत कही । उठी सँभारि बिरह की दही ।। ६
पीउ पियाला प्रीति अगारी । मन[3] घूमै तन डोल खुमारी[4] ।। ७
धाइ परी हौं पेम बस, जनि हत्या यह लेहु । ८
कैसो प्रान मुक्ति कै, पीउ पियाला देहु ।। ९

छठीं पंक्ति मार्जिन में है । अनुमान से यहाँ रखा गया है ।

प्रति-पाठ—१. पै । २. रनी । ३. मल । ४. लहमारी ।

टिप्पणी—दहिउ–दही । महेउ–मट्ठा । बिलोरा–बिलोया हुआ । छाड़ी–छोड़ेगा । खनि गाड़ी–खोद कर गाड़ देगा । खुमारी–नशा ।

१९१

भा वियोग दिन रैन तुलानी । सूर गयेउ घटि चाँद दिपानी ।।१
चँदरावलि सब सखी बुलायीं । सबै तराईं बहिरीं आयीं ।।२
कहु अगस्त कथा कछु सोई । जिह बिस्राम मोहि निसि होई ।।३
सो किय काहु आउ जिह लै पिया । जिह आवइ सो कछु कै मया ।।४
केउ कुछ गीत नाद कछु गावा । केउ कर गहि यक बीन बजावा ।।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७८ख निसि बैरिन बिरहिन कँह सदा । सो वियोग दुख कब[2] लह बदा ।।६
निसि जो आउ नींद नहिं परी । चन्दन चीर अगिन परजरी ।।७
कहु सो बात अमीं रस, जिउ सिराइ जिह भाँत । ८
तन हुलसै मन रहसै, हिये परै मुहि[3] साँत ।। ९

प्रति-पाठ—१. जींह । २. कव । ३. मन ।

टिप्पणी—तुलानी–निकट आयी । दिपानी–दीप्त हुई; उगा । विस्राम–आराम । मया–स्नेह; ममता । बदा–लिखा । चन्दन-चीर–चन्दन सुवासित चीर । परजरी–प्रज्वलित । मुहि–मुझे ।

१९२

सुनि अगस्त रस बात बिचारी । बिहस सहेलिंह दीन्ह[1] हँकारी ।। १
आज जो[2] गयेउँ नन्द के बाराँ । देखी सबै मैं लोक सवाँराँ[3] ।। २
आज रात बहु पेखन होइह । देखिह लोगहिं कौतुक सोइह ।। ३
इन्द्रसब्द पँचतूर बजावत । औ घर बन्दनवार सजावत ।। ४
मोतिह चौक कन्ह बैसारब । मानिक दीप चहुँ दिसि बारब ।। ५
जाँवत गोकुल मँह सब बाला । सब लइलइ अइहँहि जैमाला ।। ६
[बैं]ठाइब कन्ह इन्दु सो दूजा । अछरिह कोटि माँगी पूजा ।। ७
सुनत अहै अस ताकँह, सब गोपिह कर नाँह[4] । ८
होइहि नाच भोर लहि, दान देब सब काँह[5] ।। ९

प्रति-पाठ—१. दीह । २. जीउ । ३. सबारा । ४. नाथ । ५. काथ ।

टिप्पणी—हकारी–बुला । बाराँ–घर । पेखन–खेल-तमाशा । इन्द्रसब्द–देखिए कड़वक २६ । पँचतूर–पाली साहित्य में पंचाङ्गिक तुरिय का उल्लेख मिलता है । मध्यकालीन ताम्र-शासनों में पंचशब्द और पंच महाशब्द की ऐसी चर्चा हुई है जिससे अनुमान होता है कि इसका उपयोग कुछ विशिष्ट सामन्त ही कर सकते थे । अल्तेकर के मतानुसार श्रृंग, शंख, भेरी, जयघण्ट और तमट ये पाँच वाद्य पंचमहाशब्द कहे जाते थे (राष्ट्रकूट, पृ० २६३) । सम्भवतः पंचशब्द को ही पंचतूर भी कहते थे; किन्तु वासुदेवशरण अग्रवाल की धारणा है कि नौबत को प्राचीन काल में पंचतूर कहते थे । बन्दनवार–मांगलिक अवसरों पर घर के चारों ओर लगायी जाने वाली पत्र-पुष्प की माला । चौक–मांगलिक अवसरों पर विशिष्ट व्यक्ति के बैठने का स्थान; बैसारब–बैठाये जायेंगे । बारब–जलाये जायेंगे । बैंठाइब–बैठायेंगे । ताँकह–उसको । नाँह–स्वामी । दान–नजराना । काँह–कोई ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१९३

७९क सुनि चँदरावलि पाँयह परी। धाइ दिखाउ मोहू एक घरी ।। १
तस अगस्त तुम्ह बात जनाई। जानहु घृत मँह खाँड मिलाई ।। २
अति रसाल लाग सो मीठी। मन न जानों नांग गहि धीठी ।। ३
प्रेम सुरा मोहि जैस चखावा। चढ़ा माँत जिउ रहरैं लावा ।। ४
सुनत हियें रस उपनी साधा। अब जिउ रहे न बारहिं बाँधा ।। ५
बिन जल मीन तपों तिंह लेखैं। नैंनन रहहि चाहहिं सो देखैं ।। ६
जो रे अगस्त मोर तोहि छोहू। खिनक लै सो देखावहु मोहू ।। ७
धाइ गहें पुनि तोरें, तिंह लग जाइ र निसंग। ८
खिनक देखि पुनि तोरें, फिर आउब मैं संग ।। ९

प्रति-पाठ—१. नाचद।

टिप्पणी—पायन्ह—पैरों पर। परी—पड़ी; गिरी। घरी—घड़ी। तस—जैसा। जनाई—ज्ञात कराया। रसाल—रसीली। रहरैं—लहर। उपनी—उत्पन्न हुई। साधा—इच्छा। छोहू—प्रेम। खिनक—एक क्षण के लिए। निसंग—निःशंक; बे खटके।

१९४

बिनती कीन्ह अगस्त मनाई। भई सो रात जस सरद सुहाई ।। १
लेइ पूजा सुरुज कै ताईं। चली चाँद सँग लयीं तराईं ।। २
धाइ अगस्त कीन्हि सो आगें। चलीं नखत सब गोहन लागें ।। ३
चतुर्दिसाँ तस दयीं सँवारी। जिह जग पूर रही उजियारी ।। ४
७९ख उवी सपूरन अति गहगही। रैन माँझ जनु दिन हो[इ रही] ।। ५
सोंरह कराँ सो अभरन सोहा। चाँद चलत सब जग नर मोहा ।। ६
सखीं चाँद बड़ तरईं रचीं। औ सँग जुरीं जनु कचपचीं ।। ७
लीन्ह थार बहु पूजा, औ जैमाला हाथ। ८
गयी सो महर मँदिर मँह, चाँद तराईं साथ ।। ९

प्रति-पाठ—१. साख।

टिप्पणी—ताई—के लिए। तराईं—तारिकाएँ। चतुर्दिसाँ—चतुर्दश; पूर्णिमा का चाँद। इस्लामी तिथि गणना में पूर्णिमा के चाँद को चौदहवीं (चतुर्दशी) का चाँद कहते हैं। गहगही—अत्यन्त उज्वल। माँझ—मध्य।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१९५

चली चाँद गइ गोपिह माहाँ । मेलि हार गियँ पूजसि बाहाँ ।।१
चन्द्र बदन अति भा उजियारा । छपी[1] दीप औ जोति म[सियारा] ।।२
औ सरूप सबै छपि गयीं । सुरंग देखि निरंग जनु भयीं ।।३
भुइँ चाँद तरइहि भा संगू । देखि जोति हरि भयउ पतंगू ।।४
परत दिष्टि सामनहि[2] धनि हँसी । सोरह कराँ चाँद परगसी ।।५
हुत जो कन्ह सुरुज कै कराँ । जनु भा अस्त चाँद जब [बहिराँ][3] ।।६
भौंहहि धनुक नैन सर साँधें । **बिनु सर हनाँ बोज बस बाँधे** ।।७
४०क चली मार चँदरावलि **सिर** प्रीत देइ दून । ७
[.... .... मँह, कया छाड़ .... न] ।। ९

सीलन लगने के कारण नवीं पंक्ति की स्याही अत्यन्त धूमिल हो गयी है, फलतः अपाठ्य है ।

प्रति-पाठ—१. जपे । २. सामह । ३. हरा ।

टिप्पणी—मेलि—डाल । पूजसि बाहाँ—हाथों की पूजा की । छपि—छिपा । साँधे—निशाना लगाना । बाँधे—बींधे ।

१९६

[-त] जग फूल तँबोल चढ़ावा । चाँद हरा चित कछू न भावा ।। १
[बिख] जनु फूल पान जनु काँटी । चन्दन अंग जनु रेंगहि[1] चाँटी ।। २
[क]छु न सुहाइ सो कितहु उदासी[2] । कैसो जागे आस निरासी ।। ३
[अं]ग छटपटी[3] हिरदै दाहू । केत पीर कहि जाइ न काहू ।। ४
[प्र]गट भयें नेह न होई । प्रगट होइ तो[4] मारै सोइ ।। ५
[प्र]गट प्रीति है कठिन दुहेला[5] । सो खेलार जो सिर सेउँ खेला ।। ६
[प्रे]म पंथ साँकर अति **कढ़ा** । ऐकै चलै दूसरैं कँह[6] चढ़ा ।। ७
गुप्त दग्ध अस ताकर, धुवाँ [न] प्रकट होइ । ८
सँवरि सँवरि मन झूरै, भेद न जाने कोइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. रेंगहि । २. अवदासी । ३. चटपटी । ४. लो । ५. दूहेला । ६. कह ।

टिप्पणी—तँबोल—ताम्बूल; पान । बिख—विष । काँटी—काँटा । रेंगहि—रेंगती है; चलती है । चाँटी—चींटी । निरासी—निराश हुई । केत—कितना । पीर—दर्द; पीड़ा । नेह—प्रेम । दुहेला—दुस्साध्य । खेलार—खिलाड़ी । साँकर—सँकरी । झूरै—परेशान हो ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१९७

[भा] मिनुसार रैन गइ अइसैं। उगवा सुरुज तबहि हरि पैसें ।।१
[स]हस कराँ जोति भइ खीनाँ। कया सूख गै बदन मलीनाँ ।।२
[रो]इ जसोदरें नन्द हँकारा। दई मोर कें नछन्दा बारा ।।३
४०ख रहस कोड मँह परा नसानाँ। हरी लेंहि सो बैद सयानाँ ।।४
जित औखद केउ करै सरीरा। अधिको उठै बिरह कै पीरा ।।५
भोग बात सब पाछें परे। रोग बात आगें अगरे ।।६
हरि जो रहत सब दिन बिकसानाँ। मिलतहि कँवल रात कुँभिलाना ।।७
गोकुल ढाक बाज गै, घर घर खुसपुस होइ ।। ८
दीठ लागि कान्हाँ कँह, गा देखै सब कोइ ।। ९

टिप्पणी—उगवा—आगे आया; उगा। रहस कोड—हँसी खेल। नसानाँ—बाधा। सयानाँ—झाड़ फूँक करने वाला; ओझा। पीरा—पीड़ा। पाछे—पीछे। अगरे—सामने आया। हाक—पुकार। बाज गै—फैल गयी। दीठ—नजर।

१९८

हुत अगस्त कछु काज वढ़ाई। वहैं पंथ होइ निसरी जाई ।। १
सुनि अस बात मँदिर मँह गई। पूँछसि बात पीर का भई ।। २
कहाँ सो बालक देखौं रोगू। मँकु औखद जानों वहि जोगू ।। ३
लइ सो जसोदरें कन्ह दिखावा। अति अचेत मुख बकत न आवा ।। ४
लइ उठाइ कै बैठी कोरा। परी पाइ करसि निहोरा ।। ५
निसि जो होत बसोझा दर अही। दिष्टि लाइ सब सिस्टि रही ।। ६
न जनों कैं बालक दिठावा। भा अचेत चित चेत गँवावा ।। ७
४१ क मया कै जसोदरें, अरजों भूल भरोस ।। ८
भेंट तोर भल लीहों, बार भये फिर ओस ।।९

सील लगने से स्याही धूमिल हो अथवा मिट जाने के कारण पंक्ति ८-९ का पाठ अनुमानित।

टिप्पणी—मँकु—कदाचित; शायद। वकत—बात। कोरा—गोद। दिठावा—नजर लगाना।

१९९

पूँछा धाइ कन्ह बिहसाई। कस तुम्हार जिउ बाल कन्हाई ।। १
केस भाव औ कस मन होई। जैस पीर मोसों कहु सोई ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जर जौन चन्द्र लख मन मैं देखा। कहु बात अब पूँछों भेखा ।। ३
कन्ह कहा कैसें अगुसारों। बिना लाज कछु कही न पारों ।। ४
जाइ जसोदरा अन्तैं[1] बैठी[2]। बेदन कही कन्ह कै हेठी ।। ५
दुइ नारि [सं]ग देखों काछे। तूँ वह दूनों आगें पाछें ।। ६
वहें चातुर हौं दरसन हरा। देखत जोति पतंग होई परा ।। ७
गै देखाइ सो कहूँ, लौटि न देखेउँ ठाढ़। ८
मुहि निजीवँ कै छाड़सि, जीवन[3] लै गइ काढ़ ।। ९

प्रति-पाठ—१. उठी। २. वैंही। ३. जीवँब।

टिप्पणी—बिगसाई–हँस कर। भाव–भावना। पीर–दर्द। जर–ज्वर; बुखार। जौन–जो। भेखा–भेद। अगुसारों–आगे करूँ; भेद बताऊँ। पारों–पाता हूँ। अन्तै–अन्यत्र। बेदन–वेदना। काछे–सजी हुई। निजीवँ–निर्जीव। काढ़–निकाल।

२००

कहाँ अगस्त सुनहु हो कान्हाँ। अबहूँ दीख तूँ बालक नान्हाँ ।।१
वह सो चँदरावलि है गोपी[1]। सरग चाँद दिन रहे अलोपी ।।२
४१ख औ धौराहर ऊपर बसे। सोरह कराँ जोत परगसे ।।३
मुख जोवहिं गन गन्ध्रब देवा। नौ सैं नखत करहिं सब सेवा ।।४
सो तुम्ह देखि रैन उजियारी। बिरह[2] बेग होइ सुधि न सँभारी ।।५
जनि यह सोक करहु जिह माहाँ। तुम अजान पीत जानहु काहाँ ।।६
अबहि कान्ह खेलहु जिह जोगू। भयें संजोग गहु रस भोगू ।।७
छाड़हु सिर क सौरी, उठि बहिरावहु जोउ। ८
दूध तात है कीन्हों, पर अनुसर कै कै पीउ ।। ९

प्रति-पाठ—१. लोनी। २. परह।

टिप्पणी—नान्हाँ–नन्हा। अलोपी–अदृश्य। धौराहर–धवल-गृह; अन्तपुर; रनिवास। जनि–मत। पीत–प्रीति। गहु–लो। सौरी–बिस्तर। तात–गर्म। कीन्हों–किया। कै कै–करके। पीउ–पीओ।

२०१

सुनु अगस्त अब दूध पठावा। जानों पेम जीउ बउरावा ।। १
प्रीत जाम साचे होइ रहे। उपनाँ बिरह कया अति दहे ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिउ लै गइ सो काढ़ि अहेरी। पीये दूध को जेंवहि खीरी ॥ ३
जो तूँ आइ मुहि भइ आसा। औ एक हुत परी हियँ साँसा ॥ ४
अब जिउ आउ सेउँ मोसों गया। दै जिउ दान करस जो मया ॥ ५
फुनि धाई होहु मँहि माँझाँ। बेग देखाउ धूप हिय साँझाँ ॥ ६
[..... ....]। [.... .. ..] ॥ ७
४२ क **बेग आन दिखावहु, जो लै गइ जिउ मोर। ८**
मया देइ कै संचारहु, कै प्रान जियावहु मोर ॥ ९

एक पंक्ति का अभाव; स्थान अनिश्चित। सील लगने के कारण पंक्ति ८-९ मिट अथवा धूमिल हो गये हैं; पाठ अनुमानित।

टिप्पणी—पठावा–भेजा। बउराना–पागल हो गया। जाम–शराब का प्याला। उपनाँ–उत्पन्न हुआ। काढि–निकाल। अहेरी–शिकारिनी। जेवहि–खाये। खीरी–खीर। माझाँ–मध्य।

२०२

सुनि अगस्त रूखँ होइ हेरा। अँगुरीं दस चाँपि मुख फेरा ॥ १
देखु लंगर कान्ह कै धीठी। अस कहि को सुनि बईठी ॥ २
हौं तो आइ सो बूझै रोगू। बरबस मोहि सुनायसि भोगू ॥ ३
जिंह चाँदहि अस धूरि न लागै। तिह क सेज बिरसै माँगे ॥ ४
वह तो सरग ऊपर छः ऊई। नैन न देखि कर काँहु न छूई ॥ ५
ज़ाकर वदन दुइज सब दीसा। जग जुहारि कै देइ असीसा ॥ ६
अस निर्मल वह दई सँवारी। चारहु भुवन होइ उजियारी ॥ ७
चौदस गँगन सपूरन, जाने सब सँयसार। ८
छिपै तो होइ अमावस, रहे जगत अँधियार ॥ ९

टिप्पणी—रूखँ–रुक्ष; कठोर। हेरा–देखा। चाँप–दबा कर। फेरा–घुमा लिया। धीठी–धृष्टता। हौं मैं। बूझे–समझने। बरबस–जबर्दस्ती। धूरि–धूल। बिरसै–विलास करने। सरग ऊपर छः–छ स्वर्ग के ऊपर; सातवें आसमान पर। कर–हाथ। चौदस–चतुर्दशी। इस्लामी तिथि गणना में पूर्णिमा के चाँद को चौदहवीं का चाँद कहते हैं।

२०३

सुनु अगस्त अस काहे नाहीं। सरगो चहौं कैस जो पाहीं ॥ १
जो गुरु चेलहि चहे चढ़ावा। सरग काह शिव-लोक सो पावा ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४२ख ऊ कैलास चाह सो ऊँचा। मँहि तिहें बिन सेउ न पहूँचा॥ ३
तूँ जो छोह करस सब होई। जो चाहसि पहुँचावस सोई॥ ४
जो चाहसि माँथहि बल आवा[1]। जग पँहनै परहि आवा॥ ५
अब तूँ गुरू तोर हौं चेला। कहु सो खेल पावों जिह खेला॥ ६
जैं पथ लावस तिह लागों। जिह दरसन सो भिख्या माँगो॥ ७
तूँ स्वाँति हौं चातक, बेग पियास बुझाउ। ८
बोलु मन्त्र होइ गारुर, कया मरत जियाउ॥ ९

प्रति-पाठ—१. बलियावा।

टिप्पणी—काहे नाहीं—क्यों नहीं। चहौं—चाहता हूँ। कैस—कैसे भी; किसी प्रकार। पाहीं—प्राप्त हो। ऊ—वहाँ। चेला—शिष्य। सरग—स्वर्ग; आकाश। छोह—ममता। भिख्या—भिक्षा। कया—शरीर।

२०४

तिह गोपाल सँपरहु गंगवानी। भोजन करहुँ पीर मुर जानो॥ १
तुम्ह वह जरम केर बड़ तपा। तो तप आपुन भोजहुँ जपा॥ २
जस उदास[1] कीन्ह[2] तप जोगू। अब गिरही होइ मानहु भोगू॥ ३
हौं लखाइ तिह देउँ मुरारी। कौन थान पइहहु सो रँगवारी॥ ४
चँदरावलि के भीटौं बोवाई। कवहु कवहु धनि निकसै जाई॥ ५
तहाँ बैठि के होहु उदासी[3]। चातुर बैठि तप पूरै बाँसी॥ ६
४३क बात चींत जनु कहु कहाई। देखहु पिय भरि नैन अघाई॥ ७
यह सो बात जो देखै, ते[4] काहू कहे न जाइ। ८
गुप्त रहे सो ऊबरे, प्रगट मारा जाइ॥ ९

प्रति-पाठ—१. अवदास। २. कन्हा। ३. ऊदासी। ४. ले।

टिप्पणी—जरम केर—जन्म के। उदास—वैराग्य। गिरही—गृहस्थ। लखाइ—दिखा। थान—स्थान। उदासी—बैरागी। अघाई—तृप्त। ऊबरे—निकल सके।

२०५

अँब्रित बचन अगस्त अभासा। उठा कन्ह सुन भइ मन आसा[1]॥ १
मुखा कँवल बिगसा मन हँसा। सहसँहि कराँ भानु परगसा॥ २
आइ जसोदरा पाइ लेइ परी। बैठु सो अगस्त और यक घरी॥ ३
तुम्ह हुत नन्द केर बंस[2] रहा। जिह सो बेग बचन सो कहा॥ ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चखबक करहु एक तिल घीवाँ। कछु प्रसाद देउँ औ जेंवाँ ॥५
धाईं कहा जित अरथ हमारा। सोइ सौंफि दीन्हि तुम्हारा ॥६
बेगि पूज मनावहु देवा। औ बालक कँह देहु कलेवा ॥७
चली अगस्त मँदिर कँह, चँदरावलि के पास। ८
कन्ह पल तस तपा[3], जानहु बरिस पचास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. परगासा। २. पंस। ३. तपारे।

टिप्पणी—जेवाँ–जीमन; भोजन। कलेवा–भोजन।

२०६

भा बिहान तस परी झमासी। उठा कन्ह होइ बिरह उदासी[1] ॥१
४३ख जाइ पैठि का देखी बारी। देख लुभान कन्ह फुलवारी ॥२
धन चन्द्रावलि तूँ गोपिता। धन बारी धन तोरे पिता ॥३
धन अँबराउँ सुहानी[2] छाहाँ। करमर करहिं पंखि तिह माँहाँ ॥४
रह-चह करहिं सो सूवा-सारी। कुहकहिं कोकिल मोर, पुछारी ॥५
बोलहिं पाँडुक, धौर चितरोखा। हारिल, हरदल, महरि, महोखा ॥६
बोलहिं घुमरीं, घिरन परेवा। ले ले नाँउँ करँहि सब सेवा ॥७
बासहिं पंखि सुहावन, सब्द होइ झंकार। ८
और बिरिख चन्दन कै, बास होइ महकार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. अवदासी। २. सुहाई।

टिप्पणी—बिहान–प्रातःकाल। धन–धन्य। अँबराउँ–आम्रवन। करमर–कल बल; हलचल। पंखि–पक्षी। रह-चह–चहचहाना। सूवा-सारी–शुक-सारिका; तोता-मैना। पुछारी–मयूर; मोर। पाँडुक–पड़की; घुग्घू। धौर–धवर; फाख्ता की एक किस्म। चितरोखा–फाख्ता जाति का पक्षी। हारिल–हरियल। महरि–ग्वालिन पक्षी जो दही दही कहती रहती है। महोखा–महोख। घिरन परेवा–गिरहबाज कबूतर।

२०७

फरे अनूप सुरंगम राते। दारिउँ ऊलि[1] रहै बिहसाते ॥ १
नारंग, दारिउँ, दाख सुहाये। जस देखी तस कहत न आये ॥ २
नीबू, तूत, सदाफल फरे। संगतराउ दीसहिं रस भरे ॥ ३
कटहर बड़हर औ तुरंज जँभीरा। अम्बु, जाम्बु, महुआ, अँजीरा[2] ॥४
अँवरा, नरियर, गुवा, सुपारी। जैफर लौंग, केवर[3] छुहारी ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४४क केला, करनाँ, कुंद, बिलौजी। हरफारेवरी, बेर, चिरौंजी ६
अँबरफर औ सजीवन भूरी। आस पास घन तार, खजूरी ॥ ७
फरे बनाफत बहुतै, बिरिख रहे नै८ भार ॥ ८
अम्रित लीन्हें सीचहिं, औ लाखहि रखवार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. ऊली। २. रबजीरा। ३. कपूर पाठ भी सम्भव। ४. लै।

टिप्पणी—ऊलि–लटक। नारङ्ग–नारङ्गी। दरिउँ–दाड़िम; अनार। दाख–अंगूर। तूत–शहतूत। सदाफर–शरीफा। संगतराउ–सन्तरा (देखिए कड़वक २७ की टिप्पणी)। कटहर–कटहल। बड़हर–बड़हल। तुरंज–नीबू की एक जाति। जँभीरा–खट्टे नीबू की एक जाति। अम्ब–आम। जम्बु–जामुन। महुवा–मधूक; अंगूर की शकल का फल जिसकी शराब बनती है। अँजीरा–अंजीर। अँवरा–आँवला। नरियर–नारियल। गुवा–सुपारी की एक जाति। जैफर–जायफल। केवर–केवड़ा। छुहारी–छुहाड़ा। करनाँ–बसन्त में खिलनेवाला श्वेत पुष्प। कुन्द–एक पुष्प। हरफारेवरी–आँवले के आकार का खट-मिट्ठा फल। अंबर फर–अमरफल। घन–घने। तार–ताड़। बनाफत–वनस्पति। नै–झुक। लाखहि–देख भाल करते हैं।

२०८

देखत रूप सराहत बारी। देखि लुभान कन्ह फुलवारी ॥ १
चन्दन बिरिख देखि छितनारा। तिह तर चौरा कन्ह सँवारा ॥ २
चन्दन अगर लीन्हि सो पोती। छिटक रही सगरैं बन जोती ॥ ३
वँह जो रात रही अँधियारी। होइ उजियार रही होइ बारी ॥ ४
हो सो बिस्नू बैठि गोपाला। रुद्रजात मेली गिवँ माला ॥ ५
दरस आस बैठ होइ तपा। ले-ले नाँउँ चाँद कर जपा ॥ ६
सोइ समाधि रहे मन लावा। जिह चँदरावलि दइउ मिलावा ॥ ७
खिन खिन वंसि वजावै, गावइ बहु बैराग। ८
भूले सबद पखेरू, मानुस भूले राग ॥ ९

टिप्पणी— बारी–बगीचा। छितनारा–घना; फैला हुआ। चौरा–चबूतरा; बैठने का स्थान। रुद्रजात–रुद्राक्ष। पखेरू–पक्षी।

२०९

४४ख चौदस रात सपूरन आई। भइ कातिक ससि सरद सुहाई ॥ १
हँस चँदरावलि सखीं हँकारी। आवँहु जाँहि पिता के बारी ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सँभ अगस्त कर मुख चाहा। आयसु धाइ दई वँह काहा ।। ३
भा आयसु सब कँह मन रहसी। सोरहकराँ चाँद परगसी ।। ४
औ तिरियाँ[1] सब गोहन चहीं। आईं सबै जहाँ लग रहीं ।। ५
लिही जो चाहीं और बहोरीं। चुन-चुन राखीं आपुन जोरी ।। ६
[··· ··· ···]। [···· ··· ····] ।। ७
जाइ तुलानी बारीं, चहुँ दिसि कीन जोहाइ। ८
ससिहर तार तराईं, रहा गँगन सब छाइ ।। ९

एक पंक्ति (सम्भवतः सातवीं) अनुपलब्ध ।

प्रति-पाठ—१. तिरपाँ ।

टिप्पणी—चौदस रात सम्पूरन—पूर्णिमा की रात्रि । हँकारी—पुकारा । तिरियाँ—स्त्रियाँ । गोहन—साथ । बहोरीं—बटोरा; एकत्र किया । तुलानी—पहुँची ।

२१०

रही देवस होइ निसि उजियारी। चढ़ा हुलास देखि कै बारी ।। १
तोरहिं[1] दारिउँ, नारँग, खीरी। केला, नीबू, तुरंज, जँभीरी ।। २
हँस हँस लेंहि सदाफर सोई। मार करहिं कौतुक भल होई ।। ३
बड़ सो बड़ छोटहिं सों छोटी[2]। लै-लै बाजीं आपुन जोटी ।। ४
वह ओकह वह ओकह मारै। खेल बाद कर केउ न हारै[3] ।। ५
४५क नारंग भरीं सभहि कै गोझीं। पूरहिं धरहिं दाउ कै ओछीं ।। ६
काहू कर हार गिउँ[4] टूटहि। काहू कर बलय कर फूटहि ।। ७
खेलि करै चन्द्रावलि, नखत तराईं संग। ८
अछरीं दीख दीप घन, सुखो भई पंग ।। ९

प्रति-पाठ—१. चोरँह । २. सों छोटहिं छोटी । ३. तिहारे । ४. गीउँ ।

टिप्पणी—हुलास—उल्लास । जोरी—जोड़ी । ओकह—उसको ।

२११

चौरा ऊँच चन्दन चौबारी। झार औरेही[1] चित्तरसारी ।। १
तिह चढ़ि कान्हैं बंसि बजावा। रह न जाइ सुन सबद सुहावा ।। २
रहीं बिमोह सबै ग्वालिनीं। बंसि सबद भूलीं मृगनयनीं ।। ३
चन्द्रावलि जो हुत बैरागी। सुनतहिं[1] जानु मदन सर लागी ।। ४
येतीं रात कैं बंसी पूरी। हर जिउ लीन्ह दीन्ह बिखमूरी ।। ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहा अगस्त एक होइ धोटा। जो दीखै तो बालक छोटा ॥ ६
तिह अस गुन कुछ कही न जाई। बसि सब्द जग रहा लुभाई ॥ ७
चौरा आइ थवारसि, नौरंग बारी माँह। ८
भक्ति करै बैरागी, अछै चन्दन के छाँह ॥ ९

प्रति-पाठ—१. आवरेही। २. सुतहि।

टिप्पणी—चौरा-बैठने का स्थान। चौबारी-चारों ओर। झार-लीप पोत कर। ओरेही-उरेही; उकेरा; बनाया। चित्तरसारी-चित्रसारी; चित्रशाला; शयनगृह। घोटा-बालक (सम्भवतः मूलपाठ धूता है और तात्पर्य अवधूत-बैरागी से है)। थवारसि-स्थापित किया है। अछै-है।

२१२

४५ख सुन रस बात सखीं धौ उठि[1] धाई। देखहि चरित चाँद इँह [आई] ॥ १
सबहि भाँति सुदरसन[2] सोहा। इहै भगत पै जगत बिमोहा ॥ २
अति सरूप सुन्दर सुठि लोनाँ। गौर बरन सरि पूजि न सोनाँ ॥ ३
गदा चक्र औ संख सुहावा। रुद्रजाप गिय बंसि बजावा ॥ ४
अबही बकछोहन भा आई। यह रे बयस तप साध न जाई ॥ ५
नैन दिस्टि सों जाइ न छूवा। सहस कराँ सूरज जनु ऊवा[3] ॥ ६
[.... ....]। [.... ....] ॥ ७
धन सो जै जनि जावा, औ सो पिता जिह बार। ८
कह न जाइ कुछ ताकँह, तस निर्मल उजियार[4] ॥ ९

एक पंक्ति का अभाव; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. औ। २. सोदरसन। ३. आवा। ४. ऊझियार।

टिप्पणी—सरि-समान। पूजि-पूरा पड़ना; बराबर होना। रुद्रजाप-रुद्राक्ष। जनि जावा-जन्म दिया।

२१३

मन रहसी सुन चन्द्रावली। लै सो तराइं देखै चली ॥ १
आइ ठाढ़ भइ जिह बैरागी। कन्ह दिस्टि चाँदा मुख लागी ॥ २
चन्द्र बदन हरि देखि भुलानाँ। जानहु दीप पंखि घर आनाँ ॥ ३
जें रे हना हो भौंहहि फेरी। सोइ धनुक यह सोइ अहेरी ॥ ४
नैन बान राखी दै सानाँ। भई न थिर हर लीन्ह परानाँ ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४६क यह न जान पर पीर निछोही । जिह रे अचूक मारि गै मोही ।। ६
बहुतैं खेलारि कीन्ह बन फेरा । मरन हमार खेल यहि केरा ।। ७
सूरज चाँद मुख जोवत, रहा नैन[1] तस लाइ । ८
पला पलोट नहि लावइ, लौट बार[2] नहि जाइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. धक । २. मार ।

टिप्पणी—लागी–लगी । हना–मारा । अहेरी–शिकारी । बान–वाण । सानाँ–शान लगाकर; तेज कर । थिर–स्थिर । निछोही-बेदर्द । पला-पलक । बार–दुबारा; फिर ।

२१४

देखत चाँद सुरुज तस सोहा । भूले बंसिकार सुर मोहा ।। १
देखि भेस चँदरावलि कहा । भा दुख सोइ जो मारू अहा ।। २
[क]ह[1] दुख सकों न परगट होई । नैन जो देखि जाइ मर सोई ।। ३
चुख चख सकों न काजर देयी ।[2] जगत मरे हत्या को लेई ।। ४
कित आयउँ देखै बैरागी । ठाढ़ तबहूँ जिउ हत्या लागी ।। ५
सखी सभारहु काकर बारा[3] । मरे न पाउ पेम कर मारा ।। ६
देखहु दोखँ चढ़े न आई । चल्हु बेग सो मरत जियाई ।। ७
सखिह जाइ हँस पूँछा, हौ बैरागी जोग । ८
कस चँदरावलि देखों, दौरि लाग मन भोग ।। ९

प्रति-पाठ—१. यह । २. दयी । ३. मारा ।

२१५

४६ख कन्ह कहा हौं देखु सो जोगी । जो रे गोपाल छवों रस भोगी ।। १
धनुक मोर चन्द्रावलि लीन्हाँ । सो मैं अब दुउ भौंहहि चीन्हा ।। २
जहिया परसुराम हौं अहा । इहै[1] धनुक मोपंह तब रहा ।। ३
मारेंउँ यहैं सहँस्राबाहू । यहैं धनुक बेधा हुत रा[हू] ।। ४
पुनि जो स्रीराम हौं भयौं । यहैं धनुक लंका ले गयों ।। ५
यहैं धनुक मैं रावन मारा । यहै धनुक मैं बारि सँघारा[2] ।। ६
यहैं धनुक धनुकाई कीन्हों । इहैं धनुक अर्जुन कँह दीन्हों ।। ७
आज धनुक मैं चीन्हाँ, सोइ धनुक औ बान । ८
कै मोहि बेगि मिलावहुँ, नाहुत गहहु परान ।। ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. आहे। २. सधारा।

टिप्पणी—छवो रस-षट्रस (मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय)। बारि—बाली (सुग्रीव का भाई)। संघारा—नाश किया। नाहुत—नहीं तो।

११६

सखिह कहा जो बुलहु[1] गोपाला। किह कारन कँठ घालहु माला ॥१
किह कारन तप साधा[2] बारीं। किह तिह[3] मतहि अस मारी ॥२
किह कारन कर लीनहु बाँसी। कित गिरही हुत भवँहु उदासी[4] ॥३
कस न रहहु घर सीरी छाँहा। कित बैराग फिरहु बन माहाँ ॥४
४७ क तुम राजा जो गोबिन्द मुरारी। राज छाड़ि कित भयउ भिखारी ॥५
कस इँह बैठि आइ मन राता। हमहि सुनावहु वँह कस बाता ॥६
कस गियान हिय और न पाहू। का सिर पर बरनौ सब काहू ॥७
अब रे सुख मन होइह, भए ज्ञान सों भेट। ८
उतर देहु हम पूछैं, रिस जनि मानहु पेट ॥ ९

प्रति-पाठ—१. मिलहु सो। २. साध। ३. कित मँह। ४. औदसी।

टिप्पणी—घालहु—डाला। गिरही—गृहस्थ। सीरी—शीतल। पाहू—पाया। रिस—गुस्सा।

११७

सुनु गौरा अस ज्ञान हमारा। दुख-सुख दूनों हइं निनारा ॥ १
ना कुछ आयें ना कछु गयें। जैस परै सहे चुप रहें ॥ २
ताकँह कहै मूल ज्ञानी। लाभ न हसै न रोवइ हानी ॥ ३
यह विधि क खेल हौं ताहीं[1]। अन्तर पिंड जैस परछाहीं[2] ॥ ४
प्रगट भेस गोपाल गोबिन्दू। गुप्त ज्ञान नहि तुर्क न हिन्दू ॥ ५
अपने रंग सो रूप मुरारी। कितहूँ राजा कितहूँ भिखारी ॥ ६
कितहुँ सो पण्डित कितहू मूरख। कितहु इस्त्री कितहुँ पूरख ॥ ७
सो अपनें रस कारन, खेल अन्त सब खेल। ८
४७ ख होइ नानाँ प्रकारँ, सब रस लेइ अकेल ॥ ९

प्रति-पाठ—१. नाहीं। २. परछाँई।

टिप्पणी—गौरा—तरुणी। हई—हैं। निरारा—न्यारा; निराला।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

११८

अस मन बूझि चीन्हि पिय रहिये। भेद जो कहे सो बाउर कहिये ॥१
जिन खोजत पावा सो खोजू। ना वह हसै न आवइ रोजू ॥२
गुप्त जो रहे सो ज्ञान बिचारा। प्रगट होइ जाइ सो मारा ॥३
हम तुम्ह एकै दूसर नाहीं। जैसे पिंड एक दोइ माहीं ॥४
ज़ावँत सोरह सहस गुवारीं। सो सब मोकँह बिधि औतारीं ॥५
चन्द्रावलि गोपिता पियारी। सो मोहि हुत्त कस रहे निरारी ॥६
कस दोइ **धरि तपा सिर** टेकी। कस भोग मानें होइ एकी ॥७
जनु आइ फूल औ मधुकर, दोउ होइह एक पास। ८
हिल मिल रहें आपु मँह, **बेध जाँहि न बास** ॥ ९

टिप्पणी—बाउर—बावला; पागल। हुतै—था। पिण्ड—शरीर। निरारी—अलग।

११९

सुनि चन्द्ररावलि मुख हँस फेरा। धाइ अगस्त केर मुख हेरा ॥१
सखियाँ होइ आँचल दइ[1] ओटा। को यहि नगर ढीठ अस धोटा ॥२
तवहि अगस्त कहा होइ राँधा। तुमहि नेत[2] चाँद सुरुज तप साधा ॥३
४८क तोहि नेत[3] बंसिकार नित पूरै। तुमहि नेत[4] बैरागी तप ढूरे ॥४
इहै सो कन्ह सुनु रे गोपिता। जैं चाँवरो मारि रन जिता[5] ॥५
इहै सो जो तूँ[6] देखि रथँ चढ़ा। इहे पुरुख तोकँह बिधि गढ़ा ॥६
इहै आहि जासो कर बारा। इहैं देखि तूँ गा बिकरारा ॥७
तुम्हरे रस क प्यासा, भा चातक दिन रात। ८
जो रस देहु मया कै, तवहि परै सुख साँत ॥ ९

प्रति-पाठ—१. दोइ। २. नत। ३. नत। ४. नत। ५. जीता। ६. तोपन। ७. यह।

टिप्पणी—ओटा—आड़। ढीठ—धृष्ट। धोटा—बालक। नेत—निमित्त। जासो—यशोदा। बारा—बालक। बिकरारा—विकल। मया कर—दयालु होकर। साँत—शान्ति।

२२०

हैं रे धाइ तोहि **सोक** न आई। ओखर दिही तपा सों लाई ॥ १
जवही मैं पंडितँहि सो सुनाँ। तब चाउ मन भा चौगुना ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मोकँह[1] पुरुख एक बिधि साजा । जो मधुपुर मँह होइहि राजा ।। ३
अति सरूप औ रूप मुरारी । देखु धाइ हौं ताकर नारी ।। ४
सुरुज चाह अधिक निर्मला । मूरत काम चतुर्भुज कला ।। ५
बहि सर केउ होइ न दूजा । करिहँहि गोपी जुरि सभ पूजा ।। ६
सभै जोति वह जोति छपाइह । और रूप तिह रूप लजाइह ।। ७
अस पिउ छाड़ि जो आपुन, अनतै गवन करेउँ ।। ८
दर्सन होइ ताहि सों, काह उतर हौं देउँ ।। ९

प्रति-पाठ—१. मोकह ।

टिप्पणी—चाउ–चाह; लालसा । मोकँह–मेरे लिए । मधुपुर–मथुरा । हौं–मैं । ताकर–उसकी । चाह–से । सर–समान । दूजा–दूसरा । अनतै–अन्यत्र ।

१२१

चाँदहि सुरुज परा जो चीन्हीं । देखि बिमोही जिउ[1] हर लीन्हीं ।।१
कृष्ण मुरारि गोपाल गोबिन्दू । जानै गँगन मेरु मह बिंदू[2] ।।२
हौं अगस्त पहिलहिं कह तोर चेरी । सबै बात जानों यहि केरी ।।३
यहि बिस्नु सिरजा करतारा । जाकँह दीह दसो अवतारा ।।४
आठ बार जग औतरि गयऊ । नवयें कन्ह रूप अब भयऊ ।।५
जस खो किहसि चँवर सँहारी । तस[3] खो करिह कंस कर मारी ।।६
वहि छाड़ें यह आन न होई । देखु लखन बिचारहु सोई ।।७
सोइ पुरुख यह जग मँह, दयीं दीन्ह तुम्ह जोग ।।८
अब रे गुपुत का बरनों, प्रगट मानहु भोग ।।९

प्रथम दो पंक्तियाँ चन्द्रावली से सम्बन्ध रखती हैं और प्रसंग के अनुसार उनका यहाँ कोई तारतम्य नहीं जान पड़ता । पूर्व कड़वक के क्रम में पंक्ति ३ के आगे की ही संगति है। सम्भवतः मूल दो पंक्तियाँ अनुपलब्ध हैं और ये पंक्तियाँ उनके स्थान पर प्रक्षिप्त हैं ।

प्रति-पाठ—१. जन । २. बदू । ३. अस ।

टिप्पणी—खो–विनाश । आन–अन्य । लखन–लक्षण ।

२२२

सुनि चाँदहि मन भयउ हुलासू । सोरह कराँ कीन्ह परकासू ।।१
तबहिं तराइं सबै बुलाइं । अहीं जहाँ लग सब चलि आई ।।२
४९क देखु हौं जो कहत नित बाता । इहै पुरुख जासों मन राता ।।३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो रे यहि[2] कर माँत गुवारी[3] । तबहु न पायों चीन्ह मुरारी ।।४
पै हौं जस मन जानत अही । सोइ बात धाइ मोहि कही ।।५
तोहि कारन हरि आन न जेंवाँ । अब होइ रहों दरस बर सेवाँ ।।६
कै न्योछावर तन मन वारों । केस छोरि चरनहि रज झारों ।।७
कुच कचोरी थार सब, रस लेउँ सवाँर ।।८
कौन भेंट दइ आगें, करों कन्ह मनुहार ।।९

प्रति-पाठ—१. तवहि । २. मुही । ३. लवारी ।

टिप्पणी—हुलासू—उल्लास । अहीं—थीं । माँत—मत्त । राता—अनुरक्त । चीन्ह—पहचान । डारों—डालूं । छोरि—खोल कर । चरनहि रज—पैर की धूल । झारों—बुहारूं । कुच—स्तन । कचोरी—कटोरी । थार—थाल । मनुहार—मनौनी; चिरौरी; खुशामद ।

२२३

सखिह कहा चँदरावलि रानी । हँसि गोवरि पै चतुर[1] सयानी ।।१
चढ़ीं धौराहर देखा जोई । स्याम सरीर मनोहर सोई ।।२
लकर[1] कान्ह बरियार नीबरे । बरियाई गोपिह सेउँ करे ।।३
हम पुनि तबहि सो चीन्हा अहा । तुम्हरे संका नाँवँ न कहा ।।४
सो गुसाँईं अब तूं धनि बारी । खियहु[2] खजहजहिं[3] कै रखवारी ।।५
जो सोई चाही फिर चाखा । हठारँह का जोग जो राखा ।।६
४९ख नारंग दारिउँ दाख न माँगें । हिरदैं थार भरि चलु आगें ।। ७
मान न कर चँदरावलि, पुनि न अछूतँह जाब ।
जिह संग भा जरमासो, तासों कौन कहाब ।।

प्रति-पाठ—१. केरि । २. कृष्ण के लिए इसी विशेषण का प्रयोग कड़वक २०२ पंक्ति २ में भी हुआ है । वहाँ पाठ लँगर हैं । दोनों स्थलों पर तात्पर्य स्पष्ट नहीं है । ३. कहीयह । ४. खजहहिं ।

टिप्पणी—हँसि—हो । गोवारि—ग्वालिन । बरियार—बलवान । संकाभय; डर । धनि बारीकुमारी रूपी बाटिका । खजहजहि—फलों की । जरमासो—जन्म सम्बन्ध । कहाबकहा सुनी ।

२२४

चली चाँद सूरज के पासा । ससि मुख देख भानु परगासा ।। १
चढ़ी जोति चौदस की नाईं । जगमग चहुं दिसि करँहि तराईं ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रैन माँझ जस दिन भा बारी । धरती सरग भयउ उजियारी ।। ३
चलि चँदरावलि आगें गई । सखिह ओट होइ ठाढ़ी भई ।। ४
बंसि शब्द मोहीं सब जनीं । सब्द सुहाव रात पुनि बनी ।। ५
जो रे पियार मिलै अस पीऊ । ताकँह देत न राखै जीऊ ।। ६
जाहु चाँद तुम्ह कन्ह बुलावै । धन सो नारि अस पूरुख पावै ।। ७
चेत गहँहु सब चाँदहि, गवनहु कूसर खेम । ८
नाहि नाहि कै सकुचै, अधिक भाव रस पेम ।। ९

टिप्पणी—ओट–आड़ । ठाढ़ी–खड़ी । पियार–प्यारा । कूसर खेम–कुशल-क्षेम; सकुशल ।

२२५

हँस के कन्ह गही पुनि बाहीं । चलहु[1] चाँद छाड़ों तिह[2] नाहीं ।। १
५०क आज देखि रंग बारी जाहू । जो मोहि रंग और नहि काहू ।। २
हौं रे कन्ह चन्द्रावली । सिरजिह चाँद भा निर्मली ।। ३
जिह कर चाँद सुरुज अस नाँऊँ । दूनों कस न होइ एक ठाँऊँ ।। ४
मोहि तोहि तस होइ जुरा सनेहू । मकु जिउ जाउ पै[3] जाइ न नेहू ।। ५
तूँ धनि मोर तोर हौं पीऊ । दोइ सरीर पै एकै जीऊ ।। ६
मैं मन तोसों अस्थिर टेका । छाड़हु मान मिलहु होइ एका ।। ७
मिलहु चाँद सूरज सेउँ, प्रीत न बाहों और । ८
समुझि न परै रात दिन, तस जग होइ अंजोर ।। ९

प्रति-पाठ—चकहु । २. यहा । ३. तो ।

टिप्पणी—गही–पकड़ा । जुरा–जुटा; जुड़ा । धनि–पत्नी । पीऊ–प्रियतम; पति । अस्थिर–स्थिर; दृढ़ । टेका–टिकाया । बाहों–पकड़ू ।

२२६

चतुर नारि जानै रस बैनाँ । हियें हरखि पुरवै तुम्ह बैनाँ ।। १
छाड़ें अन-जल मोर दिठौनाँ[1] । देखु दीठ नन्द घर अवनाँ ।। २
हौं अजान कछु जानों नाहीं । बरबस मोर रहा गहि बाहीं ।। ३
पिता सपत रिसि लागहि मोही । कयिहउँ[2] जाइ मरइहों[3] तोही ।। ४
सुनि न पाउ लोग जस मोरा । गोकुल होइ उबार न तोरा ।। ५
५०ख जाइ बिवाद कंस सों करै । न जनों काह करत कस करै ।। ६
जो वह आउ जान के डरा[4] । फूंकै महिउ दूध कर जरा ।। ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहाँ कंस अस दारुन, जो रे सुनै अस बात । ८
जाँवँत बारी जामी, सेउँ जर करी निपात ॥ ९

प्रति-पाठ—१.धोटौना । २. कैहों । ३. मरहीओ । ४. रहा ।

टिप्पणी—पुरवै-पूरा करै; दे । अन-जल—अन्न जल । मोर—मेरे । दिठौना—नजर । दीठ—दृष्टि, नजर । अवनाँ—आना । गहि—पकड़ । लवट—वापस । रिसि—क्रोध । कहियऊँ—कहूँगी । मरइहौं—मरवाउँगी । उबार—उद्धार । बिवाद—फरियाद । महिउ—मट्ठा । दारुण—दुःखदायी । जाँवत—जहाँ तक; जितना भी । जामो—जमी । निपात—निष्पत्र; बिना पत्ती के; ठूँठ ।

२२७

सुन अचेत महि बाँत[1] गुवारी । हौं तिह बिंदाराबन बनवारी ॥ १
देखहु सब बनास्पति राखों । जो फर चाखा चहौं सो चाखों ॥ २
जो गोपिता जहाँ मैं भेटीं । आयसु मोर न गै केउ मेटीं ॥ ३
जिह चाहों बरियाइँ रावों । और बरै धरि सरग चलावों ॥ ४
अहाँ जो दारुन कंस कहावै । सो पुनि मोसों रहै न पावै ॥ ५
जौलहि आइ अवधि न पूजी । दिन दोइ राज लेउ सो भूँजी ॥ ६
जाँवँत गोपीं गोकुल आईं । सो सब सिरजीं मोरैं ताईं ॥ ७
हौं गोपाल सो कृष्ण, जाकर दस अवतार । ८
को सरबर मोसेउँ करें[2], अवतरि इँह संसार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. माँत । २. कर ।

टिप्पणी—फर—फल । केउ—कोई । मेंटीं—टालेगी । बरियाई—जबर्दस्ती । रावों—रमण करूँ । धरि-पकड़ कर । अवधि—समय । भूँजी—भोग । जाँवत—जितनी भी । ताईं—लिए । सरबर—बराबरी ।

२२८

५१क हौं पुनि कन्ह सास्तर पढ़ी । दस अंवतार सुनत सेउँ चढ़ी ॥ १
बेदहि पढ़ा तहाँ मैं सोखा । हतो पुरान लिखी अस लेखा ॥ २
जो तुम्ह कृष्ण सूर बरियारा । आपुन कहो दसो औतारा ॥ ३
औ सो चतुर्भुज[1] जस कलि माँहाँ । मोहि दिखावहु चारो बाँहाँ ॥ ४
आठो अत्र सुनी सो मै हौं । दोइ दोइ अत्र लीन्ह कर चहौं ॥ ५
गदा, चक्र, सारंगसर, खंडा । पद्म, संख, मूँसल, भूँदण्डा ॥ ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माथें होइ मुकुट गिय` माला। तो जानों कि गोबिन्द गोपाला ।। ७
जौलहि नैन न देखों, हियें न होइ पतियार। ८
बेगि दिखावहु कान्हाँ, धौं कस रूप तुम्हार ।। ९

प्रति-पाठ—१. चतुर्भूज । २. गह ।

टिप्पणी—सास्त्र–शास्त्र । हतो–था । लेखा–वृत्त । अत्र–अस्त्र । (हमने पहले इसे अस्त्र का अपपाठ समझा था, किन्तु जायसी ने अस्त्र के अर्थ में इस शब्द का इसी रूप में प्रयोग पदमावत (१०१।६; २५४।४) में भी किया है ।)। सारङ्ग-सर–धनुष बाण । खण्डा–खङ्ग । पतियार–विश्वास ।

२२९

कहत सो बात भेस हरि धरा। कीन्हि सिंगार जोग रस करा ।। १
कुंडर सुवन मेलि गियँ माला। भौ चतुर्भुज[1] बाल गोपाला ।। २
चन्दन बमूत चिता बैरागी। पुहुभि[2] घेरि भिख्या जिह माँगी ।। ३
गुप्ती खरग चक्र दोइ हाथाँ। कीन्ह बज्र मूसल पुनि साथाँ ।। ४
[.... ....]। [.... .... ।। ५
[.... ....]। [.... .... ।। ६
[.... ....]। [.... .... ।। ७
५१ख डासँ मृग कर छाला, बैठो मढी दुआर। ८
कहों बारि अब तोसों, आपुन दस अवतार ।। ९

तीन पंक्तियाँ (सम्भवतः ५-७) अनुपलब्ध ।

प्रति-पाठ—१. चतूरभुज । २. पदम ।

टिप्पणी—बमूत–विभूति; भभूतः राख । चिंता–रचा । पुहुमि–पृथिवी । घेरि–घेर कर । भिख्या–भिक्षा । डासँ–बिछा कर । मढ़ी–मन्दिर । बारि–बाला ।

२३०

प्रथम सिस्टों[1] जो मँत बाढ़ी। गोकुल आइ गोउ चित बाढ़ी ।। १
दूसरें मंछ रूप अवतारा। बेद निकासि पैठि पतारा ।। २
तिसरें रूप कच्छ[2] कर कीन्हा। टेक भार धरती कर कीन्हा ।। ३
चौथें बराह रूप तन पोखा। नवहु खण्ड कर अंब्रित सोखा ।। ४
पचयें होइ नरसिंघ बरियारा। हिरनाकुस क पेट धरि फारा ।। ५
छठें परसुराम धनुकारा। मारि सहंस्रबाहु निपारा ।। ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सतयें सिरि राम औतारा । जिह लंकपति रावन मारा ।। ७
अठयें कन्ह रूप अब, नवों नराइह रीत ।। ८
दसयें लोध रूप होई, परलो जाइहि बीत ।। ९

प्रथम पंक्ति यहाँ असंगत है। अवतारों की जो सूची जायसी ने कड़वक ३८ और १७१ मे दी है उसमें मत्स्य को प्रथम अवतार कहा है, जो परम्परा मान्य है। इस सूची में चौथे अवतार वामन का कोई उल्लेख नहीं है। जान पड़ता हैं इसी छूट के स्थान पर प्रक्षिप्त रूप में प्रथम पंक्ति है। प्रथम पंक्ति की दूसरी अर्धाली अक्षरशः कड़वक २७२।६ की दूसरी अर्धाली है।

प्रति-पाठ—१. बशतन। २. कीन्ह।

टिप्पणी—टेक–सहारा। पोखा–धारण किया। सोखा–आत्मसात कर लिया। नराइह–नारायण। परलो–प्रलय।

२३१

बिहस भेद चँदरावलि पूँछा। भरा समुँद चुक होइ न छूछा ।। १
ऐसें मन पतियार न होई। आयसु होइ त पूछों तोही ।। २
५२क तुम्ह जो विष्णु कन्ह मुरारी। गुप्त रहहु कस भयें भिखारी ।। ३
कस जादो कै [न] कीजहि काजा। कस प्रकट होहु न राजा ।। ४
तुम्ह हुत बरियार न कोऊ। किह के डर तुम्ह कीन्ह सँजोऊ ।। ५
तुम्ह तें ऊपर[1] मीचु[2] न खाँची। जहाँ अग्नि तँह घास न बाँची ।। ६
अस ज्ञान उपजा मन माँहाँ। जहाँ सिंघ तहँ साउज कहाँ ।। ७
जिह बन तुम्ह अस पारध, करे अहेरा साज। ८
तिह बन कहवाँ पावै, कंस करै सुख राज ।। ९

प्रति-पाठ—१. और। २. बच ?।

टिप्पणी—चुक–तनिक भी। छूछा–खाली। पतियार–विश्वास। तोही–तुमसे। कस–कैसे। जादो–यादव; अहीर। हुत–से। बरियार–बड़ा, श्रेष्ठ। सँजोऊ–छद्मरूप। बाँची–बचेगी। साउज–शावक; शिकार योग्य जन्तु। पारध–शिकारी। अहेरा–शिकार। कहवाँ–कहाँ।

२३२

सुनु चँदरावलि जें जग साजा। मोहि ऊपर ओहू[1] सो राजा ।। १
ताकर आयसु मेंट न कोई। जो वैं लिखा सो आन न होई ।। २
तें हौं मारे कंस पठावा। अब मुरि कारन रहे न पावा ।। ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जौलहि काल न पहुचा आई। दिन दस ताकर होइ दोहाई ।। ४
तप मँह[1] मोर होइ यह काजू। कौन काज यह आइहि राजू ।। ५
जो तप[2] किहेउँ राम अवतारा। वैसैं भोग पुनि दइ संसारा ।। ६
५२ख दुख मँह विधि सँवरै हर स्वासा। सुख मँह बिसरै करत बिरासा ।। ७
जो करहि सँजाउ सब, सो तज लें न आन। ८
अठवाँ अ[व]तर लीन्ह तो, चार भुजा परवान ।। ९

८·९वीं पंक्तियों का पूर्वांश सीलन के कारण अस्पष्ट हैं; अतः पाठ अनुमानित।

प्रति-पाठ—१. ओहू ऊपर। २. पत। ३. अठवा।

टिप्पणी—ओहू—वह भी। ताकर—उसका। आन—अन्य। मुरि—मेरे। जौलहि—जब तक।

२३३

कन्ह बात आपुन सब कही। पुनि हिया[1] गुनि चाँद हरखी ।। १
सहस कराँ सूरज कै भई। सोरह कराँ चाँद घट उई ।। २
जिह लग सखीं चाँद सँग आईं। खीन कराँ छपि सबै रहाईं[2] ।। ३
जस चँदरावलि सों भा भोगू। मिला सबहि सों भोगँहि भोगू ।। ४
चौसठ[3] आसन रावन रई। ओ सब गोपीं सो रति भई ।। ५
सबहीं भोगि भुगुति रति मानी। इंछा पूजी आस तुलानी ।। ६
भा अँजोर जग सब किय भानूँ। चाँद सुरुज दोइ भये बखानूँ ।। ७
धन सो रात चन्दरावलि, धन माँटी को भाग। ८
जिह के मिलत मिली सब गोपी, सबही चढ़ा सोहाग ।। ९

प्रति-पाठ—१. भया। २. राहीं। ३. चँहसठ। ४. भोगो।

टिप्पणी—हिया—हृदय। हरखी—हर्षित हुई। उई—उगी। चौसठ आसन—कामशास्त्र के अनुसार रति करने के चौसठ ढंग। रावन—रमण करने वाला। रई—रमण किया। इंछा—इच्छा। आस—आशा। तुलानी—पूर्ण हुई। अँजोर—उजेला। माँटी—मिट्टी। भाग—भाग्य। सोहाग—सौभाग्य।

२३४

सब निसि भई चाँद सों केली। औ गोहन सब सखीं सहेली ।। १
५३क भाँवर दीन्हि गाँठि संग जोरी। पछिल पहर भयेउ तो झूरी ।। २
दइ सो भुगुति आयसि कन्ह मढ़ी[1]। चाँद जाइ धौराहार चढ़ी ।। ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हरि जीव लीन्ह गहन अस गही। भई अचेत मन चिन्त न रही ।। ४
हुत जो गुलाब[2] कुसुम कै बानी। पियर पान अस भइ कुभँलानी ।। ५
सब रंग लीन्ह निरंग भइ बोले। मरसर हसै लसत भइ डोले ।। ६
[.... ....]। [.... ....] ।। ७
फाट चीर तन दुरमुस, परा गहनैं सब टूट । ८
रहा न काजर सेंदुर, गा सिंगार सब छूट ।। ९

एक पंक्ति का अभाव; स्थान अनिश्चित। दूसरी पंक्ति की पूर्व अर्धाली में वर्णित 'भाँवर दीन्हि गाँठि संग जोरी' पूर्व कड़वक में वर्णित रति-प्रसंग के बाद नितान्त असंगत है। राधा की तरह चन्द्रावली के साथ विधिवत विवाह जैसी बात पूर्वापर के क्रम में कहीं दिखाई नहीं देती। यह अर्धाली स्पष्टतः प्रक्षिप्त है।

प्रति-पाठ—१. मरी। २. गुलाल।

टिप्पणी—केली—क्रीड़ा; रति। गोहन—साथ में। पाछल—पिछला। झूरीं—अफसोस करने लगी। बानी—नमूना। पियर—पीला। दुरमुस—कुचला हुआ।

२३५

भोर भयो उठि महरि पुकारी। चँदरावलि दहि मथै हँकारी ।। १
धरि भराइ साढ़ि सब आनी। दीन्हि हाथ कै दहेड़ि[1] मथानी ।। २
मथहि चाँद जस मथहि बहोरा। चुक नहि उठै तुम्हार बिलोरा ।। ३
चटकी चाँद हियें बरकरे। कहाँ सो बर जो मथानी फिरे ।। ४
गा सो भरोस नीर भा जीऊ। माँखनचोर लीन्ह मथ घीऊ ।। ५
पुनि गहीं नारि डोलै जस मही। आपु भै नीर मथै को दही ।। ६
५३ख जस बर करै बनौटों होई। ठाढ़ सो आइ न जाइ बिलोई ।। ७
झँखहि ठाढ़ सवानी, कुछ रे कुछ रोज। ८
कौन उतर अब दीहों, महरि करब जो खोज ।। ९

प्रति-पाठ—१. दीढ़।

टिप्पणी—भोर—प्रातःकाल। महरि—माँ। दहि—दही। हँकारी—पुकारा। साढ़ि—साढ़ी; मलाई। दहेंड़ि—दही का बर्तन। मथानी—मथनी। घीउ—घी।

२३६

भई सो बेर जिह दहिउ[1] बिकाई। कस भइ बेर महरि चलि आई ।। १
घी क रहा सो लहि लहि भोरा। पुनि रे बनिक होइ पठवा जोरा ।। २
जो रे आइ देखी महरानी[2]। मथी चाँद को मथै मथानी ।। ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गइ रे बिरस आरस न सहबारा। दही केर को करै सँभारा।। ४
पूँछी महरि चाँद कस जीऊ। कस दहि मथी न निकासी घीऊ।। ५
तूँ दहेड़ि जो कर गहि खाँची। चलत हाथ नाँ झुनझुन[3] बाजी।। ६
चार चोत घीउ निकसत अहा। अब कस निबर थाक तन रहा।। ७
सोरह कराँ रहत नित, जाइ सपूरन आहु। ८
काहे भई अमावस, चाँद गही मनु राहु।। ९

प्रति-पाठ—१. दहू। २. महराई। ३. जुनजुन।

टिप्पणी—भीर–भीड़। वेर–देर। घिय क–घी का। बिरस–अनमनी। खांची–खीचा। चोत–लौंदा; चक्का। निबर–निर्बल। थाक–थका।

२३७

देखु रात सूत हौं अही। सपने माँझ सिंघ जनु गही।। १
५४क जाँहि निकर चलीं सब बारीं। औ तिह पुन हौं लीन्ह हँकारीं।। २
जाँह जात बीझ बन अहा। सिंघ एक मारग धरि रहा।। ३
भागि गई संघ छाड़ि सहेलीं। दौरि सिंघ जनु गही अकेलीं।। ४
चेरि गुहरावों[1] पै चेरि न जागँहि। करों पुकार गुहार न लागँहि[2]।।५
अस उपद्रों न जिउ तन रहा। भा अतंक तस जाइ न कहा।। ६
परबस जैस पहारीं चाँपी। परी सेज सब निसि डर काँपी।। ७
सूख गयो तिह सब तन, समुझै नहि जिउ मोर। ८
इँह बिनत भइ बोलों, सँवर सोइ झकझोर।। ९

प्रति-पाठ—१. फरावों। २. लाखँहि।

टिप्पणी—माँझ–मध्य; में। जाँह–जहाँ। हँकारी–पुकार। बींझ–बीच। सिंघ–सिंह। संघ–संग। गुहरावों–पुकारों। अतंक–आतंक; भय।

२३८

जिह बन होत कन्ह सों मेरा। राधे ताकि चली सो बेरा।। १
लीन्ह थार भरि लाडू लावन। चाचर पापर पूरि पकावन।। २
देखी काह तहाँ बन सूनाँ। उपनाँ बिरह भयो दुख दूनाँ।। ३
कुरलहि मेघ मतंग[1] चिघारहि। भुयेउँ मुयेउँ कर मोर पुकारहि।। ४
फिरि फिरि ढूंढ़े चहुँ दिसि धनाँ। कान्ह नही बिंदराबनाँ।। ५
५४ख मकु तिह दीन्ह और कल नाहीं। तोपिय आइंह बिंदरा बन नाहीं।। ६
[.... ....]। [.... ....]।। ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चारि पहर पथ जो[व]त, सब निसि रही अकेल । ८
चिहुकत झुरवत भोर भा, चकई जैस दुहेल ।। ९

एक पंक्ति अनुपलब्ध । स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. पतंग ।

टिप्पणी—मेरा–मिलाप; भेंट । राधे–राधा । थार–थाल । लाडू–लड्डू; मिठाई । लावन–लवण से बना; नमकीन । पूरि–पूरी । पकावन–पकवान । उपजा–उत्पन्न हुआ । मतंग–हाथी । मुयेउँ मुयेउँ–मोर की बोली । फिरि फिरि–घूम घूम कर । चकई–चकवी । दुहेल–एकाकी; अकेली ।

२३२

भा भिनुसार सूर प्रकासा । कन्ह आये राही के बासा ।। १
चीत बिहँस पूछी मुख जोई । उतर न देई बिरोधी रोई ।। २
कन्ह कहा राही कछू सुनाँ । तो पै भा क्रोध चौगुनाँ ।। ३
कहसि रात हौं अहा न दूरे । गौंराँ हाट बाँसि मैं पूरे ।। ४
जन दस पाँच आइ तिह मिले । छाडँहि न जो प्रेम रस हले ।। ५
केउ नाँचहि केउ गावँहि गीता । तिह हुलास सहर सब बीता ।। ६
तुम्ह[1] नहिं मिलीं रहेउँ यहि सूती । तहवाँ कस न पठायहु दूती ।। ७
जो तिरिया रिस पुरुख, मानै कहत सँकाइ । ८
सो बिनवै औरो कुछ, बैठे दोखन लाइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. पुन ।

टिप्पणी—भिनुसार–प्रातःकाल । जोई–देख कर । तोपै–जिसके कारण । अहा–था । हुलास–उल्लास । सहर–रात्रि ।

२४०

दोस कि होइ लागै लाई । यहि दोस पाछें पछताई ।। १
५५क का सरेख होइ मोहि बोरावहु । बाउर सहेलीं जो औरँहि लावहु ।। २
वहिक सिंगार जेत सब आहा । प्रगट लखै डरावहु काहा ।। ३
सेंदुर चीन्ह दीस रतनारी । काजर नैन रेख मँसि कारी ।। ४
चन्दन सेज अंग तुम्ह लागा । हियें हार सोई यह तागा ।। ५
बदन[1] तुम्हार निरख मैं हेरा । सबै रूप चँदरावलि केरा ।। ६
परतख देखों सो धनि काछें । भइ जनु ठाढ़ि घालि तुम्ह पाछें ।। ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो पिउ चाहें परिहरैं, दोस न लावैं दोस । ८
जो रे तुम्ह अस भावै, का मोर परिहस रोस ।। ९

प्रति-पाठ—१. बेदन ।

टिप्पणी—सरेख–श्रेष्ठ । बोरावहु–भुलावा देते हो । बाउर–मूर्ख । वहिक–उसी का । जेत–जितना । परतख–प्रत्यक्ष । काछें–सजी हुई । ठाढ़ि–खड़ी । रोस–रोष; क्रोध ।

२४१

पुनि रे बिहँस हँस[1] मिले मुरारी । औ कँठ लाइ कीन्हि मनुहारी ।। १
लौटि राधिकैं पूछी बाता । कासो हरि तुम्हार मन राता ।। २
किह तुम्ह अस भूलहू यहि हन्ती । मोहू चाह को र रुपवन्ती ।। ३
वह रे रैन हौं दिवस कै भाऊँ । दिवसहि रात गहि पूजें काऊँ ।। ४
आउ भँवर मोरें फुलवारीं । करी करीं रस देखु मुरारीं ।। ५
५५क जो रस मोहि तोहि है सँगरैं । और न काहू जो रस बिहरैं ।। ६
भुइ रहि क चाँद सरग चढ़ धावई । रूप कि मोसों सरबर पावई ।। ७
तुम्ह नहि दोस गुसाइं, रिस हिय भई भजन बिराँच । ८
बिधो तो नियरे बैंठे, फूल केतकी माँझ[2] ।। ९

प्रति-पाठ—१. विहस हस । २. माँच ।

टिप्पणी – मनुहारी–मनावन । तोहि–तुम्हारे लिए ही । सँगरैं–सारा । बिहरै–उपभोग करे । बिधो–बिधा । नियरे–निकट । माँझ–मध्य ।

२४२

दिन राही सो कन्ह बिरासा । पुनि निसि गा चँदरावलि पासा ।। १
पूँछी चाँद कन्ह किह रायहु । किह संग कहवाँ दिवस गवाँयहु ।। २
जेत सिंगार अहा वैं कीन्हाँ । प्रगट बरन लागि सब चीन्हाँ ।। ३
अजहि हतों देखहि चित्तरसारीं । जँहवाँ चित्र करहिं सब नारीं ।। ४
मसि ईंगुर जिंह चित्र उरेहा । देखत चित्र भरीं सब देहा ।। ५
मैं पुनि तहवाँ लखो दख सखा । कौनिहु गोपा नित वहँ लखा ।।६
तहवाँ लाग बदन मसि रेखा । ईंगुर चिन्ह सोइ तुम्ह देखा ।।७
जित कन्ह भुरावइ, रस धर रहरैं लाइ ।८
चतुर नारि चँदरावलि, कहें न मन पतियाय ।।९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—राही–राधा । त्रिरासा–विलास किया । रायहु–रमण किया । हतो–था । चित्रसारी–चित्रशाला । मसि–कालिख । उरेहा– उकेरा; बनाया । देहा–शरीर । भुरावइ–भुलावा दे । पतियाय–विश्वास करे ।

२४३

५६क का भुरवहु कन्ह मुरारी । हौं सब जानों आद तुम्हारी ।। १
सबै छल छन्द तुम्ह ओराये । खोज करत लखि काँहु न पाये ।। २
जस दर्पण भीतर परछाहीं । प्रगट लगे गुप्त सो नाहीं ।। ३
का पिय भूलहु दिन कै धूपा । मोहू चाह को अधिक सरूपा ।। ४
भलहिं कै राही राह कहावै । चाँद सतैं कित सरबर पावै ।। ५
जाकर रंग लाग तुम्ह नाँहाँ । सो राही देखौं तुम्ह माँहाँ[1] ।। ६
कसत कसौटी दीखै ऐसीं । हौं रे सोन वह रावट जैसीं ।। ७
बैठु सुवा होइ बारीं, सब अम्रित फर खाहु । ८
जो रंग मोहि तोहि आगर, सो रंग और न काहु ।। ९

प्रति-पाठ— १. नाहाँ ।

टिप्पणी—भुरवहु–भुलावा देते हो । आद–आदत; स्वभाव । ओराये–समाप्त कर दिया । काँहु–कोई भी । मोहू चाह–मुझसे भी अधिक । सरबर–बराबरी । सोन–सोना । रावट–कसौटी पत्थर; काली । सुवा–तोता । बारीं–बगीचा; बालाओं के बीच ।

२४४

दोउ नारि फुलवारी बारी । अधिक भोग रस पेम पियारी ।। १
राता कन्ह दुहौं के रंगा । सोरह सहस गोपिह संगा ।। २
एक देवस कौनिउ [सु]भ अही । सो तिह गोपिह कै बड़ कही ।। ३
पूजै महन्द चलीं सब नारीं । बारह-सोलह कराँ सिंगारी ।। ४
५६ख चढ़ी सुँखासन[1] चँदरावली । बातैं कहत सखिह सो चली ।। ५
सखी सहस दोइ गोहन भयीं । केलि करत मढ़ि-मण्डप गयीं ।। ६
खीर खाँड घिउ[3] पूजा कीन्हीं । फूलहार लै माथैं चीन्हीं ।। ७
कै पूजा चन्दरावलि, बिनवइ भरे हुलास । ८
कन्ह रहहिं नित मो पँह, जाँहि न राही पास ।। ९

प्रति-पाठ— १. सिंघासन पाठ भी सम्भव । २. घीउ ।

टिप्पणी—राता–अनुरक्त । दुहों–दोनों । सुभ–शुभ । महन्द–सम्भवतः महा-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देव । बारह-सोलह करा सिंगारी—यहाँ कदाचित तात्पर्य नारी-प्रसाधन के बारह आभूषणों और सोलह श्रृंगार से है (देखिये कड़वक १५४ की टिप्पणी) । सुखासन—एक प्रकार की सवारी जिसे आदमी कन्धे पर उठा कर चलते हैं; पालकी; (सुखासन और सिंघासन दोनों ही फारसी में एक प्रकार से लिखे जाते हैं । वासुदेवशरण अग्रवाल ने ब्लाखमैन के आइने-अकबरी के अनुवाद (पृ० २४६) का अनुसरण कर पदमावत (६१२।३) में पाठ सिंघासन स्वीकार किया है और उनके इस पाठ से भ्रमित होकर हमने भी चन्दायन (२५२।६; २७२।१; ३३१।२; ३३२।४; ३३७।३ और ४३३।४) में सिंघासन पाठ दिया था । किन्तु सोमेश्वर के मानसोल्लास (३।१६।१६४८) में सुखासन का उल्लेख है । वहाँ पालकी के दो रूप बताये गये हैं—दोला और सुखासन । डोला एक दण्ड वाला होता था और इसमें दो व्यक्तियों के बैठने की व्यवस्था रहती थी; सुखासन में दो दंडिकायें रहती थीं और इसमें चार व्यक्तियों के बैठने के लिए स्थान होता था) । मढ़ि मण्डप—मन्दिर का मण्डप (गर्भगृह) । खीर—क्षीर; दूध । खांड—चीनी; मिठाई । चीन्हीं—चढ़ाया । विनवइ—विनती करे ।

२४५

सखी सहस दो जो सँघ[1] राही । सो पुनि चली बिरह की दाही ।। १
निकसी चाँद पूजि कै मढ़ी । आइ तुलान सुखासन चढ़ी ।। २
चाउर कृत खाँड पापरी । लै सो महन्द के आगें धरी ।। ३
स्त्री महन्द असता किहि काहू । सावति आइ दई जो काहू ।। ४
एक इस्तिरी सेवा करई । और टूट तिह ऊपर परई ।। ५
जिह दिन यह प्रतिज्ञा नावों । तबते चार तुम्ह पूजि मनाओं ।। ६
आन चढ़ावों मन दस मेऊँ । परनहिं दुहों कपिला द[स] गऊँ[2] ।। ७
जो सुहाग मोहि फिरै, करों जग अगियार । ८
५७क सेवा करों रात दिन, होइ के चेरि तुम्हार ।। ९

प्रति-पाठ—१. सघ । २. जऊँ ।

टिप्पणी—चाउर—चावल । महन्द—महादेव । असता—स्तुति; विनती । सावति—सौत । और—अन्य; दूसरी । मेऊ—मेवा । परनहि—अर्घ्य में । जग—यज्ञ । अगियार—हवन । चेरि— दासी ।

२४६

बिहस चाँद फिर पूछी राही । कस मलीन सिर तेल न आही ।। १
माँग न सेंदुर सुरंग न चोला । नैन न काजर मुख न तँबोला ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कै तुम्ह मँता दुलार[1] बिसारी[2] । कै सौतेल नहि देखी पारी ।। ३
कै अस देखे पिता रिसाई । कै तुम्हार सठि दारुन भाई ।। ४
कै तुम्ह देंह बहुतै अरसाहीं । चाहें चाउ चीत तिह नाहीं ।। ५
कै काहू कुछ औखर दीन्हा । तिह रिस अरप सिगार न कीन्हा ।। ६
कै कौनिउ रस कर परा सवादू । सो बिछुरा मन भा बिसमादू[3] ।। ७
हँस हँस पूछी चाँदा, ओंहि कस चलस तुम्हार । ८
सँह न सकी सुनि राही, उठी बिरह तन झार ।। ९

प्रति-पाठ—१. दोलार । २. निसारी । ३. नसमादू ।

टिप्पणी—चाँद–चंद्रावली । राही–राधा । चोला–वस्त्र । सठ–शठ; दुष्ट । दारुन–दारुण; कष्टदायक । अरसाहीं–आलस्य किया । औखर–अपशब्द; गाली । कौनिउ–किसीने । सवादू–स्वाद । बिसमादू–दुःख । झार–जल ।

२४७

सुनहु उतर चँदरावलि मोरा । कस न हँसहु जो पर पिउ[1] कोरा ।।१
मोर सिंगार लेहु[2] निसि चोरीं । अब पूछहु दिन भयें अजोरी ।।२
तू सो तुम्ह सब छाजें[3] हसा । पुरुख मोर जो तुम्ह संग बसा ।।३
५७ख जो मधुकर मालति सँग अहा । कुंद करीं संग कबहु न रहा ।।४
बीज परत हुत मोसेउ पला । सो अब बेलि तुम्हारें हिला ।।५
आन होइ अस पूँछि न बैनाँ । तूँ अस ढीठ बान तिह हना ।।६
भइं धिठाइह मोर पिउ लीन्हाँ । ऊपर पीर मोहि सावत दीन्हाँ ।।७
प्रगट होसि सरग चढ़ि, होंत बरखा खीन्ह ।८
वहै पछतायें तो पी, चहै उखारें चीन्ह ।।९

प्रति-पाठ—१. पीउ । २. लह । ३. छाछे ।

टिप्पणी—सावत–सौत ।

२४८

देखु अस गँवार मुखँ[1] नाहीं । कहत मिला कस उनहि निकाहीं ।।१
सूध बात मैं पूछी चही । यह कस बैसन्दर कहत दही ।।२
जान बूझि मन संक न कींहस । रिस बूछीं अनऊतर दीहस ।।३
अनु हौं चाँद जगत उजियारी । तूँ का बोलसि निसि अँधियारी ।।४
सेज मोर सब तरइं[2] डासँहि । नखत सो फूल बासँ नित बासहि ।।५
कस न रही अइसैं कैलासा । कित मोहि छाड़ि जाय तिह पासा ।।६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दईं दीन्ह मोहि कन्त सँजोगा। भूखहि भोग मिला रस भोगा ।।७

५८क होइ चाँद अस निर्मल, छिटक रही जग जोत ।८

राही सोभ न पावइ, हीर हार मँह पोंत ।।९

प्रति-पाठ—१. मुकँह । २. नरहीं

टिप्पणी—सूघ–सीधी सी । बैसन्दर–अग्नि । दही–जली । संक–सन्देह । रिस–गुस्सा । अनऊत्तर–टेढ़ा उत्तर । सोभ–शोभा । पोंत–पोत; शीशे का मनका ।

२४९

हौं कस पोत जो रुकमिन रानी। अति सरूप सँयसार बखानी ।।१

तूँ रे कलंकी औ करमुखी। सदा अकास डोंब रिन दुखी ।।२

आइ घरँहि तोहि जवही गहनी। परस पाण्डु मुरझो तस कहनी ।।३

हौं राही देवता सिर नावहिं। राहु-केतु निसि पहरें आवहिं ।।४

सेउ करे बासुकि रबि इन्दू। मुख जोवइ नित बाल गोबिन्दू ।।५

तोरे चरित्र[1] जो गुपुत नाहीं। काह कहों जो कहिहर नाँहीं ।।६

कँह-कहाउ न जैं तू बिरसी। नतु तूँ कित मोसों सर करसी ।।७

हँसि देखहु पर पुरुखहि, चलत बुझावसि सान ।८

निलज दार जस आपुन, तस औरहि पुनि जान ।।९

प्रति-पाठ—१. चेरतर ।

टिप्पणी—पोत–शीशे का बना मनका । कलंकी–कलंक वाली । करमुखी–कलमुही; काले मुख वाली । डोंब–डोम; एक अस्पृश्य जाति; ग्रहण लगने पर डोम लोग दान माँग कर चाँद के ग्रहण मुक्त होने की कामना करते हैं । रिन–ऋण । गहनी–ग्रहण । परस–पड़ती है । पाँडु–पीली । कहनी–कही हुई बात । कहियर–कहने योग्य । कँह-कहाव न–मत कहलावो । बिरसी–बिलास किया । सर–बराबरी । करी–करती हो । सान–संकेत । दार–दारा; स्त्री ।

२५०

जस बितार तूँ जगत सराही। सब गोकुल ऊपर गोरसाही ।। १

सब जग मँह कियउ खेह बरोरी। महिउ चखावसि खोरहिं खोरी ।।२

५८ख दही दही सब नगर पुकारे। सब केउ माँग देत न हारे ।।३

लैं ले मटुक जाहु वहि बेगीं। हौं सो गोवारि न देंउ परंगीं ।।४

लेहु लेहु फिरि फिरि चिलियासी। एक एक बार, बार दस जासी ।।५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सोइ कहे आऊ वहि जोती। मोहि तोहि कैसें सरबर होती ।।६
हौं रे सरूप दई अस गढ़ी। रहों धौराहर ऊपर चढ़ी ।।७
तूँ जग हाड़सि हया, किह लग बरनों पाप ।८
अरघ दई जोत लै, नगर नचै जस आप ।।९

टिप्पणी—बितार—छिनाल; पुँछली। गोरसाही—दूध-दही का बाजार। महिउ—मट्ठा। खोरहि खोरी—गली गली। चिलियासी—चिल्लाती हो। बार—द्वार। बार—बेर। जासी—जाती हो। हाड़सि—खखोलती हो; टटोलती हो।

२५१

मोर पाप का छैल बखानसि। तूँ अपने मन निगुनीं जानसि ।।१
जाकर स्रीराम अस पती। सोइ नारि हौं सीता सती ।।२
धर्म ध्यान जो वेद सँवारे। पाप कर्म दुत भयउँ निरारे ।।३
तूँ पापिन जस डोंवहि धरी। राहु न छाड़े एको घरी ।।४
प्रगट पाप छिपाये न गोयें। मसि मुख लाग न छूटें धोयें ।।५
सुखो फूल देखु हौं फुलवारी। का सर करसि बदन तूँ कारी ।।६
५९क कँवल केतकी चम्पा करी। सेज मोर नित आछे भरी ।।७
आइ भँवर जिह भूला, लागेउ तो नियरे पास ।८
पुनि रे कँवल पँह आइह, सँवरि पुहुप रस बास ।।९

टिप्पणी—छैल—छबीली। बखानसि—कहती हैं। निगुनीं—निर्दोष। निनारे—विरत। गोयें—छिपाये। मसि—कालिख। आछे—रहता है।

२५२

सुन बितारि जो तूँ फुलवारी। तो हौं देखु अमिय रस बारी ।।१
मोरें बेल अनूप जँभीरीं। अंजीर नारँग दारिउँ खीरीं ।।२
दाख सदाफर तुरँज सुहाये। अम्ब¹ फरा रस में जमाये ।।३
सबै खजहजा देंउँ अघाई। सो रंग छाड़ि न तोपँह जाई ।।४
तहूँ कौन सती मसवासी। रावन हरी भये बनवासी ।।५
अचल अचाल तहाँ लहि जानी। झाँकसि ताहुक खरखानी ।।६
तिह नेत समेटे बन्दर सेनाँ। ढूँढ़सि जो र छाइ अरैनाँ ।।७
लंक दाह करवाई, तबहू कहसि तिह दाह ।८
पुनि भतार घर आइसि, सो राही तूँ राह ।।९

प्रति-पाठ—१. अम्बर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—अमिय रस बारी–अमृत रस से भरी बगीची। नेत–निमित्त। अरैना–अरण्य। भर्तार–भर्तर; पति।

२५३

सुन रे चंचल छैल छतीसो। किह लग मेटसि आपुन खीसी॥ १
५९ख जो भिखारि होइ रावन आवा। दिहों भीख वैं कपट चलावा॥ २
ताकर देखु नीक का भयऊ। **भख तहूँ सो रैन सब गयऊ**॥ ३
दइं तैस वह मार उजारा। कोउ न रहा नाँउँ लिनहारा॥ ४
हौं अपने मन तैसे सती। घटी न आनाँ चढ़ी न रती॥ ५
तूं भडरी एक[1] दिन पूरी। पुनि नित घटसि **देस बिस जोरी**॥ ६
दिन दिन घटै होस **कर हीन**। **पान चबाइ औ** बदन मलीन॥ ७
घटहि घटत जास तूँ, बूड़ मरसि तिह लाज। ८
सब जग कहै अमावस, देख तोर अस काज॥ ९

प्रति-पाठ—१. एख।

टिप्पणी—खीसी–खीझ। नीक–अच्छा। नाँउँ–नाम। लिनहारा–लेनेवाला। आनाँ–आना; एक सिक्का विशेष; रूपये का सोलहवाँ हिस्सा। रती–रत्ती।

२५४

आपहि बूड़ि मरै अँधियारी। जो जग **सानथि** बैसादारी॥ १
अवंग होइ रिस सहे न पारों। **आग लाई पुनि पनि उपारौं**॥ ३
जौ गुन होइ ऊँचैं चढ़ि धावै। धरती सरग गँगन बर पावै॥ ३
हौं रे ऊँच ऊँचे पर आवों। तूं रे नीच तिह सोक न छूवों॥ ४
तोर नियर सब चोर चँडारा। राहु केतु और डोंब दहारा॥ ५
६०क दइं चाँद कै निर्मल गढ़ी। सरग चलत पग धूरि न चढ़ी॥ ६
दूँज होंवों तो **सतमुख** चाहे। करे जोहार जेत जग आहे॥ ७
चौदस भये सो दिन, अधिक होवों उजियार। ८
तू राही का बोलसि, सदा कार अँधियार॥ ९

टिप्पणी—सानथि–सानती है; लपेटती है। बैसादारी–वेश्या का पेशा। अवंग–अवाक। रिस–गुस्सा। नियर–निकट। चँडारा–चण्डाल; नीच।

२५५

सुनि रे कलंकी तोहि सब औरे। धरती छाड़ि सरग चढ़ि दौरै॥
जो तैं नित **इंह बिद्या पढ़े**। बड़ होइ ऊँचे निसि[2] चढ़े॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तूँ छुतहि जो डोंब छुतहारी । जो तिह नाँवँ सो औरहि कारी ।। ३
सरग करक खिसियासि लीन्हें । अँधर फिरसि कार मुख कीन्हें ।। ४
आपुन तू मसि धोवहु कारी । पाछें देहु आन कँह गारी ।। ५
तूँ रे कलंकी जैं न बूझा । को अस अहे जो तोसों जूझा ।। ६
यक मोहि कान होइ हर केरी । नित अस नाइ भवहौं चोरी ।। ७
रहत नाँहि औमादी, बहुत्त करै औमाद । ८
उल्टे लै मोर पिउ, मोसेउँ करे बिवाद ।। ९

प्रति-पाठ—१. विदया । २. तस

टिप्पणी—छुतहि–छुतही; अस्पृश्य । डोंब–डोम । छुतहारी–छूत वाला । आन–अन्य । गारी–गाली । औमादी–उन्मादी । औमाद–उन्माद; उटपटाँग बातें ।

२५६

६०ख अस आगर चँदरावलि गोपी । सुनत कोह भरि के मन कोपी ।। १
कँवल बरन जो बिगसत अही । चम्प बाल जिमि राही गही ।। २
कुसुम डारि धरि जस झकझोरी । फारी आँगी पाट-पटोरी ।। ३
मारे टाड़ वलय कर फूटीं । गजरा टूट सलोनी टूटीं ।। ४
हार टूट मोंति बिहरे । कठुला टूट सबै नग परे ।। ५
बेसर टूट तिलक गा छूटी । तरुवन टूट खूँट औ खूँटी ।। ६
छुद्रघंटि कंठी पुनि टूटीं । जनु फुलझरीं रैन मँह छूटीं ।। ७
कै बिधँस चँदरावलि, जीत चली मुख फेर । ८
राही[१] गही पुनि चाँदा, कह सुनि कोन्हि करेर ।। ९

प्रति-पाठ—१. राह ।

टिप्पणी—गजरा–हार । बिहरे–बिखरे । कठुला–कण्ठ का आभूषण । करेर–जबरदस्त; जमकर ।

२५७

चलत चाँद पुनि गिय धरी । जनु हिरनीं सिंघिन बस परी ।। १
राहु चाँद सब गहनैं लीन्हें । पूनेउँ हुत सो अमावस कीन्हें ।। २
तार चीर गहि कँचुकी फारी । बाहों फूटि, टूटि गै बारी ।। ३
चाँद केर सब अभरन चूरा । बिधसी माँग छूटि गा जूरा ।। ४
६१क भा गहि भादों अँधियारा । लौका हाँस बीजु चमकारा ।। ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हीर हार नग मानिक टूटे। चँहु दिसि नखत सरग जनु छूटे ।। ६
भयउ सिंगार केर सब भंगू। उतरा रूप गयउ सब रंगू ।। ७
अभरन दून्हों का छिटकि[1] गा, रतन पदारथ मोंति । ८
जनु भुइं उइं तराइं, पसर रही जग जोति ।। ९

प्रति-पाठ—१. छूटक ।

टिप्पणी—सिंघिन–सिंहनी । गहनैं–ग्रहण । पूनेउँ–पूर्णिमा । तार-चीर–तारकशी के काम से युक्त साड़ी । कँचुकी–कंचुकी; चोली । फारी–फार डाली । बाहों–बाँह का आभूषण । केर–का । चूरा–चूर्ण हुआ । बिधाँसी–नष्ट हुए; विध्वंस हुए । माँग-केश के बीच से दो भागों में बाटने वाली सीमा । जूरा–जूड़ा; सँवार कर पीछे को बांधा गया केश । भा–हुआ । गहि–गहरा । लौका–चमका । हाँस–हँसली; गले का एक आभूषण । बीजु–बिजली । छिटकि–बिखर । भुइं–भूमि पर । उइं–उगीं ।

२५८

होइ समतोल जुरीं दोइ गोरीं। हार न मानहिं जोरहिं जोरीं ।। १
उठि फिर[1] फैलहिं न एको रही। वह ओकह वह[2] ओकह गही ।। २
लपटाँइहि भर जोबन माँतीं। गहें न छाड़हि एकहु[3] भाँतीं ।। ३
सखीं छुड़ाइ हार सब परीं। हियें न समुझहिं अति रिस भरीं ।। ४
कोपि दुवउ बाजीं गोपिता। ना केउ हारँहि नहि कौनिउ जिता ।। ५
केउ परतरहिं नियर न आवै। हरि हरि धावहु सबै गुहरावै ।। ६
दौरि गोबिन्दहि आनों कोऊ। न तु ये मरँहि खे कै दोऊ ।। ७
और करे को थरहर, को बिठये यह पाप ।। ८
६१ख आइ कन्ह कै गूसैं, को नहि लेइ सराप ।। ९

प्रति-पाठ—१. पर । २. ववह । ३. नकहु ।

टिप्पणी—समतोल–बराबर । जुरीं–गुथ गयीं । जोरहिं जोरीं–जोर लगा-लगा कर । ओकँह–उसके । जोबन माँती–यौवन-मत्ता । परितरहिं–छुड़ाने के लिए । नियर–निकट । गुहरावै–पुकार लगाये । आनों–ले आवे । नतु–नहीं तो । खैं–क्षय; विनाश । कै–कर । थरहर–रोक-थाम ।

२५९

कन्ह के मन तो भयउ अगाहू। भई यक खेत चाँद औ राहू ।। १
कहा कहीं पै भा दोउ माँहा। तोपी भई धूंप औ छाहाँ ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बेंग पहुँच गा दोउ छुड़ाईं । औ भल कै हरखीं समुझाईं ।। ३
चँदरावलि जो हियें न बूझै । कस प्रधान राधिका जूझै ।। ४
पाटमहादेवि तूँ रही सयानी । बौरँहि मिलें तिहूँ बौरानी ।। ५
जिन मोहि कन्त बोलावहि लीन्हें । यहि रिसि देहि चपि कीन्हें ।। ६
तुम्हरे पुरबुज यह सब आही । कौन दोस हौं लावों काही ।। ७
तुम्ह हू बिया जस[1] बोई, चहुँ दिसि जामीं[2] काँट । ८
लीन्ह अचोर चाँद सुख, दुख भा मोरें बाँट ।। ९

प्रति-पाठ—१. तस । २. जावीं ।

टिप्पणी—अगाहू—अनुभूति; आन्तरिक सूचना । खेत—क्षेत्र; युद्ध । राहू—राही; राधा । कहा गहीं—गर्मा-गर्मी । भा—हुआ । हरखीं—वर्जना की । जूझै—लड़ाई करे । सयानी—सज्ञान; चतुर । बौरहि—पागलों के । तिहूँ—तुम भी । बौरानी—पागल हो गयीं । देहि चप—शरीर की कुन्दी । पुरबुज—पहले का किया कार्य । बिया—बीज । जामीं—जमीं । काँट—काँटा । बाँट—हिस्से में ।

२६०

चढ़ी सुखासन चँदरावली । बातें करत सखीं सो चली ।। १
कस राही मोहि लावहि खोरी । दईं दीन्ह मैं पाई जोरी ।। २
अब लग भा पर सेज कै चोरी । अब प्रगट होइ करौं अजोरी ।। ३
६२क कै हठ ओकर कै हठ मोरी । यह रे गरब मैं ओसों जोरी ।। ४
इह सँयसार ऐस को बौरी । मोहू चाह अधिक बड़जोरी ।। ५
काह कोइ पारे मोर खनोरी । बरियाईं मैं लीन्हि अजोरी ।। ६
अइसें रखतिउँ मन सँग मोरी । आप मैं प्रीत दून कै जोरी ।। ७
करेउँ आज सबै जस, हतो दिन घोत । ८
काह करों तो हारेउँ, हतों बरस दोइ छोट ।। ९

टिप्पणी—खोरी—दोष; अपराध । जोरी—जोड़ी । ओकर—उसका । बौरी—पागल । बरियाईं—जबर्दस्ती ।

२६१

सुनीं कंस गोपिह की कही । प्रगट बात कन्ह कौ भई ।। १
तवहि सूक औ नारद कहा । भा कुछ सो होत न अहा ।। २
अब भइ पूर कंस[1] कै दसा । तुम कँह काल नियर होइ बसा ।। ३
अब जित खैं पावहु दोखू । करहु बिरोध होइ गति मोंखू ।। ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धनुजग[2] रचि होम जनावहु। सब गोपिह इहैं[3] लै आवहु ।। ५
सोरह सहस आहि गोपिता। कान्ह कहा जस जो जिता ।। ६
आजु बाँधि कर काँगन फेरी। लगन धराउ दिवस दोइ केरी ।। ७
६२ख जो रे बियाहे पावस, सदा कुसल औ राज। ८
नतु खो होइ चहत है, राजा गरब न काज ।। ९

प्रति-पाठ—१. कन्ह। २. धू जग। ३. अपन।

टिप्पणी—होत न अहा—नहीं होता था। नियर—निकट। खैं—कर। दोखू—बुराई। गति मोखू—मोक्ष गति। धनुजग—धनुष-यज्ञ। काँगन फेरे—कंगन और फेरा; विवाह। लगन—विवाह तिथि। बियाहे—विवाह करने। पावस—पाते हो। नतु—नहीं तो। खो—विनाश।

२६२

ततखन राजैं जन दौराये। नन्द जसोदा दूनो आये ।। १
जहाँ अहे देवइ-बसदेऊ। लै बन्दि कीन्ह दोउ जन आयेऊ ।। २
गोकुल आन सो सभ फेरी। परी दुहाई राजा केरी ।। ३
जावँत सोरह सहस गुवारीं। रहे न कौनिउँ बेगि हँकारीं ।। ४
जग रचा धरि धनुक गंडीऊ। लै लै चलहु बेग तिह घीऊ ।। ५
होम जाप होइहि अगियारी। काल न बचिहै घालो बारी ।। ६
राज बरोक दीन्ह सब काहू। सब गोपिह सों होइहि बियाहू ।। ७
भा राजा कै रजायसु, गोकुल परा खभार। ८
नन्द जसोदरा बाँधी, काहु क नाहिं उबार ।। ९

टिप्पणी—ततखन—तत्क्षण; उसी समय। आन—आदेश। गुवारी—ग्वालिन। कौनिउँ—कोई भी। गंडीऊ—गांडीव; अर्जुन का धनुष। बरोक—बर-रोक; विवाह के निमित्त वर का निश्चय। उबार—उद्धार।

२६३

भा अगाँहु कन्ह मन माँझा। गऊ चराइ आइ बन साँझा ।। १
मन्दिर सून बलभद्र अकेला। मता पिता नहिं नन्द दुहेला ।। २
६३क आइ गुवारँहि मिलि मँत मँता। भोर होत कढ़िहैं गोपिता ।। ३
जहवाँ पै रहि कै जिय छीजै। अइसे नगर बसेर न कीजै ।। ४
एक दुख[1] रहे रात दिन लागें। और डरहिं कस होइहि आगें ।। ५
ठाकुर दारुन कछु न बसाई। कँह लगि सहत परहि जस आई ।। ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धरतीं फूँख पाउ को धरै। को अइसैं बसि कै निस्तरै।। ७
औगुन खाल कढ़े हम, भा परजा कर नाँउँ। ८
जहाँ न टेकै पाइ, छाड़ि देहु यह गाँउँ।। ९

प्रति-पाठ—१. दूख।

टिप्पणी—अगाहुँ—आशंका। माझा—मध्य में। साँझा—सायंकाल। गुवारँ—ग्वाल। मँत मँता—विचार किया। भोर—प्रातःकाल। कढ़िहैं—निकलेंगी। छीजैं—ह्रास हो। बसेर—निवास। ठाकुर—स्वामी। दारुन—कष्ट दायक। निस्तरै—बच सके।

२६४

कन्ह कहा मँत सुनहु गोवारा। **का कहो ओहि अहर भुयारा।।** १
तैस तपा जग कंस नरेसू। जहाँ जाव तिह वहै करेसू।। २
भागें कितहूँ नाँहि उबारा। करै मया बिधि तो निस्तारा।। ३
देखहु है कर्ता बड़ राजा। चिन्तै आन आन कर काजा।। ४
मुयहि जियावइ जियँहि मारे। धनी के धन निधनिह **बैतारे** ।। ५
सेज सीज मरहिं कर सब पापिया। लै बद रवँह जो र मरजिया ।। ६
६३ख राजा केर छत्र भंग करई। लै सो छत्र राँक सिर धरई।। ७
सँवरहु सोइ गुसाईं, जो आस कँह कुछ चाह। ८
चार पहर निसि बहुतैं, काल होइ दँहु काह।। ९

टिप्पणी—जाव—जायेंगे। वहै—वही। करेसू—क्लेश; कष्ट। उबारा—उद्धार। मया—दया; कृपा। बिधि—ईश्वर। निस्तार—उबार; उद्धार। कर्ता—ईश्वर। आन आन—दूसरों का। आस—आशा। चाह—इच्छा। काह—क्या।

२६५

भा भिनुसार दीख दोइ हाथा। उठा **भीउँ** लै अर्जुन साथा।। १
सँवरा देउ न दूसर केऊ। माँगा आपुन बेगि सँजोऊ।। २
मेघहिं आन छत्र सिर तानाँ। रथ सँवार बलि बासुकि आनाँ।। ३
पूरा संख तबल घन[1] बाजे। धनुक टकोर मेघ अस गाजे।। ४
चमका बीजु खरग जो काढ़ा। मूसल बज्र कीन्ह भा ठाढ़ा।। ५
सरग पतार लाग कै गाजा। औ हनुवन्त आइ भा ठाढ़ा।। ६
[.... ....]। [... ....]।। ७
फिरहिं चक्र रबि मंडर, जानहु **चन्द प्रीत**।। ८
चढ़ा कोपि हरि बिस्नु, भा निसान रनजीत।। ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. जन ।

टिप्पणी—भिनुसार—उषःकाल । अर्जुन—यहाँ तात्पर्य बलराम से है । सँजोऊ—साज समान; आयुध । टकोर—टंकार । गाजा—गर्जन किया ।

२६६

कंस केर हुत सभा बइंठी । सबहि कीन्ह गोकुल मुँह दीठी ।। १
देखि आँधि पानि अस आवा । उनये मेघ गगन सब छावा ।। २
६४क धरा आउ जनु आवइ बूरा । उठि खेलाइ पवन तिह जूरा ।। ३
यक गरजे औ होइ अजोरा । बहुत होइ कछु घेरि कँदोरा ।। ४
कितँहु बादर दीसै कारा । कितहु सेत कहुँ रतनारा ।। ५
कितँहू बीजु तिह भीतर लोई । कितहु गरज मंदर जस होई ।। ६
कितहूँ भा सुमेरु अस ठाढ़ा । कितहूँ भूजाहि सुठ बाढ़ा ।। ७
और तहाँ वँह निरखत, बहुत कछू उरँह । ८
सरग पतार लागि है, भयउ ठाढ़ जस खेंह ।। ९

टिप्पणी—दीठी—दृष्टि । उनये—घिरे । बूरा—बाढ़ । दीसे—दिखाई पड़े । लोई—चमके ।

२६७

सूक कहा सुनु बौरी राजा । लै सो मेघ जिह [है] गाजा ।। १
यह सो चतुर्भुज कोपि रिसानाँ । मेघ दिनयर सिर छत्तर तानाँ ।। २
वह सो गंडीव धनुक जो पूरा । गरजि उठै जो देइ टकोरा ।। ३
माथें मटुक केर उजियारा । लूकै बीज खरग चमकारा ।। ४
मन्दर सुरुज चाँद वह ताहीं । दोउ देखु रथ चक्र फिराहीं ।। ५
वह जो सुमेर सो हनुवन्त धजा । और जो ऊँच सो दीखै गजा ।। ६
६४ख और [जो] दीख[1] सेत रतनारा । संख पद्म वँह रूप निरारा ।। ७
और जो दीख कन्ह अस, बज्र क मूँसल हाथ । ८
भींउँ केर जस मूरत, औ अर्जुन पुनि साथ ।। ९

प्रति-पाठ—१. देकर ।

टिप्पणी—बौरी—पागल; मूर्ख । दिनयर—दिनकर; सूर्य । गंडीव—गाँडीव; अर्जुन का प्रख्यात धनुष । टकोरा—टंकार । मटुक—मुकुट । केर—का । लूकै—कौंधै । धजा—ध्वज । गजा—गदा । निरारा—निराला, अनोखा । भींउँ—भीम ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२६८

देखि कंस मन हरबर भयऊ। जनु जम रूप आइ सो गयऊ॥ १
जिय कै परी भूलि गा राजू। बोले दइत करँहु सब साजू॥ २
सोरह सहस जो हस्ति अपेला। सो कुबला हस्ति, हस्ति अकेला॥ ३
ठाढ़ करहु लै पँवर दुआरा। कहहु महावत चढँहि जुझारा[1]॥ ४
जलासंध बड़ दइत हँकारा। लौट माल मुस्टंग बिचारा॥ ५
तरनाँ औ रत कर मुख चाहा। देखों आज करब वँह काहा॥ ६
और दइत पुनि सबै बोलाये। झार सँजोइल होइ होइ[2] आये॥ ७
झार दइत सब कोपे, रहे बाँधि कै आत। ८
राजा चढ़ा धौराहर, बैठि मीचु कै घात॥ ९

प्रति-पाठ—१. जूझारा। २. होइ मोइ।

टिप्पणी—हरबर—घबड़ाहट। साजू—तैयारी। अपेला—जो पीछे हटाया न जा सके। कुबला हस्ति—कंस की हस्तिशाला का एक महाबली हाथी; कुवलयापीड़। ठाढ़—खड़ा। पँवर—प्रतोली; फाटक। जलासंध—जरासंध; महाभारत के अनुसार कंस का ससुर; यहाँ कोई बलवान दैत्य। माल—मल्ल। मुस्टंग—हृष्ट पुष्ट; बलवान; हो सकता है मुष्टिक नामक मल्ल के लिए इसका प्रयोग हो। देखों—देखूँ करब—करता है। झार—सभी। संजोइल—तैयारी।

२६९

उठि नारद राजा सों बोला। चढ़ा कन्ह इन्द्रासन डोला॥ १
६५क का दइतहिं तुम्ह कहहु जुझारा[1]। वह केहरी सबै सियारा॥ २
केहरि जबहि उठै रिसि लागें। कोउ न रहै सिंघ के आगें॥ ३
वहि आगें सब हँहि जमदूता। वैं रिसाइ अस को न बिगूता॥ ४
वैं बलि अस सतवादी छरा। औ रिसि सहस्रबाहु अस हरा॥ ५
हिरनाकुस क पेट धरि फारसि। औ दासकंधीं रावनहिं मारसि[2]॥ ६
सोइ राम औ लखमन साथी। का पोसाइ जो हरहा हाथी॥ ७
है [अ]क्रूर[3] बड़ मंत्री, करउ बसीठ मँत लेहु। ८
मेर हुतैं[4] लै[5] आवहि, धरि हस्ती तर देहु॥ ९

प्रति-पाठ—१. जो जुझारा। २. बारसि। ३. गरूड़ (जायसी के पदमावत में एक स्थान पर अक्रूर का उल्लेख है (३४१।७)। वहीं उसकी अनेक हस्तलिखित प्रतियों में अक्रूर के स्थान पर गरूड़ पाठ है (माताप्रसाद गुप्त संस्करण पृ०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३.१३, पाठान्तर) हैं। अनुश्रुतियों में अक्रूर को गरुड़ का अवतार कहा गया है।)
४. हसैं। ५. पैं।

टिप्पणी—केहरी–सिंह; शेर। सियारा–सियार; गीदड़। दासकंधो–दस कन्धों वाला; दसकन्धर। बसीठ–दूत। मेर–मेल। तर–नीचे।

२७०

ततखन कंस अंकूर बुलावा। भयउ रजायसु आगें आवा।। १
तूँ अंकूर हसि पुरुख सयानाँ। गोकुल गवन लेहु जस मानाँ।। २
जाइ मंत्र लै अत्र छोड़ावहु। मेर हुतैं[1] मधुपुर लै आवहु।। ३
सत्रु सैं जो जूझ न पारै। सेउ बिधि करे जो छरि कै मारै।। ४
जो कैसँहु इहवाँ कै पावों। धरि कुबला सो वेग जनावों।। ५
६५ख जलासंध सों कहौं रिसाई। चारेउ भुजा उजारै जाई।। ६
कहों गहि बेग माल मसीका। रकत हिय ततखन चढ़ि हीका।। ७
और दइत[2] नित अरहों, जेत जियत धर खाँहि। ८
मानुस पाँता पावहिं, हाड़ हाड़ लै जाँहि।। ९

प्रति-पाठ—१. हसैं। २. दन्त।

टिप्पणी—अंकूर–अक्रूर। पदमावत में एक स्थल पर अक्रूर का उल्लेख हैं (३४१।७); उसकी कुछ हस्तलिखित प्रतियों में 'अक्रूर' के स्थान पर अंकूर पाठ है (कामनवेल्थ रिलेशन्स आफिस प्रति, बी० ११)। रजायसु–राज्यादेश। अत्र–अस्त्र। मेर हुतैं–मेल के लिए। मधुपुर–मथुरा। पारै–जीत सके। सेउ–वैसा। विधि–उपाय। छरि–छल। इहवाँ–यहाँ। अरहों–हुक्म देता हूँ।

२७१

चलि अंकूर तिंह कीन्हि पयानाँ। तज मधुपुर गोकुल[1] नियरानाँ।।१
नियरें होइ सो चतुर्भुज चीन्हाँ। धरती लोटि दण्डवत कीन्हाँ।। २
माथ नाइ उठि कीन्हि जोहारू। पूंछा कन्ह कुसल व्यवहारू।। ३
का पूंछहु हरि कुसल हमारे। कुसल तहाँ जिह आन तुम्हारे।। ४
जैं रे पिता अस आपुन बाँधा। कौन कुसल हम तिहके राँधा।। ५
अस हत्यार कंस पापिया। रहे नित[2] डर चांपें हिया।। ६
हौं अकेल नहिं बिसमो भरा। सवै जिहँहि वहि कै बन्दि परा।। ७
राव रंग सब दुख मँह, सुखी न देखी कोइ। ८
सब चहुँ दिसि मुख जोवइ, कब[3] ताकर खो होइ।। ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. गोकुल मधुपुर । २. निथ । ३. कव ।

टिप्पणी—अंकूर–अक्रूर । पयाना–प्रस्थान । नियराना–निकट पहुँचा । दण्डवत–पृथिवी पर लेट कर अभिवादन करना । जोहारु–अभिवादन । कुशल-व्यवहार–कुशल क्षेम; हाल चाल । राँधा–दास । नित–नित्य । चाँपें–दबाये । हिया–हृदय । बिसमो–आश्चर्य ।

२७२

६६क जो गुसाईं कर आयसु होई। बिनती करों एक अब सोई॥ १
तुम्ह सतँजुग मँह बड़ तपा। जिन अकेल परमेसर जपा॥ २
तुम्ह मन्छ होइ बेद निकासँहु। तुम्ह कच्छ होइ पुहुमि उसासँहु॥३
नर्वाह कुण्ड तुम्ह अब्रित पिया। हिरनाकुस कर फारा हिया॥ ४
तुम्ह सँहस्रबाहु सँघारा। तुम्ह लंकपति रावन मारा॥ ५
तुम्ह समुद्र मँथि लखमीं काढ़ी। गोकुल आइ गऊ[1] चित वाढ़ी॥ ६
तुम्ह सत बलि राजा छरा। तुम्ह ज्ञान कस आपुन हरा॥ ७
कौन कंस बड़ पूरुख, जाकँह नित खौरेर॥ ८
कस न चलि[2] तिह जाई, धर मारै जस चेर॥ ९

प्रति-पाठ—१. गोउ। २. चली।

टिप्पणी—गुसाईं–स्वामी। आयसु–आज्ञा। लखमीं–लक्ष्मी। हरा–खो दिया। खौरेर–परेशानी। चेर–दास।

२७३

समुझाहें कन्ह मत भई। चढ़ी जो रिस उतर[1] सब गयी॥१
सुनहु अंकूर कहों गहि बाहीं। अउर बात कै मोहि रिस नाहीं॥२
सूक केर मैं फोरी आँखी। अहीं जो दोइ सो एक कै राखी॥३
सो मंत्री बड़ भा यहि आगें। खोंटी कहै रात दिन लागें॥४
६६ख सँवर दाउ सोई पै करई। जिह मानां हहि ना परई॥५
हौं रे तपा का करिहौं राजू। राज सतें मोहि नाहीं काजू॥६
छाड़ दीन्ह[2] जिह घर हौं जामाँ। औ सुख राज करो सो मानाँ॥७
न तु देवकी न जानों बसुदेऊ, नाहीं बंस। ८
जासों खीर न पोखेउँ, आज न पारों कंस॥ ९

प्रति-पाठ—१. ऊतर। २. दितहि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—केर–का । फोरी–फोड़ी । आँखी–आँख । खोंटी–बुरी; गलत । सँवर–स्मरण कर । दाउ–मौका । जामाँ–जन्मा । जासौ–जिसका । खीर–दूध; क्षीर । कहियो–कभी भी । जासों–यशोदा

२७४

[अ]क्रूर[1] कहा समुझि मन माँहाँ । तुम्ह ज्ञानी तुम्ह कँह रिस कहाँ ।।१
उतरहु रथ हुत छत्र भँडारहु । काढ़ि सनाह सँजोउ उतारहु ।।२
बाँधहु पाग मटुकहिं[2] पुनि छोरहु । धजा सेंत हनुवन्त बहोरहु ।।३
कहा मोर तुम्ह सुनहु गोसाइँ । चलहु बेगि अब मधुपर ताइँ ।।४
मेर करों वँहि अंकों लाँवों । तुम्हरे बहाने[3] हहूँ जस पाँवों ।।५
दुहों तुम्ह मामाँ भैनें । काज तान आछह यक बैनें ।।६
पहिलें चारिहुँ दिहहु छुड़ावों । पाछें कै तुम्ह दुहों मिलावों ।।७
जो तुम्ह राज बिठावे, काहि करब पुनि जूझ ।८
६७क चलहु बेगि मधुपुर कँह, देखहु हिरदैं बूझ ।।९

प्रति-पाठ—१. गरूड़ (देखिये कड़वक २६९) । २. मँकसँह । ३. बलहने ।

टिप्पणी—सनाह–कवच; जिरह-बख्तर; युद्ध की पोशाक । सँजोंउ–अस्त्र-शस्त्र । पाग–पगड़ी । मटुक–मुकुट । बहोरहु–लौटाओ । मामा-भैंने–मामा-भाँजे ।

२७५

कन्ह सँजो उतारा[1] जाई । चले साथ होइ दूनों भाई ।।१
चला कन्ह सब रोवँहि गोपीं । दूत अक्रूर चला लै घोपीं ।।२
अर अर अक्रूर कोरे अन्हेलें । प्राण हमार कहाँ ले चले ।।३
जो पिय हरि मधुपुर कँह जहहि । कित गोपाल फिर गोकुल अहहि ।।४
सेउ घर छाड़ि चले मधुबनाँ । हम तन बिरह पूर दुख घनाँ ।।५
अहा बहुत दुख पायहुँ आई । अइसें नगरियाँ ना रहि जाई ।।६
[.... .... । ... .]।।७
अइसें रहत मिलिहैं नित, अब रे मिलन गा दूर ।८
सारस जोरी संग बिन, मरब रैनि-दिन झूर ।।९

एक पंक्ति की छूट, स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. अवतारा ।

टिप्पणी—कँह–को । जहहि–जायेंगे । गोपाल–कृष्ण । अहहि–आयेंगे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सेउ—वह भी। मधुबनाँ—मधुबन; मथुरा। नगरिया—नगरी में। झूरि—बिसूर कर; चिन्ता कर।

२७६

कन्ह जाइ मधुपुर नियराने। देखँहि नगर रूप सुहाने॥ १
जाइ अक्रूर मोर कहु चाहा। अबँहि कँह देखु[1] आवत आहा॥ २
इहाँ बसों मोर सुदामाँ। खिनक तहाँ करिहौं बिसरामाँ॥ ३
रामजनी है कुब्ज कलंकी। मुख **भँवर** पायहि त्रिबंकी॥ ४
६७ख सो चन्दन राजा कँह घिसै। देखि बिलोन लोग सब हसे॥ ५
वैं तप कीन्ह जरम बड़ सदा। ताकँह पुरुख दईं हौं बदा॥ ६
रूप देब ओकँह बड़ आजू। ताकर जाई सँवारों काजू॥ ७
गा अक्रूर राजा पँह, नगर बाजि गै तार। ८
दुउ राम और लखमन, आये सुदामाँ बार॥ ९

प्रति-पाठ—१. देखर।

टिप्पणी—खिनक—तनिक देर। बिसरामाँ—विश्राम; आराम। रामजनी—ऐसी सन्तान, जिसके पिता का ज्ञान न हो, रामजना (ईश्वर-जन्मा) समझा जाता है। सामान्यतः यह वेश्या की सन्तान का पर्याय है। बिलोन—कुरूप। बाजि गै—फैल गया। तार—समाचार।

२७७

सुनतहि आवा दौरि सुदामाँ। पहिलँहि पाउ ढार सिर रामाँ॥१
सिर भुइँ लाइ दण्डवत कीन्हा। औ अस्तान बेगि वैं दीन्हा॥२
पुनि बिसुनैं बढ़ भक्ति सुनाये। बहु प्रकार **लौंद** कर आये॥३
घरी एक तिंह **कोड** दुवारे। पुनि कुब्जा के मँदिर सिधारे॥४
कुब्जा घिसि चन्दन भर खोरा। लै निसरीं हुत राज कै दुआरा॥५
ततखन भेंट कन्ह सों भई। दरसन देख मोह मन गयी॥६
लागेउ स्याम सरीर सुहावा। लै चन्दन सब अंग चढ़ावा॥७
धन मूरत धन मुँद्रा, धन सो कन्ह कै देह।८
६८क धन गुसाइँ बड़ पूरुख, जाकर अइस उरेह॥९

टिप्पणी—अस्तान—स्थान; बैठने का आसन। बिसुनै—विष्णु के लिए। भर—भरा हुआ। खोरा—कटोरा। उरेह—उत्कीर्ण किया हुआ; मूर्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२७८

हँसा कन्ह मन भा अहलादू । कुब्जा आउ देवँ परसादू[1] ।।१
तोइँ मुहि नेत[2] बहुतै तप कीन्हाँ । अब तोहि रूप गुसाइँ दीन्हाँ ।।२
तस पुरवौं हिरदै कै साधा । पलुहै तन जो बिरह दुख दाधा ।।३
बाँउँ हाथ माथैं पर धरा । लीन्हि सँवारी निर्मल करा ।।४
बायें पाइ चाँपि दोइ पावा । कर पल्लो गहि सीस उचावा ।।५
जिह जिह बन्ध सूध सब भई । औरहिं भाँत कया होइ गई ।।६
दहिने हाथ सो बदन सँवारा । निर्मल रूप भयउ उजिआरा ।।७
बिहँस कन्ह कँठलाये, मोहि तोहि सदा प्रीत[3] ।८
भोग करों मधुबन मँह, अब रे कंस कह जीत[4] ।।९

प्रति-पाठ—१. पखसादू । २. नत । ३. बिहँस कीह कन्ह मोहि लाई तोहि सदा प्रीत । ४. कस कह वीत ।

टिप्पणी—अहलाद–आह्लाद; प्रसन्नता; हर्ष । परसादू–प्रसाद; उपहार; भेंट । पुरवौं–पूरा करूँ । साधा–इच्छा; कामना । पलुहै–पल्लवित हो । दाधा–दग्ध । बाउ–बायाँ । माथैं–सिर । चाँपि–दबाया । करपल्लो–हथेली । उचावा–उठाया । बन्ध–बँधा हुआ; जकड़न । कया–काया; शरीर ।

२७९

जो रे जास जिह कंस नरेसू । कहसि मोरैं एक[1] सन्देसू ।।१
जिह के डर तुम्ह करत[2] डरावा[3] । सो र आज मधुपुर मँह आवा ।।२
जो आपुन अब चहहु भलाई । बँधुवा बेगि देहु मुकराई ।।३
६८ख नतु मैं जस हिरनाँकुस मारा । औ जस सहँसबाहु सँघारा ।।४
औ जस खो रावन कर कीन्हों । लै सब राज भिभीखन दीन्हों ।।५
तस खो करब तोर मैं आजू । तोरें पुतहिं[4] देब मैं राजू ।।६
गरब करसि जनि मार्लहि काछें । समुझ हियें, पछतास न पाछें ।।७
काहू गरब न छाजा, कियें गरब अस झूठ ।८
हौं मो कह सो हिरानाँ, परमेसर जो रूठ ।।९

प्रति-पाठ—१. अंक । २. करब । ३. डरवा । ४. 'पितहि' पाठ भी सम्भव जो अनुश्रुतियों की दृष्टि से उचित होगा; किन्तु कड़वक २९९ में व्यक्त कृष्ण के कथन के परिप्रेक्ष्य में 'पुतहि' पाठ की संगति है ।

टिप्पणी—जास–जा रही हो । कहसि–कहना । बँधुवा–बन्दी । मुकराई–छोड़ दो । नतु–नहीं तो । खो–विनाश । भिंभीखन–विभीषण । तस–वैसा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करब–करूँगा। देब–दूँगा। पछतास–पछताना। पाछें–पीछे। छाजा–शोभा दिया। हौं–हूँ। मों–मैं। हिराना–खो गया।

२८०

अति सरूप भै कुब्जा चली। चाँद चाह चौगुन निर्मली॥ १
माँझ हटौंदा निसरीं जाई। देखि रूप सब परा भुलाई॥ २
बरई बैठि जो फेरत पानाँ। पान परै खसि देखि लुभानाँ॥ ३
भूले बानीं बैठि अवारी। माँगत साँभर देंहि सुपारी॥ ४
भये बाउर सों तहाँ सोनारा। गढ़त भुलान हाथ गा मारा॥ ५
काँदू मोहि परा होइ जादू। पूँछत रेवरी जोखहिं लादू॥ ६
पटुवा बैठि जो डोरी बाँटा। फुलरा काटत अँगुठा काटा॥ ७
१०६क लाग टकटका सबहीं, गै बिमोह सब हाट। ८
परा पंगु होइ मानुस, निसरी जिह जिह बाट॥ ९

टिप्पणी—चाह–से। माँझ–मध्य। हँटौदा–बाजार के रास्ते। निसरीं–निकली। बरई–पान वाला। पानाँ–पाना। खसि–गिर। बानीं–बनियाँ; वणिक। अवारी–अनमनस्क। साँभर–नमक। बाउर–पागल। काँदू–हलवाई। जादू–जड़। लादू–लड्डू। पटुवा–पटहरा। टकटका–टकटकी। पंगु–अचल। बाट–मार्ग।

२८१

पुनि कुब्जा राउर मँह गयी। राजमँदिर उजियारी भयी॥ १
जगमगाइ सब रहा अवासू। देखि रूप भूला रनिवासू॥ २
अस रूपवन्ति दयीं तों गढ़ी। कँह अस जोत अधिक होइ चढ़ी॥ ३
सब रानी उठि देखै धाईं। अस्तुति करत चहूँ दिसि आईं॥ ४
कै मूरत तूँ बिधि औतारी। कहाँ चलसि लै[1] अस उजियारी॥ ५
राजा एक पद्मिनी आई। सबहीं कहा कंस सों जाई॥ ६
महा सरूप नारि है कोई। कहीं अछरि उबंसी[2] न होई॥ ७
सूरज सहस उर्वहि जो, सोरह चन्द दिपाँहि। ८
करहिं अजोर सबै मिलि, तबहु[3] सो पूजँहि नाँहि॥ ९

प्रति-पाठ—१. पै। २. उर्बस। ३. तवहु।

टिप्पणी—राउर (राउल)–राजकुल; रनिवास; अन्तःपुर। अवासू–आवास। अस्तुति–अभ्यर्थना। अछरि–अप्सरा। उर्बसी-उर्वशी; इन्द्र के राजसभा की एक प्रख्यात अप्सरा। दिपहिं–दीप्तिमान हों। अजोर–प्रकाश। पूजहिं–पूरा हो।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२८२

देखि कंस मन सुधि गँवाई। परा भूल मुर्छा गति आई।। १
लौटि समुँझि उठि बैठ सँभारी। अछरिं जाइ सरग रिसि मारी।। २
१०६ख इँह[1] केउ आह लछमीं दई। उठि[2] आसन तिह आगें किई[3] ।। ३
यह अजगुत[4] पूँछीं कर जोरीं। मया करी आप अजही मोरीं।। ४
सोन बरन तूँ निर्मल रानी। यक सुगन्ध[5] औ बारहबानी।। ५
कै रे अपछरा[6] इन्द्र पठाई। कै कैलास हुतें चलि आई।। ६
सबै रूप तिह देखों ठाढ़ी। जानुक सुरुज भानु कै काढ़ी।। ७
के अनूप सुन्दरि तूँ, कहुँ आपुन मोहि नाँवँ। ८
इह जग आयसु अनुसरे, हौं न कोइहि ठाँवँ।। ९

प्रति-पाठ—१. रिथ। २. ऊद। ३. लई। ४. अबकित। ५. सोगन्ध। ६. ईछर।।

टिप्पणी—मया–कृपा कर। अजहीं–आज ही।

२८३

कस राजा मोर पूँछहु नाँऊँ। हौं नित रहौं तुम्हारे ठाऊँ।। १
हौं कुब्जा सेवक[1] नित केरी। सेवा करों एक जस चेरी।। २
हौं जो चलेउँ चन्दन घिस लई। मारग भेंट कन्ह सों भई।। ३
उत खन मोहि देखि बिलोनी। दिहँहि रूप हौं भयउँ सलोनी।। ४
औ कुछ कहँहि कहा सो चहवँउँ। सुनें गुसाइं तबही कहवउँ ।। ५
छाड़ देंहु सब बन्दि हमारे। हम्ह [नि]चिन्त करँहि तुमारे।। ६
१०७क नाँहुत हौं मधुपुर मँह आवा। पुनि पाछें होंइह पछतावा।। ७
लंका दाह कीन्ह जस, तैस करब मैं आइ। ८
अउर जो कही कहा वँह, सो डर कहा न जाइ।। ९

प्रति-पाठ—१. सोगन।

टिप्पणी—चेरी–दासी। उत–उस। खन–क्षण। बिलौनी–कुरूप। नाहुत–नहीं तो।

१८४

सुनि के बात कंस परजरा। अग्नि माँझ जानहु घिउ[1] परा।।१
ततखन कहा अक्रूर हँकारी। बेगि आन धरि मारों खारी।।२
गा अक्रूर कुब्जा कैं बारा। चलहु कन्ह भा कंस हँकारा।।३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बिनती कीन्ह बहुत हम लागें। चली न कुछ एँको वहि आगें ।।४
तुम्ह कँह कौल-कपट घन होई। जो कै सकहु करहु अब सोई ।।५
मँकु ओकर खो होनीं अही। तवइं तुम्ह मिलानाँ चही ।।६
छाड़ब छत्रपाट दें आजू। तोकँह दिहें दीन्ह सब आजू ।।७
चलहु बेगि समुझाँई, दइत रहे सब साज ।८
अहुठ बज्र सब चढँहि, भारत होइहि आज ।।९

प्रति-पाठ—१. घीउ।

टिप्पणी—परजरा—जल-भुन गया। माँझ—मध्य। घिउ—घी। तत्खन—तत्काल। हँकारी—बुलाया। कौल-कपट—छल पूर्वक बातें। घन—बहुत। अहुठ-वज्र—साढ़े तीन वज्र। अनुश्रुति है कि भीम और कृष्ण में युद्ध हुआ; उन दोनों के वज्रायुध—गदा और चक्र टकराये; तब बीच बचाव के लिए हनुमान ने अपना वज्र-सम लंगूर (पूँछ) फैला दिया। इस प्रकार तीन वज्र एकत्र हुए। भीम का शरीर आधे वज्र के समान कहा जाता है। इस ढंग से साढ़े तीन वज्र का संयोग हुआ। अहुठ वज्र के सम्बन्ध में शतपथ ब्राह्मण में एक दूसरी अनुश्रुति है। जब इन्द्र ने वृत्रासुर पर वज्र से प्रहार किया तो उसके कई खण्ड हो गये। एक खण्ड से तलवार, दूसरे से यूप और तीसरे से रथ बन गया। फिर भी एक लघु अंश बच रहा जो वाण बना। इस प्रकार वज्र के साढ़े तीन रूप हुए। इन दोनों अनुश्रुतियों में से किसी एक का संकेत यहाँ है। भारत—महाभारत; कुरुक्षेत्र में हुआ कौरव-पाण्डवों के बीच युद्ध।

२८१

धरि ध्यान जो देखि मुरारी। कोपि कंस राखी हिय मारी ।।१
१०७ख जस अक्रूर भेद हुत कहा। सोइ सँजूत जूझैं[1] कर रहा ।।२
त्रिभुवन[2] लोक परा सब सूझी। आपुन कुसल खेम सब बूझी ।।३
ब्रह्मा ठाढ़े दई असीसा। कन्ह जितावइ जगदीसा ।।४
ईसर गौरा बिनवँहि दोऊ। जीत पुत्र कन्ह का होऊ ।।५
बासुकि इन्द्र जुहे कर जूटी[3]। बिनवइ देवता छतीसो कोटी[4] ।।६
जय जय करहिं लिहें जयमाला। आजु कंस खेउ करहु गोपा[ला] ।।७
चन्द्र सूर तराइं, गन, गन्ध्रब, गह जेत ।।८
गँगन, मेरु, महि, मंडल, हरखि मिले यक खेत ।।९

प्रति-पाठ—१. जूजै। २. त्रिभूवन। ३. जोरी। ४. कोरी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—संजूत–तैयारी। जूझै–युद्ध। ईसर-गौरी–शिव-पार्वती। जूटी–जोड़ कर। गह–ग्रह। जेत–जितने।

२८६

चला कन्ह मन सँवरा सोई। जाकर लिखा न मेटै कोई ।।१
रूप अनूप चतुर्भुज[1] भयऊ। खिन मँह और भेस होइ गय[ऊ] ।।२
विधिहूँ खेत[2]-सँजो सब माँगा। पहिरा सार-वज्र कर आँगा ।।३
पहुँचो बाँह रकाउर राका। दीन्हों तिलक[3] बाँधि सिर पागा ।।४
तुरी निनारा भाजन काजा। औ बलभद्र भाई संग साजा ।।५
१०८क कीन्ह पयान गजा लै हाथाँ। आठो अत्र सँभारा साथा ।।६
तुरुही भेरि[4] संख जो पूरा। दीखेउ हनुवन्त केर लँगूरा ।।७
जुरिगा[5] साहीं नाहीं, होइगा जगत असूझ ।८
चला कोपि कै कृष्ण, करै कंस सों जूझ ।।९

प्रति-पाठ—१. चतुर्भुज। २. कीत। ३. मिलक। ४. भई। ५. जोरिगा।

टिप्पणी—सँवरा–स्मरण किया। विधिहूँ–ईश्वर से। खेत-संजो–युद्ध-सामग्री। सार–फौलाद; लौहा। आँगा–अंगरखा; अंगरक्षक। रकाउर-राका–पैरों में पहने जाने वाले कवच। तुरी–घोड़ा। निनारा–निराला। भाजन–भागने के लिए। गजा–गदा। अत्र–अस्त्र (जायसी ने इस शब्द का प्रयोग पदमावत (१०१।६, २६४।२) में भी किया है)। आठो अत्र–गदा, चक्र, धनुष-वाण, खड्ग, पद्म, शंख, मूसल और दण्ड (देखिये कड़वक २२८)। लंगूरा–पूँछ।

२८७

देखै लोग चहूँ दिसि धावा। कौन रूप धौं किशन आवा ।। १
कन्ह भेस तस आपुन कीन्हाँ। जो जिह बरन भनैं तस चीन्हाँ ।। २
राइ कँहहि जस राव सरूपा। कुँवर कँहहि यह कुँवर अनूपा ।। ३
दइत कँहहि दइत अस देखा। कंस देखि जनु काल बिसेखा ।। ४
खत्री वीर कँहहि यह बीरू। अहिर कँहहि यह आह अहीरू ।। ५
कँहहि रिखीसर यह तो रिखी। बाँभन कँहहि यह आह जोतिखी ।। ६
जोगिह कहा कन्ह तो जोगी। भोगिह कहा आह केउ भोगी ।। ७
भा दरसन निर्मल तस, दर्पन जैस विसेख। ८
सब आपुन मुख देखहिं, कन्ह अगर तिरेख।। ९

टिप्पणी—किशन–कृष्ण। भनै–याद करे। राइ–राजा। विसेखा–विशेष। खत्री–क्षत्रिय। रिखीसर–ऋषीश्वर। रिखी–ऋषि। जोतिखी–ज्योतिषी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२८८

१०८ख चतुर बात[1] सब रानी पढ़ी। लै कुब्जा धौराहर चढ़ी॥ १
कौन सो वै कन्ह अस अहा! जिहकें मिलें रूप तोहि चढ़ा॥ २
कोरे चतुर्भुज[2] सूरज करा। को पूरुख गोकुल अवतरा॥ ३
को अस है बरियार अकेला। कें रे खभार[3] कंस कँह मेला॥ ४
काकर खरग बीजु अस लवइ। को अस सिंघ[4] नाइं [आवइ]॥ ५
काकर मता-पिता है बाँधा। को अस सूँर दाव जैं बाँधा॥ ६
हम देखाउ अब कुब्जा सोई। जाकर डर[5] सभ जिय होई॥ ७
सुवन सुनाँ तो यह दिन, नयन न देखा काउ। ८
हतो प्रीत रहस जियँ, कन्हहि बेगि दिखाउ॥ ९

प्रति-पाठ—१. छत्र-पाट। २. चतुर्भूज। ३. खबार। ४. सिघहिं। ५. दरद।

टिप्पणी—वरियार–बलवान। खभार–परेशानी।

२८९

हौं सो देखावों देखहु रानी। जानहु कनक दुआदस बानी॥ १
गोरे बदन अस लोन गोपाला। सोहै कंठ मणि मुक्ता माला॥ २
और सिर मटुक बरन तस सोहा। मणि ललाट दरसन जग मोहा॥ ३
रेख उठत मसि भींजत धोटा। भाइ जो संघ तिहू हुत छोटा॥ ४
१०९क कला चतुर्भुज[1] अति निर्मला। चहूँ[2] भुजा सेउँ आवइ चला॥ ५
आठो अत्र गहीं गजा हाथाँ। ओकर अर्जुन[3] आवइ साथाँ॥ ६
स्याम सरीर मनोहर हरी। राँनिह दिस्टि कन्ह सेउँ परी॥ ७
देख रूप सब मोहीं, मुख जोवँहिं कैलास। ८
अस पूरुख जो पाये, पूजै मन कै आस॥ ९

प्रति-पाठ—१. चतुर्भुज। २. छवों। ३. वर्जुन।

टिप्पणी—देखावो–दिखाती हूँ। कनक–सोना। दुआदस बानी–बारह बानी। विशुद्ध। लोन–लावण्यपूर्ण। मटुक–मुकुट। रेख उठत मसि भींजत–मूँछों की उभरती हुई हलकी हलकी रेखा। धोटा–बालक। आठो अत्र–आठो अस्त्र (देखिये कड़वक २८६)। ओकर–उसका।

२९०

तवहि जाइ गढ़ होइ नियरानाँ। दुहों चकित [अ]चम्भों ठानाँ[1]॥ १
धरा दीख जिह धनुक गंडीऊ। मन रिसाइ कोपा जस भीऊ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परी अहान धनुक धरि चूरा[२] । [अ]चूक[३] निसान देखत[४] भा पूरा ॥ ३
दइत एक खर भा पैसारा । पायें गगन जैस अकारा[५] ॥ ४
दोउ भाइ कोपि गहि लागे । एकहि चाह एक होइ आगें ॥ ५
ततखन कन्ह दौरि मुख चाँपा । दीहँस प्रान सभै डर काँपा ॥ ६
[.... ... ...] । [.... ... ...] ॥ ७
पैठत सगुन नीक भा, अस मन कहा गोपाल । ८
जैस सत्रु यह मारा, अस मारब सब माल ॥ ९

एक पंक्ति का अभाव; स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. चम्भो अन । २. अचूरा । ३. चुक । ४. दोखन । ५. लकारा ।

टिप्पणी—नियराना–निकट आये । चकित अचम्भो–आश्चर्य चकित । गंडीऊ–गांडीव । भीउ–भीम । अहान–आतंक । सगुन–शकुन । नीक–अच्छा; शुभ ।

२९१

१०९ख पहिलें पँवर भल भा ठेका । दइतहिं हहि महा रिस टेका ॥ १
वहँहि पँवर कै बज्र केवारा । ऊपर चढ़े करहिं सब मारा ॥ २
धरि केवार सो अर्जुन ठेले । लीन्हि पँवर मन कोप अकेले ॥ ३
दूसरें पँवर जाइ भा ठाढ़े । हिय न समाँहि दोउ बिस बाढ़े ।[१] ४
सब मिलि दइत लागि गगवाई । परी मार कुछ कही न जाई ॥ ५
राकस कोटि कोटि गढ़ चढ़े । फटिक सिला छाडँहि अनगढ़े ॥ ६
बज्र अंग दीन्हों दुहों रोपी । अहर पँवर चूरहिं मन कोपी ॥ ७
देखि असूझ जूझ सो, दइतहिं हारा जीयँ । ८
अजहि दइत सब मारब, आये अर्जुन भीयँ ॥ ९

टिप्पणी—ठेका–रोक । टेका–रोका । ठेली–ढकेल । ठाढ़े–खड़े । फटिक सिला–स्फटिक शिला । रोपी–जमा दिया । अर्जुन-भीयँ–अर्जुन और भीम ।

२९२

तिसरें पँवर भई घन घई । चौथें भुई बज्र कै भई ॥ १
मारि पँवर कीन्हि मसवानूँ । मारे बहुत दइत कै खानू ॥ २
पँचयें पँवर टेकि जो कीन्हें । खिन एक जूझ सो वै कीन्हें ॥ ३
छठें पँवर जूझ भा जाई । पछिला[१] सब डरि चला पराई ॥ ४
११०क कंस जो चढ़ धौराहर अहा । मरन[२] देखि सब उलटी कहा ॥ ५
अँकै न जाइ भीउँ कर गजा । मारत देखि सभहि जो बचा ॥ ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मारों जीउँ भाग जो आवा । तुम्ह रे लोन मोर खाइ नसावा ।। ७
तुम्ह जो बली कहावत, जो बल तुम्ह नहि आँथि । ८
सतयें पँवर ठाढ़े, पेलहु कुबला हाथि ।। ९

प्रति-पाठ—१. बचला । २. बरन ।

टिप्पणी—घनघई–घनघोर युद्ध । मसवानूँ–श्मशान । पराई–भाग । भींउ–भीम । गजा–गदा । जौन–जो । लोन–नमक । नसावा–बेकार किया । आँथि–था । पेलहु–ढकेलो ।

२९३

सतयें पँवर रची घन मारी । कुबला हस्ति दीन्हि ललकारी ।। १
अति वरवण्ड हस्ति सिंघली । सोरह सहस हस्ति हुत बली ।। २
दीन्हि सो पेल धाइ कै बाजा । तुरत भीउँ अर्जुन मन गाजा ।। ३
जित खन बहिरा हस्ति मैमन्ता । कन्ह धरे हुतहि दुवों दन्ता ।। ४
धरि सो पूँछ बलभद्र फिरावा । दुहों भाईहिं खेल हँस लावा ।। ५
दुहुँ दिसि लाँइह ऐंचा-खीची । कुंभस्थल सों गै हथि सीची ।। ६
गहँहि पाँत खाँचहि दुहु ओरा । गयेउ बाढ़ि आखर सब जोरा ।। ७
पुनि समेटि तस खोंटिहि, मार किहँहि **जग सून** । ८
११०ख माँस बिलाइ पानि भा, हाड़ भई सब चून ।। ९

प्रति-पाठ—१. दूना ।

टिप्पणी—सिंघली–सिंहल द्वीपी । धाइ–दौड़ कर । हुतहि–तभी । बाजा–लड़ा । ऐंचा-खींची–खींचा-तानी । कुंभस्थल–गण्डस्थल । बिलाइ–लुप्त होकर । चून–आटा; चूर ।

२९४

मारा हस्ति हूल गढ़ भई । कै अँकोप अब इँह सो गही ।। १
कंस कहा अब भयउ नदानूँ । मालहि बोल गढ़ परवानूँ ।। २
तबहि माल मुस्टिक हठि धावा । जनु चापर अस खेलै धावा ।। ३
हुतहि बलभद्र सो पालों रहा । आवत माल दुहों कर गहा ।। ४
बाजे दोउ न नायें नवहीं । अति बरवण्ड चाक घट भवहीं ।। ५
चाहे एकहि एक **पबारा** । परे न कोइ काहु कर पारा ।। ६
तबहि कन्ह उठि दीन्हि लखाऊ । बल सँभार मस्तक[1] कर घाऊ ।। ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बज्र मूँक तस मारा, रहा माल जिह **थेग** । ८
कोप सिंघ गति अर्जुन, दौर बैठि चढ़ि **मेग** ॥ ९

टिप्पणी—हूल—आतंक । अँकोप—कोप । परवानूँ—बुलाया । हठि—उठकर । चापर—कबड्डी । पाली—कबड्डी के खेल में बीच की रेखा । चाक—कुम्हार का चाक । भवहीं—घूमें । पारा—जीत । लखाऊ—दिखा । मूँक—घूँसा । थेग—शक्तिहीन ।

२९५

जलासंघ पुनि आइ तुलानाँ । मारों गजा करों मसवानाँ ॥ १
हौं रे आहि रण सिंघ जुझारा । मोहि आगें कित जाँहि गोआरा ॥ २
कन्ह कहा बलभद्र सँभारो । यह रे कंस दर बड़ा जुझारो[1] ॥ ३
१११क पाइ पतार सरग है माँथा । हौं रे भिरौं तुम पुरवहुँ साथा ॥ ४
आइ गजा वैं जवहि भँवावा । कन्ह गजा पुनि बेग उठावा ॥ ५
दूनों[2] गजा बाज[3] के भिरे । उठी अगिन दूनों तस फिरे ॥ ६
दुहों गजा पुनि दींह अडारी । चढ़े **उठि बीर** दोउ बिचारी ॥ ७
आवहु भिरैं एकोंझा, साखी कंस नरेस । ८
जो खसि परैं **रन** हुत, सौ छाड़े यह देस ॥ ९

प्रति-पाठ—१. झुझारो । २. दरनों । ३. दवाच ।

टिप्पणी—जलासंघ—जरासन्ध । तुलाना—निकट आया । मसवानाँ—श्मशान । दर—दल । पुरवहु—पूरा करो; साथ दो । भँवावा—घुमाया । अडारी—हटा । एकोंझा—अकेले; आमने सामने । साखी—साक्षी । खसि—गिरे ।

२९६

माँथ जूझ सँजोयल साजे । दूनों जने रन चढ़ि बाजे ॥ १
वै वह कँह वैं वह कह पेला । दुहों चहहि भुवंग [जस] मेला ॥ २
जलासंघ चौगुन बर करई । अति बरियार कन्ह तिह परई ॥ ३
कहसि बीर[1] पूरुख है कोऊ । भुजा चार और बज्र सँजोऊ ॥ ४
पुनि सो कन्ह[2] कोपा बरियारा । जलासंध भुइँ मेलि **निपारा** ॥ ५
बज्र का मूसल ऊपर मारा । बैठत घन का गाउ पतारा ॥ ६
गा लौट नहि उठा सँभारी । बज्र का चाक ऊपर दइ मारी ॥ ७
१११ख देख कंस डर खावा, गा परान तँह छुट । ८
बिजली हुती अन्तरिख, परी कंस पर टूट ॥ ९

प्रति-पाठ—१. परे : २. कण्ठ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—बर–बल । घन–चोट । अन्तरिख–अन्तरिक्ष ।

२९७

लागि बिचारे बेर न काजा । अब न पाट चढ़ि बैठिहि राजा ।।१
जैस पूत देवकी कै मारे । तस तोर खेउ भा हत्यारे ।।२
पुनि गा कन्ह कोह मन बाढ़ा । धरि झोंटी पथर हुत काढ़ा ।।३
एकरे दुखन पाक जस हिया । जियत न **पँठाइह** पापिया ।।४
गहीं पाउ चहुँ **कोड** फिरावा । सात बार चहुँ दिसि खसि पावा ।।५
सातो बिखम घाँउ तस परे । अगम पंथ भै चलहि फिरे ।।६
पुनि लेई गये जउनाँ कै तीराँ । दीन्ह बहाइ आन मँझ नीरा ।।७
परा कुण्ड घरीं मँह, परतँहि गा नर बोर ।८
मँगर मंछ धरि खावा, लौटि न किहस बहोर ।।९

टिप्पणी—बेर–देर; विलम्ब । काजा–काम । खेउ–विनाश । का–क्या । कोह–क्रोध । झोंटी–लम्बे केशों का गुच्छा, चोटी । दोखन–पाप । पाक–पक गया । हिया–हृदय । बोर–डूब । बहोर–वापसी ।

२९८

जबहि कंस कर भयउ सँघारा । जहाँ जो दइत तहाँ सो मारा ।।१
राजद्वार आइ भै ठाढ़े । नन्द जसोदरा बन्दि हुत काढ़े ।।२
११२क पुनि बसुदेव देवइ ले आये । डँडिया काटि बेगि मुकलाये ।।३
बँधुआ जेत कंस बँद कीन्हाँ । बन्दि मोख सभै कै दीन्हाँ ।।४
लौटि[1] कंस कर छोरा पिता । दिहसि असीस भलहि तुम्ह जिता ।।५
भल भा जो अस पापी मारा । हँहि पिता पाले हत्यारा ।। ६
कन्ह जनि मानहु चिन्ता । भोग बिरास करहु अब निन्ता ।। ७
बाँट कीन्ह दुहुँ भाइहिं, जेत अहा कैलास । ८
दरब लीन्ह सब अर्जुन, कन्ह लीन्ह रनिवास ।। ९

प्रति-पाठ—१. टूट ।

टिप्पणी—ठाढ़े–खड़े । बन्दि–बन्दी गृह । डँडिया–बेड़ी । मुकलाये–मुक्त किया । बँधुवा–बन्दी, कैदी । बन्दी मोख–बन्दी-मुक्ति; रिहाई । निन्ता–नित्य । बाँट–बटवारा । दरब–द्रव्य; धन । रनिवास–अन्तपुरः; रानियों का निवास ।

२९९

लौटि कंस को पुता[1] हँकारा । टीका दीन्हि राज बैसारा ।। १
देखु जबहि रावन खो कीन्हों । लंका राज भिभीखन दीन्हों ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब मैं राज दीन्ह तोहि आजू। गरब करसि जनि भोंजत राजू ॥ ३
नन्द महर संघ सँ जायसु। लीन्हें रहसि होइ जस आयसु ॥ ४
बहुत कहों का कीन्हे सोई। राम क राज करै सब कोई ॥ ५
नतु जस कंस कियेउ बहु पापा। तैस लौट तोहि परिह सरापा ॥ ६
[.... ....] । [.... ....] ॥ ७
११२ख समाधान कै सब कँह, जो रे हुतहि जिह जोग। ८
आपु रहे मधुबन होइ, रचि कुब्जा सों भोग ॥ ९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. 'पिता' पाठ भी सम्भव; किन्तु प्रसंगानुसार 'पुता' ही संगत।

टिप्पणी—पुता–पुत्र। ठीका–राज तिलक। भिभीखन–विभीषण। भोंजत–भोगते हुए। न तु–नहीं तो। परिह–पड़ेगा। सरापा–शाप। समाधान–आश्वस्त।

३००

कहों भोग ग्रीखम ऋतु आई। जेठ-असाढ़ तपन अस लाई ॥ १
तेहि रितु ऊधो मधुबन आये। पुनि उठाइ सभ मँदिर बिठाये ॥ २
गढ़ि चन्दन सब ओबरीं पाटीं। हीरा ईंट कपूर कैं माँटी ॥ ३
औ गच कीन्ह[1] चून कै मोंती। कनक खम्भ मलयागिर पोती ॥ ४
पौन झरकि जस सीतल छाहाँ। लागे जाड़ बैठि जिय माँहाँ ॥ ५
तिह पिय पालँग सेज बिछाये। औ सरूप कुब्जा कहँ लाये ॥ ६
फूल तँबोल कपूर बिरासा। बहु भँत भोग करहिं यक पासा ॥७
बनी पद्मिनी कुब्जा, जनु आछरि कैलास। ८
सुख सहित बीते, पहिल ऋतु[2] दोइ माँस ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कँह। २. रब।

टिप्पणी—ग्रीखम–ग्रीष्म; गर्मी। ऊधो–कृष्ण। ओबरीं–कमरे। पाँटी–बनाया; तैयार किया। माँटी–मिट्टी; गिलावा; गारा। गच–फर्श। चून–चूना।

३०१

ऋतु पावस बरसै अति नीरू। साँवन-भादों गहिर गँभीरू ॥ १
पहिरा कंचन चीर कुसुम्भी। जानहु[1] बनी कनक कैं खुम्भी[2] ॥ २
११३क [को]टि सूर किरन जस फूटी। सजैमान जनु बीरबहूटी ॥ ३
रचा बनाइ ऊँच चौबारा। तिह लै कन्ह कीन्ह सुवनारा[3] ॥ ४
चहुँ दिसि चारेउ खुले दुवारा। लागे पवन सीर असरारा ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुरंग बिछावन सजवाँ डासा । सुगन्ध बसाइ एकै घन बासा ।। ६
घिस चन्दन नित लागे अंगा । भोग बिरास करहिं यक संगा ।। ७
झूलहिं सखीं हिडोलैं, गावैं पिरम[4] हुलास । ८
कुब्जैं कीन्ह भोग सुख, दूसर ऋतु चौमास ।। ९

प्रति-पाठ—१. कान्हिं । २. खूँभी । ३. सोमारा । ४. पदम ।

टिप्पणी—कुसुम्भीं—कुसुम के रंग का; ललछौंह पीला । खुम्भी—कान का आभूषण जिसका अग्र भाग छाता अथवा टोपीनुमा होता है । सजैमान—सज्जमान; सजी हुई । चौबारा—मण्डप; चारों ओर से खुली छत । सुवनारा—सोने का स्थान; शयनागार । सीर—शीत; ठंडा । असरारा—अत्यधिक; बेशुमार । सजवाँ—सेज; शय्या । डासा—बिछाया । पिरम—प्रेम । हुलास—उल्लास ।

३०२

आइ सरद ऋतु निर्मल चन्दू । भा कुँवार-कातिक आनन्दू ।।१
चन्दन चीर धनि पहिर सँवारी । जिह जग पूर रहे उजियारी ।।२
कै खँड सात धौराहर पाटा । औ कटाव बहु भाँतिह काटा ।।३
तिह ऊपर लै सेज बिछाये । चित्र औरेह चौखण्डी छाये ।।४
मिल तिह दुउ जन दइ गल बाँहाँ । प्रेम प्रीत रति मन्दिर माँहाँ ।।५
खिन खिन लेहिं अधर रंग-बीरी । नारंग दारिउँ तुरंज जँभीरी ।।६
११३ख चीना कंवल केतकी करी । हियें बेल चाखहिं रस भरी ।।७
भोग करहिं रस दूनों, मिले रहहिं यक पास । ८
खेलत हँसत गँवाये, तीसर ऋतु छौ मास ।। ९

टिप्पणी—सरद—शरद । चन्दन चीर—चन्दनी रंग का वस्त्र । धौराहर—धवल-गृह; शयनागार । पाटा—बनाया । कटाव-पच्चीकारी; नक्काशी । औरेह—उरेह; उत्कीर्ण कर । चौखण्डी—चार खण्डों वाली । हियें बेल—हृदय का बेल; कुच । छौ छः ।

३०३

चढ़ी सिसिर ऋतु[1] भाव जनावा । अगहन-पूस चाउ घन आवा ।।१
दिन भा छोट रात बड़ आई । कुब्जैं रहसि भोग-रति पाई ।। २
कीन्ह सभ रंग दगल सँवारी । सेत पियर हरियर रतनारी ।। ३
कुब्जैं दून प्रीत कै जोरी । बरन बरन रंग[2] पहिर पटोरी ।। ४
भीतर डासी सौंर-सुपेती । नवल नेह भा प्रीतम[3] सेंती ।। ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुरंग सेज जनु रचेउ बेवानाँ। सुरंग चँदवा ऊपर तानाँ॥ ६
गेंडुवा[4] सुरंग दुहों दिसि धरे। औ धनि पुरुख दोउ रंग भरे॥ ७
तिल यक बिछुरहि नाँहीं, मिलें रहहिं यक पास। ८
इँह विधि गयी चौथहि ऋतु, सुख कै आठहु माँस॥ ९

प्रति-पाठ—१. सिसिरत। २. संग। ३. प्रेम। ४. गँडवा।

टिप्पणी—सिसिर—शिशिर। भारतीय परम्परा में माघ और फाल्गुन शिशिर के महीने कहे जाते हैं; पर जायसी ने यहाँ तथा पदमावत (कड़वक ३३९) में अगहन-पूस को शिशिर ऋतु माना है। दगल—रुई भरी मिर्जई, अँगरखा अथवा चोली। सेत—श्वेत, सफेद। पियर—पीला। हरियर—हरा। दून—दूना। पटोरी—साड़ी। डासी—बिछाया। सौर-सुपेती—मोटे कपड़े का रूई भरा गद्दा और रजाई। सौर—रजाई (इसी भावमें यह मेरठ-दिल्ली में आज भी प्रचलित है)। सुपेती—स्वेत पट्ट; चादर; प्रसंग के अनुसार यहाँ तात्पर्य गद्दे से है। नवल—नया। नेह—स्नेह। सेंती—के लिए। वेवानाँ—विमान। चँदवा—चँदोवा; शय्या अथवा आसन के ऊपर लगाने का पट्ट। गेंडुवा—लम्बोतरा गोल तकिया। सुरंग—सुन्दर रंग; प्रायः लाल रंग को सुरंग कहते हैं। धनि-पुरुख—स्त्री-पुरुष। तिल यक—एक क्षण।

३०४

ऋतु हेवन्त अति परै तुसारू। भयउ माँह-फागुन सिहवारू॥ १
११४क कुब्जा लेखें आथि न पाला। गा वँहि संघे[1] सिव परम सियाला॥ २
पिय संघ रैन भया दिन सोई। जाड़ न जानै कहवाँ होई॥ ३
खिन यक पहिरे चन्दन चोला। पुनि रे सेंदुरिया चीर अमोला॥ ४
कबहूँ पारे गुंजल सारी। कबहूँ पहिर खिरोदख भारी॥ ५
कबहूँ सोन छाप चँदनौरा। कबहूँ मेघौना रात **बरोटा**॥ ६
कबहूँ चकवा[2] चीर सुहावा। कबहूँ फुदिया पहिरि बनावा॥ ७
यह सिंगार नित अनवइ, जनु आछरि कैलास। ८
काम कलाँ रति बीती, पचये ऋतु दस मास॥ ९

प्रति-पाठ—१. सखी। २. चकव।

टिप्पणी—हेवन्त—हेमन्त। भारतीय परम्परा में हेमन्त अगहन-पूस के महीनों को कहते हैं और माघ-फाल्गुन शिशिर कहा जाता है। जायसी ने यहाँ तथा पदमावत (कड़वक ३४०) में बात उल्टी कही है। यह उनका प्रमाद है अथवा किसी स्थानीय परम्परा का परिणाम, कहना कठिन है। तुसारू—हिम; पाला; अत्यन्त ठण्डा। माँह—माघ। सिहवारू—सिहरन (कँपकँपी) उत्पन्न करने वाला।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आथि—है। पाला—ठण्ड। गा—गया। वहि—उसके। संघे—संग। सिव—शीत। सियाला—शीतकाल। कहवाँ—कहाँ। चन्दन चोला—चन्दनी रंग के वस्त्र को बनी चोली (कंचुको)। सेंदुरिया—सिन्दूरी रंग का। चीर—ओढ़नी। अमोला—अमूल्य; मूल्यवान; कीमती। पारे—धारण करे। गुंजल—गुजरात की बनी। सारी—साड़ी। खिरोदख—क्षीरोदक। इस वस्त्र का उल्लेख हर्ष चरित (उच्छ्वास ७) और वर्णरत्नाकर (वस्त्र सूची) में हुआ है। परिशिष्ट परवण और नलचम्पू के उल्लेखों के अनुसार यह हलके सफेद रंग का वस्त्र था जिसमें समुद्र के लहरों की सी आभा झलकती थी। सोन छाप—सोने से छपा; सुनहला। चँदनौटा—वासुदेवशरण अग्रवाल की धारणा है कि यह चन्दन के रंग का वस्त्र (चन्दन पट्ट) था (पदमावत ३२९।३)। हमारी धारणा है कि यह एक रेशमी वस्त्र था जिसे ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने चन्द्रमंडल कहा है। सम्भवतः इस पर चन्द्रमा जैसी आकृति बनी रहती रही होगी। मेघौना—सम्भवतः मेघवर्ण और मेघडम्बर नाम से ज्योतिरीश्वर ठाकुर ने वर्ण रत्नाकर में इसका ही उल्लेख किया है। मेघडम्बर साड़ियों का उल्लेख प्राचीन बंगला साहित्य में भी मिलता है। अनुमान है कि यह आसमानी (बादली) रंग का रेशमी वस्त्र होगा। चकवा—सम्भवतः ऐसा वस्त्र जिस पर चक्र अथवा फूल बने रहते रहे होंगे (देखिये कड़वक १२६ के अन्तर्गत टिप्पणी)। फुँदियाँ—इसका उल्लेख जायसी ने पदमावत (३२९।२) में भी किया है। वहाँ वासुदेवशरण अग्रवाल ने इसे फुँदना लगे निवीबन्ध होने का अनुमान किया है, जो प्रसंगानुसार असंगत है। हमारी समझ में यह किसी प्रकार की अँगिया या चोली (कंचुकी) है। हो सकता है इसका तात्पर्य उस वस्त्र से हो जिसे पद्मनाभ कृत कान्हडदे प्रबन्ध में फूँदड़ी (३।१५३) कहा गया है। वह कोई मूल्यवान वस्त्र था किसमें सोने और रत्नों का प्रयोग होता था। अनवइ—लाती है; बनाती है।

३०५

भा बसन्त ऋतुराजा आवा। चढ़ा चैत-बैसाख जनावा॥ १
कुब्जहि चौगुन चढ़ा सुहागू। कन्त मिलें अब खेलै फागू॥ २
कै सिंगार धनि आपु सँवारा। भा सेंदुर जग सब रतनारा॥ ३
जनहु बनाहुत कुसुँभी फूली। त्रिभुवन लोक देखि गा भूली॥ ४
अधर सुरंग चढ़ा सो रंगू। देखि लोग भा रूप पतंगू॥ ५
२१४ख कुब्जहि[1] भाग सब देखै धावा। चाचर जोरे पंचम गावा॥ ६
चहुँ दिसि बूका दरहर होई। चन्दन अगर भरो सब [कोई]॥ ७
खेल फाग रति मानी, नेह भोग रस बाँस[2]। ८
साध हिये कै पूजी, छवो ऋतु बारह माँस॥ ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. कन्ह (प्रसंग के अनुसार 'कुब्जहि' पाठ संगत) । २. माँस ।

टिप्पणी—चौगुन–चौगुना । कन्त–प्रेमी; पति । फागु–फाग; होली । रतनारा–लाल । बनाहुत–बन में । कुसुँभी–केसर । सुरंग–लाल । चाचर–बसन्त ऋतु का नृत्य; चर्चरी । बूका–अबीर । भरो–भरा । साध–इच्छा । हिये–हृदय ।

३०६

मधुबन छाइ रहे हरि निंता । गोकुल मँह गोपिह भइ चिंता ।। १
आवन कँह कहि गये सो बेरा । लौटि न कन्ह कीन्ह पुनि [फिरा] ।। २
कै मधुपुर उन्ह बहु सुख पावा । यह सुख[1] सँवर न भावै आवा ।। ३
कै रुपवन्ति मिली केउ नारी । तुम्ह लोभाइ हम दीन्ह बिसारी ।। ४
कै हम सेंउ देखँहु गुन थोरा । गा मन उतर न करँहु बहोरा ।। ५
कै रे लाग सेवाँ हम चोरी । जो रिस मान रहे वइ [खोरी] ।। ६
कै हम कौनिउँ आयसु मेंटा । तिंह औगुन फिर करँहु न भेंटा ।। ७
कै धरि तोकँह बन्दि, ना जानी भै काह । ८
केउ न जाइ तिंह बहुरा, कासों पूँछी चाह ।। ९

प्रति-पाठ—१. दुख ।

टिप्पणी—मधुबन–मथुरा । निन्ता–नित्य के लिए; सदा के लिए । आवन–आने के लिए । सो-उस । बेरा–बेला; समय । सँवर–स्मरण । न भावइ–अच्छा नहीं लगता । बिसारी–भुला दिया । थोरा–थोड़ा; कमी । बहोरा–वापसी । चोरी–कमी । कौनिउँ–कोई । आयसु–आज्ञा । मेटा–टाला; उपेक्षा की । औगुन–अवगुण; अपराध । बन्दि–बन्दी; कैद । ना जानी–पता नहीं । भै–हुआ । काह–क्या । केउ–कोई । बहुरा–लौटा । कासों–किससे । पूछै–पूछने । जाह–जाऊँ ।

३०७

११५क पुनि रे सुनिह कुब्जा सेउँ भोगू । सुनि गोपिह मन भयउ बियोगू ।।१
तहिया रहत प्रीत[1] हरि कीन्हें । जहिया गोउ चरावत लीन्हें ।।२
भरत सने हर जिउ कै दीन्हाँ । हम रे चाइ सब छर तिंह कीन्हाँ ।।३
चन्दन जिये नीक तुम्ह लागा । इहँहि काहिं न हमसों माँगा ।।४
टेढ़ी चाल जो रे तुम्ह लोभा । कँहहु हम चलँहि तिंह सोभा ।।५
हम टेढ़ीं वह सूध अनूपा । जिह पिउ चाहे सोइ सरूपा ।।६
[.... ....] । [. ... .] ।।७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कौनहि बान हरि तूं, अब रे लखे दिन पूर।८
जित गिन गिन **नियरावहि**, अवधि जाइ नित दूर।।९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित।

प्रति-पाठ—१. परत।

टिप्पणी—सुनिह–सुना। तहिया–उस दिन। रहत–रहते हुए। जहिया–जिस दिन। गोउ–गाय। चरावत लीन्हें–चराते थे। चाइ–चाव। छर–छल। जिये–हृदय में। नीक–अच्छा। इहहिं–यहीं। काहि न–क्यों नहीं। सूध–सीधी। अनूपा–उपमा रहित।

३०८

चढ़ा असाढ़ लोग घर आवा। कन्ह जाइ मधुबन होइ छावा।। १
दई मेघ चहूँ दिसि गाजे। चमक चमक घन बीजु बिराजे।। २
बोले कोकिल सब्द सुहावा। आइ पपीहें[1] पीउ बोलावा।। ३
दादुर ररँहि कुहकहिं[2] मोरा। भा बरखा **गौं गहिर कँदोरा**।। ४
११५ख **उठि बिरोह** आवइ नित घेरीं। भा बियोग जियँ गोपिह केरीं।। ५
रहब अकेलीं कन्ह न पासा। कइसे हम अँगउब [चौमासा]।। ६
कन्त लोभाइ और संग रहा। सो दुख सँवर जाइ न [सहा]।। ७
जिह बिच हार न संचरत, तिह बिच परा पहार।८
कैं रे मरन दोख न जोव, यह रे बिरह दुख भार।। ९

प्रति-पाठ—१. बह जीहनैं। २. खोकेंह। ३. सींचरत।

टिप्पणी—दई–आकाश। घन–बादल। दादुर–मेढ़क। रहब–रहूँगी। अँगउब–अंगीकार करूँगी; सहन करूँगो। चौमासा–बरसात के चार मास।

३०९

सावन बरस सघन घन मेंहू। झुरँहि गोपिता सँवर स[नेहू]।।१
बादर घटाटोप होइ छाये। घरी न निबुसहि तस झर ला[ये]।।२
भरै नैन जलहर अतिवानी। बरुनिह चुवँहि जानु ओरवानी।।३
सब आयें घर रावन राजा। घर घर सखिह हिंडोला साजा।।४
जिह घर कन्त ते[1] झूलँहि जाई। गावहिं मेघमलार सुहाई।।५
रचि रचि पहिरहिं राता चोला। औ गिय घालँहि हार अमोला।।६
हरियर धरती सब संसारा। रहसि सोहागिन करँहि सिंगारा।।७
हम रखै अब निसि दिन, भई न कन्ह सो भेंट।८
११६क इँह माँस गा आँहर, साध रही सब मेंट।। ९

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रति-पाठ—१. ले ।

टिप्पणी—मेंहू–मेंह; पानी । झुरँहि–दुखी हों । सँवर–स्मरण कर । बादर–बादल । घटाटोप–घनघोर । घरी–घड़ी । निवुसहि–बरसना बन्द नहीं होते । तस–ऐसी । झर–झड़ी । अतिवानी–अत्यधिक । बरुनिह–पलकों के अग्रभाग पर जमे हुए बाल । चुवँहि–टपकते हैं । ओरवानी–ओरी; छप्पर का किनारा । रावन–रमण करने वाले । राजा–प्रियतम । हिंडोला–झूला । मेघमलार–वर्षा ऋतु में गाया जाने वाला राग । चोला–अँगिया; चोली; कंचुकी । घालै–डाले । हरियर–हरी । रहसि–हर्षित होकर । सुहागिन–सौभाग्यवती; विवाहित स्त्रियाँ । ररबै–रटती रहेंगी । आँहर–बेकार । साध–इच्छा ।

३१०

भर भादों अँधियार न सूझै । ताहि निछोहीं अइस न बूझै ।। १
बिरह बियोग रहे जियँ छाई । सून मँदिर चाहि उठि[1] खाई ।। २
भूलि रहे पिउ तिह परदेसा । पन्थ न चले न आउ सँदेसा ।। ३
जलहर रहा पुहुमि भरि पूरी । नैनहि नीर पनि सुठि दूरी ।। ४
भरी हिलोरै बाढ़ी जउनाँ । फिरा केउ नहिं पार जो गउनाँ ।। ५
मकु तिह जाइ अधिक सुख पावा । वहि देखि[2] कन्ह बहुरि न आवा ।।६
हम जलवारि करे को पारा । जाजर नाव थाकि मँझधारा ।। ७
खेवक नाव नौरिया, लोभि रहा औराँह । ८
सोरह सहस गोपिता, बूड़त है अवगाह ।। ९

प्रति-पाठ—१. ऊठ । २. दुख ।

टिप्पणी—निछोही–बेदर्द । चाँहि उठि खाई–उठ कर निगल जाना चाहता है । जलहर–जलधर; मेघ । पुहुमि–पृथिवी । भरि पूरी–पूरी तरह से भर रहा है । बाढ़ी–बढ़ी हुई । जउनाँ–यमुना नदी । फिरा–लौटा । केउ–कोइ । गउनाँ–गया । मकु–लगता है । तोहि–उसे ही । बहुरि–लौट कर । जलवारि–जल के भँवर में । जाजर–जर्जर; पुरानी । थाकि–थक गयी । मँझधारा–बीच धार में । खेवक–खेने वाला । नौरिया–नाव को नियंत्रित करने वाला । औराँह–अन्यत्र । अवगाह–अथाह पानी में ।

३११

लाग कुवाँर रितु नै-नै लागो । जिह घर कन्त सो नारि सुभागी ।।१
ते रसोइ सुख भोजन करहीं । कन्त मिलें सब दुख परहरहीं[1] ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हम सों कौल-कपट हरि कीन्हाँ। मिलि के डँहक बिछोहा दीन्हाँ ।।३
११६ख जो हम समुझ परत तब ऐती। प्रीत न करित तपाऊ सेती ।। ४
उवइ अगस्त कास बन फूली। रहा कन्ह कुब्जा सेउँ भूली ।। ५
खंजन पुनि आइ लिये बसेरा। तवहु कन्ह न कीन्हो फेरा ।। ६
न जनों सो मधुबन कस ठाऊँ। जिह बन छाइ रहे तजि गाँऊँ ।। ७
जो जानति हरि जइहँहि, लौटि न देखिहहि हेर। ८
जाइ न देतिंह कन्ह, सब मिलि रखतिह घेर ।। ९

प्रति-पाठ—१. परहरइं।

टिप्पणी—सुभागी–सौभाग्य वाली। ते–वे। परहरहीं–परित्याग करती हैं; भूल जाती हैं। कौल-कपट—वादा-खिलाफी; विश्वासघात। डँहक–भारी। बिछोहा–विछोह; वियोग। समुझ परत–समझ में आता। ऐती–यह बात। तपाऊ सेती–तप करने के लिए। उवइ–उग गया। अगस्त–अगस्त तारा। कास–सफेद फूल वाली घास जो वर्षान्त में फूलती है। खंजन–एक पक्षी। फेरा–वापसी। जानति–जानती। जइहँहि–जायेंगे। लवटि–लौट कर। हेरि–निहार कर। जाइ–जाने।

३१२

लागेउ कातिक माँस सुहावा। सबहि सोहागिन के मन भावा ।। १
सरद चन्द[1] सीतल किह कहा। देखि बिरह गोपिह तन दहा ।। २
जिह घर कन्त सो **चोरुवा** पारँहि। केलि करँहि सिर सेंदुर सारँहि।।३
औ सुख[2] भोग करँहि बहु भाती। हम रे बियोग पैठि दिन राती ।।४
और जो जगत जाइ पर देसी। पठवै लिखा कि आउ सँदेसी ।। ५
इँह[3] मधुबन हुत कोउ न आवा। पन्थि न चलै सँदेस न पावा ।। ६
कै रे तहाँ कागद-मसि नाहीं। कै बिसरीं हम चित न चढ़ाहीं ।। ७
११७क चन्द नवइ निसि निसरै, तरई कीत बिहाइ। ८
भानु दहै दिन दारुन, यह दुख निसि दिन जाइ ।।९

प्रति-पाठ—१. चद। २. सूख।

टिप्पणी—सेंदुर सारहिं–सिन्दूर लगाती हैं। परदेसी–विदेश। पठवै–भेजता है। आउ–आता है। सँदेसी–सँदेश-वाहक। पन्थि–पथिक; राही। कागद–कागज। मसि–स्याही। बिसरीं–भूली गयीं। चित न चढ़ाही–स्मरण आतीं ही नहीं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३१३

अगहन माँस घटै दिन लागें। बाढ़े रैन जाइ सब जागें।।
जाड़ें आइ कीन्ह अगुसारा। पर नहिं[1] पहुँचे[2] सेज सुवनारा।।
सौर-सुपेती सबै सँवारँहि। पुरुख लाग धनि आपु सँवारँहि।।
हमरे एक तन अगुसर आँगी। बिनु पिउ नैन नीर सर लागी।।
एक बिरहा औ दूसरैं पाला। कें अँकउब यह माँह सियाला।।
कान्ह कुँवर जो बहुरत आवइ। जाड़ मरत जस सुरुज दिखावइ।।
हमहिं जियाइ लाइ कँठ लेई। जाड़हि देस निसारा देई।।
करम[3] होंहि जो दाहिन, पिउ आवहि जिह[4] नारि।
नतु नित सेज अकेली, बिरह होत जर छारि।।

प्रति-पाठ—१. तिह। २. बचै। ३. कदम। ४. नह।

टिप्पणी—अगुसारा—आगमन। सेज सुवनारा—शय्या पर सोने वाला; प्रियतम; पति। सौर-सुपेती—गद्दा-लिहाफ। धनि—नारी; पत्नी। अगुसर-आया। आँगी—आग; अग्नि। पाला—ठण्ड। अँकउब—अंग से लगायेगा। माँह—मास। सियाला—शीतकाल। बहुरत—लौट कर। देस निसारा—देश निकाला। करम—भाग्य। न तु—नहीं तो। छारि—भस्म।

३१४

पूस मांस घन लागे सीऊ। अबहु न आउ निछोहा पीऊ।।
हिय थर थर काँपै बिनु साईं। सब तन डोल पात[1] कै नाईं।।
११७ख बिरह अँगीठी डाढ़े देहा। सुलुगि सुलुगि तन भा जरि खेहा।।
अबहूँ जो रे सुरुज चलि आवइ। भसम होइ तन बेग न पावइ।।
जिउ[2] अधरहि होइ आइ अवासा। सँवर सँवर आछै पिय आसा।।
मँकुहि आइ पिउ[3] बिरह नेवारे। कण्ठ लाइ जिउ[4] पैठ सँचारे।।
कया छूँछ पिंजर जस रेवा। गहें न रहे प्रान परेवा।।
आवहु कन्ह मया कै, गोपिह प्रान अधार।
उजर[त] हिया बसावहु, करहु हमार[5] निस्तार[6]।।

प्रति-पाठ—१. पाप। २. जोउ। ३. पीउ। ४. जीउ। ५. हमारी। ६. निसार।

टिप्पणी—घन—घना; अत्यधिक। सीऊ—जाड़ा। निछोहा—बेदर्द। पीऊ—प्रियतम। साईं—स्वामी; प्रियतम। डोल—हिले। पात—पत्ता। नाईं—की तरह

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डाढ़े—जलाये। सुलुगि—धीरे-धीरे जल कर। खेहा—राख। नेवारे—निवारण करे; दूर करे। सँचारे—संचार करे। कया—शरीर। छूछ—खाली। पिंजर—पिंजड़ा। परान—प्राण। परेवा—कबूतर; पक्षी। मया—ममता। उजरत—उजड़ता हुआ। हिया—हृदय। निस्तार—उद्धार; रक्षा।

३१५

माँह तुसार परै दिन राती। जाड़ न छूटै एकँहु भाँती ।।१
बन मँह गोपीं मरँहि तुसारा। सौंर-सुपेती भयउ हिंवारा ।।२
पुरुख लाग धनि आप बनावँहि। कण्ठ लाइ सुख रैन बिहावँहि ।।३
सेज हिवंचल भइ बिनु नाहाँ। को **सोझत** काढ़े धरि बाहाँ ।।४
ऊ कुदिस्टि जानै हरि केरी। सौत कीन्ह जो कुब्जा चेरी ।।५
हम वियोग[1] वहि दीन्ह सुहागू। भये दिन ओछ फिरा अस भागू ।।६
८०क जो पिय दीन्ह[2] कूबरहिं राजू। हम कूबर कँह पावँहि आजू ।।७
तोरें भल जाँनत, झूठहि पहुँचत काल। ८
अब यह जीवन नाँहि, कठिन सौत कर साल ।। ९

प्रति-पाठ—१. विहाग। २. दँह।

टिप्पणी—माँह—माघ। तुसार—ठण्ड; पाला। सौर-सुपेती—गद्दा-लिहाफ (रजाई)। हिवाँरा—बर्फ। बिहावइ-व्यतीत करती है। हिवंचल—हिमाचल; हिमालय। नाहाँ—प्रियतम। काढ़े—निकाले। धरि—पकड़ कर। बाहाँ—हाथ। ओछ—बुरा। कूबरहिं—कुब्जा; कुबड़ी को ही। साल—काँटा; पीड़ा।

३१६

फागुन चौगुन सीउ जनावा। जाड़ चला पै[1] कन्ह न आवा ।।१
झरकै पवन काँप उठि हिया। यँहि बियोग दहुँ[2] को जिया ।।२
तिल तिल रैन घटे दिन बाढ़ा। सुरुज तपत तन जाइहि डाढ़ा ।।३
तँह मधुबन पिउ रहे अलोपी। सँवरँहि नित झूरँहि गोपी ।।४
जिह घर कन्त[3] फाग लै[4] खेलहिं। कै सिंगार सिर सेंदुर मेलहिं ।।५
बिन पिउ मरँहि रैन दिन झूरी। सेंदुर काहि देखावँहि धूरी ।।६
बिनु पिउ भाव न काजर लीन्हाँ। माँग न सोहे सेंदुर दीन्हाँ ।।७
चन्दन अगर कुमकुमाँ, सब कोइ खौरै देह ।८
कान्ह पाछु सब गोपीं, जनु सिर मेलहिं खेह ।। ९

प्रति-पाठ—१. लै। २. दहूँ। ३. कण्ठ। ४. पै।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—चौगुन—चौगुना। सीउ—शीत, ठण्ड। झरकै—चलै। दहुँ—न जाने। डाढ़ा—जल। अलोपी—लुप्त। कन्त—पति। फाग—होली। मेलहिं—लगाये। भाव न—अच्छा नहीं लगता। खौरहिं—मलते हैं। खेह—धूल।

३१७

चैत चाउ तिह देंहि गुसाईं। जिह घर भोग सेज-सुख साईं ॥१
८०क ऋतु बसन्त सब नारीं मानँहि। फूल बद्धी घर घर आनँहि ॥२
कुसुम करी भर सेज[1] बिछावँहि। बहु सोहाग पिउ आपन रावँहि ॥३
इह बसन्त मोहि दाहन आवा। अधिको कान्ह बियोग जनावा[2] ॥४
सुख कुब्जा[3] दुख गोपिंह बाँटी। सँजवा अगिन फूल जस काँटी ॥५
कै उजार गोकुल हरि गये। को बसाउ मिरगारन भये ॥६
तौलहिं[4] लागहि नीक बसन्तू। जो रे बिहसि घर आवइ कन्तू ॥७
जिह मदन-सर लागहि, सँवरि सौत कर साल। ८
सब दिन बैठि गँवावत,[5] रैन आउ जनु काल ॥ ९

प्रति-पाठ—१. संज। २. बचावा। ३. कूब्जा। ४. लौलहि। ५. बैट गवावत।

टिप्पणी—चाउ—चाह; उल्लास। साईं—स्वामी; पति। बद्धी—माला; गजरा (यह शब्द इसी अर्थ में आज भी पूर्वी उत्तर प्रदेश के अग्रवाल समाज में प्रचलित है; विवाह के अवसर पर बर को पहनाये जाने वाले मोटे और बड़े माले को बद्धी कहते हैं)। कुसुम करी—फूल की कली। रावँहि—रमण करती हैं। दाहन—जलाने के लिए। सँजवा—शय्या। काँटी—काँटा। उजार—उजाड़; वीरान। बसाउ—बसाये। मिरगारन—मृगारण्य; वन-पशु से युक्त वन (मूलतः मृगारण्य नर्मदा तट पर स्थित नीमाड़ जिले के एक स्थान का नाम है जहाँ पर्वतों के कारण नर्मदा तीन धाराओं में विभक्त हो गयी हैं और वहाँ पर्वत शिखर तीन स्तभों सरीखे जान पड़ते हैं। इसे आज कल हिरनपाल कहते हैं)। तौलहि—तब तक ही। जोरे—यदि। बिहसि—प्रसन्न होकर। मदन-सर—काम वाण। साल—पीड़ा।

३१८

भा बैसाख भानु आपु धिका। झूरइ चन्द्रावलि राधिका ॥१
औ गोपीं सब सोरहो सहसा। बिन पिउ कस रे कोड कस रहसा ॥२
जिह कँह कन्त[1] सो ओबरीं जोवैं। गोपीं दग्ध कन्द जनु टोवैं ॥३
काकँह अलोभहि अरप सिगारू। अगर अगिन भा चोर अँगारू ॥४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो चन्दन घिस सीतल लावँहि। हिया जरे चख नीर बुझावँहि[2] ॥५
८१क कित [अ]क्रूर[3] आवा नसिहारा। जो पिय गा हरि गहि बैसारा ॥६
तिह मधुबन लै दिहस बसेरा। जिह बन हुत पुनि कन्ह न फेरा ॥७
जो जानत्ति हरि रहिहहिं, जरम छाइ बन माँह। ८
हमरे सबै मिलि रखती, पाउ पंगु गहि बाँह ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कहकत। २. नझावहि। ३. गरूर।

टिप्पणी—धिका—गर्म हुआ। कोड—खेल। रहस—हँसी। ओबरी—भीतर का कमरा। जोवइ—देखती है। काकँह—किसको। अलोभहि—लुभाये। नसिहारा—नाश करनेवाला। गा हरि—हर ले गया। पंगु—चलने में असमर्थ। गहि—पकड़ कर।

३१९

जेठ जीवँ अब पिय[1] विनु नाहीं। होइ घाम जनु लूक बराहीं ॥१
बरै बजासन बहहि लुआरा। पिय बिनु जरे सेज सवाँरा ॥२
भूभर भुइँ धिकि दप होइ रही। उठै झार तन जाइ न सही ॥३
पिउ जो मिलहि धरै मन बूरा। न तु जरि होव छार कर कूरा ॥४
अवहूँ जो र कान्ह चलि आवँहि। भस्म समेटहि[2] अग्नि बुझावँहि ॥५
अगिन जरमहि दग्ध जिह गोपी। ऊधो मधुबन रहे अलोपी ॥६
जरहि आग हीउर सब जरे। विनु रे कन्ह को सीतल करे ॥७
पूजी अवधि बढ़े दिन, कन्ह न आये पास। ८
तपत सहत सब गोपिह, बीते बरहो मास ॥ ९

प्रति-पाठ—१. लै।

टिप्पणी—घाम—धूप। लूक—लुक्कारा। बराहीं—जल रहा हो। बजासन—वज्राग्नि। लुआरा—लू। भूभर—भुना हुआ। झार—लपट। छार—क्षार; राख। कूरा—ढेर। हीउर—हृदय।

३२०

८१ख बरस देवस दुख गोपिह रोवा। कन्ह लाग तन जोबन खोवा ॥ १
जौन न नाँघि जाई बन खेंवाँ। आइ सबै पवन कैं सेवाँ ॥ २
पायँहि परि बिनवहि गोपिता। ऐ हनुवँत वीर[1] के पिता ॥ ३
कन्ह पेम हमकों भा मरनाँ। बिरह जरत ताके तव[2] सरनाँ ॥ ४
वह रे निछोहा मधुबन जहाँ। लेइ सँदेस पहुँचावहु तहाँ ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्ह बिनु गोपीं मुवइ बियोगाँ। तुम्ह भूलहु कुब्जा कैं भोगाँ ।। ६
का तूँ[3] माख चित लाये। घर उजार बन जाइ बसाये ।। ७
बहुर नाँहि अस काहे, हम घालहु लराइ। ८
पिछलो प्रीत सँवर के, मरत जियावहु आइ ।। ९

प्रति-पाठ—१. नुक्तों अभाव में प्रसंगानुसार अनुमानित पाठ। २. लो। ३. लौं।

टिप्पणी—तन–शरीर। जोबन–यौवन; जवानी। जौन–जो। नाँघ–लाँघ; पार। खेंवाँ-यात्री। हनुवँत वीर के पिता–पवन (हनुमान पवन-सुत कहे जाते हैं)। पेम–प्रेम। बिरह जरत–विरह से दग्ध। ताके–देखे। तब–तुम्हारी। सरना–शरण। बिछोहा–बिछुड़ा हुआ। मुवइ–मरे। माख–ग्लानि। बहुर–लौट। नाँहि–नहीं। अस–ऐसा। काहे–क्यों। घालहु लराइ–लड़ाई करते हो। पिछलो–पिछला।

३२१

का तुम्हार हम औगुन कीन्हाँ। किह कारन पट अन्तर दीन्हाँ ।।१
हिया बीच न रखतिहु हारा। अब होइ रहे जउन के पारा ।।२
बिनवइ रैन अकेली डरी। बिनु पिय रैन फाट हिय मरी ।।३
आउ धनि-जोबन बिरसु अघाई। भोग बारि का अवधि बुढ़ाई ।।४
११८क जो बिछोउ अस गोपीं अहा। काहि कन्ह प्रीति लाइ पुन दहा ।।५
अब मिलि बिछुरन भयउ दुहेला। पिरम चखाइ बिरह तन मेला ।।६
हम सगरीं अब तुम्हरें नेमाँ। तुम्ह मिलें सों कूसर खेमाँ ।।७
तुम बिछोइ हम गोपिह, मेल बिरह कै जेल ।८
हम[1] मर मर देवस गवाँवा बहु, नित तुम्हारें घैल ।।९

प्रति-पाठ—१. हम हम।

टिप्पणी—का–क्या। औगुन–अपराध। कारन–कारण। अन्तरपट–बीच में पर्दा; ओट। हिया–हृदय। रखतिउ–रखती थीं। जउन–यमुना। पार–दूसरे किनारे। धनि-जोबन–नारी का यौवन। बारि–बाला। अवधि बुढ़ाई–बुढ़ापे के समय; बुढ़ापे में। दहा–जलाया। दुहेला–अकेला। सगरी–सभी। नेमाँ–निमित्त। कूसर खेमा–कुशल क्षेम। घैल–गैल; मार्ग; रास्ता।

३२२

आउ देखु जस मरन हमारा। कहु कन्ह[1] सेउँ करँहि सँभारा ।। १
काह देखाइ के काह देखायहु। प्रीति लगाइ आग तन लायहु ।। २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पेम-चिनगि सुलगै तस[2] हिया । जनु लिपटी बाती[3] निसि दिया ॥३
कन्त जरँहि बिरहें सब गोपीं । असक कै ओप कया सब ओपीं ॥४
धुवाँ न पावै परगट होनी । यहि कैं झार दाढ़ी सब लोनी ॥५
चँदरावली कही जस राहाँ । राही जरै अधिक दुख[4] माहाँ ॥६
चिनगि एक बाहर होइ परै । धरती[5] दाह सरग पुनि जरै ॥७
हौं सेउँ जस रोवत[6], चल आवहु रघुनाथ । ८
११८ख जनि गुसाँइ अस मारहु, हमहिं जाहु लै साथ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कह । २. लस । ३. पाली । ४. घोख । ५. धरपी । ६. रावन ।

टिप्पणी—आउ–आओ । जस–जैसा । कहु–कहना । सँभारा–सँभाल; देखभाल । काह–क्या । चिनगि–चिनगारी । बाती–बत्ती । दिया–दीपक । झार–आँच । दाढ़ी–भुन गयी । रघुनाथ–राम (यहाँ कृष्ण के लिए प्रयुक्त, जो असाधारण प्रयोग है) । जनि–मत । गुसाँई–स्वामी ।

३२३

सुनत सँदेस पवन पुनि[1] दहा । चला बेगि जस गोपिह कहा ॥ १
दाहिन कन्ह बैठ जिह अहा । तात बाउ तहाँ होइ बहा ॥ २
मिलथ कन्ह हँस पूँछी बाता । काहे पवन ऐस तूँ ताता ॥ ३
अब लग जूड़ जड़ावन बहिसी । अब रे तात भयें तूँ दहसी ॥ ४
कै तूँ लंक दीप तें आवा । लै सेउ अग्नि भानु कँह आवा ॥ ५
कै रे भानु रथ टेका जाई । तिह रे दहा तूँ होइ न जुड़ाई ॥ ६
कै तूँ कौनिहु रिसि परजरा । तिह तूँ भयसि अग्नि अस भरा ॥ ७
रहि न जाइ अनदी मोहि, जानु धिकी संसार । ८
किह रे आग अस दग्ध, कहु कुसल व्यवहार ॥ ९

प्रति-पाठ—१. बन ।

टिप्पणी—तात–गर्म । बाउ–हवा । ताता–गर्म । जूढ़-जढ़ावन–जाड़ा लगने वाली ठण्ड । बहिसी–बह रहे थे । दहसी–जल रहे हो । लंक-दीप–लंका (यह दक्षिण में स्थित है । जिन दिनों देश के उत्तरी भाग में ठण्ड पड़ती है; उन दिनों दक्षिण में गरमी रहती है ।) । जुड़ाई–ठण्डा । कौनिउ–किसी । रिसि–गुस्सा । परजरा–जला भुना । धिकै–गर्म हो । कुसल-व्यवहार–कुशल क्षेम; हाल-चाल ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३२४

कुसल कन्ह हम तुम्ह कह सदा । जौलहि दयीं जीवन जग बदा ॥ १
औ सुख भोग जीउ कर लाहा । जो रे दइउ पुरवै मन चाहा[1] ॥ २
पै अलेख बड़ कीन्हि गुसाईं । तज गोकुल गोपीं बिसराईं ॥ ३
११९क रोवतहि[2] छाड़ लिहहु[3] परदेसू । आयउँ तिह[4] कर कहें सँदेसू ॥ ४
देखों बिरह जरत राधिका । तिहके आँच गँगन रबि धिका ॥ ५
चन्द्रावलि दिपत[5] जो अही । सो तोहि पाछु गहन अस गही ॥ ६
औ जो गोपीं सभ का कहुवउँ । सब कैं जरत जरत हौं इहवउँ ॥ ७
उठी आग सेउ जग मँह, सकस तो बेगि बुझाउ । ८
कै चल पास जाहु तिंह कैं, कै वँह निकट बुलाउ ॥९

प्रति-पाठ—१. लाहा । २. रोवहिं । ३. लिह । ४. इँह । ५. तपत ।

टिप्पणी—जौलहि–जब तक । दयी–ईश्वर । बदा–भाग्य में लिखा। लाहा–लाभ । पूरवै–पुरा करै । अलेख–अन्याय । धिका–गर्म हुआ । दिपत–चमक रही थी । पाछु-पीछे । गहन–ग्रहण । कहुवउँ–कहूँ । इहवउँ–मै भी । सकसि–सकते हो ।

३२५

सुन सँदेस, उपनाँ जियँ छोहू । सँवर सनेह उठा मन मोहू ॥१
मोहि लग[1] गोपिंह सहा बियोगू । अब बिलास मानों रस भोगू ॥२
तत्खन बेगी बेग हँकारा । भा आयसु चल जोरु सवारा[2] ॥३
लख सगरीं भुइँ नेत[3] बिछावँहु । जिंह मारग सब गोपीं आवँहु ॥४
सब नार्वाहि चौखण्डी सँवारहु । चित्र उरेहउ ईंगुर ढारहु ॥५
आजु धमार जउन मों मेलों । सब गोपिंह संग नादर खेलों ॥६
[.... .... । ....] ॥७
ऐसैं भाँत बनावहु, जैस साह कै साज । ८
११९ख [.... ....][4] गोपीं, आवध भवई आज ॥९

एक पंक्ति की छूट; स्थान अनिश्चित ।

प्रति-पाठ—१. तप । २. सवरा । ३. तत । ४. अक्षर मिट जाने से अपाठ्य ।

टिप्पणी—उपना–उत्पन्न हुआ । सँवर–स्मरण कर । सनेह–स्नेह । मोह–ममता । तत्खन–उसी समय । बेगी–सन्देशवाहक । आयसु–आदेश । जोरु–जमा करो । सगरी–सारी । नेत–नेत्र; एक प्रकार का कपड़ा (इसका उल्लेख कालिदास के रघुवंश (७।३९) में पहली बार हुआ है । इसकी चर्चा बाणभट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के हर्ष चरित और उसके पश्चात् के प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य में प्रायः मिलती है। क्षीरस्वामी के अनुसार यह जटांशुक (छाल से बना हुआ) था। अन्यत्र उसे सूक्ष्म रेशमी वस्त्र (सूक्ष्म पट्टकूलवारलानां) बताया गया है। संदेश-रासक में इसे कपास का बना (णित्त कुपासा) कहा गया है। नेत्र का अर्थ बटा हुआ भी होता है; इससे यह संकेत प्राप्त होता है कि यह वस्त्र बटे हुए सूत का बनता रहा होगा। जान ऐसा पड़ता है कि यह वस्त्र पहनने के काम में कम, बाहरी काम के लिए अधिक प्रयुक्त होता था। एक भोजपुरी लोकगीत से इसके वितान के रूप में प्रयोग होने का संकेत मिलता है (राजा दशरथ दुआरे चित्र उरेहल, ऊपर नेत फहरासु)। इसी रूप में इसका प्रयोग धनपाल ने अपनी तिलकमंजरी में भी किया है। पर्दे के अर्थ में जायसी ने इसका प्रयोग पदमावत (वासुदेव शरण अग्रवाल संस्करण, ३३३।५) में किया है। चन्दायन (४३।२; १६१।१) के उल्लेखों से ऐसा ज्ञात होता है कि यह बिछाने के काम आता था। यहाँ भी इसका उल्लेख इसी रूप में हुआ है। नेत्र का प्रयोग परिधान के लिए होता था, ऐसा नल-चम्पू (आरम्भिक १०वी शती ई०) से ज्ञात होता है)। चौखण्डी—चार खण्डों वाली। उरेहउ—उत्कीर्ण करो। ईंगुर—हिंगुल; एक प्रकार का लाल रंग जिसका प्रयोग स्त्रियाँ माँग भरने के लिए किया करती हैं। प्राचीन और मध्य काल में इसका प्रयोग रँगाई के लिए होता था। ढारहु—लगाओ। धमार—धमा चौकड़ी। नादर—नौका-क्रीड़ा। साह कै साज—शाही ठाट।

३२६

तवहि संजूत साज सब भयऊ। चल हँकार गोपिंह कह गयऊ ॥१
अब प्रसन्न तुम्ह भयउ गुसाईं। सूखि बेलि जानहु पलुहाईं ॥२
चलहु कन्ह तुम्ह बेगि वुलाईं। सुनि कै सब गोपीं बिगसाईं ॥३
मन रहसो सब करहि बधावा। धन सो आजु जिह सजन मिरावा ॥४
साज सिंगार सबै मिलि चलीं। यक यक चाह सों एक एक भलीं ॥५
गज गति पाउ सब पर धरहीं। एक चाह एक अगुसरहीं ॥६
देखी ठाढ़ कन्ह रँगराता। दूलह जैस बनी बराता ॥७
आइ गयीं सब गोपीं, गावत जउनाँ तीर। ८
चोवा परिमल सेंदुर, पहिरिहि चोला चीर ॥ ९

तीसरी पंक्ति मार्जिन में अंकित है। अनुमान से यहाँ रखी गयी है।

संजूत—संयुक्त; एकत्र। साज—सामान; आवश्यक सामग्री। हँकार—बुलाहट। बेलि—बेल। पलुहाईं—पल्लवित हुईं; हरी हुईं। बिगसाईं—प्रसन्न हुईं। बधावा—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खुशी के अवसर पर किया जाने वाला आयोजन । धन–धन्य । सजन–प्रियतम । मिरावा–मिलाया; भेंट कराया । अगुसरहों–आगे बढ़ना । ठाढ़–खड़ा ।

३२७

वारहि पार रात भा भेसू । जनु जउन मों फूला टेसू ।। १
देखि लहहि बसन्त सुहावा । गोपिह होत भाग अस आवा ।। २
देखा कन्ह गोपिता आईं । नावैं नियर आन सब लाईं ।। ३
देखि कन्ह बिहसी सब नारीं । जनहु फूल फूलीं फुलवारीं ।। ४
१२०क नावैं सब चन्दन कैं गढ़ो । भा कौकुत जब[1] गोपीं चढ़ीं ।। ५
उनके[2] चढ़त पवन जनु बहईं । उठि कै चमक बीजु घन[3] गहईं[4] ।। ६
एक चढ़ाईं हरि गहि बाहाँ । एकै चढ़त परीं जल माहाँ ।। ७
जिह हुत जाँघ भरोसा, तिह क अगरा नाउ । ८
फिर वैं सब[5] बिछुरीं, जिह नाहीं[6] पोसाउ ।। ९

प्रति-पाठ—१. जब । २. एकै । ३. घट । ४. गयीं । ५. सत । ६. नाथी ।

टिप्पणी—वारहि पार–आर-पार; एक किनारे से दूसरे किनारे तक । रात–रक्त; लाल । भेसू–वेश; परिवेश । जउन–यमुना । टेसू–पलास का फूल । लहहि–जान पड़ता है । नियर–निकट । आन–ला । कौकुत—आश्चर्यजनक बात । बीजु–बिजली । घन–मेघ । भरोसा–विश्वास । पोसाउ–पुरुषार्थ; साहस ।

३२८

नावर खेलत निसि नियरानी । भोग करत सब रैन बिहानी ।। १
और जो कन्ह केर रनिवासा । सबै बोलाइं अपने पासा ।। २
लै गोपीं सब चला गोबिन्दू । दीखै जनु अछरिन मँह इन्दू ।। ३
एकै पूरुख औ सब नारीं । जे सेवहि लै तिह नारीं ।। ४
लै राखीं मधुबन कैलासा । निसि बासर आछँहि[1] सब पासा ।। ५
आस पास गोपिह सो बारा । माँझ कन्ह गोपेन्द्र[2] सँवारा ।। ६
भल भोग रस करहि बिरासा । निस दिन रहँहि कन्ह कै पासा ।। ७
सोरह सहस इस्तिरीं, एक पूरुख सब माँह । ८
१२०ख रावहि[3] सबहि रात दिन, दै सिरहाने बाँह ।। ९

प्रति-पाठ—१. आजहि । २. गोपन्द्र । ३. रावही ।

टिप्पणी—नावर–नौका क्रीडा । नियरानी–निकट आयी । बिहानी–

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विनाश हुई; समाप्त हुई। इन्दू–इन्द्र। बारा–घर। रावहि–रमण करे। सिरहाने–सिर के नीचे।

३२९

धरमसार एक बार उठावा। दई नाम तह वत्त चलावा॥ १
दान डाक बाजे नित सोई। भूँखा नाँगा रहे न कोई॥ २
जावँत रिखी, जती, सन्यासी। जोगी, जंगम, तपा, उदासी[1]॥ ३
तावँत चलि आये सब कोई। औ जेवन पुनि पावै सोई॥ ४
सबको आगत-भागत कीजै। जो जस माँगे तिह तस दीजै॥ ५
भक्ति होइ निसि दिन तिह ठाऊँ। आप रूप[2] लेहि दई कर नाऊँ॥ ६
एक नाम लै सहस बखानहिं। धरम छाड़ कर पाप न जानहिं॥ ७
पंडित पढ़हि सास्त्र, जोगी पढ़हि सो जोग। ८
कन्ह गुप्त तप साधे, प्रगट मानै भोग॥ ९

प्रति-पाठ—१. औदासी। २. अप रप।

टिप्पणी—धरमसार–धर्मशाला; धर्मस्थान। वत्त–व्रत; दान-खाता। डाक–डंका। नाँगा–नंगा; वस्त्रहीन। जाँवत-जितने भी। रिखी–ऋषि। जती–यती। जोगी–योगी। जंगम–शैव आगम का एक पंथ। तपा–तपस्वी। उदासी–बैरागी; साधुओं का एक सम्प्रदाय। ताँवत–वे सभी। जेवन–भोजन। आगत–भागत–स्वागत-सत्कार। जस–जैसा। आप रूप–अपने ढंग से। दई–ईश्वर।

३३०

बस्ती बसी[1] पार होइ बोला। दुर्बासा कर सत्त न डोला॥ १
जउन पार सो आछे तपा। निसि दिन करै दयी कह जपा॥ २
जरम न जान अन्न कस होई। दूब खाइ तप साधै सोई॥ ३
३२१क पाहन जो जानाँ संसारा। जुग बीते पर घर न सँवारा॥ ४
तज माया काया **घर** लीन्हाँ। औ धन, दास छेवर कीन्हा॥ ५
हेरत हेरत आपु हिराना। बूँद मँह सब समुंद समाना॥ ६
बिधि पहिचानस आपुहि खोई। प्रगट गुप्त[2] रहा होइ सोई॥ ७
सेत स्याम दोइ छाड़सि, कहै न दिन औ रात। ८
एकहिं सेउँ **भूला**, जो अबरन अण्डा फाँट॥ ९

प्रति-पाठ—१. नुक्तों के अभाव में अनुमानित पाठ। २. गोप्त।

टिप्पणी—दुर्बासा–एक प्रख्यात ऋषि जिनके नाम का टीला मथुरा के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्राम घाट के सामने यमुना के दूसरी ओर ईसापुर नामक ग्राम में है। सत्त–सत्य; आस्था; विश्वास। जउन पार–यमुना के दूसरे तट पर। आछे–है। तपा–तपस्वी। दयी–ईश्वर। जरम–जन्म; जीवन। दूब–एक प्रकार की घास। साधे–साधना करे। पाहन–पत्थर। जुग–युग; दीर्घ काल। घर न सँवारा–गृहस्थ बनाने का प्रयत्न नहीं किया। काया–शरीर। धन-दास–धन और सेवक। छेवर–उपेक्षा; परित्याग। हेरत-हेरत–खोजते-खोजते। हिराना–खो गया। अबरन–अवर्ण; रूपहीन।

३३१

कन्हैं कहा सँवर दुरबासा। कवहु न आवा मोरें पासा॥ १
का मोर किर्यें वत्त और सेवाँ। जो वैं कबहूँ[1] अन्न न जेवा॥ २
सोरह सहस हँकारीं गोपीं। जउन पार है[2] तपा अलोपीं॥ ३
एक एक बरन लेहु सब धानाँ। सोरह सहस करहु पकवाना॥ ४
औ सब डाल लेहिं के हाथाँ। लै सो जिवावहु होइ एक साथाँ॥ ५
नाव चढ़हु जनि जउनाँ तीराँ। पायें चलीं जाँहु मझनीराँ॥ ६
कहहु जो र हम कन्ह न राईं। जउन थाह होइ जाहु गुसाईं॥ ७
१२१ख गवनत[3] जउन डरहु जनि, जो कैसा अवगाह। ८
ईत बोल सो सुनि के, तत्खन होइह थाह॥ ९

प्रति-पाठ—१. कबहू। २. पारै। ३. लौबत।

टिप्पणी—सँवरि–स्मरण कर। कबहूँ–कभी। मोर–मेरा। वत्त–व्रत। वैं–उन्होंने। जेवाँ–खावा। हँकारी–बुलाया। अलोपीं–अदृश्य। बरन–वर्ण; किस्म। धानाँ–धान्य; अनाज। पकवाना–पकवान; मिठाई। डाल–टोकरी। लेइ–लेकर। जनि–मत। पायें–पैदल। मझनीरा–पानी के बीच। राईं–रमण किया। थाह–स्थिर; पानी के भीतर मनुष्य के खड़े होने की क्षमता। गुसाईं–ईश्वर। गवनत–जाते समय। कैसो–कितना भी। अवगाह–अथाह। ईत–इतनी।

३३२

सुनत बात गोपिंह मन भेखा। वैं ओसों वैं ओसों देखा॥ १
हम बौरीं ना, कह ई नाहाँ। झूँठ बोलावइ जउनाँ माहाँ॥ २
जग देखत सब गोपीं रावइ। सोंह देन कहि जउन पठावइ॥ ३
जहाँ कहुँ पाउब कुछ थाहा। सुनि अधिको होइह अवगाहा॥ ४
रुक्मिनि और चन्द्रावलि कहा। मकु ऐसहि कुछ होइं अहा॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिकरें काज न पारे जीऊ। का बिसाइ जो मारै पीऊ॥ ६
चलहु बेगि जउनाँ के पारा। होइ सो जो लिखा करतारा॥ ७
जो पिय आयसु मेंटत, बिनु अपुरुब कह भाग। ८
मुयें बार तो जानिह, सबै मुयीं मोहि लाग॥ ९

टिप्पणी—भेखा–विचार किया। वै ओसों वै ओसों देखा–उन्होंने एक दूसरे को देखा। नाहाँ–पति; प्रियतम। बोलावइ–बुलवाता है। माँहा–बीच। रावइ–रमण करता है। सोंह–शपथ। देन–देने के लिए। रुकमनि–रुक्मिणी; कृष्ण की पत्नी (यहाँ राधा से तात्पर्य है)। मकु–कदाचित। जिकरे–जिसके। काज–काम। का बिसाइ–क्या जाता है। करतार–ईश्वर।

३३३

जेत नाँउँ धानहिं के कही। सुनत नाँव सब गोपिह अही॥ १
जैं जो धान कियहि जिह ठाँऊँ। तहैं सो राखा आपन नाऊ॥ २
१२२क सोरह सहस धान उपराजी। औ पकवान बेगि सब साजी॥ ३
जउन तीर होइ जाइ तुलानी[1]। सोइ कहिह पग बोरत पानी॥ ४
सुनहु जउन सब बोलहि साचा। सपत खाइ औ मनसा बाचा॥ ५
कन्ह धरी जो गोपिह बाहाँ। तो बूड़हि सब जउनाँ माहाँ॥ ६
जो रे कबहु[2] सो नेरें नाहीं। जाहु सूख होइ पाइ तराहीं॥ ७
सुनत जउन सब घटि गई, भईं गोपिता पार। ८
कहहि सबे भा अचरज, झूंठ चला सैंसार॥ ९

प्रति-पाठ—१. चोलानी। २. कवहु।

टिप्पणी—जेत–जितना। नाउँ–नाम। धानहिं–अनाज के। अही–थी। उपराजी–उत्पन्न किया। साजी–सजाया। तुलानी–पहुँची। बोरत–डुबाते हुए। सपत–शपथ। मनसा बाला–मन बचन से।

३३४

गयीं तहाँ जंह रिखि दुर्बासा। जाइ पाये लागीं तिह[1] पासा॥ १
औ पकवान धरी सब आगें। रिखीं भुगुति पाये बिनु माँगें॥ २
सोरह सहस खाइ पकवानाँ। भा मन सुख[2] बहुत भल मानाँ॥ ३
बहुतै दिनहि जाइ अन जेवाँ। भा प्रसाद कन्ह कै सेवाँ॥ ४
भर जिउ गोपिंह दीन्ह असीसा। देउँ असीस बरो जगदीसा॥ ५
जैं मुहि आन जेवाये रोटी। देहु पूत तिह छप्पन कोटी॥ ६

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२२ख औ अस कहा करहु अब गवनाँ। जनि डराउ मन नाँघत जउनाँ ॥ ७
कहहु पाउ जल बोरत, सत्त बाच यह आहु । ८
जो रिखि नाहीं जेवाँ, बेग थाह होइ जाहु ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जिह । २. सूख ।

टिप्पणी—धरे–रक्खे । भुगुति–भुक्ति; भोजन । जेवाँ–खाया । बरो–वरण करो; प्राप्त करो । गवना–गमन । नाँघत–लाँघते हुए । बोरत–डुबाते हुए । सत्त–सत्य । बाच–वचन ।

३३५

गोपिह घर कों कीन्ह बहोरा । दई पाउ जउनाँ मँह बोरा ॥ १
जो रिखि अहे पकवान न जेईं । सूखि जाहु उतरहिं बिनु खेईं ॥ २
सुनत सूखि गई पहिले ताईं । हसत सबै गोपीं घर आईं ॥ ३
आवहु सब मिलि रहै रूठी । दहुँ यह बात आह कस झूठी ॥ ४
जिन केउ घरहि दिया निसि बारै । औ न रसोई आग परजारै ॥ ५
जौलहिं कन्ह न कहँहि बिचारू । तौलहि घरघर करहु खँभारू ॥ ६
सबहीं कीन्ह तैस जस मता । सब मिलि रूसि रहीं गोपिता ॥ ७
निहज मँहज कै घर, सबै परीं खटवाट । ८
पाटमहादेइ[1] खिन होइ, नहि निसरीं बाट ॥ ५

प्रति-पाठ—१. महादोइ ।

टिप्पणी—बहोरा–वापसी । बोरा–डुबोया । खेईं–नाव । ताईं–तरह । दहुँ–न जाने कैसे । आह–है । कस–कैसे । जिन–मत । केउ–कोई । परजारे–प्रज्वलित करे; जलाये । खँभारू–हलचल; परेशानी । रूसि–रूठ । निहँज मँहज–अस्त-व्यस्त । खटवाट–रूठ कर बिना खाये पीये खाट पर पड़ रहना । पाट-महादेइ–पट्टमहादेवी; राधिका । खिन–खिन्न; दुखी । निसरीं–निकलीं । बाट–बाहर ।

३३६

कन्ह देखि सब घर अँधियारी । काहे गोपीं दिया न बारी ॥ १
१२३क अइसैं न होई सोइ सबेरा । अब कैसें ही रात अबेरा ॥ २
सबै गोपिता राँध हँकारीं । आजु बिरस देखौं सब नारीं ॥ ३
का बियोग तुम्हरे जियँ परा । जिहि सब रहस कोड परिहरा ॥ ४
बात न कहि रहँहु चुपचापू । कहु मोह सेउँ कौन सँतापू ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

घर अँधियार देखौं चहुँ[1] फेरे। जित होइ रसोइ केरै॥ ६
कै हम मँह तुम्ह औगुन जानाँ। कै दुरबासैं अनभल मानाँ॥ ७
कै पकवान पठाइं, बहु दुख पायउ जात। ८
का क्रोध मन उपनाँ, कहु हिय कै बात॥ ९

प्रति-पाठ—१. चहूँ।

टिप्पणी—बारी–जलाया। राँघ–निकट। हँकारा–बुलाया। बिरस–अनमना। बियोग–दुःख। रहस कोड–हँसी खेल। परिहरा–छोड़ दिया। सँतापू–दुख। औगुन–दोष। हिय–हृदय।

३३७

आप जो पूछहु बात मुरारी। एक बात उरझीं सब नारी॥ १
सोइ अचम्भो भा हम आजू। जिह अचरज भूला सब काजू॥ २
सदा लियें सब गोपिंह रायहु। सोंह दइ के जउन पठायहु॥ ३
हमँहि कहा हम कन्ह न रायीं। जउन सूख सब जात[1] तरायीं॥ ४
दुरबासहि पकवान खिवाये। वहों कहा मैं नाहीं खाये॥ ५
१२३ख रिखि सह बहुरस[2] जउनाँ। पुनि सुखान यह कहे पठौनाँ॥ ६
जो यह चरित सुनावहु माँहाँ। तो प्रीत लें[3] हम तुम्ह माँहाँ॥ ७
नाँहुत तुम पाखण्डी, जो राखहु तिह साध। ८
हिय फाटि सब मरिहहिं, जनि सो लेहु अपराध॥ ९

प्रति-पाठ—१. जाप। २. बहो रस। ३. ले।

टिप्पणी—अरजी–निवेदन करती हैं। अचम्भो–आश्चर्य। सोंह–शपथ। सह–के यहाँ से। बहुरस–लौटते हुए। पठौनाँ–सन्देश। चरित–रहस्य।

३३८

कन्ह कहा अब देखहु आई। जो तुम्हार न मन पतियाई॥ १
मुख पसार आपन देखरावा। देखि गोपिंह अहतक खावा॥ २
परी दीठ त्रिभुवन नौ खण्डा। सरग पतार लोक ब्रह्मण्डा॥ ३
देखी परबत सुमेरु पहारा। औ जांवत सकल सँसारा॥ ४
चाँद सुरुज औ नखत तराइं। औ जो आरथ कह दुनियाइं॥ ५
सातो समुँद अठरहो गण्डा। दीख पिंड मँह सब ब्रह्मण्डा॥ ६
छात पाट हिरदैं मँह साजा। राज करै राजेंहि कर राजा॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो ब्रह्मण्डे सोइ पिण्डे, सब जग रहा समाइ । ८
भूल गयीं सब गोपीं, कौकुत बरनि न जाइ ॥ ९

टिप्पणी—पतियाई–विश्वास हो । पसार–फैला कर । अहतक–अविश्वास जनक आश्चर्य । दीठ–दृष्टि । सातो समुद्र–जायसी ने सात समुद्रों की गणना इस प्रकार की हैं–क्षीर, दधि, उदधि, सुरा, किलकिला, क्षार और मानसर (पदमावत, कड़वक १५०-१५८) । गण्डा–चार की संख्या । अठरहो गण्डा–जायसी के अनुसार नदियों की संख्या ७२ है (पदमावत ४२५।९; ६०४।१); यहाँ उसी का संकेत है । रामचन्द्र शुक्ल का कहना है कि अवधी क्षेत्र में प्रचलित प्रवाद है कि समुद्र में अठारह गण्डे नदियाँ गिरती हैं । पिण्ड–शरीर ।

३३९

१२४क कन्ह कहा अब देखहु बारी । सबै अन्तर्पट दीन्ह उघारी ॥ १
हौं अन्तर घोखै के नाईं । भोग करै सब आपु गुसाईं ॥ २
औ पुनि दुर्बासा गा कही । घट घट मँह अस सब कैं अही ॥ ३
आपुहि आप चहस जो देखा । गुप्त प्रगट[1] सव कहस बिसेखा ॥ ४
आपुन भोग सो आपुहि करै । आपुन[2] कै दोस आन सिर धरै ॥ ५
आपुहि[3] जगत फूल होइ फूला । आपुहि भँवर बास रस भूला ॥ ६
आपुहि फर आपुहि रखवारा । आपुहिं सब रस चाखन हारा ॥ ७
हौं देखहु जस अन्तर्पट, खेल करै सब सोइ । ८
जिह बिधि जउन ठाढ़ भई, तुम्ह सो अचाँभो होइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जगत । २. अस । ३. इह ।

टिप्पणी—अन्तर्पट–छिपा हुआ भाव । अन्तर–आवरण । आन–अन्य । धरै–रक्खे । फर–फल । अचाँभो–आश्चर्य ।

३४०

एक छाड़ दूसर सो नाहीं । सबै जगत ताकर परछाहीं[1] ॥ १
जँह जँह दिस्टि पसारे हेरी । सो सब कला गुसाईं केरी ॥ २
कीन्हस खेल जैस हुत चहा । चौदह भुवन पूर भर रहा ॥ ३
सब मँह बरनै जोत सरूपा । जस जग पसरै सूरज धूपा ॥ ४
१२४ख प्रगट गुप्त देखहु अस करा । वह सब मँह सब वह मँह भरा ॥ ५
जो सो डोलावइ पवन डोलै । वह बिन कोइउ बकति न बोलै ॥ ६
जस कायाँ[2] जिउ रहै समाई । सब सैंसार रहा तस छाई ॥ ७

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाये खोजि न ढूँढ़ें, लै हिय सकल सरीर। ८
जो ले ठाँउ देखावइ, तो तिह जानै बीर॥ ९

प्रति-पाठ—१. परछाईं। २. कापाँ।

टिप्पणी—छाड़–छोड़ कर। ताकर–उसका। हेरी–देखै। कला–करामात। बकति–वाणी। कायाँ–शरीर।

३४१

देखि गोपिंह पावा भेदू। जस अंडे भरि रहि भेदू॥ १
फूल माँझ जस रहि बासा। दूध माँझ घिउ[1] जैस अवासा॥ २
काठी[2] माँझ आग जस अहै। कया माझ जैसें जिउ रहै॥ ३
दर्पण माँझ जस रहें छाहीं। जींह माँझ बैन बिहसैं ताहीं[3]॥ ४
कै ज्ञान तस गोपिंह बूझा। प्रगट गुप्त सबै मन सूझा॥ ५
जो जिह[4] सेवाँ हई न पारी। अपने अपने काज दवारीं॥ ६
हौं तूँ कहत अडारहु खोई। एकै एक जपहु मन सोई॥ ७
माया मोह हीउ जस, सबै अडारहु मेंट। ८
१२५क दूसर हियें न भावइ, एक गुसाईं भेंट॥ ९

प्रति-पाठ—१. घीउ। २. काभी। ३. माहीं। ४. जियहि।

टिप्पणी—भेदू–भेद। काठी–काष्ठ; लकड़ी। छाहीं–छाया; परछाहीं। अठारहु–छोड़ो; त्यागो।

३४२

चलै भक्ति सगरैं सैंसारा। कीरति गई समुन्दर[1] पारा॥ १
गोरख सिद्ध कीन्ह सुन फेरा। चेला नाँथ मछन्दर केरा॥ २
कवहीं भेस बस मग आवा। आइ कटक जोगिह कर छावा॥ ३
तीरहि तीर[2] जउन के डारा। पाँच कोस लह भयउ उतारा[3]॥ ४
चहुँ दिस झार मढ़ि[4] उँह गयीं। जनु गुरु वाहीं भुई भयीं॥ ५
माँझ अथा मढ़ि गुरु सुहावा। जिह अदेस करे सब आवा॥ ६
पहुची बात कन्ह जिह भोगी। आये किह हुत उतरे जोगी॥ ७
चेला गिनत न आवहि, गुरू[5] सिरी गोरक्ख। ८
देव भूख लै पुरवै, बहु अचकर कै भेख॥ ९

प्रति-पाठ—१. सन्दरहि। २. नीरहि नीर। ३. ऊतारा। ४. मढ़ी। ५. कोउ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणी—गोरख, नाथ पन्थ के एक योगी। नाथ योगियों के आविर्भाव के सम्बन्ध में काफी मतभेद है। सामान्यतः समझा जाता है कि इसके आदि प्रर्वतक मत्येन्द्रनाथ थे और उनका समय नवी शती ई० अनुमान किया जाता है। उनके ही शिष्य गोरखनाथ कहे जाते हैं। वे अधिक महिमा सम्पन्न थे; उनके ही नाम से नाथ-पन्थ गोरख-पन्थ कहा जाता है। यहाँ गोरख से अभिप्रायः उस पन्थ के किसी योगी से हैं, गोरखनाथ से नहीं। सिद्ध-गोरख अथवा नाथ पन्थ का सम्बन्ध सहजयानी (बौद्ध) सिद्धों से जोड़ा जाता है। अतः गोरखपन्थी योगी भी सिद्ध समझे जाते रहे हैं। किन्तु दोनों में तत्वतः महान अन्तर था। सहज-यानी सिद्ध निरीश्वरवादी बौद्ध थे; नाथ पन्थ के योगी ईश्वरवादी शैव थे। किन्तु साथ ही एक का दूसरे पर प्रभाव भी था। चेला—शिष्य। नाथ मछन्दर—मछन्दरनाथ; मत्स्येन्द्र नाथ; नाथ सम्प्रदाय के प्रर्वतक। केरा-का। कटक—सेना; समूह। जोगिह—योगियों का। लहि—तक। उतारा—विस्तार; फैलाव। झार—एकदम। मढ़ी-निवास स्थान। माँझ—मध्य। अथा—था। अदेस—प्रणाम (सिद्ध और नाथपन्थी योगी गुरु को प्रणाम करने के लिए तीन बार आदेश आदेश आदेश कहता था और गुरु भी आशीर्वाद स्वरूप आदेश ही कहता था)। भोगी—भोग करने वाला; विलासी। किह हुत—कहीं से। पुरवै—पूरा करे। अचकर—आश्चर्यजनक; अजीब। भेख-वेश।

३४३

जेत कटक जोगिह कर झारी। सबै सिद्ध औ पवन अहारी।।१
अति अवधूत बैठि धरि ध्यानूँ। मौन लिवानें कह बर नाऊँ।।२
राजकपूर क महक गर माँ। न्योली जोग सिद्धि उपरनाँ।।३
१२५ख जगमग झिलमिल लागे तारे। उधरि कियें सो दसों दुआरे।।४
खिन खिन मँह छाला अप्सोहीं। देखै जगत जो अन्तरिख न होहीं।।५
खिन मिरगा[1] कै रूप दिखावहिं। खिन यक [सिं]घ रूप होइ धावहिं।।६
कभहु परेवा कभहु मँजारी। और भेस को कहै मुरारी।।७
बहुल छन्द धरि आवहिं, यहि विद्या यहि भेस। ८
चौदह कला सपूरन, परकाया परवेस।। ९

प्रति-पाठ—१. 'मुरगा' पाठ भी सम्भव।

टिप्पणी—जेत—जितनी। कटक—सेना; समूह। झारी—है। पवन अहारी—हवा पीने वाले। अवधूत—उदासी; योगी; सन्यासी; वर्ण और आश्रम त्यागकर मात्र आत्मा को देखने वाले साधू। गर माँ—गले में। न्योली—योग की एक क्रिया। उपरनाँ—उत्तरीय; दुपट्टा। उधरि किये—खोल कर रखा। दसो दुवार—योग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साधना में शरीर में दस द्वार होने की कल्पना की गयी है। शरीर में जो नौ छिद्र हैं, वे नौ द्वार हैं; दशवाँ द्वार गुप्त कहा गया है जो कुण्डलिनी के मार्ग से ब्रह्म-रन्ध्र तक है। छाला—चमड़ा। अप्सोही—फैलाते हैं। अन्तरिख—अन्तरिक्ष। मिरगा—मृग; हिरण। खिन यक—जरा देर में ही। धावहि—दौड़ते हैं। कभहुँ—कभी। परेवा—कबूतर; पक्षी। मँजारी—बिल्ली। और—अन्य। भेस-वेश। बहुल—बहुत। छन्द—छद्मवेश। घटि-रख। सपूरन—सम्पूर्ण। परकाया परवेश—परकाया प्रवेश; एक दूसरे के शरीर में जीवका प्रवेश। कहा जाता है कि योगियों को यह सिद्धि प्राप्त थी कि वे अपना जीव (आत्मा) दूसरे के शरीर में प्रविष्ट करा दें।

३४४

सुनके उठा कन्ह सो भोगी। देखों कैस सिद्ध वह जोगी॥ १
भक्त सँहस दस गोही भये। भक्ति कहत गोरख पै गये॥ २
देखि सिद्ध कर आसन डोला। भा अदेस ओकँह जो बोला॥ ३
कन्ह कहा हम बहु[1] सुख[2] पावा। जो तुम्ह सों भा दरस मिरावा॥ ४
जैस हिय मन दरसन आसा। दूनो रहसि बैठि एक पासा॥ ५
कौन देस हुत रावल आये। का मता[3] भयी कहाँ सिधाये॥ ६
बहुत सुनाँ गोरख तुम्ह नाऊँ। दुइ दिन न रहे[4] एक ठाऊँ॥ ७
१२६क हम कँह भई प्राप्ति, बहिरे जात्रा काज। ८
आयसु होइ गुसाईं, भक्ति करों कछु आज॥ ९

प्रति-पाठ—१. बहू। २. सूख। ३. मैना। ४. तरहे।

टिप्पणी—भोगी-विलासी। भक्त—भक्ति में विश्वास रखने वाले। गोही—साथ। भक्ति—ईश्वर का नाम स्मरण; भजन। पै—पास। डोला—हिला। अदेश—आदेश (देखिये कड़वक ३४२ की टिप्पणी)। ओकँह—उसको। मिरावा—मिलन। रहसि-हर्षित होकर। रावल—राजा; आदर सूचक सम्बोधन। का—क्या। मँता—विचार। कहाँ सिधाये—कैसे चले। ठाऊँ—एक स्थान। बहिरे—निकले। जात्रा—देवी-देवता अथवा सन्त-महात्मा के दर्शनार्थ जाना। विशेष अवसरों पर लोगों के एकत्र होने को प्राचीन काल में यात्रा कहते थे। इसी से जात शब्द निकला है जो अनेक स्थानों में मेले के लिए कहा जाता जाता है। आयसु—आज्ञा।

३४५

गोरख सिद्ध उतर हँस कहा। देखहु सुमेरु परबत हौं अहा॥ १
समुन्द पार मैं कीरत सुनी[1]। अहे कन्ह अस ज्ञानी गुनी॥ २
सुन देखै इह आयउँ भोगी। तज गृहस्त होहु अब जोगी॥ ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काटु पास सबकै माया। ई उपदेस करे गुरु[2] आया॥ ४
जग मँह जोग भला जो कीजै। जिह हुत बहुत बरख लहि जीजै॥५
अस काया सो अम्मर होई। जुगजुग ताइँ जीवै सोई॥ ६
औ जो चहै तो चलै उड़ाई। जेह ताकै तँह खिन मँह जाई[3]॥ ७
दरस होइ **जिह वहि तिह,** जो साधे जप जोग। ८
आउ कन्ह उपदेसों, तजु गोपिह कर भोग॥ ९

प्रति-पाठ—१. सूनी। २. गरू। ३. यमाई।

टिप्पणी—सुमेरु पर्वत–सबसे ऊँचा पर्वत। अहा–था। समुन्द–समुद्र। कीरत–कीर्ति; यश। अहै–है। गृहस्त–गार्हस्थ जीवन; पारिवारिक जीवन। काटि–काट कर। पास–पाश। माया–मोह-ममता। जीजै–जीवित रहिये। काया–शरीर। अम्मर–अमर। ताँई–के लिए। जीवै–जीवित रहे। ताकै–देखे। खिन–क्षण।

३४६

सुनहु न रावल उतर हमारा। का करब्यों लै जोग तुम्हारा॥ १
प्रगट विद्या प्रगट भेसू। काज न आवइ यह उपदेसू॥ २
१२६ख भोग भला जोगी कोइ जानै। भोग करत बिधि **पुनि** पहचानै॥ ३
सोरह सहस गोपिता मोरीं। सेवाँ रहँहि सबै कर जोरीं॥ ४
सोइ तपा औ सो कैलासी। गिरहीं मँह जो रहे[1] उदासी॥ ५
प्रगट रहौं सबैं कै ठाऊँ। गुप्त जपों[2] परमेसर नाऊँ॥ ६
ज्ञान सभ गोपिह समझावों। ध्यान गुसाइँ सों मन लावों॥ ७
वत्त सत्त दुहुँ अगरो, [गु]प्त न राखों आप। ८
धर्मं करों नित नित, ओहि नेर न आवहि पाप॥ ९

प्रति-पाठ—१. रह। २. जीवों।

टिप्पणी—करब्यों–करूँगा। काज–काम। कैलासी–कैलासी; शिव-प्राप्त व्यक्ति। गिरही–गृहस्थी; परिवार। उदासी–उदासीन; अनासक्त। दुहुँ–दोनों। अगरों–अग्रसारित करूँ; सामने रक्खूँ।

३४७

सुन भोगी अस जोग हमारा। दुख सुख[1] दूनहु हयीं निनारा॥ १
निर सवाद[2] देखु सिध नाहीं। ना तिह रत न पिंड परछाहीं॥ २
ना तिह नींद न भूँख पियारी। सदा रहे भा पवन अधारी॥ ३
जुग जुग जीवन सत कँह बाँटी। नियर न होइँ झगरैं झाँटी॥ ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तप जीवन तप भोगँ करे। तप सेंउ जिये माझ तप मरे ॥ ५
तूँ रैन दिन सिस्टि समेटसि। अइसे भाँत कहाँ बिधि भेटसि ॥ ६
१२७क काल्ह जबहिं[3] काल नियराइह। लै सो चलिह कुछ साथ न जाइह ॥७
आसा मुक्तीं रहस नित, तज यह माया मोह। ८
जौलहि मीचु न पहुचै, गोरख **कामँह** न होह ॥९

प्रति-पाठ—१. सूख। २. तुक्ते अभाव में अनुमानित पाठ। ३. जवहि।

टिप्पणी—निनारा—न्यारा; अलग; विरत। सवाद—स्वाद। सिध—सिद्धि। भा—होकर। बाँटी—बाट, रास्ता। झगरै झाँटी—झगड़ा-झंझट। भाँत-तरह। भेटसि—भेंट करता है; प्राप्त होता है। काल्हि—कल। नियराइहि—निकट आयेगा। आसा—आशा। मुक्ती—मुक्ति; मोक्ष। रहस—रहना। मींचु—मृत्यु।

३४८

सुन जोगी का जोग भुलाई। जो ले[1] जरम अबृथाँ जाई ॥ १
जगत आइ जो भोग न परा। सो प्रिथमीं काहि क अवतरा ॥ २
भोगहिं[2] कह जिउ पहिनाँ काया। काम क्रोध तिस्नाँ मन माया ॥ ३
कस तिह कर लेवों अपराधा। कस न भोग कै पुरवों साधा ॥ ४
जीवन बहुत जोग[3] मँह फीका। थोरा जीवन भोग मँह नीका ॥ ५
जो जोगी **सथ** अमर **बसेयी**। सिद्ध चाह **कढि पहुँचे सेयी** ॥ ६
औ सतवादी सरग वह **झूटों**। सून रेख झूठ मन **मूँटी** ॥ ७
का जोगी का भोगी, काहू न छाड़े काल। ८
रहहिं तपाँ सोइ पै, जो जग जीवँ दयाल ॥ ९

प्रति-पाठ—१. पै। २. भगहिं। ३. भोग।

टिप्पणी—अवृथा—व्यर्थ। काहिक—किस लिए। अवतरा—जन्म लिया। काया—शरीर। तिस्ना—तृष्णा; लोभ। पुरवों—पूरा करूँ। साधा—इच्छा। फीका—निरस। थोरा—थोड़ा। सून रेख—शून्य रेखा।

३४९

जोगीं कहा जोग जस अहा। भोगीं आपन भोग सराहा ॥ १
१२७ख दुहों बाद आपुन मँह कीन्हा। जोग भोग परताइं लीन्हा ॥ २
आवहु दुँह मिलि कीजै मारी। जो रे मरै ताही कै हारी ॥ ३
सुनि के काढ़ी कन्ह निराजी। गोरख आपुन गुसों[1] साजी ॥ ४
कन्ह कहा पहिलें तूँ मारो। गोरख कहा तूँ पहिलें डारो ॥ ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उठ मेली तब कन्ह निराजो। जानहु अष्टधातु पर बाजी ।। ६
रोवँ न टूट लाग जो जोटा। जनहु बैठि ताँबे कै गोटा ।। ७
जोगी सबै सराहँहि, धन धन गोरख बीर। ८
अस होइ बैठि निराजी, लै भइ देह बजीर ।।९

प्रति-पाठ—१. कीनी। २. तव।

टिप्पणी—सराहा—सराहना की; प्रशंसा की। दुहों—दोनों ने। बाद—बाजी। आपुन—अपने में; परस्पर। परताई—परीक्षा; जाँच। मार—मार। ताही—उसी का। हारी—हार; पराजय। काढ़ी—निकाला। निराजी—भाला। गुप्ती—छोटी कटार। डारो—फेंको। मेली—फेंकी। अष्टधातु—आठ धातु (सोना, चाँदी, ताँबा, जस्ता, सीसा, लोहा, राँगा, और काँसा)। यह मिश्रित धातु मूर्ति और औजार बनाने के लिए काम में लाया जाता था। बाजी—टकराये। रौवँ न टूट—बाल बाँका न हुआ। धन-धन—धन्य-धन्य। गोटा—गोला। बजीर—बज्र।

३५०

कन्ह कहा अस पड़े न छूँछा। गोरख केर जोग मैं बूझा ।।१
बिधि मारग सैं चित न लावा। लीन्हें आपुन पिंड **गजमावा** ।।२
तूँ सो पिण्ड जस **बूधि** बखानूँ। अस न होइ जिह बिधि ज्ञानू ।।३
अब[1] तूँ मार दीन्ह मैं अज्ञा। औ सो बूझहु पिण्ड प्रतिज्ञा ।।४
पुनि गोरख उठि गुप्ती मारा। जानु धुआँ मँह खरग अडारा ।।५
१२८क लागत जैस जाइ मिल नीरू। पुनि तैसे भा सोझ[2] सरीरू ।।६
देखत भक्ति अस उपजा **बल हानी**। धन धन पूरुख कीन्ह गियानी ।।७
देखि चरित दूनों कर, भा **घरहि पा** लोग। ८
जोगी केर जोग भल, भोगी कर भल भोग ।।९

प्रति-पाठ—१. आप। २. सोझर।

टिप्पणी—छूँछा—खाली। केर—का। बूधि—बुद्धिमान। अडारा—फेंका। सोझ—सीधा।

३५१

गोरख फिरि सुमेरु कँह गयऊ। कन्ह' मंदिर आपुनें पँह भयऊ ।। १
पाछें जिह **रजनूँ अखरावा**। वृद्ध बयस **तिह** माँथ **घसावा** ।। २
टेके काँख हाथ बैसाखी। लोहिया बाँध पेट मँह राखी ।। ३
कीरत तोर सुनीं मैं देवा। बहुत करसि' तपसिह कै सेवा ।। ४
तोरे सोरह सहस गोवारीं। माँगी एक देहु हम नारी ।। ५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बूढ़ें बयस सेउ सो करई। तोकँह पुन्न रिखी निस्तरई ॥ ६
मोकँह दूसर संगी होई। लेब वहै[3] जिह करों रसोई ॥ ७
बहुत आस कै आयउँ, पुन्न धर्म जस लेहु। ८
तोरैं बहुत इस्तिरीं, एक आज मोहि देहुँ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कह। २. करक। ३. वई।

टिप्पणी—फिरि–लौट कर। पाछे–बाद में। टेके–सहारा लिए। काँध–बगल में। बैसाखी–लाठी। लोहिया–लोहे का पात्र। मँह राखी–में रक्खा। कीरत–कीर्ति। तोर–तुम्हारा। करसि–करते हो। तपसिह–तपस्वियों का। तोरें–तुम्हारे। बयस–वयस; आयु। सेउ–सेवा। करई–करे। तोकह–तुमको। पुन्न–पुण्य। निस्तरई–देगा। लेब–लूंगा। वहै–वही। जस–यश। इस्तिरीं–स्त्री। मोहि–मुझे।

३५२

१२८ख कन्ह कहा हौं जीवन पारों। पुनि कस बोल तुम्हारा टारों[1] ॥ १
रहे आज कुछ भोजन कीजै। रैन होइ सो कोहबर [लीजै] ॥ २
सून सेज दीखै जिह केरी। सोइ नारि लै निसरहु [हेरी] ॥ ३
हँसा सो रिखो सुनत अस बाता। कन्ह आह धर्मी बड़ दा[ता] ॥ ४
एक इस्तिरी सेउँ पै होइहि। लिहों आपुहि जबहिं[2] निसि हो[ई] ॥ ५
रहसि रिखी भोजन दिन कीन्हा। निसि पैसार मँदिर मँह लीन्हा ॥ ६
जिह गोपीं कै सेज निहारी। तिहीं सेज [पर] पुरुख खखारी ॥ ७
भा भिनुसार चला उठि, बचा हार सत भाँउँ। ८
आज बसों होइ आगें, रहों न ऐसैं ठाँउँ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. डारों। २. जवहि।

टिप्पणी—जीवन पारों–जान हाजिर है। अडारों–टालूं। कोहबर–अन्तःपुर; स्त्रियों के रहने का स्थान। सून–खाली। निसरहु–निकलो। हेरी–देख कर। रहसि–प्रसन्न होकर। पैसार–प्रवेश। निहारी–देखा। खखारी–खाँसी।

३५३

चला सो लोहिया[1] लायें पेटा। कन्ह के बलकँह से वे भेटा ॥ १
छप्पन कोटि खेलहि जदुबंसा। देखि रिखोसर सबहीं हँसा ॥ २
देखत पाँडे केर सवाँगू। हसतै हँसत आइ भुइ लागू ॥ ३
कोई कहे पेट सों पाँडे। केउ कहे पेट मँह भाँडे ॥ ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१२९क टोवँहि पेट कहँहि सब जने। पाँडे तूँ है जनखो सर बने।। ५
कोइ कहे जलन्धर बाढ़ा। काहूँ धरि सो लोहँडा काढ़ा।। ६
कोउ[2] नाचे केउ लिहें बोरावै। कैसहु मोख न पाँडे पावै।। ७
छप्पन कोटि जित जादो, परे सबै जन लाग। ८
आइ भेंट भइ पाँडे, जाब कहाँ अब भाग।। ९

प्रति-पाठ—१. लहया। २. को।

टिप्पणी—लोहिया–लोहे का पात्र। पेटा–पेट में। बलकँह–बालकों से। रिखीसर–ऋषीश्वर। पाँडे–ब्राह्मण। सवाँगू–विचित्र वेश। पेट सों–गर्भवती। भाँडे–बर्तन। टोवहि–टटोलें। सब जने–सब लोग। जनखो–स्त्री वेश में पुरुष। सर–समान। जलन्धर–जलोदर; एक रोग जिसमें पेट के भीतर पानी भर जाता है जिससे पेट फूल जाता है। धरि–पकड़ कर। बोरावै–चिढ़ावै। मोख–छुटकारा। जाब–जावोगे।

३५४

[खी]झ रिखीसर दीन्ह सरापा। रहँहि न चाहिय तुम्ह पापा।। १
[इ]हैं लोहँडा पेट हमारा। यहैं हुते खो हो तुम्हारा।। २
[जै]स मोर हहु करत सँतापू। जूझ मरहु सभ आपुहि आपू।। ३
[ज]स वैं रिखी सरापा अहा। बलकहिं दौरि कन्ह सों कहा।। ४
बाभन एक जात है चला। मुँखँहि[1] हुत बोल न काढ़ी भला।। ५
लोहँडा एक पेट है लायें। कहस मरहुँ सभ यहि के घायें।। ६
कन्ह कहा अब सब मिलि धावहु। लोहँडा बेग छीन लै आवहु।। ७
तौलहि घिसउ सिला पर, लिहें जउन के तीर। ८
१२९ख जौलहि सबै खियाये, सो उडेल आउ[2] मझ नीर।। ९

प्रति-पाठ—१. मूँखँहि। २. आइ।

टिप्पणी—सरापा–शाप। रहहि न चहिय–तुम्हें नहीं रहना चाहिये। यहैं हुतैं–इसी के लिए। खो–विनाश। सँतापू–तंग। जूझ–लड़। बलकहिं–लड़कों ने। घायें–आघात से। धावहु–दौड़ो। तौलहि–तब तक। जौलहि–जब तक। खियाई–घिस कर नष्ट न हो जाय।

३५५

सुन जदुवंसी सब मिल धाये। लोहँडा बेग छीन लै आये।। १
जउन तीर लै लागे घिसै। वह ओकँह वह ओकँह हसे।। २
घिसते घिसत[1] जाम गै काई। भा सेवार जलहर गा [छाई]।। ३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उहै लोहँडा करजुग रहा। काहू का बोल न काहू [सहा] ॥ ४
भा बिरोध जल रची धमारी। वहें सेवार सों कीनहि मारी ॥ ५
परी सराप दीन्ह जस पाँडे। जिह लागी जनु मारे [खाँडे] ॥ ६
भा सेवार जनु बिखहर माहाँ। लागत टटकै[4] जाँहि परानाँ ॥ ७
छप्पन कोटि जित जादो, जूझे एकहि ठाँउँ। ८
केउ न रहा जियत अस, लै दई कर नाँउँ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. कहतै कहतत। २. जोही। ३. पाये। ४. तपकै।

टिप्पणी—धाये-दौड़े। वह ओकह वह ओकँह-एक दूसरे को। जाम गै-जम गयो। सेवार-जल में जमने वाली एक प्रकार की घास। जलहर-सारा जल। छाई-फैल गया। उहै-वही। करजुग-कलयुग। काहुक-किसी का। काहू-कोई। खाँडे-तलवार। बिखहर-विषधर; विषैला। टटकै-तत्काल। जाँहि परान-प्राण निकल जाते थे। दई-ईश्वर।

३५६

लोहँडा करजुग बिधि जो अवतारा। दौर मंछ लीला जनि[1] चारा ॥१
जो हुत कन्ह राम अवतारा। राजा बारि तबहि[2] हुत मारा ॥२
नित सो पुकार देखावत घाऊ। आयसु भयउ लेहु अब दाऊ ॥३
१३०क बास जरस आइ जग परा। बिरिया कोदये ह्वै[3] अवतरा ॥४
उहै मन्छ वैं पहिलें मारा। निकसा लोह पेट जो फारा ॥५
तिह लोह क वैं बिचाखा गढ़ा। मारै मँछरी सँरगी चढ़ा ॥६
सुनाँ कन्ह सब बालक जूझे। आपुन चलै केर[4] दिन बूझे ॥७
कै ज्ञा[न] जो देखसि, दसा पूर भइ आइ। ८
अहा सब देस आन कर, अब कहीं रहा न जाइ ॥९

प्रति-पाठ—१. जनी। २. तवहि। ३. है। ४. कर।

टिप्पणी—मंछ-मछली। लीला-निगली। जनि-समझ कर। चारा-खाद्य। जो हुत-जब। राजा बारि-राजा बाली; सुग्रीव का भाई जिसे राम ने छल से मारा था। घाउ-घाव; चोट। दाऊ-बदला। ह्वै-होकर। ओही-वही; उसी ने। फारा-फाड़ा। बिचाखा-बर्छी। मँछरी-मछली। सरँगी-छोटी नाव। दसा पूर-समय पूरा हुआ। आन-दूसरे का।

३५७

तत्खन अर्जुन भाइ हँकारा। समुँझ[1] लेहु छाड़ेउ सँसारा ॥ १
नियर आइ अब काल जनावा। तप सिरान होइ बेगि बुलावा ॥ २

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मैं रे द्वारिका गवनब आजू। तुम्ह जानहु औ जानै राजू ॥ ३
जिह रे गोपीं मोर सँग **भावइ**[1]। तिंह आवइ देहु जो आवइ ॥ ४
और जो जरहिं जरै सब दियहु। जो र रहे सब रख्या कियहु ॥ ५
जो आपुन जिह **सोभत** जाने। रहो तहाँ जहाँ वा मन मानै ॥ ६
और जो जाइ देहु सब जाई। काहूँ सेउँ न कियहु[2] बरियाई ॥ ७
१३०ख **पेम-हहिं** मोरें पाछें, जिह लग गोपीं[3] होइ। ८
समाधान सब करो, दुखी होइ जनि[4] कोइ ॥ ९

प्रति-पाठ—१. समुंद। २. कह। ३. लोपीं। ४. मन।

टिप्पणी—हँकारा-बुलाया। गवनब–जाऊँगा। रख्या–रक्षा। वा–उसका। बरियाई–जबर्दस्ती। समाधान–सन्तुष्टि। जनि–मत।

३५८

सुन अर्जुन उठि मीले धाहा। टूट बाँह जाकर बल आहा ॥ १
नन्द जसोदरा पाये परीं [.... ....][1] ॥ २
रोये देवइ औ बसदेऊ। चलत किह[2] बिधि राखे केऊ ॥ ३
गियें मिलावँहि माँझ बिजोगू। कस चिन्हावै गोपिंह कर [भोगू] ॥ ४
रोवहिं गोपीं बौरिह कैसा। हम तज नाँह[3] चले परदे[सा] ॥ ५
काकँहि छाड़ यह सँसारू। काकँह सौंपहु अरथ भँडा[रू] ॥ ६
को सुधि बुधि[4] पतिपारहि। को सुहाग गोपिह कर सारहि ॥ ७
पायँ धरीं सब बिनवँहि, और देहि **झिउ बास** ॥ ८
आछहु कन्ह इँह मधुबन, जनि[5] अस होहु उदास[6] ॥

प्रति-पाठ—१. यह स्थान रिक्त है। २. किह चलत। ३. बाँह। ४. सूधी बूध। ५. जस। ६. अवदास।

टिप्पणी—चिन्हावै–याद करायें। बौरिह कैसा–पागलों की तरह।

३५९

कन्ह कहा सुनु बौरी लोगा। का करिहौं काकर अब भोगा ॥१
पुन अवतार होंहू चीन्हा। **तो अबहि कष्ट संग** हुत कीन्हा ॥२
१३१क **कहाँ बिहान सब माता पिता। कहाँ बिहान आइ सब गोपिता ॥३
कहाँ बिहान हुत सत बन्धू मोरें। कहाँ बिहान हुत जुग कर जोरें ॥४
कहाँ बिहान हुत आपुन कया। कहाँ बिहान हुत सिस्टी माया ॥५**

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहन मोर अब इहवाँ कहाँ। जिह हुत आयँउँ जैहों तहाँ ॥६
जिन गुसाइँ अभ मोकह दीन्हाँ। आपुन तें बहोर सब लीन्हाँ ॥७
को काकर को काकर, माया मोह सब आह ।८
तोह करहु जियँ समुझ,[1] औ समुझ[1] जियँ[2] ताह ॥९

पंक्ति ३, ४, ५ का पाठ मात्र अनुमानित। इन तीनों पंक्तियों की दोनों अर्धालियों में आरम्भ के तीन शब्द लगभग एक से हैं। उन्हें जैसा हमने पढ़ा है, उससे कोई अर्थ नहीं निकलता। उनका मूल पाठ इससे सर्वथा भिन्न रहा होगा। पंक्ति ३ की दोनों अर्धालियों के उत्तरार्ध का पाठ भी नुकतों के अभाव में अनुमानित है।

प्रति-पाठ—१. समोझ। २. जन।

टिप्पणी—बौरी–मूर्ख; पागल। बहोर–वापस ले लिया; समेट लिया। को काकर–कौन किसका है। तोह–तोष; धैर्य।

३६०

चला कन्ह सब छाड़ै माया। अर्जुन कीन्ह[1] मधुपुर[2] कै दाया ॥१
एक बन छाड़ दूसरें गयऊ। तिसरें सब बन जउनाँ भयऊ ॥२
मारसि बुडुकी[3] गयउ हेराई। रोइ जगत लाग समुझाई[4] ॥३
अब रघु भये बाट बटाऊ। मधुबन लौटि[5] न अइहहिं काउ ॥४
अथवाँ सूरज भयउ अँधियारा। हरि-हरि कहि बहुरा सँसारा ॥५
गयउ जीउ मरन सच होई। जो रे उवा अथवा पुन सोई ॥६
१३१ख कोउ न रहा आइ सँसारा। जो मुव फेरि न भा अवतारा ॥७
झूठा धन्द प्रिथमीं, जग माया लपटान ॥८
दुयउ कर झार चला सब, औ पाछें पछतान ॥९

प्रति-पाठ—१. कन्ह। २. मधुपूर। ३. बूडकी। ४. बुझाई। ५. लौब।

टिप्पणी—दाया–उत्तराधिकारी। बुडुकी–डुबकी। रघु–रघुनाथ; राम। यहाँ तात्पर्य कृष्ण से है। बाट बटाऊ–रास्ते के राही। अथवाँ–अस्त हुआ। हरि-हर–कृष्ण-कृष्ण। उवा–उगा। मुव–मरा। फेरि–फिर। छन्द–द्वन्द; झंझट। दुयउ–दोनों। कर–हाथ। झार–झाड़।

३६१

कन्ह कहि अब गोपिह गवनाँ। चला द्वारिका छूटिह[1] जउनाँ ॥१
परी रात जल सजवाँ डासी। पौढ़ि रहा मंछ नियर उदासी[2] ॥२
आवा बिरिया करत अहेरा। सरँगी चढ़ा कन्ह तहाँ[3] [बहेरा] ॥३

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लोहिया कर हुत हाथ बिचाखा। जो बिधि[4] काल कन्ह कों राखा ॥४
देखसि पौढा जानसि रोहू। मारसि दौरि निवारसि कोहू ॥५
लाग बिचाखा तरुवाँ माँहा। हरि के मीचु बसत हुत जाँहा ॥६
मरम लाग छिन एक न डोला। दिहस प्राण बहुर[5] नहिं[6] डोला ॥७
हुत बिरिया औ कोदया, चला सँरगी खेइ।८
जाकर बैर होइ जिह सों, आपुन अस लेइ ॥९

प्रति-पाठ—१. जूटिह। २. ओदासी। ३. कहभान। ४. निधि। ५. बहोर। ६. तिह।

टिप्पणी—सजवाँ डासी—बिछौना बिछाया। पौढ़ि—लेट। मंछ नियर—मछली की तरह। उदासी—विरक्त। अहेरा—शिकार। सरँगी—छोटी नाव। रोहू—एक बड़ी मछली। निवारस—निवारण किया; मिटाया। कोहू—क्रोध। विचाखा—बर्छी। तरुवा—तलवा, पैर का निचला भाग। मीचु—मृत्यु। खेइ—खेकर।

३६२

मुहमद कबि कन्हावत गाये। रस भाखा कै सभौं सुनाये ॥१
१३२क [इह] सैंसार **चलन** कै छाहाँ। रहा न कोइ आइ जग माँहाँ ॥२
[तौ]ले रहन होइ जग **नीका**। रहत मुहम्मद जो जग नीका ॥३
[जो] ओंहि बूझि अस जग[1] परा। तो तज लोभ जगत परिहरा ॥४
[ह]म पुनि चलचल सुनहि सँदेसा। बसा नियर लेहु जानु परदेसा ॥५
जहाँ न मीचु[2] निमिख[3] औधारा। तहाँ कह[4] सबै सुनत ब्योहारा ॥७
[दि]हा दिहैं कोउ न दीहहि काहू। अपनै साथै और न पाहू ॥ ७
बचन हमार लेहु सुनि, जनि रहु वहि अधिखाट। ८
अगुवा कें पिछ लागें जायहु, जिह न भूलहि बाट ॥ ९

प्रति-पाठ—१. जख। २. पाठ अनुमान मात्र। ३. निमलह। ४. थाख। ५. देह।

टिप्पणी—तो—तब। परहरा—त्याग किया। मीचु—मृत्यु। निमिख—क्षण। औधारा—रहा। थाक—थका। पाहू—पावोगे। बाट—मार्ग; रास्ता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुनश्च

आरम्भिक विवेचन के मुद्रण के पश्चात् कुछ बातें ऐसी सामने आयीं तो विवेचित विषयों से सम्बन्ध रखती हैं और महत्व की हैं। उन्हें हम यहाँ **पुनश्च** के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

पृष्ठ २९—पदमावत की हस्तलिखित प्रतियों के उल्लेख के क्रम में नयी सूचना यह है कि रामनगर दुर्ग (काशी) स्थित सरस्वती मन्दिर पुस्तकालय में **पदमावत** की एक सचित्र प्रति है। वहाँ उसकी कदाचित एक या दो नागरी प्रतियाँ और भी हैं। जयपुर के पोथीखाना (सिटी पैलेस संग्रहालय) में भी **पदमावत** की एक नागरी प्रति है।

पृष्ठ ४५—जयपुर के पोथीखाना (सिटी पैलेस संग्रहालय) में **मुहम्मद** नाम की छाप से युक्त **तबाकूनामा** नामक जो एक छोटी-सी पुस्तिका है; उसके **मलिक मुहम्मद जायसी** की रचना होने की सम्भावना हमने प्रकट की थी। उसकी प्रतिलिपि प्राप्त होने पर जब हमने विचार किया तो लगा कि वह उनकी रचना नहीं है। वह **मुहम्मद** नामक किसी परवर्ती कालीन कवि की रचना है, जिसके सम्बन्ध में सम्प्रति कोई भी जानकारी उपलब्ध नहीं है। इसमें मुगल सम्राट् अकबर के साथ जहाँगीर का भी उल्लेख है। पाठक उस पर समुचित रूप से विचार कर सकें इसलिए उसे हम पृ० ३२६-२७ पर अविकल रूप से उद्धृत कर रहे हैं।

पृष्ठ ७९—अपने इस मत के प्रतिपादन में कि मध्यकालीन रचयिता अपनी भाषा को किसी प्रादेशिक परिधि में न बाँध कर व्यापक रूप से **भाषा** कह कर ही पुकारते थे, कहा है कि उनकी भाषा स्वरूप की व्यापकता को दृष्टिगत करते हुए उनकी भाषा पर विचार किया जाना चाहिये। इस प्रसंग में हम बिहारी के आश्रयदाता जयपुरनरेश मिरजा जयसिंह के काल (संवत् १६८५) में रचित पद्मपाणि कृत रत्नावली नाटिका भाषा की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं। इसकी मनोहर नामक लिपिक द्वारा तैयार की गयी एक प्रति जयपुर के पोथीखाना में है। उस पर १०५९ हिजरी (१६४९ ई०) की राजकीय मुहर है। इसकी पुष्पिका इस प्रकार है—

राजाधिराजस्य नियोगयोगद्रत्नावली श्रीजयसिंहयूनः।
श्रीपद्मपाणेर्वचन प्रपंचैर्नृभाषाऽलेखि मनोहरेण॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसमें इसकी भाषा को, संस्कृत के देवभाषा होने की धारणा को ध्यान में रख कर, रचना की भाषा को **नृ-भाषा** कहा गया है। ध्यान देने की बात यह है कि इस रचना की भाषा राजस्थानी नहीं है; उसका स्वरूप व्यापक क्षेत्र में प्रचलित भाषा का रूप है।

पृष्ठ ८०—हमने यहाँ इस बात की चर्चा की है कि मुसलमान लेखकों ने देश में व्यापक रूप से बोली–लिखी जाने वाली भाषा को **हिन्दवी** नाम दिया था। किन्तु **हिन्दवी** नाम मुसलमान लेखकों तक ही सीमित नहीं थी, हिन्दू लेखक भी उसका प्रयोग करते थे। इस **हिन्दवी** भाषा में संस्कृत शब्दावली का प्राचुर्य था यह बखतराम शाह लिखित **बुद्धि विलास** नामक ग्रन्थ से ज्ञात होता है। यह संवत् १८२७ (१७७० ई०) की रचना है। इसे पद्मधर पाठक ने सम्पादित किया है और वह राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित हुआ है। उसके पृष्ठ २४ से उद्धृत निम्नलिखित अंश द्रष्टव्य है—

ऊँचे दरवाजे सुगम बाट।
कंचन सम जटित बने कपाट।।
लगते बनवाये चौक ईस।
तँह रहे कारषाँने छतीस।।
यह हुतो कारखाने तनौंस।
पारसी नाम ता मद्धि दोस।।
नृप काढि **हिन्दवी** नाम कीन।
गृह संग्या यह ठानी नवीन।।१५१–५२

तात्पर्य है कि मुगल शासन में जो छत्तीस कारखाने (विभाग) थे; उन्हीं के अनुकरण पर जयपुर में भी छत्तीस विभाग बनाये गये। कारखाना शब्द फारसी का होने के कारण दोषयुक्त था अतः उसके स्थान पर उनके लिए **हिन्दवी** भाषा में गृह की संज्ञा स्वीकार की गयी।

●

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तमाकूनामा

स्री अकबर जो बड़ा भुआरा। स्रवन सुना समुँद अपारा।।
राज बहुरि जहाँगीर भया। सपूत पूत अकबर को जाआ।।
अकथ कथा जो बात अकथा। बादसाह बड़ जात्त बकता।।
ब्रिछ एक उपजा तेहि गाऊ। अमीन सहर सो कोई लै आऊ।।
नाव कहै तमाकू आहा। ताकर जस सब कोइ कहा।।
एह सो नाम तमाकु, सबका छूटा धरम।
सुन छीनै हाथ सो, निमिख न मानै भरम।। १

अब सो दुख तमाकू कहा। सुनहु लोग जहाँ लग आहा।।
हरिअर ब्रिछ एक मै आहा। कवन पाप मै आगे गहा।।
हरा पात तोरि लै आवहि। ता पाछे लै घूप सुखावहि।।
सुखि साखि भा तन आधा। तापर दुख जो देही धाधा।।
तोरि तोरि एकट्टा करही। भरि के चिलम अँगारा घरही।।
एतिक दुख जो हौं सहौं, कासौ कहौं बुझाइ।
जरि के भस्म होइ तन, तापर देहि उड़ाइ।। २

चिलम कहै मै का सों कहिआ। अग्नि देइ मुख छेदै हिया।।
प्रिथिमी मो मै बड़ी अभागी। ते रे दोस देहि मुख आगी।।
रैनि दिन मै जलौं उघारा। केहि आगे गै करौं पुकारा।।
औ कुभार जोही लै आवै। सानि सुनि लै चाक चढ़ावै।।
चाक चढ़ाइ सो गढ़ै उतारे। धूप सुखाइ बैसंदर जारे।।
हिया छेदि चलनी किया, नित उठि जरै सरीर।
दुखी आप दुसरा का जानै, दुखदायी की पीर।। ३

हुक्का कहै मर मन जाना। खनि म्रितिका भुअवर आना।।
छोलनी सो तन तन काटे। फिर पहुरी एक गैरी साटे।।
चाक चढ़ाइ सो गढे उतारै। धूप सुखाइ बैसंदर जारै।।
सीस काटि नल भीतर डारै। चिलम रखि आगी सो बारै।।
नाली छेदि पिआवै पानी। तामो नल एक डारै आनी।।
रारी करौ नहि उबरौं, जौ लगि गहे सूदम।
मुख सों कोउ न छोड़े, गहि पकरै जेउ जम।। ४

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नैचो कहै मै जोबन माती । अपने बन मो थी रँगराती ॥
हरा ब्रिछ मोहि देख जलावै । पंछि बैठि बहुत सुख पावै ॥
मैं पो गिरिवर माह उपानी । काटे काढ़ि धाधे आनी ॥
कहा कहौ उस पन की भाँती । लोहा धिकाइ कै छेदै छाती ॥
लोग कुटुब सब तकिआए । ताही ऊपर हँम बिरह सँताए ॥
नहि जानौ उस बन मह, काह किआ मै दोख ।
हिआ जरि कोइला भआ, अजौ न पाओं मोख ॥ ५

पानी कहै मैं प्रान अधारा । अपने ठौर न रही करारा ॥
हुक्का डारि जो पियै धुंआ । करौं सोर परै अधकुँआ ॥
धुँआ सुरंग सरीरौ धरा । एतिक दुख मोहि पर परा ॥
जन धुआ कर परा जो संगा । जंबु कन जानै कुसुम क रंगा ॥
जैसा काला तैसा सेता । मुरुख न जानै बिरहा एता ॥
बिधना बिधि ऐसा लीला, मेटि न सकै कोइ ।
रारी करौ हौं निस दिन, दहु आगे कस होइ ॥ ६

अब तौ दोस आगि परजारहि । आगि न होइ तौ कैसै बारहि ॥
आगि कहे जो सरबस जरई । हम बिना कछु काज न चलई ॥
आगि बिना रैन अँधारी । हम बिना काज न चलही आरी ॥
हिन्दू मोख आगि सो पावै । आगि बिना कछु काम न आवै ॥
छवौ मिलि कै कीन्ह पुकारा । मोख मुकुति केउ होइ हमारा ॥
छवौ बिनवहि कर जोरे, कवि के होइहि सुख ।
महमुंद येह दुख तौ सहे, जो प्रीतम लावै मुख ॥७

सोरठा

इन्ह छवन्ह की प्रीत, महमुंद ऐसो कीजिये ।
तौ रे पावै सच मीत, एक बिना एक न चलै ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डॉक्टर परमेश्वरी लाल गुप्त

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के मुद्रातत्वविद, पुरातत्व-वेत्ता और इतिहासकार।

हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में जाने-माने समीक्षक और पाठ-सम्पादक।

मौलाना दाउद कृत 'चन्दायन' के यशस्वी खोजी। 'कन्हावत' उनकी दूसरी खोज।

प्रसाद के नाटकों के आदि विवेचक।

कुतबन कृत 'मिरगावती' के सम्पादक।

बन्दी की कल्पना (गद्य-काव्य), कर्णिका (कहानी संग्रह), यूरोप और अमेरिका में हस्तलिखित ग्रन्थ, गुप्त साम्राज्य, भारतीय वास्तु-कला आदि अनेक ग्रन्थों के लेखक।

पटना संग्रहालय के अवकाश प्राप्त निदेशक।

□

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डॉक्टर परमेश्वरी लाल गुप्त

के

आगामी साहित्यिक प्रकाशन

मौलाना दाउद कृत चन्दायन—प्रथम संस्करण के पश्चात् ज्ञात नयी सामग्री और अनेक नव-ज्ञात प्रतियों के आधार पर पुनर्संम्पादित।

दुखहरन दास कृत पुहुपावती—हिन्दू सन्त द्वारा पदमावत की शैली में लिखित प्रेमाख्यान। विदेश से प्राप्त प्रति के आधार पर प्रथम बार प्रकाशन।

उसमान कृत चितरावली—विदेश से प्राप्त प्रति के आधार पर नये सिरे से सम्पादित संस्करण।

लेखनी एक विधा अनेक—विविध विधाओं में प्रस्तुत साहित्यिक महत्व के निजी लेखों का संग्रह।

अन्नपूर्णा प्रकाशन

जे० १२/१५ आर बौलियाबाग, रामकटोरा,

वाराणसी-२२१००२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi